भारतीय

सँस्कृति का इतिहास

(प्रश्नोत्तर रूप में)

[भारतीय विश्वविद्यालयों की बी. ए. कक्षाओं के लाभार्थ]

लेखक

प्रो० जी० एन० मेहरा एम० ए०

मेरठ कालिज, मेरठ.

तथा

प्रो० एन० के० त्यागी एम० ए०

(इति० व राजनीति०)

प्रकाशक

रस्तोगी एण्ड कम्पनी,

निकट तहसील, मेरठ.

—

[मूल्य पाँच रुपया

विषय-सूची

भारतीय संस्कृति का विकास

अध्याय १

भारत की भौगोलिक स्थिति तथा उसकी मौलिक एकता

Q. 1—How have the geographical conditions of India affected her history and culture? Support your answer with historical examples.

प्रश्न १—भारतवर्ष की भौगोलिक स्थिति ने उसके इतिहास तथा संस्कृति को किस प्रकार प्रभावित किया है? एतिहासिक उदाहरण देकर अपने उत्तर की पुष्टि करो।

उत्तर—किसी भी देश की भौगोलिक स्थिति एक विशेष प्रकार का वातावरण उत्पन्न करती है। इस वातावरण में विशेष प्रकार की शक्तियां जन्म लेती हैं और उन शक्तियों के द्वारा उस देश का एक विशेष प्रकार का इतिहास बनता है। देश का जलवायु, पर्वत, नदियां, विस्तृत मैदान और समुद्रतट उस देश के रहने वालों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा, उनके जीवन, स्वभाव और चरित्र निर्माण में प्रधान योग देते हैं। एक विद्वान का मत है कि किसी देश के भूगोल और इतिहास में वैसा ही सम्बन्ध है जैसा स्टेज और नाटक में। रिचर्ड हकेल्यूट (Richard Hakluyt) ने इस सम्बन्ध को दर्शाते हुए लिखा है कि भूगोल तथा कालक्रम इतिहास के लिये सूर्य तथा चन्द्र हैं या दायें और बायें नेत्र हैं। यह कथन भारत पर भी ठीक उतरता है।

भारत के प्रमुख भौगोलिक विभाग निम्नलिखित हैं—

(१) उत्तर का पर्वतीय प्रदेश।
(२) सिन्ध और गंगा यमुना के विस्तृत मैदान।
(३) राजस्थान।
(४) विन्ध्याचल पर्वत तथा दक्षिण का पठार।
(५) पूर्वी तथा पश्चिमी घाट।

उत्तर का पर्वतीय प्रदेश

हमारे देश के उत्तर में एक सिरे से दूसरे सिरे तक हिमालय पर्वत की लगभग १६०० मील लम्बी अटूट श्रृंखलायें फैली हुई हैं। इस पर्वत को दर्रा खैबर

विषय-सूची

भारतीय संस्कृति का विकास

अध्याय १

भारत की भौगोलिक स्थिति तथा उसकी मौलिक एकता

Q. 1—How have the geographical conditions of India affected her history and culture? Support your answer with historical examples.

प्रश्न १—भारतवर्ष की भौगोलिक स्थिति ने उसके इतिहास तथा संस्कृति को किस प्रकार प्रभावित किया है? ऐतिहासिक उदाहरण देकर अपने उत्तर की पुष्टि करो।

उत्तर—किसी भी देश की भौगोलिक स्थिति एक विशेष प्रकार का वातावरण उत्पन्न करती है। इस वातावरण में विशेष प्रकार की शक्तियां जन्म लेती हैं और उन शक्तियों के द्वारा उस देश का एक विशेष प्रकार का इतिहास बनता है। देश का जलवायु, पर्वत, नदियां, विस्तृत मैदान और समुद्रतट उस देश के रहने वालों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा, उनके जीवन, स्वभाव और चरित्र निर्माण में प्रधान योग देते हैं। एक विद्वान का मत है कि किसी देश के भूगोल और इतिहास में वैसा ही सम्बन्ध है जैसा स्टेज और नाटक में। रिचर्ड हकेल्यूट (Richard Hakluyt) ने इस सम्बन्ध को दर्शाते हुए लिखा है कि भूगोल तथा कालक्रम इतिहास के लिये सूर्य तथा चन्द्र हैं या दायें और बायें नेत्र हैं। यह कथन भारत पर भी ठीक उतरता है।

भारत के प्रमुख भौगोलिक विभाग निम्नलिखित हैं—

(१) उत्तर का पर्वतीय प्रदेश।
(२) सिन्ध और गंगा यमुना के विस्तृत मैदान।
(३) राजस्थान।
(४) विन्ध्याचल पर्वत तथा दक्षिण का पठार।
(५) पूर्वी तथा पश्चिमी घाट।

उत्तर का पर्वतीय प्रदेश

हमारे देश के उत्तर में एक सिरे से दूसरे सिरे तक हिमालय पर्वत की लगभग १६०० मील लम्बी अटूट शृंखलायें फैली हुई हैं। इस पर्वत की दर्रा खैबर

तथा बोलन ने खण्डित किया है और इन्हीं दो रास्तों द्वारा विदेशी हमारे देश में आते रहते हैं। अन्यथा इन पर्वत मालाओं ने इस देश को सदा सुरक्षित रक्खा है। हिमालय पर्वत ने अनेकों प्रकार से भारतीय इतिहास को प्रभावित किया है। यहां की संस्कृति चीन तथा तिब्बत की संस्कृतियों से भिन्न रह सकी। हमारे रीति रिवाज भाषा, धार्मिक सिद्धान्त और विश्वास पूर्ण रूप से अपनी विशेषता को स्थिर रख सके। इस पर्वत से निकलने वाली महान नदियों ने उपजाऊ मैदान उत्पन्न किये, जिनके कारण उत्तरी भारत धनधान्य से परिपूर्ण रहा और यहां के रहने वाले आनन्द का जीवन व्यतीत करते रहे। इसके अतिरिक्त बंगाल की खाड़ी से चलने वाले मानसून हिमालय पर्वत से टकराकर उत्तरी मैदानों को वर्षा द्वारा और भी अधिक उपजाऊ बनाते रहे। ये मैदान वर्ष भर हरे भरे बने रहते हैं।

इस पर्वत ने उत्तर से आने वाली ठंडी हवाओं को रोका और उत्तरी भारत को ऊसर और ठंडा प्रदेश होने से बचाया। इस महान पर्वत ने ऐसे रमणीय तथा शान्ति पूर्ण स्थान प्रदान किये, जहां पर हमारे ऋषि मुनियों ने अपने आश्रमों का निर्माण किया और संघर्षात्मक जीवन से बच कर उस अलौकिक और महान संस्कृति को जन्म दिया जिसने आगे चल कर बुद्ध तथा महावीर जैसे उत्तम पुरुष उत्पन्न किये। भारत की सच्ची संस्कृति इन्हीं शान्त आश्रमों से उठ कर शेष भारत में विकसित हुई और दूसरे देशों में फैलकर मनुष्य जाति का कल्याण किया।

खैबर और बोलन के दर्रों ने भारत में आने वाली विदेशी जातियों के लिये प्रवेश द्वार का काम किया। उत्तर से आने वाले आक्रमण कारियों ने इन दर्रों के द्वारा ही प्रवेश करके भारतीय शान्ति को समय समय पर भंग किया। आर्य, ईरानी, यूनानी, सिदियन, हूण, तुर्क, तातारी तथा मंगोल इन्हीं दर्रों द्वारा भारत में आये। प्राचीन काल में जब जब भारत ने इन दर्रों की सुरक्षा की ओर से मुख मोड़ा १४ तब ही उसको विनाश कारी आक्रमण सहन करने पड़े।

सिन्ध और गंगा यमुना के विस्तृत मैदान

ये मैदान पर्वतों से लाई हुई मिट्टी से निर्मित हैं। पैदावार की दृष्टि से ये संसार भर में अतिउत्तम हैं। इन मैदानों में रहने वाले मनुष्य धनधान्य से परिपूर्ण रहे हैं। जीवन संघर्षात्मक न होने के कारण इन मैदानों के निवासियों ने कला कौशल, विद्या आदि क्षेत्रों में बड़ी उन्नति की है। तक्षशिला तथा नालंदा जैसे विश्व विख्यात शिक्षा केन्द्र इन मैदानों में ही फले फूले। इन मैदानों के धन और संपत्ति ने विदेशियों को सदा आकर्षित किया और जो विदेशी आक्रमणकारी पंजाब को पार कर सके उन्होंने गंगा के मैदान को भी भरकर रौंदा। इन मैदानों में सुगमता पूर्वक अनेक नगरों ने जन्म लिया। ये नगर नदियों के किनारे फले फूले। व्यापार वाणिज्य के केन्द्रों का निर्माण हुआ। यहां पर प्राचीन एवम् अर्वाचीन साम्राज्यों की

राजधानियां रहीं। ये मैदान धार्मिक आन्दोलनों के केन्द्र रहे। हिन्दू धर्म की कुरीतियों को चुनौती देने वाले महात्मा बुद्ध ने इसी प्रदेश में जन्म लिया।

राजस्थान

यह वह प्रदेश है जो रेगिस्तान में फैले हुये छोटे छोटे राज्यों से बना है प्राचीन काल में जिन राज्यों ने इस रेगिस्तान में जन्म लिया, रेगिस्तान ने उनकी स्वतन्त्रता की अद्भुत ढंग से सुरक्षा की। अलाउद्दीन के समय तक किसी भी मुस्लिम सुल्तान ने उस ओर बढ़ने की हिम्मत नहीं की और अलाउद्दीन भी यहां के राज्यों का दमन करने में पूर्ण रूप से सफल न हो सका रेगिस्तान के कारण ही महान प्रतापी राजा राणा प्रताप सिंह प्रभावशाली अकबर को चुनौती देने में सफल रहा।

विन्ध्याचल पर्वत तथा दक्षिण का पठार

विन्ध्याचल की पर्वत श्रेणियां, नर्मदा, तथा ताप्ती की घाटियां और इनके आस पास फैले हुये सघन वनों ने उत्तरी तथा दक्षिणी भारत के बीच एक दीवार का काम किया है, दोनों प्रदेशों की संस्कृतियों को मिलने से रोका है। शताब्दियों तक इन भिन्न प्रदेशों में एक दूसरे से पृथक रह कर ही संस्कृतियां विकसित होती रहीं और दक्षिणी भारत पर उत्तर से आक्रमण न हो सके। आगे चल कर अशोक, समुद्रगुप्त, अलाउद्दीन खिलजी, अकबर तथा औरंगजेब ने दक्षिण को अपने साम्राज्य में मिलाने के प्रयत्न किये और इस प्रदेश को उत्तरी भारत के साथ राजनैतिक सूत्र में बांधना चाहा परन्तु थोड़ा ही अवसर मिलने पर ये राजनैतिक सूत्र ढीला पड़ कर छिन्न भिन्न होता रहा और दक्षिणी भारत अपने ही राग में मस्त चलता रहा। भारत में अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित होने पर ही सच्चे अर्थों में राजनैतिक एकता स्थापित हुई।

पूर्वी तथा पश्चिमी घाट

विन्ध्याचल से दक्षिण की ओर मैदान तथा पूर्वी और पश्चिमी घाट फैले हुए हैं। पश्चिमी घाट की पर्वत श्रेणियां सागरीय तट के समानान्तर लगभग ... मील तक चली गई हैं। ये समुद्र तट से लगभग ३००० से ६००० फीट तक ऊंची हैं। इन श्रेणियों से पश्चिम की ओर समुद्र के किनारे किनारे समतल मैदान है यह हरा भरा है। इस मैदान के निवासी अधिकतर मरहटे हैं। लम्बे समय तक ये लोग शेष दक्षिणी भारत के निवासियों से पश्चिमी घाट के कारण पृथक रहे। आज भी इन लोगों में फैली हुई प्रथायें और परम्परायें भारत के अन्य भागों में दृष्टिगोचर नहीं होतीं। पश्चिमी घाट में अनेकों ऐसे स्थान मिले जहां पर ...

तथा बोलन ने खण्डित किया है और इन्हीं दो रास्तों द्वारा विदेशी हमारे देश में आते रहते हैं। अन्यथा इन पर्वत मालाओं ने हम देश को सदा सुरक्षित रक्खा है। हिमालय पर्वत ने अनेकों प्रकार से भारतीय इतिहास को प्रभावित किया है। यहां की संस्कृति चीन तथा तिब्बत की संस्कृतियों से भिन्न रह सकी। हमारे रीति रिवाज भाषा, धार्मिक सिद्धान्त और विश्वास पूर्ण रूप से अपनी विशेषता को स्थिर रख सके। इस पर्वत से निकलने वाली महान नदियों ने उपजाऊ मैदान उत्पन्न किये, जिनके कारण उत्तरी भारत धनधान्य से परिपूर्ण रहा और यहां के रहने वाले आनन्द का जीवन व्यतीत करते रहे। इसके अतिरिक्त बंगाल की खाड़ी से चलने वाले मानसून हिमालय पर्वत से टकराकर उत्तरी मैदानों को वर्षा द्वारा और भी अधिक उपजाऊ बनाते रहे। ये मैदान वर्ष भर हरे भरे बने रहते हैं।

इस पर्वत ने उत्तर से आने वाली ठंडी हवाओं को रोका और उत्तरी भारत को ऊसर और ठंडा प्रदेश होने से बचाया। इस महान पर्वत ने ऐसे रमणीय तथा शान्ति पूर्ण स्थान प्रदान किये, जहां पर हमारे ऋषि मुनियों ने अपने आश्रमों का निर्माण किया और संघर्षात्मक जीवन से बच कर उस अलौकिक और महान संस्कृति को जन्म दिया जिसने आगे चल कर बुद्ध तथा महावीर जैसे उत्तम पुरुष उत्पन्न किये। भारत की सच्ची संस्कृति इन्हीं शान्त आश्रमों से उठ कर शेष भारत में विकसित हुई और दूसरे देशों में फैलकर मनुष्य जाति का कल्याण किया।

खैबर और बोलन के दर्रों ने भारत में आने वाली विदेशी जातियों के लिये प्रवेश द्वार का काम किया। उत्तर से आने वाले आक्रमण कारियों ने इन दर्रों के द्वारा ही प्रवेश करके भारतीय शान्ति को समय समय पर भंग किया। आर्य, ईरानी, यूनानी, सिदियन, हूण, तुर्क, तातारी तथा मंगोल इन्हीं दर्रों द्वारा भारत में आये। प्राचीन काल में जब जब भारत ने इन दर्रों की सुरक्षा की ओर से मुख मोड़ा तब तब ही उसको विनाश कारी आक्रमण सहन करने पड़े।

सिन्ध और गंगा यमुना के विस्तृत मैदान

ये मैदान पर्वतों से लाई हुई मिट्टी से निर्मित हैं। पैदावार की दृष्टि से ये संसार भर में अतिउत्तम हैं। इन मैदानों में रहने वाले मनुष्य धनधान्य से परिपूर्ण रहे हैं। जीवन संघर्षात्मक न होने के कारण इन मैदानों के निवासियों ने कला कौशल, विद्या आदि क्षेत्रों में बड़ी उन्नति की है। तक्षशिला तथा नालंदा जैसे विश्व विख्यात शिक्षा केन्द्र इन मैदानों में ही फले फूले। इन मैदानों के धन और संपत्ति ने विदेशियों को सदा आकर्षित किया और जो विदेशी आक्रमणकारी पंजाब को पार कर सके उन्होंने गंगा के मैदान को भी भरकर रौंदा। इन मैदानों में सुगमता पूर्वक अनेक नगरों ने जन्म लिया। ये नगर नदियों के किनारे फले फूले। व्यापार वाणिज्य के केन्द्रों का निर्माण हुआ। यहां पर प्राचीन एवम् अर्वाचीन साम्राज्यों की

कुरीतियों को चुनौती देने वाले महात्मा बुद्ध ने इसी प्रदेश में जन्म लिया।

राजस्थान

यह वह प्रदेश है जो रेगिस्तान में फैले हुये छोटे छोटे राज्यों से बना है। प्राचीन काल में जिन राज्यों ने इस रेगिस्तान में जन्म लिया, रेगिस्तान ने उनकी स्वतन्त्रता की अद्‌भुत ढंग से सुरक्षा की। अलाउद्दीन के समय तक किसी भी मुस्लिम सुल्तान ने उस ओर बढ़ने की हिम्मत नहीं की और अलाउद्दीन भी वहां के राज्यों का दमन करने में पूर्ण रूप से सफल न हो सका। रेगिस्तान के कारण ही महान प्रतापी राजा राणा प्रताप सिंह प्रभावशाली अकबर को चुनौती देने में सफल रहा।

विन्ध्याचल पर्वत तथा दक्षिण का पठार

विन्ध्याचल की पर्वत श्रेणियां, नर्बदा, तथा ताप्ती की घाटियां और इनके आस पास फैले हुये सघन वनों ने उत्तरी तथा दक्षिणी भारत के बीच एक दीवार का काम किया है, दोनों प्रदेशों की संस्कृतियों को मिलने से रोका है। शताब्दियों तक इन भिन्न प्रदेशों में एक दूसरे से पृथक रह कर ही संस्कृतियां विकसित होती रहीं और दक्षिणी भारत पर उत्तर से आक्रमण न हो सके। आगे चल कर अशोक, समुद्रगुप्त, अलाउद्दीन खिलजी, अकबर तथा औरंगजेब ने दक्षिण को अपने साम्राज्य में मिलाने के प्रयत्न किये और इस प्रदेश को उत्तरी भारत के साथ राजनैतिक सूत्र में बांधना चाहा परन्तु थोड़ा ही अवसर मिलने पर ये राजनैतिक सूत्र ढीला पड़कर छिन्न भिन्न होता रहा और दक्षिणी भारत अपने ही राग में मस्त चलता रहा। भारत में अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित होने पर ही सच्चे अर्थों में राजनैतिक एकता स्थापित हुई।

पूर्वी तथा पश्चिमी घाट

विन्ध्याचल से दक्षिण की ओर मैदान तथा पूर्वी और पश्चिमी घाट फैले हुए हैं। पश्चिमी घाट की पर्वत श्रेणियां सागरीय तट के समानान्तर लगभग ७०० मील तक चली गई हैं। ये समुद्र तट से लगभग ३००० से ६००० फीट तक ऊँची हैं। इन श्रेणियों से पश्चिम की ओर समुद्र के किनारे किनारे समतल मैदान है। वह हरा भरा है। उस मैदान के निवासी अधिकतर मरहठे हैं। लम्बे समय तक ये लोग शेष दक्षिणी भारत के निवासियों से पश्चिमी घाट के कारण पृथक रहे। आज भी इन लोगों में फैली हुई प्रथायें और परम्परायें भारत के अन्य भागों में दृष्टिगोचर नहीं होती। पश्चिमी घाट में अनेकों ऐसे स्थान मिले जहां पर अनेक और अजय दुर्गों का निर्माण हो सका। मरहठा जाति के इतिहास में इन दुर्गों

महत्व पूर्ण भाग लिया। महाराष्ट्र की भौगोलिक स्थिति ने मरहठा जाती की इतिहास में अमर करने में अद्भुत कार्य किया। महा राष्ट्र की पहाड़ियों, घाटियों तथा सघन जंगलों ने छत्रपति शिवाजी को ऐसे अवसर प्रदान किये कि वह सफल गुरिल्ला युद्ध कर सके और सम्राट औरंगजेब की दक्षिणी नीति को सफल होने से रोक सके।

पूर्वी किनारे पर पूर्वी घाट तक एक मैदान फैला हुआ है। इस मैदान में वैभवशाली नगरों और विशाल साम्राज्यों का निर्माण हुआ और सभ्य एवम् संस्कृत लोगों का विकास हुआ। इस तट के बन्दरगाहों द्वारा ही भारत का व्यापार जावा, सुमात्रा, बर्मा, स्याम तथा हिन्द चीन के साथ होता रहा और भारतीय सभ्यता इन पूर्वीय प्रदेशों पर प्रभाव डालती रही।

भारत के दक्षिण में हिन्द महासागर फैला हुआ है। शताब्दियों तक इस सागर ने भारत की सुरक्षा को कायम रक्खा और योरोपीय जातियों से पहले कभी भी इस ओर से आक्रमण नहीं हुआ। इसी कारण से भारत निवासियों का कभी भी अच्छे नाविक बनने की ओर ध्यान नहीं गया और न उन्होंने कोई श्रेष्ठ जल सेना ही बनाई और न शक्तिशाली जहाजी बेड़े बना कर नवीन देशों की खोज की। यदि पहले से ऐसा हुआ होता तो नवीन संसार में भारत किसी भी योरोपीय जाति से पीछे न रहता और न हम दासता की बेड़ियों में ही जकड़े जाते। भारत के समुद्र तट में कटावों के अभाव के कारण अच्छे बन्दरगाहों की कमी रही।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत की भौगोलिक स्थिति ने ही उसको एक दुर्ग के समान बनाये रक्खा और अनेकों प्रकार से उसके इतिहास को प्रभावित किया।

Q. 2—"Indian people are a mixture of various races." Comment.

प्रश्न २—तुम किस प्रकार सिद्ध करोगे कि भारत निवासी भिन्न भिन्न जातियों का सम्मिश्रण हैं ?

उत्तर—भारत एक विशाल देश है। इसकी जनसंख्या समस्त संसार की जनसंख्या का पांचवां भाग है। इसका क्षेत्रफल इंगलैंड के क्षेत्रफल का बीस गुना है। भारत की विशाल जनसंख्या किसी एक जाति से सम्बन्धित नहीं अपितु बहुत सी जातियों का सम्मिश्रण है। कौन सी जाति इस पवित्र स्थान में आदिकाल से निवास करती थी, यह निश्चित रूप से कहना लगभग असम्भव है। कब और कहां से आकर के भारत में पदार्पण किया और इस पवित्र भूमि को अपना घर बनाया, इसके विषय में निश्चयात्मक रूप से कुछ कहना असम्भव है। इस विषय में भिन्न [illegible]

विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि सर्व प्रथम दक्षिणी भारत में मनुष्य दिखाई पड़े। ये मनुष्य कहाँ से आये इस विषय में कुछ ज्ञात नहीं। उत्तरी भारत में उसके पश्चात मानव जाति फैली।

शताब्दियों पश्चात अन्य जातियां एक दूसरे के बाद भारत में पदार्पण करती रहीं और इस देश को ही अपना निवास स्थान बनाती गई। द्राविड़, आर्य, ईरानी, यूनानी, शक, यूची, हूण, मुसलमान तथा योरप निवासी भारत में आये और इसको अपना निवास स्थान बनाया। फल यह हुआ कि ये जातियां परस्पर मिलती गई और इनकी भिन्नता धीरे धीरे मिटती चली गई। इस प्रकार भारत के लोग इन सब जातियों से मिल कर एक मिश्रित संस्कृति को जन्म दे सके।

जंगली जातियां—कोल, भील, गोंड और सन्थाल जंगली जातियों में शामिल हैं। इनका कद छोटा, नाक चपटी, बाल मोटे और इनका शरीर श्याम वर्ण है। कोल और सन्थाल भारत के उत्तरी पूर्वी भाग अथवा उड़ीसा में बसे हुये हैं। भील अधिकतर राजस्थान और मध्य प्रदेश के कुछ भागों में बसे हुये हैं। ये एक विशेष भाषा का प्रयोग करते हैं। यह मुंडा भाषा कहलाती है। यह आसाम ब्रह्मपुत्र तथा ईरावदी के निकट रहने वालों की भाषा से मिलती है। अफ्रीका के निकट स्थित मैडागास्कर के निवासियों से भी यह भाषा मेल खाती है। कुछ विद्वानों का मत है कि यही लोग यहां के मूल निवासी थे। इनमें स्टेन कोनो तथा डा० हैडोन प्रमुख है। परन्तु यह भी निश्चित रूप से कहना कठिन है। हां यह बात अवश्य है कि जब इनसे शक्तिशाली जातियां भारत में आई तो इनको पहाड़ों और जंगलों में सुरक्षा लेनी पड़ी।

द्राविड़—इनके विषय में भी कि ये भारत के मूल निवासी थे अथवा विदेशों से यहां आये, विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। कुछ विद्वानों के मतानुसार द्राविड़ जाति ही भारत की प्राचीनतम जाति थी परन्तु दूसरा मत यह है कि ये लोग कोल और भीलों से भिन्न थे और उनसे अधिक प्रगति शील भी थे। तीसरे मत के अनुसार ये अफ्रीका के नीग्रो निवासियों से सम्बन्धित थे क्योंकि दक्षिण का पठार धरातल द्वारा एक ओर अफ्रीका महाद्वीप तथा दूसरी ओर आस्ट्रेलिया महाद्वीप से मिला हुआ था। परन्तु यह मत कुछ शक्तिशाली प्रतीत नहीं होता क्योंकि नीग्रो लोगों से ये किसी प्रकार भी नहीं मिलते। कुछ विद्वान सिन्ध घाटी में रहने वाले प्रचीनतम तथा उन्नतिशील जाति से द्राविड़ों का सम्बन्ध जोड़ते हैं। परन्तु सबसे शक्तिशाली मत यही है कि ये लोग उत्तर पश्चिम के पहाड़ी मार्गों से भारत में आये और यहाँ की कोल इत्यादि जंगली जातियों को उपजाऊ भागों से निकाल कर स्वयं उनके स्थान पर बस गये। फिर ये समस्त उत्तरी भारत में फैल गये।

इसके पश्चात इनसे अधिक शक्तिशाली और सुसंगठित आर्य जाति ने देश में पदार्पण किया और द्राविड़ों को उत्तरी भारत से निकाल दक्षिणी भारत जाने के लिये विवश किया। अब यह जाति अधिकतर दक्षिणी भारत में ही दृ गोचर होती है। इस प्रदेश में इन्होंने अपनी संस्कृति का विकास और प्रसार कि ये आर्यों से मिल जुल गये परन्तु इनकी अपनी संस्कृति ने भी अच्छी उन्नति और आर्य सभ्यता पर अपनी छाप छोड़ी। द्राविड़ संस्कृति आर्य संस्कृ अनेकों बातों में भिन्न थी। प्रथम तो द्राविड़ों में सामाजिक व्यवस्था मातृसत्तात्म थी, जबकि आर्यों में पितृसत्तात्मक व्यवस्था थी। द्राविड़ों का जीवन, परम्परा आचार विचार आर्यों से सर्वथा भिन्न थे।

आर्य्य—इस जाति के लोग श्वेत वर्ण, ऊंचे कद, लम्बी नाक तथा चौ मस्तक वाले थे। यह भारत में कब और कहां से आये, क्या उद्देश्य लेक आये, इन विषयों पर विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। एक मत यह है कि यह लोग यहीं के मूल निवासी थे, कहीं बाहर से ये नहीं आये। कुछ विद्वान तिब्बत को इन का मूल स्थान मानते हैं। प्रोफैसर मैक्समूलर (Prof. Maxmuler) का विचार है कि आर्य मध्य एशिया में निवास करते थे। किसी कारण से इनको वह प्रदेश छोड़ना पड़ा। फलतः इनकी एक शाखा ईरान और भारत की ओर आई। इसी शाखा के लोग हिन्दुकुश पर्वत को लांघ कर, खैबर आदि दर्रों द्वारा भारत में प्रविष्ट हुवे। यह लोग एक दम भारत में नहीं आये अपितु इन का आगमन शनै शनै होता रहा। इनके आने का समय भी पूर्ण रूप से निश्चित नहीं किया गया। विद्वानों का मत है कि यह ईसा से लगभग १५०० या २०००, वर्ष पूर्व भारत में आये परन्तु भारतीय विद्वानों के मतानुसार यह तिथि और भी अतीत में जा पड़ती है। यह समय ईसा से ४००० वर्ष पूर्व का कहा जाता है।

यह जाति यहां की प्राचीन जातियों तथा द्राविड़ों से कहीं अधिक सुसंगठि और शक्तिशाली थी और उन्होंने भारत में प्रवेश कर पंजाब पर अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया। फिर धीरे २ यह लोग पूरब दक्षिण की ओर बढ़े। द्राविड़ से इन को घोर युद्ध करना पड़ा। इसीलिये इनको उत्तरी भारत में फैलने में अधि समय लगा। प्राचीन जातियों से इस घोर संघर्ष का यह फल हुआ। कि अनेकों मनुष्य विकराल के गाल में चले गये। जो बचे वह या तो पहाड़ियों में घुस गये या सघन जंगलों में चले गये। अनेकों ने विजेताओं के सम्मुख घुटने टेक दिये और निम्न श्रेणी में रहकर उनकी सेवा करने लगे। द्राविड़ जाति दक्षिणी भारत की ओर प्रस्थान कर गई। जिन लोगों से आर्य लड़े उनको, उन्होंने बड़ी बुराई की है। अपनी पुस्तकों में उनको दस्यु इत्यादि कह कर पुकारा है।

आर्य्य सभ्य लोग थे। ये ग्रामों में निवास करते थे। और इनका प्रधान पेशा कृषि था। ये पशु भी पालते थे और इनका सामाजिक ढांचा भी सुन्दर था। भारतीय सभ्यता में आर्यों की सभ्यता प्रधान है।

मंगोल —यह जाति तिब्बत के पठारों तथा चीन के भागों में निवास करती थी। इन लोगों का कद छोटा, नाक चपटी, मुख चपटा, गालों की हड्डियां उभरी हुई होती हैं। ये वे ही लोग हैं जो अधिकतर तिब्बत, चीन, स्याम आदि देशों में बसे हुये हैं। जब इनके देशों में जनसंख्या अधिक हुई और पृथ्वी का अभाव हुआ तो ये नई भूमि की तलाश में भारत की ओर बढ़े। परन्तु तिब्बत के पठारों में पहुंच कर, जब इन्हें भी हिमालय पर्वत की आकाश को चूमने वाली चोटियां दिखाई पड़ती तो इनका साहस टूट गया। परन्तु भूमि की भूख ने इनको बैठने न दिया और ये ब्रह्मपुत्र की घाटी की ओर बढ़े तथा भारत के उत्तर-पूर्व की ओर से इन्होंने भारत में प्रवेश किया और बंगाल तथा आसाम में बस गये। आज भी ब्रह्मा, आसाम, भूटान तथा नैपाल में ये लोग निवास करते हैं। गोर्खा और भूटानी मंगोल जाति से सम्बन्धित हैं।

ईरानी—ऐतिहासिक युग में अनेकों जातियां भारत में आई और बस गई। ईरानियों ने भी भारत में प्रवेश किया और इस देश को अपना निवास स्थान बनाया। ये लोग आर्यों से ही सम्बन्ध रखते थे। प्राचीन काल में जब मध्य एशिया में जातियों की उथल पुथल मची थी और आर्य अन्य देशों की ओर बढ़े थे तो उनकी एक शाखा ईरान में भी बस गई थी। आर्यों और इन लोगों के आचार विचार तथा देवताओं के नामों में आज भी बहुत समता है। परन्तु इन दोनों जातियों ने पृथक पृथक संस्कृतियों का निर्माण किया है।

यूनानी—ईसा से ३२६ वर्ष पूर्व सिकन्दर महान ने, जो यूनान का निवासी था और जिसकी गिनती संसार के महान विजेताओं में की जाती है, अपनी सेना के साथ भारत में प्रवेश किया। पंजाब में उसको स्वतन्त्र राज्य मिले परन्तु इनके ऊपर विजय प्राप्त करने में उसे घनी कठिनाई न पड़ी। हां, पुरु नामक राजा से उसे घोर युद्ध करना पड़ा। सिकन्दर ने समस्त पंजाब को जीत लिया। जब उसे वापस लौटना पड़ा तो इसने अपना एक सेनापति सेल्युकस अफगानिस्तान और पंजाब में छोड़ दिया। सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात वह इन देशों का स्वतन्त्र शासक हो गया। आगे चलकर चन्द्रगुप्त मौर्य ने इन लोगों को भारत से भगा दिया। इस प्रकार यूनानियों तथा भारतियों का सम्पर्क अधिक न रहा और यूनानी सभ्यता ने भारतीय सभ्यता को विशेष रूप से प्रभावित न किया। फिर भी अनेकों यूनानियों ने भारत को अपना घर बना लिया और वे यहीं के लोगों में घुल मिल गये।

इसके पश्चात् इनसे अधिक शक्तिशाली और सुसंगठित आर्य जाति ने इस देश में पदार्पण किया और द्राविड़ों को उत्तरी भारत से निकाल दक्षिणी भारत जाने के लिये विवश किया। अब यह जाति अधिकतर दक्षिणी भारत में ही दृष्टिगोचर होती है। इस प्रदेश में इन्होंने अपनी संस्कृति का विकास और प्रसार किया। ये आर्यों से मिल जुल गये परन्तु इनकी अपनी संस्कृति ने भी अच्छी उन्नति की और आर्य सभ्यता पर अपनी छाप छोड़ी। द्राविड़ संस्कृति आर्य संस्कृति से अनेकों बातों में भिन्न थी। प्रथम तो द्राविड़ों में सामाजिक व्यवस्था मातृसत्तात्मक थी, जबकि आर्यों में पितृसत्तात्मक व्यवस्था थी। द्राविड़ों का जीवन, परम्परायें आचार विचार आर्यों से सर्वथा भिन्न थे।

आर्य—इस जाति के लोग श्वेत वर्ण, ऊंचे कद, लम्बी नाक तथा चौड़े मस्तक वाले थे। यह भारत में कब और कहां से आये, क्या उद्देश्य लेकर आये, इन विषयों पर विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। एक मत यह है कि यह लोग यहीं के मूल निवासी थे, कहीं बाहर से ये नहीं आये। कुछ विद्वान तिब्बत को इन का मूल स्थान मानते हैं। प्रोफैसर मैक्समूलर (Prof. Maxmuler) का विचार है कि आर्य मध्य एशिया में निवास करते थे। किसी कारण से इनको वह प्रदेश छोड़ना पड़ा। फलतः इनकी एक शाखा ईरान और भारत की ओर आई। इसी शाखा के लोग हिन्दुकुश पर्वत को लांघ कर, खैबर आदि दर्रों द्वारा भारत में प्रविष्ट हुये। यह लोग एक दम भारत में नहीं आये अपितु इन का आगमन शनैः शनैः होता रहा। इनके आने का समय भी पूर्ण रूप से निश्चित नहीं किया गया। विद्वानों का मत है कि यह ईसा से लगभग १५०० या २०००, वर्ष पूर्व भारत में आये परन्तु भारतीय विद्वानों के मतानुसार यह तिथि और भी अतीत में जा पड़ती है। यह समय ईसा से ४००० वर्ष पूर्व का कहा जाता है।

यह जाति यहां की प्राचीन जातियों तथा द्राविड़ों से कहीं अधिक सुसंगठित और शक्तिशाली थी और इन्होंने भारत में प्रवेश कर पंजाब पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। फिर धीरे २ यह लोग पूरब दक्षिण की ओर बढ़े। द्राविड़ों से इन को घोर युद्ध करना पड़ा। इसीलिये इनको उत्तरी भारत में फैलने में अधिक समय लगा। प्राचीन जातियों से इस घोर संघर्ष का यह फल हुआ। कि अनेकों अकुशल विनाश के गर्भ में चले गये। जो बचे वह या तो पहाड़ियों में छुप गये या सघन जंगलों में चले गये। अनेकों ने विजेताओं के सम्मुख घुटने टेक दिये और निम्न श्रेणी में रह कर इनकी सेवा करने लगे। द्राविड़ जाति दक्षिणी भारत की ओर प्रस्थान कर गई। जिन लोगों से आर्यों की टक्कर, इन्होंने बड़ी बुराई की है। अपनी पुस्तकों में इनको दस्यु इत्यादि कह कर पुकारा है।

आर्य सभ्य लोग थे। ये ग्रामों में निवास करते थे। और इनका प्रधान पेशा कृषि था। ये पशु भी पालते थे और इनका सामाजिक ढांचा भी सुन्दर था। भारतीय सभ्यता में आर्यों की सभ्यता प्रधान है।

मंगोल—यह जाति तिब्बत के पठारों तथा चीन के भागों में निवास करती थी। इन लोगों का कद छोटा, नाक चपटी, मुख चपटा, गालों की हड्डियां उभरी हुई होती हैं। ये वे ही लोग हैं जो अधिकतर तिब्बत, चीन, स्याम आदि देशों में बसे हुये हैं। जब इनके देशों में जनसंख्या अधिक हुई और पृथ्वी का अभाव हुआ तो ये नई भूमि की तलाश में भारत की ओर बढ़े। परन्तु तिब्बत के पठारों में पहुंच कर, जब इन्हें भी हिमालय पर्वत की आकाश को चूमने वाली चोटियां दिखाई पड़ती तो इनका साहस टूट गया। परन्तु भूमि की भूख ने इनको बैठने न दिया और ये ब्रह्मपुत्र की घाटी की ओर बढ़े तथा भारत के उत्तर-पूर्व की ओर से इन्होंने भारत में प्रवेश किया और बंगाल तथा आसाम में बस गये। आज भी ब्रह्मा, आसाम, भूटान तथा नेपाल में ये लोग निवास करते हैं। गोर्खा और भूटानी मंगोल जाति से सम्बन्धित हैं।

ईरानी—ऐतिहासिक युग में अनेकों जातियां भारत में आई और बस गई। ईरानियों ने भी भारत में प्रवेश किया और इस देश को अपना निवास स्थान बनाया। ये लोग आर्यों से ही सम्बन्ध रखते थे। प्राचीन काल में जब मध्य एशिया में जातियों की उथल पुथल मची थी और आर्य अन्य देशों की ओर बढ़े थे तो उनकी एक शाखा ईरान में भी बस गई थी। आर्यों और इन लोगों के आचार विचार तथा देवताओं के नामों में आज भी बहुत समता है। परन्तु इन दोनों जातियों ने पृथक पृथक संस्कृतियों का निर्माण किया है।

यूनानी—ईसा से ३२६ वर्ष पूर्व सिकन्दर महान ने, जो यूनान का निवासी था और जिसकी गिनती संसार के महान विजेताओं में की जाती है, अपनी सेना के साथ भारत में प्रवेश किया। पंजाब में उसको स्वतन्त्र राज्य मिले परन्तु इनके ऊपर विजय प्राप्त करने में उसे घनी कठिनाई न पड़ी। हां, पुरु नामक राजा से उसे घोर युद्ध करना पड़ा। सिकन्दर ने समस्त पंजाब को जीत लिया। जब उसे वापस लौटना पड़ा तो इसने अपना एक सेनापति सेल्युकस अफगानिस्तान और पंजाब में छोड़ दिया। सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात वह इन देशों का स्वतन्त्र शासक हो गया। आगे चलकर चन्द्रगुप्त मौर्य ने इन लोगों को भारत से भगा दिया। इस प्रकार यूनानियों तथा भारतियों का सम्पर्क अधिक न रहा और यूनानी सभ्यता ने भारतीय सभ्यता को विशेष रूप से प्रभावित न किया। फिर भी अनेकों यूनानियों ने भारत को अपना घर बना लिया और वे यहीं के लोगों में घुल मिल गये।

शक अथवा सिथियन—यह जाति भी मध्य एशिया में रहती थी। ईस लगभग २०० वर्ष पूर्व इन्होंने भारत में पदार्पण किया और कुछ समय के पर इन्होंने भी भारत को अपना निवास स्थान बना लिया। यहां की संस्कृति को इन्ह स्वीकार किया और यहां के रहने वालों के साथ पूर्ण रूप से घुल मिल गये लोग बनजारों की जाति के थे।

यूची कुशान—ईसा से पूर्व प्रथम शताब्दी में इस जाति ने भारत की प्रस्थान किया। ये लोग भी मध्य एशिया से ही आये थे। ये भी बनजारों की ज के लोग थे। कुशान लोगों ने उत्तरी भारत में एक विशाल साम्राज्य का निर्माण कि और इस प्रकार भारत में राजनैतिक विजय प्राप्त की परन्तु विशेष रूप से यहां संस्कृति को प्रभावित न कर सके। ये भी भारत में ही बस गये और यहां सभ्यता को ही अंगीकार कर लिया। कनिष्क कुशान वंश का बड़ा ही प्रभावशा सम्राट हुआ है। इसके साम्राज्य में पंजाब, काश्मीर, सिन्ध, संयुक्तप्रा अफगानिस्तान, बैक्टिरिया, काशगर आदि प्रदेश सम्मिलित थे।

हूण—ये लोग मध्य एशिया के घास के उन मैदानों में निवास करते थे स्टेपीज कहलाते हैं। जातियों की उथल पुथल के समय इनके गिरोह मध्य एशि से निकल पड़े। पांचवी तथा छटी शताब्दी में इनकी एक शाखा ने जिसे श्वेत हू कहते थे, भारत की ओर प्रस्थान किया और इस देश पर भयंकर आक्रमण किय ये लोग बड़े भयंकर और क्रूर होते थे। ये लम्बे कद के तथा गोरे रंग के होते थे कुछ विद्वानों के मतानुसार आधुनिक जाट तथा गूजर इन श्वेत हूणों की ही सन्त हैं। समय के साथ साथ ये लोग भी भारतवासियों में मिलजुल गये और यहां संस्कृति को इन्होंने अपना लिया। इन लोगों का प्रथम आक्रमण ४५५ ई० में हु था परन्तु प्रतापी सम्राट स्कन्दगुप्त ने वीरता पूर्वक उनका सामना कर उन्हें परास्त क दिया। इसके दस वर्ष पश्चात फिर इनके झुण्ड के झुण्ड आने आरम्भ हुये। समस्त पंजाब में फैल गये। उन्होंने बड़े बड़े अत्याचार पूर्ण काम किये। स्कन्दगु जीवन भर उनसे लड़ता रहा परन्तु वह हूणों को भारत से निकालने में असम रहा। इस जाति का पहला राजा तूरमाण हुआ। उसके पश्चात मिहिरकुल रा बना। वह बहुत निर्दयी राजा था। उसने सैकड़ों बुद्ध के अनुयाइयों को मौत घाट उतारा फिर हूण शान्ति पूर्वक भारत में बस गये और साधारण व्यक्तियों क तरह रहने लगे।

मुसलमान—मुसलमानों ने सातवीं शताब्दी से भारत में प्रवेश आरम्भ किया इनमें अरब, तुर्क, ईरानी, अफगानी तथा मंगोल सभी सम्मिलित थे। सातवं सदी में अरबों ने राजनैतिक विजय प्राप्त की परन्तु अरब सभ्यता भी भारतीय संस्कृति से प्रभावित हुये बिना न रह सकी।

११ वीं तथा १२ वीं शताब्दी में मुसलमानों के लगातार आक्रमण, प्रारम्भ हो गये और धर्म प्रसार तथा लूट खसोट के कारण यवन बराबर भारत पर आक्रमण करते रहे और यहां स्थायी रूप से बसने लगे। पठान सुल्तानों की संरक्षता में हिन्दू तथा मुस्लिम सभ्यताओं ने मेल खाना आरम्भ कर दिया। यवन तथा भारतीय मिल जुल कर रहने लगे। यवनों ने भी भारत को ही अपना देश स्वीकार कर लिया। मुगलों के समय तक ये मेल मिलाप बहुत बड़ी सीमा तक पहुँच चुका था और सम्राट अकबर के समय में दोनों सभ्यताओं का मिश्रण अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच चुका था। कबीर, रामानन्द, चैतन्य महाप्रभु दोनों सभ्यताओं के सम्मिश्रण के जीते जागते उदाहरण हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि मुसलमान भी भारत के निवासियों में ही मिल जुल गये।

योरप निवासी—१२ वीं तथा १६ वी शताब्दियों में योरप में औद्योगिक क्रांति का जन्म हुआ और उसके पश्चात हर क्षेत्र में इस क्रान्ति के प्रभाव पड़ने लगे। जहाज भी अच्छे प्रकार के बनने लगे और योरप निवासी नये नये देशों की खोज करने लगे। १६ वीं तथा १७ वीं शताब्दी में इन जातियों ने समुद्र की ओर से भारत में प्रवेश किया। इनका उद्देश्य व्यापार करना था। पुर्तगाली, डच तथा फ्रांसीसी और अंग्रेज मुख्यतः भारत में आये और भारत की राजनैतिक दुर्बलता के कारण इन जातियों को यहां के राजनैतिक संघर्ष में घुसने का अवसर प्राप्त हो गया। प्रथम तीन जातियां इस संघर्ष में परास्त हुई और अंग्रेज अन्त में भारत के स्वामी बन गये। उन्होंने भारत की राजनैतिक स्थिति को संगठित किया और परस्पर लड़ने वाली इकाइयों को एक सूत्र में बाँध दिया। लगभग १५० वर्ष तक भारत इंग्लैंड के अधिकार में रहा। इस समय में भारतीय सभ्यता पर योरोपीय सभ्यता का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। अंग्रेज संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त करने वाले नौजवानों ने पूर्णरूप से अपनी वेश भूषा को बदल दिया। इतना ही नहीं बल्कि इन लोगों ने भारतीय संस्कृति की मखौल उड़ानी प्रारम्भ कर दी। परन्तु अंग्रेजों ने भारतीय सभ्यता स्वीकार न की। अन्त में १५ अगस्त सन् ४७ को भारत से अंग्रेजी साम्राज्य का भी अन्त हो गया परन्तु योरप निवासियों की सभ्यता की छाप आज भी भारत में पूर्ण रूप से दिखाई पड़ती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न जातियों ने भारत में प्रवेश किया और बहुतों ने यहां पर अपने साम्राज्य स्थापित किये परन्तु अन्त में वे जातियां भारत निवासियों में ही मिल जुल गई। यहीं की सभ्यता को उन्होंने अपना लिया और इस प्रकार आज जो भारतवासी दिखाई पड़ते हैं वे इन भिन्न भिन्न जातियों का ही सम्मिश्रण है।

—:०:—

Q. 3—"There is a fundamental unity even in countless diversities of races, castes, languages, dress, customs and traditions, in India." Justify it. V. A. Smith.

प्रश्न ३—भारतवर्ष में वंश, वर्ण, भाषा, वेषभूषा व रीति रिवाज सम्बन्धी अनगिनत विभिन्नताओं में भी एक अखंड सार्वभूत एकता है। इस कथन की पुष्टि कीजिये। वी ए. स्मिथ।

उत्तर—भारत का आकार विशाल है। यह विभिन्न धर्मों, जातियों, सम्प्रदायों और संस्कृतियों का देश है। यहां के निवासी असभ्य जातियों से लेकर अर्धसभ्य तथा सभ्य जातियों का सम्मिश्रण है। इस देश में भिन्न भिन्न धर्मों, हिन्दू, बुद्ध, जैन, मुस्लिम, ईसाई के अनुयायी निवास करते हैं। भिन्न भिन्न जातियां भिन्न भिन्न प्रदेशों में विभक्त होकर भिन्न भिन्न भाषायें बोलती हैं। इनकी वेश भूषा भी भिन्न २ दिखाई पड़ती है। इस विशाल देश में प्राकृतिक अवस्थाएं भी अत्याधिक विषम हैं। प्राचीन काल में ऐसे कम अवसर आये जबकि राजनैतिक एकता स्थापित हो सकी हो। फलतः साधारणतया यहां पर राजनैतिक एकता का अभाव ही रहा। इन कारणों से उस व्यक्ति को जो इस देश को दूर खड़ा होकर देखता है, यहाँ पर एकता का अभाव सा लगता है। परन्तु यदि गहराई में उतर कर इस देश का अध्ययन किया जाय तो पता चलेगा कि जाति, धर्म और भाषा प्राकृतिक अवस्था की विषम विभिन्नता होने पर भी इस देश में अखंड मौलिक एकता है जिसे कोई भी विवेकशील इतिहासकार अस्वीकार नहीं कर सकता। भिन्न भिन्न पहलुओं से इस एकता को प्रदर्शित किया जा सकता है।

(१) भौगोलिक एकता—भौगोलिक दृष्टि से भारत एक इकाई है और प्राकृतिक सीमाओं से सुरक्षित है। इसकी भौगोलिक एकता केवल भौतिक धरातल पर ही नहीं अपितु भारतवासियों की बुद्धि तथा भावनाओं में भी पूर्ण रूप से उपस्थित है। यह एकता इस बात से भी प्रकट होती है कि महाराजा भरत के नाम पर इस सम्पूर्ण देश का नाम भारत पड़ा। हमारे प्राचीन ऋषियों ने इस देश को सात नदियों और सात शहरों का देश कहा है। विष्णु पुराण में इस देश की एकता प्रदर्शित करते हुये लिखा है, "समुद्र के उत्तर में, हिमालय के दक्षिण में जो देश है वह भारत नाम का खंड कहलाता है और जहाँ के लोग भरत की सन्तान कहलाते हैं।" भारतीय राजनीतिज्ञों, दार्शनिकों तथा कवियों की कृतियों में भारत की अखंडता हर समय पूर्ण रूप से प्रदर्शित होती है। उन सम्राटों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई है जिन्होंने इस देश की भौगोलिक एकता के साथ साथ राजनैतिक एकता भी स्थापित करने के प्रयत्न किये।

(२) राजनैतिक एकता—इस विशाल देश में अधिकतर राजनैतिक एकता का अभाव रहा है। विकेन्द्रीकरण की शक्तियाँ बराबर काम करती रही हैं।

फिर भी यह कहना एक भारी भूल होगी कि प्राचीन भारत निवासी राजनैतिक एकता से सर्वथा अनभिज्ञ थे। इतिहास में कोई समय ऐसा नहीं था जबकि समस्त देश को राजनैतिक एकता के सूत्र में बांधने का प्रयत्न न किया गया हो। प्रतापी और साहसी नरेश बराबर प्रयत्नशील रहे कि समस्त देश को जीत कर महाराजाधिराज कहलायें। चाणक्य के आदेशानुसार चक्रवर्ती सम्राट वही है जो हिमालय से समुद्र तट तक अपना साम्राज्य स्थापित करले। चन्द्रगुप्त, अशोक तथा समुद्रगुप्त ऐसे ही महान प्रतापी सम्राट थे जिन्होंने समस्त देश में एक राजनैतिक एकता उत्पन्न की। मध्यकालीन युग में अलाउद्दीन खिलजी तथा अकबर और औरंगजेब इस आदर्श को ही अपने सामने रख कर विजय पर विजय प्राप्त करते चले गये। इन सम्राटों के समय समूचे देश का शासन प्रबन्ध केन्द्र से ही होता था। इस सत्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि इस देश में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्तियाँ बड़ी ही प्रबल रही हैं और थोड़ा अवसर मिलने पर भी उन्होंने भारतीय रंगमंच पर नग्न नृत्य किया है। परन्तु केन्द्रीकरण की प्रवृत्तियाँ तथा उनको कार्यान्वित करने के प्रयत्नों का कभी भी यहां अभाव नहीं रहा और जब जब इस देश ने किसी महान शासक को जन्म दिया तभी विकेन्द्रीकरण की भावनाओं का अन्त हो गया। ब्रिटिश शासन काल में तो यह एकता सम्पूर्ण रूप से स्थापित हो गई और जब १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ तो सरदार पटेल के प्रयत्नों से छोटे छोटे वे समस्त राज्य जो अब तक देशी राज्य कहलाते थे भारतीय प्रान्तों में मिल गये और सम्पूर्ण रूप से यह देश एक राजनैतिक इकाई बन गया।

(३) सांस्कृतिक एकता भारतवर्ष की मौलिक एकता सबसे अधिक इसके सांस्कृतिक जीवन में व्यक्त हुई है। भिन्न भिन्न जातियां, जिन्होंने भारत में प्रवेश किया और भिन्न भिन्न सभ्यता अपने साथ लाईं, वे सब जातियां भारत की सभ्यता तथा संस्कृति में इस प्रकार घुल मिल गयी जैसे छोटे नाले और नदियां किसी विशाल नदी में मिल जाते हैं। यहां की भिन्न भिन्न भाषाओं तथा धर्मों का स्रोत एक ही है। प्रोफेसर हुमायूं कबीर ने ठीक ही कहा है, "भारतीय संस्कृति की कहानी, एकता समाधानों का समन्वय तथा प्राचीन परम्पराओं के पूर्ण संयोग की उन्नति की कहानी है। यह प्राचीन काल में रही है और जब तक यह विश्व रहेगा तब तक सदैव रहेगी। दूसरी संस्कृतियां नष्ट हो गई परन्तु भारतीय संस्कृति व इसकी एकता अमर है।" रेमजे मैक्डोनल्ड, एक अंग्रेज विद्वान ने भी कुछ ऐसे ही विचार प्रगट किये हैं। उसने लिखा है, "हिन्दू लोग भारत को केवल एक राजनैतिक इकाई के ही रूप में नहीं देखते अपितु उसको एक सार्वभौमिक सत्ता का विषय भी मानते हैं। जिस किसी ने भी इसको अपनाया, ग्रहण किया चाहे मुसलमानों ने, चाहे अंग्रेजों ने और चाहे हिन्दुओं ने उन सभी ने इसको एक मन्दिर

के बाहरी रूप के समान ही समझा, चाहे वह अपनी आध्यात्मिक संस्कृति अनुसार किसी भी देवी की पूजा करें हिन्दू मन्दिर समान ही है। इसी ने भार को अपनी संस्कृति का प्रतीक बनाया, उसे अपनी आत्मीयता से परिपूर्ण किया व उसकी चेतना शक्ति में यह एक बड़ी एकता थी।" भिन्न धर्मावलम्बियों अनुसार, चाहे उनकी उपासना पद्धति कुछ भी रही हो भारतीय संस्कृति प्रधान र है। सांस्कृतिक एकता की भावना यहां के राजनैतिक प्रभाव से ऊपर रह कर स फली फूली है। हिन्दू धर्म ने महान संकटों के बावजूद भी अपने आपको जीवि रक्खा। इसका कारण इस देश की सांस्कृतिक एकता ही थी। भारत देश ा उसकी संस्कृति, शरीर तथा आत्मा के समान हैं। एक के बिना दूसरा व्यर्थ निही हो जाता है। अनेकों कालों में महान विचारकों ने जन्म लिया और हिन्दू धर्म प आक्रमण किये परन्तु ये आक्रमण हिन्दू संस्कृति के विशाल दायरे में ही सीमि रहे। शताब्दियों पश्चात आज भी बुद्ध तथा जैन धर्म हिन्दू धर्म के भाग ही मालू पड़ते हैं। जब हिन्दू सभ्यता की मुस्लिम सभ्यता से टक्कर हुई तो भक्ति मार्ग क जन्म हुआ और जब ईसाई मिशनरियों ने आकर हिन्दू धर्म की क्षति आरम्भ की त आर्य्य समाज और ब्रह्म समाज आदि संस्थाओं का जन्म हुआ। अतः सिद्ध होत है कि हिन्दू धर्म तथा हिन्दू संस्कृति ऐसी लहर है जो लगातार बहती रहती है औ जिसमें ऐसी क्षमता है जो संकटों को पार करके आगे ही बढ़ती रहती है।

(४) धार्मिक एकता—भारत में अनेकों धर्मों ने जन्म लिया तथा कुछ धर्म बाहर से आये। यहां पर जन्म लेने वाले बुद्ध धर्म, जैन धर्म, भक्ति मार्ग, आर्य समाज और ब्रह्म समाज हैं। विदेशों से आने वाले इस्लाम और ईसाई धर्म हैं। जिन धर्मों ने भारत में ही जन्म लिया वह उन दायरे से बाहर न निकले जो हमारे ऋषि मुनियों तथा सन्त साधुओं ने स्थापित कर दिया था। इन धर्मों के चलाने वाले विचारकों ने उन दोषों पर ही आघात किये जो समय समय पर हिन्दू धर्म में पैदा होते रहे थे। अन्यथा इनकी शिक्षा वही थी जो हिन्दू धर्म देता था। इन भिन्न भिन्न धार्मिक सम्प्रदायों ने वेदों को ही प्रमाण माना। एक ईश्वरवाद, आत्मा का अमरत्व, कर्म सिद्धान्त, पुनर्जन्म मोक्ष, निर्वाण आदि ऐसे सिद्धान्त हैं जिनको सभी ने माना है। भारत के भिन्न २ भागों में गौ, ब्राह्मण, स्त्री का सम्मान एक ही प्रकार से किया जाता है। उनके प्राचीन महापुरुष राम और कृष्ण एक सा ही आदर प्राप्त करते हैं। हर भारतवासी उपनिषद, गीता, रामायण, महाभारत तथा पुराणों के प्रति एक सी ही श्रद्धा रखता है। शिव तथा विष्णु के मन्दिर हिमालय से लेकर कुमारी अन्तरीप तथा आसाम से लेकर सिन्ध तक प्राचीन काल से ही दिखाई पड़ते हैं। भारतीय तीर्थ स्थान, जैसे बद्रीनारायण, द्वारका, रामेश्वरम्, जगन्नाथ, गया, बनारस आदि देश के एक छोर से दूसरे छोर

तक फैले हुये हैं। इन स्थानों में पहुंच कर, कौन ऐसा हिन्दू है जिसके मन में एक सी ही पवित्र भावनायें उत्पन्न न होती हों। भारत के कोने कोने में रहने वाले व्यक्ति सिन्ध, गंगा, यमुना, गोदावरी और कावेरी आदि नदियों को एक सी ही आदर की दृष्टि से देखते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत में धार्मिक एकता पूर्ण रूप से विद्यमान है। यहां के भिन्न भिन्न धर्म एक ही वृक्ष की शाखायें हैं। सब यही सिखाते हैं कि सब को प्रेम पूर्वक रहना चाहिये।

(५) भाषा की एकता—संस्कृत भाषा प्राचीन काल में भारत की प्रधान भाषा रही है। यदि इसको भारत में बोली जाने वाली सब भाषाओं की जननी कहें तो उचित ही होगा। वैदिक समय में पाली तथा प्राकृत जन साधारण की भाषा थी और संस्कृत साहित्यिक भाषा थी। ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी में सम्राट अशोक का धार्मिक संदेश प्राकृत द्वारा ही जन साधारण तक पहुँचा। आगे चल कर संस्कृत में धर्मोपदेश हुये। हमारे देश में भिन्न भिन्न प्रान्तों में बोली जाने वाली भाषायें संस्कृत ही से निकली हैं। हिन्दी, मराठी गुजराती, बंगला का मूल स्रोत संस्कृत ही रहा है। दक्षिण में बोली जाने वाली तामिल तथा तैलगू पर संस्कृत की गहरी छाप है। मुस्लिम काल में उर्दू भाषा का जन्म हुआ। यह संस्कृत तथा फारसी के सम्मिश्रण का फल थी। तत्पश्चात अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित हो जाने के कारण हमारे देश में अंग्रेजी भाषा के पैर जमे और अंग्रेजी भाषा का रिवाज दिन पर दिन बढ़ता गया। परन्तु स्वाधीनता प्राप्त होते ही हिन्दी को हमारी राष्ट्रभाषा बना दिया गया जिसका मूल स्रोत भी संस्कृत ही है।

(६) भारत के निवासियों की एकता—भारत में भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न जातियों ने प्रवेश किया। आर्य्य, द्राविड़, शक, सिथियन, हूण, तुर्क पठान और मंगोल आदि भारत में आये परन्तु जब इन्होंने भारत को अपना निवास स्थान बना लिया तो वे यहां के हिन्दू समाज में पूर्ण रूप से मिल जुल गये और इनका अपना अस्तित्व समाप्त हो गया। आज देश में जो अनेकों मुसलमान और इसाइयों की संख्या दिखाई पड़ती है वह हिन्दुओं की ही सन्तान है। औरंगजेब जैसे कट्टर मुसलमान सम्राटों ने हिन्दुओं को बलपूर्वक अपना धर्म परिवर्तन करने के लिये विवश कर दिया था और अनेकों हिन्दू लोभ के वशीभूत होकर अपना धर्म छोड़ बैठे थे यही कारण है कि आज भी हिन्दुओं, मुसलमानों और इसाइयों के अनेकों रीति रिवाज, मेले तथा उत्सव मिलते जुलते हैं। यदि हम नगरों को छोड़ कर ग्रामों में जांय तो हिन्दू, मुसलमानों तथा इसाइयों में अन्तर करना असम्भव हो जाता है। कुछ बातों को छोड़ कर उनके रीति रिवाज, खान पान तथा वेष भूषा एक सी ही दिखाई पड़ती है। एक जाती के लोग दूसरी जाति के उत्सव तथा मेलों में प्रसन्नता-

एकत्र भाग लेते हैं और आनन्द मनाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस विशाल देश में मनुष्यों की भी एकता विद्यमान है।

इस देश में सामाजिक, राजनैतिक रीति रिवाजों और जीवन की भिन्न प्रणालियों में पूर्ण रूप से एकता दृष्टिगोचर होती है। यहां की विषम विभिन्नता में भी एक सारभूत एकता है। इस देश में जो एकता है वह रक्त, वर्ण, भाषा, वेषभूषा, आचार विचार, आदि के भेद भावों का प्रतिरोध कर भारत को सर्व राष्ट्र बनाती है। सर हर्बर्ट रिज़्ले का कथन है, "प्राकृतिक, सामाजिक, भाषा रीतिरिवाज व धर्म सम्बन्धी विभिन्नताओं के अन्तर्गत भी जो कि भारत वर्ष पर दृष्टि करने वाले को खटकती है, हिमालय से कुमारी अन्तरीप तक सामाजिक जीवन एक रूपता सहज में ही दृष्टिगोचर होती है।" भारत की विशालता इसकी मौलिक एकता में बाधक नहीं बल्कि सहायक ही सिद्ध हुई है और यह महान राष्ट्र अपनी एकता के कारण ही आगे बढ़ा है तथा आज भी जीवित है जबकि बहुत से देश जो कभी महान थे आज निर्जीव से होकर अपना अस्तित्व ही खो चुके। भारत पर अनेकों संकट आये, घोर आपत्तियों ने उसे पददलित किया। इसके विरोधियों ने इसका जी भर कर दमन किया परन्तु इन तमाम तूफानों से निकल कर यह महान देश अपने अस्तित्व और महानता को स्थिर रख सका, अपने मान और मर्यादा को सुरक्षित रख सका। इसका कारण था इसकी अपनी मौलिक एकता।

अध्याय २

सिन्ध घाटी की सभ्यता

1959 Q. 4—Give an account of the civilization that prevailed in the valley of Sindh.

प्रश्न ४—उस सभ्यता का पूर्ण वर्णन करो जो सिन्ध घाटी में फैली हुई थी।

उत्तर—१९२० तक विद्वानों का मत था कि भारत में आर्य सभ्यता प्राचीन सभ्यता थी परन्तु १९२०-२२ में पुरातत्व विभाग (Archeological department) की देख रेख में सिंध घाटी में खुदाई की गई, १९२२ में मोहनजोदड़ो में खुदाई हुई और वहां अनेकों प्रकार के खण्डहर प्राप्त हुवे। इस खुदाई के विषय में श्री आर. डी. बैनरजी (Shri R.D. Banerji) का नाम उल्लेखनीय है

इसी प्रकार सन् १९२१ में हरप्पा में जो लाहौर से १२० मील दूर मौन्टगोमरी जिले (Montgomry district) में स्थित है, खुदाई की गई। इस खुदाई के विषय में श्री दया राम सानी (Shri Daya Ram Sani) का नाम उल्लेखनीय है। इन नामों के साथ साथ सर जान मार्शल (Sir John Marshall) का नाम भी विशेष रूप से सम्बन्धित है। इन खुदाइयों ने इतिहास में अद्भुत परिवर्तन किया और भारत की प्राचीनतम सभ्यता और भी ५०००, वर्ष पूर्व जा पड़ी। इन खुदाइयों द्वारा जिस सभ्यता की खोज की गई, वह सभ्यता सिंध घाटी की सभ्यता के नाम से प्रसिद्ध है।

इस सभ्यता के, विषय में लिखित प्रमाणों का अभाव है उस समय की राजनैतिक स्थिति कैसी थी निश्चयात्मक रूप से यह कहना सर्वथा असम्भव है। मोहन जोदड़ों का शाब्दिक अर्थ है मृतकों का टीला। यह स्थान सिंध नदी तथा पश्चिमी 'नारा' नहर के बीच में स्थित है। अनुमान है यह नगर सात बार बरबाद हुआ और बसाया गया।

इस नगर के भग्नावशेषों से प्रगट होता है कि उस समय की निर्माण कला बड़ी ही कुशल थी। नगर के बसाने में स्वच्छता, सुख तथा आमोद प्रमोद का जीवन व्यतीत करने का विशेष रूप से ध्यान दिया जाता था। साधारण रूप से मार्ग चौड़े रक्खे जाते थे। कोई कोई सड़क ३३ फुट तक चौड़ी थी और १८ फुट चौड़ाई तो होती ही थी। मकान साधारण रूप से दो मन्जिल के होते थे। नीचे के भाग में नौकर इत्यादि रहते थे और ऊपरी भाग में परिवार के सदस्य। हर मकान में कुए की व्यवस्था की गई थी। मकान से पानी निकलने का अद्भुत प्रबन्ध किया गया था। मकानों में पक्की ईंटों का प्रयोग किया जाता था जो उस समय की सभ्यता की अलौकिक बात है। कुछ ईंटें विशेष प्रकार से बड़ी होतीं थीं जिनकी लम्बाई २०¾" और चौड़ाई १०¾" और मोटाई ३¾" होती थी। विशाल भवनों में दरवाजों, खिड़कियों तथा सीढ़ियों की व्यवस्था थी। आंगनों में फर्श किया जाता था। मकानों की बाहरी दीवार विशेष रूप से चौड़ी और सुदृढ़ बनाई जाती थी। यह चौड़ाई ४ से ५ फिट तक होती थी। मकानों के प्रवेश द्वार सड़कों की ओर ही बनाये गये हैं। मकानों में कुओं के अतिरिक्त स्नानागार भी होते थे। व्यक्तिगत स्नानागारों के साथ साथ सार्वजनिक स्नानागारों का प्रबन्ध भी/किया था। सार्वजनिक स्नानागार विशेष रूप से रुचिकर बने हुये होते थे। इसी प्रकार का स्नानागार नगर के मध्य में स्थित था। बीचों बीच आयताकार जलाशय है जिसकी लम्बाई, चौड़ाई तथा गहराई क्रम से ३९ फिट, २३ फिट और ८ फिट है इसके चारों ओर बरामदे तथा प्रकोष्ठ बने हुये थे। कुछ प्रकोष्ठों में गर्म,पानी से स्नान करने की व्यवस्था थी। मध्य में जो कुन्ड था उस में क्रीडा करने से पूर्व हर व्यक्ति

को बाहर के प्रकोष्ठ में स्नान करना होता था। शरीर को पवित्र कर तब जलकु में जा पाता था। यह इस बात का प्रमाण है कि यह लोग स्वच्छता का कि ध्यान रखते थे।

स्थान स्थान पर कूड़ा डालने का प्रबन्ध किया गया था। मल मूत्र के शोषक कूप बनाये हुवे थे।

नगर के मध्य में जो स्नानागार है वह ५००० वर्ष उपरान्त आज भी अप स्थिति को कायम किये हुवे खड़ा है। समय के भीषण आघातों ने आज तक उस कुछ नहीं बिगाड़ा। यह है उस समय की निर्माण कला का अद्भुत नमूना। समु रूप से इसकी लम्बाई, चौड़ाई क्रम से १२० फिट व १०२ फिट है इसकी दीवा ६ फिट मोटी है।

नगर में भव्य भवनों का निर्माण भी किया गया था। कोई कोई भव विशाल स्तम्भों पर आधारित है। अनुमान है कि इस प्रकार के भवन सार्वजनि कार्यों के हेतु बनाये जाते थे।

इस प्रकार से खोजे गये भग्नावशेष प्रगट करते हैं कि यह नगर समृद्धिशाल तथा घना बसा हुआ था। यहां हर प्रकार के आमोद प्रमोद की सामग्री पर्याप्त थी यहां पर ऐश्वर्य एवं विलासिता का जीवन व्यतीत करने के सब साधन पर्याप्त थे।

निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उस समय की स्थापत्य कला का विकास भी उच्चकोटि का हो चुका था और यह भी निश्चयात्मक रूप से कहना अनुचित न होगा कि सिंध घाटी में जो निर्माण कला प्रचलित थी वह उसी समय की मिश्र या सोरिया प्रदेशों में न थी।

सामाजिक जीवन—नगर में अधिकतर मध्यम श्रेणी के लोग थे। उनके मकान साधारणतया एक से ही बने हुवे मिले हैं।

यह लोग अधिकतर गेहूं का प्रयोग करते थे। जौ का भी इनको ज्ञान था। गौ तथा भेड़ का मांस भी इनके आहार का मुख्य अंग होता था। फल, अण्डे, दूध आदि का भी यह लोग प्रयोग करते थे। इनका भोजन स्वच्छ तथा स्वास्थ्य वर्धक होता था। खजूर का भी इनको ज्ञान था।

यह लोग सूती कपड़ों का अधिक प्रयोग करते थे। ऊनी कपड़ा भी पहनते थे। शाल प्रयोग करने का इनको बड़ा चाव था। दाहिने हाथ के नीचे से निकाल कर बांये हाथ की ओर शाल ओढ़ा जाता था ताकि दाहिना हाथ स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने के लिये चल सके। आज भी शाल इत्यादि का प्रयोग इसी प्रकार किया जाता है। पुरुष दाढ़ी मूंछ रखते थे और बालों को कंघे से साफ करते थे। वह बालों को कटवाते भी थे और भिन्न भिन्न रूप से उनको सजाते थे। स्त्रियां केशों का विशेष शृंगार करती थीं। वह बालों का जूड़ा भी बांधती थीं।

हार, केश राशि, जूड़ा बांधने के फीते, बाजू बन्द, अंगूठियां, कड़े तथा चूड़ियां स्त्री पुरुष दोनों ही पहनते थे। परन्तु कान के कांटे, पाजेब, कर्ण फूल स्त्रियां ही पहती थी। यह आभूषण भिन्न भिन्न प्रकार से बनाये जाते थे और अति सुन्दर होते थे। स्वर्ण हाथी दांत, रत्न, बहुमूल्य धातु आभूषण बनाने के काम में आते थे। निम्न श्रेणी के नर नारी सीपे-ताम्र के आभूषण प्रयोग में लाते थे। पकाई हुई मिट्टी के बने हुये आभूषण भी पाये गये हैं। स्त्रियां बालों में पिन भी लगाती थी।

बर्तन मिट्टी के बनते थे जिन पर अच्छे प्रकार का चमकदार पालिश किया जाता था। चांदी कांसे के बर्तनों का भी रिवाज था। यह लोग आमोद प्रमोद का जीवन व्यतीत करते थे ढोल का प्रयोग साधारण रूप से होता था। उसकी आवाज के साथ साथ नृत्य भी किया जाता था। इन लोगों की नृत्य कला ने अच्छी उन्नति करली थी। संगीत का भी इन को अधिक चाव था। एक ऐसी मूर्ति प्राप्त हुई है जिसमें एक नृत्य करती हुई स्त्री का चित्र दिखाया गया है।

यह लोग भिन्न भिन्न प्रकार के खेल खेलते थे। पांसा फैंकने का इनको बड़ा चाव था। इनको गोलियों द्वारा एक प्रकार का खेल खेलने का भी शौक था। बालकों के लिये अनेक प्रकार के खिलौने होते थे छोटी छोटी गाड़ियां सीटियां कुर्सियां, झुन झुने, पशु पक्षी, मिट्टी के बने हुवे मिले हैं।

गृहस्थी के उपकरणों में तकुवा, सुई, हाथी दांत का कंघा, कुल्हाड़ी, छेनी, उस्तरे जो कांसे या ताम्र से बनाये जाते थे। मछली पकड़ने के कांटे, तथा तोलने के बाट होते थे, मिट्टी के घड़े प्रयोग में आते थे। इन पर गहरी चमकदार पालिश होती थी। मिट्टी के पात्र कुम्हार के चाक द्वारा बनाये जाते थे इन बर्तनों के बनाने में ताम्र, कांसा, चीनी मिट्टी का प्रयोग होता है।

पाषाण से बनी हुई अनेकों वस्तुयें प्राप्त हुई हैं। यह पाषाण बाहर से मंगाते थे। इनको सोने, चांदी, कांसा, ताम्र, हाथी दांत का ज्ञान था। लोहे की कोई वस्तु प्राप्त न होने के कारण अनुमान लगाया गया है कि यह जाति लोहे से पूर्ण रूप से अनभिज्ञ थी।

भैंस, भेड़, हाथी, ऊँट, कुत्ता इत्यादि इनके पालतू पशु थे। अनुमान है कि घोड़ा इनका पालतू पशु नहीं था। बिल्ली से भी यह अनभिज्ञ प्रतीत होते हैं। अभी हाल के अन्वेषो द्वारा पता चला है कि इस सभ्यता में घोड़ा भी पाया जाता था।

उस समय की मुहरों तथा ताम्र पत्रों पर जो चित्र प्राप्त हुवे हैं उन में गैंडा भैंसा, भालू, खरगोश के चित्र बने हैं।

यह लोग मृतक संस्कार भी करते थे। मोहन जोदड़ो में कब्रिस्तान का होना इस बात का प्रमाण है कि यहाँ के लोग मृतकों को जलाते थे। हड़प्पा में कब्रिस्तान भी मिला है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह लोग मृतकों को जलाते और जली हुई अस्थियों को कलश इत्यादि में बन्द करके दफना देते इस सभ्यता के लोग मृतकों के संस्कार में तीन तरीके इस्तेमाल करते थे। प्रथम यह था कि यह शरीर को सम्पूर्ण गाड़ देते थे दूसरा यह कि शरीर को जला अवशेषों को दफना देते थे तीसरा यह कि वे शरीर को जानवरों के ख के लिये डाल देते थे और बाद में अस्थियों को गाड़ देते थे।

आर्थिक जीवन तथा पेशे—यह लोग खेती करते थे गेहूं, जौ, क पैदा करते थे। वर्तमान समय के हल जैसी कोई वस्तु प्राप्त न होने के कारण कहना कठिन है कि यह हल का काम किस वस्तु से लेते थे। औद्योगिक तथा शि कला में कुम्हार, सुनार, राज, लुहार, संगतराश, जौहरी प्रमुख थे। कुम्हार का च उस समय की कला का अद्भुत प्रमाण है।

धातु ढाल कर वस्तुयें तैयार की जाती थी। कांसे से बनी हुई एक नर्त की मूर्ति प्राप्त हुई है जो कला का सर्वश्रेष्ठ नमूना है। मुहरों पर बने हुवे चित्र बात का प्रमाण है कि कला ने अति उन्नति की थी।

यह लोग वाणिज्य व्यवसाय भी करते थे इनका व्यौपार भारत में ही सीमि नहीं था अपितु विदेशों से भी था। विदेशों से यह लोग भिन्न भिन्न प्रकार वस्तुयें मंगाते थे जिनमें रत्न, टीन, ताम्र इत्यादि होते थे। कपड़ा बुनने का धन्ध खूब था। पशुपालन भी इनका पेशा था। विदेशों से व्यौपार के कारण इन लोग की वृद्धि बड़ी ही तीव्र थी। यह जाति बड़ी ही समृद्धिशाली तथा सुखी थी औ आनन्द का जीवन व्यतीत करती थी। आर्थिक दृष्टि से यह जाति सम्पन्न थी।

कला कौशल—खुदाई से ५५० मुद्रायें प्राप्त हुई हैं जिन पर अनेक प्रका के चित्र बने हैं। कुछ पर किसी अनोखी भाषा में कुछ लिखा हुआ भी है। य भाषा अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है मुहरों पर बने हुवे पशु चित्र बड़े ही सुन्द बनाये गये हैं। इन चित्रों में बैल, गैंडा, सांड आदि विशेष रूप से बनाये गये हैं हड़प्पा में प्राप्त होने वाली मूर्तियां सजीव तथा सुन्दर हैं। इस कला ने बड़ी उन्नति करली थी।

यह लोग हथियार भी बनाना जानते थे। कुल्हाड़े, भाले, कटार, गदा प्रमुख हैं। धनुष और बाण के नमूने भी मिले हैं। तलवार तथा ढाल का पूर्णरू से अभाव था। युद्ध में काम आने वाले हथियार बनावट में निम्न कोटि के हैं जिस से प्रतीत होता है कि यह लोग युद्ध प्रिय नहीं थे। पात्र निर्माण कला विशेष रूप

े उन्नति कर गई थी। बर्तनों, मुहरों पर तरह तरह के चित्र बड़े ही सुन्दर ढंग
े बनाये गये हैं और कला के अद्भुत नमूने हैं। रक्षात्मक हथियारों जैसे कवच
ढाल और शिरस्त्राण इत्यादि भी पूर्णतया अपरिचित था।

कांसे की बनी हुई नर्तकी की मूर्ति कला का एक विशेष उदाहरण है।

धर्म—इस विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिये सीलों, ताम्रपत्रों, पत्थर, मिट्टी तथा अन्य धातुओं का सहारा लेना पड़ता है। यह लोग अनेक देवी देवताओं की पूजा करते थे। मातृदेवी की आराधना विशेष रूप से की जाती थी। मातृदेवी के अनेकों चित्र प्राप्त हुये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन लोगों का मत था कि सृष्टि का प्रारम्भ नारी शक्ति द्वारा हुआ है। एक मुहर पर एक ध्यान मग्न पुरुष का चित्र मिला है जिस के ऊपर दो सींग दिखाये गये हैं। इस चित्र से शिव का आभास होता है। पत्थरों के अनेक टुकड़े ऐसे प्राप्त हुये हैं जो वर्तमान शिव लिंग से मिलते जुलते हैं। योग साधना का भी रिवाज प्रचलित था। मोहन जोदड़ो में प्राप्त हुई त्रिमूर्ति ईश्वर के तीन स्वरूपों का आभास कराती है। यह स्वरूप ब्रह्मा विष्णु महेश है। यह जादू टोना भी मानते थे। मृतकों को गाड़ते भी थे और जलाते भी थे। यह वृक्षों, पशुओं, पत्थरों की भी पूजा करते थे। कुछ वृक्ष पवित्र तथा कुछ अपवित्र माने जाते थे। कुछ जीवन दाता तथा शुभ माने जाते थे। इनकी पूजा कई प्रकार से होती थी। नागों एवं यक्षों का पूजन भी किया जाता था।

उपरोक्त कथन से पूर्णरूप से पता चलता है कि सिंध निवासियों का धर्म हिन्दू धर्म का पूर्व रूप था। हिन्दू धर्म में इस धर्म की गहरी छाप मिलती है। हिन्दू धर्म के पुनर्जन्म के सिद्धांत के चिन्ह मोहन जोदड़ो से प्राप्त होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में आर्य्यों के आगमन से पूर्व ही शिव, काली तथा लिंग की पूजा का रिवाज हो गया था व अन्य प्रथायें भी प्रचलित हो गई थीं। सिंध निवासियों का धर्म और आर्य्यों के बाद के हिन्दू धर्म का गहरा सम्बन्ध दिखाई पड़ता है।

यह सभ्यता उन सभ्यताओं की समकालीन थी जो उस समय मिस्र सीरिया, वर्तमान ईराक में फैली हुई थे। इस सभ्यता का विकास कितने समय तक होता रहा यह कहना बड़ा कठिन है। यह उच्च कोटि की सभ्यता किस प्रकार विनाश को प्राप्त हुई यह प्रश्न केवल ऐतिहासिक अनुमान का विषय ही है। हो सकता है सिन्ध नदी की बाढ़ ने इस का अन्त कर दिया हो या नदी इन नगरों से दूर हट गई हो और यह प्रदेश रेगिस्तान में परिणित हो गया हो। हो सकता है वर्षा का अभाव हो गया हो।

यह भी सम्भव है कि इस शान्ति प्रिय परन्तु अतुल संपत्ति की मालिक जाति पर किसी बर्बर जाति ने आक्रमण कर नष्ट भ्रष्ट कर दिया हो। मोहन जोदड़ो

में इस प्रकार के विनाश के चिन्ह मिले हैं। सिन्धो, बलूचों के अतिरिक्त गलियों ओमां से प्राप्त होना इसका प्रमाण है।

यह भी हो सकता है कि आर्यों के आक्रमणों ने इस सभ्यता का अन्त कर दिया हो।

कुछ भी हो इस उच्चकोटि की सभ्यता का अन्त सभी वस्तुओं के विनाश हो गया और गुणमय जीवन से दमकता हुआ नगर धरती माता की गोद में सदा के लिये सो गया।

अध्याय ३ अध्याय ३

वैदिक युग तथा महा काव्यों का काल

Q. 5—Who were the Aryans? What do you know about political and miletary organisation?

प्रश्न ५—आर्य्य कौन थे? आप उनके राजनैतिक तथा सै संगठन में विषय में क्या जानते हो?

उत्तर—आर्य्य श्वेत वर्ण, ऊंचा कद, चौड़ा मस्तक एवं लम्बी नाक थे। यह सुन्दर आकृति के लोग थे। शस्त्र विद्या में निपुण और सभ्य थे। इ मूल निवास स्थान कहां था इस विषय में विद्वानों में मतभेद है। प्राचीन भार साहित्य, परवर्ती संस्कृत साहित्य तथा पुराणों के अनुसार आर्य्यों का मूल स भारत ही था। डा॰ अविनाश चन्द्र (Dr. Avinash Chandra) ऋग्वे संकेतों के आधार पर वर्तमान पंजाब और सीमान्त प्रदेश को आर्य्यों का प्र प्रदेश मानते हैं। लोक मान्य तिलक (Tilak) ध्रुव प्रदेश को आर्य्यों का स्थान मानते हैं और उसके अनेकों प्रमाण देते हैं परन्तु यह मत भी अ प्रभावशाली प्रतीत नहीं होता। कुछ विद्वान तिब्बत को ही आर्य्यों की आदि भ समझते हैं परन्तु यह मत किसी न किसी कारण से अमान्य है। कुछ लोग म यूरोप को जहां आजकल आस्ट्रिया और हंगरी के प्रदेश हैं आर्य्यों की जन्म भ का श्रेय देते हैं परन्तु सबसे अधिक तथा प्रभावशाली मत यही प्रतीत होता है यह लोग मध्य एशिया में निवास करते थे और किसी कारण वश उनको मध्य एशि छोड़ना पड़ा। इनकी भिन्न भिन्न शाखायें भिन्न भिन्न दिशाओं में चली गईं जो शाखा ईरान होती हुई भारत की ओर आई वह इन्डो आर्य्य या हिन्दू आर कहलाई।

यह लोग भारत में एकदम नहीं आये अपितु धीरे धीरे आये। इनका भारत में प्रवेश लम्बा था और शताब्दियों में विभक्त था। इन्होंने ईसा से लगभग २००० वर्ष पूर्व से भारत में प्रवेश आरम्भ किया और यह क्रिया ईसा से १५०० वर्ष पूर्व तक चलती रही। यह लोग अपने पशु, स्त्री, परिवार तथा गृहस्थी के सभी उपकरण लेकर भारत में आये। इससे प्रतीत होता है कि इनका उद्देश्य आक्रमण न होकर अपितु शान्ति के साथ इस प्रदेश में बसना था। सर्वप्रथम इन्होंने वर्तमान पंजाब तथा सीमा प्रान्त को अपना निवास स्थान बनाया परन्तु ऐसा करने के लिये इनको आदि जातियों का प्रतिरोध सहना पड़ा और वर्षों तक इस प्रकार का संघर्ष चलता रहा। यही कारण था कि उत्तरी भारत में फैलने की गति धीमी रही। शताब्दियों पश्चात यह जाति पंजाब से आगे बढ़ कर गंगा और यमुना के विस्तृत मैदानों में आई और फिर शताब्दियों तक उत्तरी भारत ही इनका निवास स्थान बना रहा और यहां की प्राचीन द्रविड़ जाति के घोर प्रतिरोध के कारण यह दक्षिणी भारत की ओर न बढ़ सके ऋग्वेद में दक्षिणी भारत के नदी तथा पर्वत का किसी प्रकार का उल्लेख न होना इस बात का शक्तिशाली प्रमाण है कि आर्य्य जाति शताब्दियों तक उत्तरी भारत तक ही सीमित रही और दक्षिणी भारत के बारे में इनको किसी प्रकार का विशेष ज्ञान भी प्राप्त न हो सका। यह जाति सभ्य थी और इसकी सभ्यता यहां की द्राविड़ सभ्यता से विशेष रूप से भिन्न थी। इसी कारण से आर्य्य सभ्यता ने ही भारत में एक अद्भुत विजय प्राप्त की। आरम्भ में जिस प्रदेश पर आर्य्यों ने आधिपत्य स्थापित किया वह सप्त सिंधु कहलाया इसका अर्थ है सात नदियों का प्रदेश। नदियों के नामों से यह प्रगट हो जाता है कि यह नदियां अफगानिस्तान तथा पंजाब की नदियां थी कुभा (काबुल), सुवास्तु (स्वात), क्रुमु (कर्रम), गोमती (गोमल), सिन्धु (इन्डस) सुशोमा (सोहान), वितस्ता (झेलम), असिक्नी (चुनाव), परुष्णी (रावी), विपाश (व्यास), शुतुद्रि (सतलज), सरस्वती (सरसुती), यमुना, गंगा इत्यादि। इन नदियों का उल्लेख इस बात का प्रमाण है कि आर्यों का आधिपत्य अफगानिस्तान से लेकर गंगा, यमुना के विशाल मैदानों तक हो गया था।

राजनैतिक व्यवस्था—इन लोगों का प्रथम इकाई परिवार था जिसका प्रधान पिता होता था पिता परिवार के सदस्यों पर पूर्ण रूप से नियन्त्रण रखता था। प्राचीन रोम में भी परिवार पितृसत्तात्मक ही होता था। हो सकता है वहां भी आर्य्यों की ही कोई शाखा पहुँची है। कई परिवारों अथवा कुटुम्बों से मिल कर ग्राम बनता था जिसका प्रधान ग्रामाणी कहलाता था। कई ग्राम मिल कर विश बनाते थे। विश का प्रधान विशपति कहलाता था। ग्रामाणी विशपति के अधीन होते थे और उसी के आदेशानुसार कार्य करते थे। इनको उसी के प्रति उत्तरदायी होना पड़ता था बहुत से विश मिल कर 'जन' का निर्माण करते थे। जन का प्रधान

राजा होता था। कभी कभी राजा का निर्वाचन होता था अन्यथा साधारण रूप से राजा का पद कुलागत आधार पर ही चलता था। राजा 'जन' का संरक्षक अथवा गोप भी कहा जाता था।

राजनैतिक व्यवस्था राजतन्त्रात्मक थी। परन्तु कहीं कहीं गणों का उल्लेख भी आता है जिसका प्रधान गणपति कहलाता था इससे अनुमान लगाया जाता है कि पूर्व बौद्ध काल में फैले हुवे गण राज्यों की भांति उस समय भी कोई व्यवस्था थी। राजा का पद कुल के आधार पर चलता था परन्तु निर्वाचन रीति भी काम में लाई जाती थी क्योंकि ऋगवेद तथा अथर्ववेद में इस प्रकार के हवाले दिये गये हैं। सत्ता को दृढ़ तथा प्रभावित रखने के लिये प्रजा की स्वीकृति प्राप्त करना अति आवश्यक है। उस प्रकार की व्यवस्था में बड़े बड़े सम्राटों का अभाव इस बात का संकेत देता है कि इकाईयां अपने ही क्षेत्र में स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करती थी और शक्तिशाली जन दूसरे जनों पर आक्रमण करने तथा अपना दायरा विस्तृत करने की ओर अधिक ध्यान नहीं देता था। जन स्वावलम्बी होते थे।

जन में राजा का स्थान अति उत्तम तथा श्रेष्ठ माना जाता था। वह ईश्वर का एक मात्र रूप था उसकी सत्ता पूर्ण थी। जनता उसकी हर आज्ञा मानने पर बाध्य थी। राजा वैभव तथा ऐश्वर्य के साथ जीवन व्यतीत करता था। उस का आदर्श ऊंचा था। जन में होने वाले पाप और पुण्य के लिये वह ही उत्तरदाई माना जाता था। वह भी अपनी प्रजा के लिये जीता और मरता था। राज्याभिषेक के समय राजा शपथ लेता था कि, "उस की सम्पूर्ण प्रजा उसे अपना राजा बनाने की अभिलाषा रक्खे और उसके हाथ से राज्य कभी न निकले। यदि मैं आपके हित के विरुद्ध कार्य करूं तो मेरे और मेरी सन्तान के जीवन का अन्त कर दिया जावे।" कितना ऊंचा आदर्श था। राजा प्रजा का पिता था और अपना सर्वस्व प्रजा का हित ही समझता था। वह विदेशी आक्रमणों से राज्य की रक्षा करता था और युद्ध के समय सेना का नेतृत्व करता था। युद्ध में नेतृत्व करने व सेना का संचालन करने में वह दक्ष होता था। वह शासन का हर प्रकार से संचालन करता था। उसके अधीन बहुत से अधिकारी होते थे जो उसकी आज्ञाओं को कार्य रूप में परिणित करते थे। इन पदाधिकारियों में सेनानी राज पुरोहित तथा ग्रामणी उल्लेखनीय हैं। ग्रामणी ग्राम का प्रधान होता था। वह दोनों ही यानी प्रशासन तथा सैना सम्बन्धी कार्य करता था। सेनानी सेना का नायक होता था राजा स्वयं उसकी नियुक्ति करता था। पुरोहित का पद बड़ा ही प्रभावशाली तथा श्रेष्ठ होता था। वह राजा को हर मामले में सलाह देता था। वह बराबर राज सभा में रहता था। वह राजा का धर्म गुरु भी माना जाता था। उसका पद परम्परानुकूल होता था।

राजा हर प्रकार से प्रजा का स्वामी था परन्तु वह प्रजा की इच्छा की अहेलना भी नहीं कर सकता था। वह स्वेच्छाचारी तथा निरंकुश शासक नहीं था। जा की सहायता के लिये दो कौनसिलें होती थी। एक सभा कहलाती थी तथा सरी समिति कहलाती थी। लुडविग (Ludwig) के विचार में सम्मिति व सभा ो भिन्न प्रकार की संस्थायें थी। एक सम्पूर्ण जनता की संस्था थी। दूसरी गेवृद्ध लोगों की जिस में केवल उच्च वर्ग के लोग भाग लेते थे। जिमर Zimmer) के मतानुसार समिति संपूर्ण प्रजा का प्रतिनिधित्व करती थी और ासन की बागडोर उसी के हाथ में रहती थी। इसके अधिवेशन में सदस्य तथा ाजा समान रूप से उपस्थित रहते थे। डा० कीथ (Dr. Keith) के अनुसार ामिति सम्पूर्ण जनता की सभा होती थी और सभा उस स्थान विशेष का नाम था ाहाँ पर लोक सभायें होती थीं। सभा वर्तमान जन सभा (Council of elders) े मिलती जुलती थी। विद्वानों का मत है कि यह सभा जातीय परिषद् थी। इस ाभा में धन सम्पन्न तथा प्रौढ़ व्यक्ति होते थे।

इन सभाओं को किस प्रकार के अधिकार प्राप्त थे यह कहना बड़ा कठिन ै। न्याय के सम्बन्ध में यह क्या कार्य करती थी यह कुछ नहीं कहा जा सकता। ्नके निर्माण का वास्तविक उद्देश्य राजा का निर्वाचन था यह भी कहना कठिन है। ुछ भी हो यह अवश्य कहा जा सकता है कि यह परिषद् जनता की प्रतिनिधि ंस्थायें थी और राजा को निरंकुश होने से रोकती थी। उसकी शक्ति को परिमित ्खती थी। इन दोनों परिषदों का निर्माण जन, वर्ग के आधार पर होता था।

न्याय क्षेत्र में राजा प्रधान था उसे दण्ड देने का पूर्ण अधिकार था। परन्तु साधारण रूप से परिवार तथा ग्राम ही न्याय व्यवस्था को चलाते थे। हत्या का दण्ड अर्थ के रूप में चुकाया जाता था। यह अर्थ मारे गये व्यक्ति की स्थिति पर निर्भर होता था। उच्च श्रेणी के व्यक्ति की हत्या का दण्ड १०० गायों तक होता था। जो मरने वाले के परिवार को दिया जाता था। चोरों को कठघरों में बन्द कर दिया जाता था तथा कर्जदार कर्ज न चुकाने पर दास बना लिये जाते थे।

साधारण झगड़े फौजदारी के हों अथवा दीवानी के। ग्राम पंचायतों द्वारा तय किये जाते थे। भूमि पर किस का अधिकार था यह कहना कठिन है परन्तु बाद में आकर समस्त भूमि पर राजा का ही अधिकार मान लिया गया था। पराजित राजाओं से कर लिया जाता था। राज्य की आय के भिन्न भिन्न साधनों में से वह भेंटें भी थी जो प्रजा राजा को देती थी। उत्सवों के समय राजा उपस्थित होता था।

युद्ध प्रथा—आर्य लोगों को भारत के आदि निवासियों से घोर युद्ध करने पड़े। इसके अतिरिक्त वह कभी कभी आपस में भी लड़ते थे। उस समय कोई

नियमित सेना न थी परन्तु युद्ध के समय जन साधारण ही युद्ध का कार्य करते थे। पैदल सेना अवश्य होती थी। कुछ योद्धा रथों में सवार होकर युद्ध करते थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन काल में रथों का रिवाज खूब प्रचलित हो गया था। ऋग्वेद में अश्वारोहण का उल्लेख आता है परन्तु अश्व सेना का नहीं। हाथी का उपयोग अभी तक युद्ध में नहीं होता था। सैनिक अपने बचाव के लिये कवच तथा ढाल का प्रयोग करते थे। कवच सुदृढ़ धातु का बनाया जाता था। वह लोग धनुष बाण, भाला, तलवार तथा गोफन काम में लाते थे। बाण दो प्रकार के होते थे। एक वह जिन का अग्र भाग सींग का बना होता था तथा दूसरा वह जो किसी धातु से बनाया जाता था। कहीं कहीं चलते दुर्ग का भी उल्लेख आता है सम्भव है यह कोई अद्भुत यन्त्र रहा हो। युद्ध में पताकाओं का भी प्रयोग होता था। युद्ध के समय तुरही तथा ढोल बजाये जाते थे और दुन्दुभियां बजती थीं। युद्ध में जाते समय आर्य्य विशेष रूप से अपने देवताओं की उपासना करते थे।

आर्य्यों का युद्ध विधान श्रेष्ठ तथा धर्म पर आधारित था। युद्ध में किसी बालक स्त्री तथा बूढ़े की हत्या नहीं की जाती थी। निरास्त्र शरण में आया हुआ, सोया हुआ तथा घायल शत्रु पर आघात न होता था। लड़ाई में भी पूर्ण रूप से नियमों का पालन किया जाता था। विषैले बाणों का प्रयोग न होता था। युद्ध अधिकतर नदियों के किनारे विशाल मैदानों में होते थे।

इस प्रकार विदित है कि आर्य्य जाति उच्च कोटि की सभ्यता की मालिक थी। उस की राजनैतिक व्यवस्था बड़ी ही सुन्दर थी। उनका सैनिक संगठन बड़ा ही कुशल और दृढ़ था। उनका युद्ध विधान भी धर्म पर आधारित था।

1959 Q. 6—Give a critical account of social, economic and religeous conditions of Aryans.

प्रश्न ६ विवेचनात्मक ढंग से आर्य्यों की सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दशा का वर्णन करो।

उत्तर—आर्यों का समाज अति सुन्दर तथा स्वस्थ प्रकार का था परिवार ही सामाजिक इकाई का। परिवार का स्वामी पिता होता था। परिवार के सदस्यों पर उसका पूर्ण नियन्त्रण रहता था। वह अपने परिवार के सदस्यों पर अगाध प्रेम रखता था और प्रेम से सबका लालन पालन करता था परन्तु यदि कोई सदस्य चाहे पुत्र ही क्यों न हो, अनीति की राह पर चलता था और समझाने बुझाने से सही रास्ते पर नहीं आता था तो कड़े से कड़े दण्ड का भागी होता था। एक कहानी इस प्रकार की आती है कि पुत्र के फिजूल खर्च करने पर पिता ने उसको

कन्या होने का दण्ड दिया। परिवार का मुखिया गृहस्थी के कार्यों में अपनी पत्नी का सहयोग प्राप्त करता था और उसकी सहायता से धार्मिक कार्यों को पूरा करता था। अधिकतर परिवार मिलजुल कर रहते थे। तीसरी पीढ़ी तक के व्यक्ति परिवार में रह सकते थे। परन्तु साधारण रूप से उस समय तक उनमें विभाजन हो जाता था।

इस समय महिलाओं की विशेष रूप से प्रतिष्ठा होती थी। पर्दे का रिवाज न था। और सती होने का रिवाज भी न था। विधवा विवाह भी होते थे। पुरुष एक ही स्त्री के साथ विवाह कर सकता था। हां राज वंशों में बहु विवाह होते थे। बाल विवाह की प्रथा भी न थी। विवाह के सम्बन्ध में पिता का नियन्त्रण पूर्ण रूप से रहता था फिर भी वर कन्या की इच्छाओं का भी ध्यान रक्खा जाता था। विवाह के उपरान्त स्त्री को पति के नियन्त्रण में रहना होता था और उसकी आज्ञाओं का पालन करना उसका धर्म था। पति की मृत्यु के पश्चात स्त्री पुत्र के नियन्त्रण में रहती थी परन्तु स्त्रियों को बाहर निकलने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। कन्याओं की शिक्षा की अवहेलना नहीं होती थी। बहुत सी कन्यायें बहुत अधिक शिक्षा प्राप्त करती थी। विश्ववारा, घोषा तथा अपाला जैसी स्त्रियों ने ऋषियों का प्रतिष्ठित पद प्राप्त किया था। उन्होंने अनेक मन्त्रों की रचना भी की थी।

विवाह एक पवित्र संस्कार माना जाता था प्रेम तथा धन दोनों के हेतु विवाह होते थे।

पति वधु को सम्बोधित कर कहता है, "हे वधु मंगलकारी शुभ शकुनों से अपने पति गृह में प्रवेश करो हमारे सेवक सेविकाओं तथा पशुओं के प्रति सद व्यवहार करो इत्यादि इत्यादि ......"।

सदाचार का स्तर बहुत ऊंचा था फिर भी समय समय पर व्यतिक्रम हो जाया करते थे।

आर्यों को आभूषण से बड़ा प्रेम था। स्वर्ण आभूषण खूब प्रचलित थे। आभूषण नर और नारी दोनों प्रयोग में लाते थे। स्वर्णहार, कुन्डल, अंगद, कंकण, नूपुर, गजरे, कंठे इत्यादि अधिक प्रचलित थे। बालों को रखने का रिवाज भी स्त्री पुरुष दोनों में हो था दोनों ही बालों में तेल लगाकर कंघे से साफ करते थे। स्त्रियां अपने केश सुन्दर रीति से गूंथती थी। स्त्रियां पुष्प हारों से अपने शरीर को सुसज्जित करती थीं। यह लोग सूती, ऊनी, रेशमी, वस्त्र धारण करते थे। मृग छाल तथा चमड़े का प्रयोग भी वस्त्रों की जगह किया जाता था। ब्रह्मचारी मृगछाला-को काम में लाते थे वस्त्रों पर स्वर्ण तारों से कसीदाकारी की जाती थी। पोशाक के तीन वस्त्र थे एक अधोवस्त्र जिसे नीवि कहते थे यह धोती अथवा साड़ी जैसा

वस्त्र था। दूसरा वास या परिधान था यह चादर जैसा वस्त्र था। तीसरा पेशवास था जो अंगरखा या चोली जैसा था।

इन लोगों का आहार सादा था गेहूँ तथा जौ मुख्यतः प्रयोग में लाये जाते थे दूध, दही, मक्खन तथा दूध से तैयार होने वाली वस्तुयें प्रयोग में आती थी। मांस भी खाया जाता था परन्तु गौ का मांस वर्जित था। फल, तथा सब्जियां खाते थे। पीने के लिये दूध और पानी ही प्रयोग में आते थे परन्तु विशेष अवसरों पर एक पौधे का नशीला रस जो सोम रस कहलाता था पिया जाता था। सुरा का भी प्रयोग किया जाता था। परन्तु इसका प्रयोग बुरा समझा जाता था ऋग्वेद में आया है कि *"क्रोध, जुर्म, क्रीड़ा तथा सुरा पान मनुष्य को पाप कर्म कराने के लिये* प्रेरित करते हैं" फिर भी सुरापान की प्रथा अवश्य थी। पानी के लिये कूप होते थे जिन से लकड़ी की बाल्टियों द्वारा पानी निकाला जाता था।

आर्य जीवन के प्रति उदासीन न थे उनका जीवन आमोद प्रमोद से ओत प्रोत था। यह लोग आनन्द का जीवन व्यतीत करते थे। उन्होंने अपने मनोरंजन के लिये अनेकों प्रकार के साधन आविष्कृत कर लिये थे। नृत्य तथा गान विद्या का बहुत विकास था। स्त्रियां वीणा तथा झांज के साथ नृत्य व गान में बड़ी निपुण होती थी और विशेष रुचि रखती थी। पुरुष भी नृत्य करते थे। इस युग के संगीतज्ञों को जीवन के आनन्द का प्रदर्शन करने का बड़ा ध्यान था। यह लोग अनेकों त्यौहार मनाते थे और आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करते थे। इनको घुड़दौड़ तथा रथों की दौड़ का बड़ा शौक था।

इन लोगों का जीवन पवित्र था। नैतिकता का स्तर बहुत ऊंचा था। अपहरण, लूट मार तथा अन्य अपराधों की संख्या न होने के बराबर थी। इसका कारण उनका सन्तोष मद् जीवन तथा दण्ड विधान का सख्त होना था। अतिथि सत्कार अधिक था। सत्य बोलना पवित्र समझा जाता था। पाप करने वालों को निन्दा की दृष्टि से देखा जाता था।

आर्य भारत प्रदेश से पूर्व किस प्रकार का समाज बनाकर रहते थे यह कहना कठिन है परन्तु भारत में आने के पश्चात इन्होंने एक विकसित समाज को जन्म दिया। कृष्ण वर्ण वाले यहां के आदि निवासियों (काले रंग वालों) से उत्तम समझे जाते थे। आर्य अपने प्रतिद्वन्द्वियों को दस्यु दास अथवा द्राविड़ कहकर पुकारते थे ऋग वेद में जातियों के विद्यमान कठोर अपरिवर्तनशील नियमों का वर्णन नहीं मिलता न किसी के कठोर पेशे का ही उल्लेख आता है कोई भी व्यक्ति अथवा व्यक्ति अपने व्यवसाय को सुगमता से बदल सकता था। अन्तर्जातीय विवाह वर्जित न थे। शूद्रों के हाथों तैयार किया हुआ भोजन कर लिया जाता था। छूत छात की प्रथा भी समाज में नहीं थी।

समाज के साथ साथ वर्ण व्यवस्था कठोर हो चली थी। ब्राह्मण राजन्य, वैश्य, शूद्र वर्ण बनने लगे थे। इनका वर्णन बाद की पुस्तकों में आता है।

आर्थिक दशा—आर्यों के कई पेशे थे। वह पशु पालन का कार्य करते पशुओं के लिये सार्वजनिक क्षेत्र छोड़े जाते थे जो चरागाहों के काम आते थे। ग्वाला ग्राम के पशुओं को चराने ले जाता था। इन पशुओं में गाय सबसे अधिक मूल्यवान समझी जाती थी वह विनिमय का माध्यम थी, गाय, बैल, घोड़े, गधे, खच्चर, कुत्ते, भेड़, बकरियां विशेष रूप से पाले जाते थे। अपने पशुओं की पहचान करने के हेतु उनके कान, पैर इत्यादि रंग दिये जाते थे। गान्धार देश की भेड़ें उन के लिये प्रसिद्ध थीं। गाय की बड़ी प्रतिष्ठा थी।

आर्य कृषि करने में भी दक्ष थे। वह हल में दो बैल चलाते थे। हल की फाली किसी धातु की बनी होती थी। उर्वरा भूमि को और भी अच्छी करने के लिये खाद प्रयोग में लाया जाता था। सिंचाई की अच्छी व्यवस्था थी। झील, नहर, नदी, कुओं इत्यादि से सिंचाई की जाती थी। कृषि की मुख्य पैदावार गेहूं तथा जौ थी। धान भी पैदा किया जाता था परन्तु उतनी अधिकता से नहीं जितना गेहूँ या जौ अन्नोत्पादन के लिये देवताओं की आराधना की जाती थी। ग्राम के आस पास जो खेत होते थे उन पर व्यक्तिगत अधिकार होता था। परन्तु चरागाह सार्वजनिक सम्पत्ति समझी जाती थी।

आर्य व्यापार के प्रति उदासीन नहीं थे जिन लोगों के हाथ में व्यापार था वह 'पणि' कहलाते थे। वह कृपणता के लिये प्रसिद्ध थे। मुमकिन है यह अधिकतर अनार्य थे। विनिमय का माध्यम गाय थी। परन्तु एक प्रकार का स्वर्णहार जो 'निष्क' कहलाता था विनिमय का साधन था। इसका भार नियत कर दिया गया था यद्यपि राजकीय कोष का कोई भी चिन्ह इस पर बना हुआ नहीं था। व्यापार विदेशों से भी होता था।

कलाओं में भी यह लोग निपुण थे। कपड़ा खूब तैयार किया जाता था। सूती, ऊनी और रेशमी वस्त्र बनते थे प्राचीन पुस्तकों में जुलाहों का खूब विवरण आता है। इसके अतिरिक्त रंगसाजी तथा कशीदेकारी का काम भी होता था। इस प्रकार के रंगसाजों तथा कसीदेकारों का भी विवरण आया है। सुनार, बढ़ई, लुहार अन्य धातुओं का काम करने वाले कारीगर भी थे। आभूषण बड़े ही रोचक बनाये जाते थे। चमड़े की रंगाई का काम खूब होता था। बढ़ई गाड़ी, रथ, नौका इत्यादि के अतिरिक्त अन्य छोटी छोटी वस्तुयें भी बनाता था तथा उन पर नक्काशी भी करता था। लुहार धातु के काम में निपुण था वह अस्त्र शस्त्र बनाता था व औजार बनाता था। धातुओं में 'अयस' नाम की रहस्यपूर्ण धातु का प्रयोग होता था। कुछ विद्वान इसको कांसा और कुछ लोहा भी मानते हैं। चर्मकार पानी के बर्तन, धांधाओं के

दस्ताने इत्यादि चमड़े से तैयार करता था। कुम्हार अपने चाक का प्रयोग बड़ी दक्षता से करता था। यह कारीगर बराबर समाज सेवा में लगे रहते थे। सबसे विलक्षण बात यह है कि किसी भी पेशे के करने वाला व्यक्ति नीच नहीं समझा जाता था। सब लोग किसी भी पेशे को अपनी रुचि के अनुसार अपनाने में किसी प्रकार की झिझक अनुभव नहीं करते थे। पुरुषों के साथ साथ स्त्रियाँ भी कार्यों में संलग्न रहती थी। समाज का हर व्यक्ति समाज सेवा अपना कर्तव्य समझते थे।

औषधि विज्ञान भी प्रगति कर रहा था। अनेकों रोगों की चिकित्सा करती जाती थी। स्वास्थ वर्धक जड़ी बूटी खोज ली गई थी। शल्य शास्त्र में भी प्रगति हो चुकी थी।

लेखन कला के विषय में आजकल का मत है कि इसका अभाव ही था। हालांकि उनसे पूर्व सिंध निवासी लेखन कला से परिचित थे।

स्थल तथा जल दोनों-मार्गों से आना जाना तथा व्यापार होता था। स्थल मार्ग पर रथ तथा गाड़ियाँ प्रयोग में आते थे। रथ घोड़ों द्वारा चलाये जाते थे और गाड़ियों में बैल जोते जाते थे। नावों द्वारा नदियों में व्यापार की वस्तुयें ले जाई जाती थी। समुद्र में भी यह लोग सफ़र करते थे यह कहना कठिन तथा विवाद ग्रस्त प्रश्न है। वैदिक तोल की इकाई 'मान' तथा बेबीलोन की इकाई 'मना' से यह बात अवश्य प्रगट होती है कि दोनों का व्यापारिक सम्बन्ध समुद्र के द्वारा होगा। परन्तु निश्चित रूप से कुछ कहना बड़ा ही कठिन है।

इस उपरोक्त कथन से यह कहना अति सरल है कि आर्थिक दृष्टि से आर्य जाति सम्पन्न तथा समृद्धशाली थी। वह आनन्द का जीवन बिताती थी और आज की तरह आर्थिक कठिनाइयों से परे थी। इनकी आर्थिक व्यवस्था बड़ी ही उन्नत थी।

धार्मिक स्थिति—इन लोगों का धर्म सादा तथा सरल था। यह अनेकों देवताओं की उपासना करते थे। इन्होंने हर प्राकृतिक शक्ति का एक देवता मान लिया था और हर क्षेत्र में उसी देवता का महत्व अधिक मानते थे। जब इनको किसी भी नवीन शक्ति का आभास हुआ इन्होंने तुरन्त उस शक्ति को देवता मान लिया। समय के साथ साथ शक्ति तथा उसके देवता में फासला बढ़ता गया यहाँ तक कि देवताओं का स्थान ही अपना अस्तित्व बन बैठा। यह लोग प्राकृतिक शक्तियों में गहरा विश्वास रखते थे। आरम्भ में इनके भिन्न भिन्न देवता अलग अलग श्रेणियों में बँटे हुये थे। प्रथम श्रेणी के देवता वरुण, आकाश, अश्विनि, सूर्य, सवित्र, मित्र पूषन, विष्णु थे। द्वितीय श्रेणी में इन्द्र, वायु, मारुत, पर्जन्यादि तथा तीसरी श्रेणी में पृथ्वी, सोम तथा अग्नि देवता थे। आकाश पिता तथा धरती माता मानी जाती थी। आगे चल कर जल के देवता वरुण तथा मेघों के देवता इन्द्र का महत्व अधिक हो गया। वरुण देवता की महिमा के अनेक मन्त्र मिलते हैं। वह सत्य तथा

अन्य गुणों का प्रतीक है। पापियों को दन्ड देता है कोई भी पापी उस की दृष्टि से नहीं बच सकता। पापों को, लोग उससे माफ कराने के लिये क्षमा मांगते थे। वरुण के बाद सर्व प्रिय देवता इन्द्र था। वह अन्य देवताओं में श्रेष्ठ माना गया है। वह सर्वशक्तिमान तथा प्रतिभाशाली था। उसको इस रूप में माना गया है। वह उन राक्षसों और दैत्यों का नाश करता था जो बादलों से जल चुरा कर ले जाते थे। जब इन्द्र उन पर विजय प्राप्त करता था तो मेघों का जल वर्षा के रूप में उन प्रदेशों में गिर जाता था जहां पर इन्द्र की उपासना होती थी। यह कृषि प्रधान जाति वर्षा का महत्व खूब जानती थी। युद्धों में विजय प्राप्त करने के हेतु भी लोग इन्द्र की घोर उपासना करते थे। इन्द्र के अतिरिक्त आकाश में और देवता भी थे। मारुत (तूफान का देवता), पवन (वायु का देवता), रुद्र (विद्युत का देवता) थे। मारुत को बताया गया है कि वह आकाश रूपी दैत्यों का विनाश करने में इन्द्र की सहायता करता है। रुद्र भयानकता का देवता है वह अति क्रोधी है।

अग्नि, सोम, सरस्वती भी देवता माने गये हैं। अग्नि वह देवता है जो लोगों के द्वारा आहुतियां लेकर अन्य देवताओं तक पहुँचाता है उसकी उपासना विशेष रूप से की जाती थी। कोई हवन अथवा यज्ञ उसके बिना सम्पूर्ण नहीं हो पाता था। उसकी प्रतिमा के विषय में अनेकों सूत्रों को गाया गया है। सोम देवता भी आनन्द का देवता माना गया है। वैसे तो सोम वह रस था जो पहाड़ों पर उगने वाले एक पौधे से तैयार किया जाता था जिसे आर्य विशेष उत्सवों पर पान करते थे। सोमरस देवताओं को भेंट रूप में भी दिया जाता था। कहीं कहीं इसकी समता चन्द्र देवता से भी की गई है। इस रस को सेवन करने से स्वर्गीय आनन्द का अनुभव होता था।

सूर्य देवता भी अति प्रतापी था। उसके भिन्न भिन्न गुणों का गान किया गया है। वह दानशील, प्रकाशक, उत्तेजक, पोषक, विशाल मार्गों पर चलने वाला कहा गया है। सूर्य के विषय में एक जगह कहा गया है "रात्रि में पृथ्वी पर अधिकार करलेने वाले दैत्यों का सूर्य देव संहार करते हैं तथा दिन में अपने विजय रथ को आकाश मार्ग द्वारा ले जाते हैं" ऊषा प्रातःकाल की सुन्दर देवी मानी गई थी। बाद में और भी अन्य देवता माने गये जैसे प्रजापति (प्राणियों का स्वामी) विश्व कर्मन (सबका सृजन करने वाला) श्रद्धा तथा मन्यु इत्यादि।

इस काल में मूर्ति पूजा का बिलकुल अभाव था। एक स्थान पर इन्द्र की प्रतिमा का अवश्य वर्णन आया है। हवन तथा यज्ञों द्वारा ही देवताओं की उपासना की जाती थी। आहुतियां देकर देवताओं को भेंट दी जाती थी। इस काल में देवताओं को पुरुष का रूप ही दिया गया है। नारी तत्व को प्रधानता प्राप्त नहीं हुई, जैसा कि बाद में हिन्दू धर्म में हुआ। [illegible] का धर्म आशावादी तथा

वोपासक (Henotheism) था। यह धर्म बहुदेव वाद था। हर एक देवता अपने क्षेत्र में बड़ा था। यह देवता संसार की संरक्षता करते थे। इनके नियन्त्रण में विश्व रहता था। यह सबको आनन्द देते थे। परन्तु बाद के विचार बदल गये थे और सर्व शक्तिमान ईश्वर की ओर प्रगति होने लगी थी।

आर्य अपने देवताओं से भयभीत नहीं होते थे। वह तो उनको सुखदायक दयालु मानते थे उनको प्रसन्न करने के लिये यज्ञ करते थे, आहुतियां देते थे, घी इत्यादि की भेंट देते थे और उनसे अपने लिये आनन्द की वस्तुयें मांगा करते थे।

इस प्रकार हम कहेंगे कि वैदिक धर्म अनेकों देवताओं का धर्म था जो धीरे धीरे प्रकृति से प्रकृति के रचिता ईश्वर की ओर प्रगति कर रहा था।

Q 7—Give a critical account of the aryan civilization during the later Vedic Age.

प्रश्न ७—उत्तर वैदिक युग में आर्यों की सभ्यता का विवेचनात्मक वर्णन करो।

उत्तर—ऋगवेद युग के पश्चात का समय उत्तर वैदिक युग कहलाता है। इस युग में शेष तीनों वेदों अर्थात अथर्व वेद, साम वेद, यजुर्वेद का निर्माण हुआ और चारों वेदों के उपनिषद ब्राह्मण नामक ग्रन्थ लिखे गये। यह वह समय था जबकि आर्य जाति सप्त सिन्धु से चलकर बिहार तक फैल गई थी।

वैदिक ग्रन्थों में अब सर्व प्रथम विशाल नगरों तथा शक्तिशाली राज्यों का उल्लेख आता है। विशाल राज्यों की वृद्धि के साथ साथ राजनैतिक प्रभाव की भी वृद्धि हुई। उत्तर तथा दक्षिण की ओर इस जाति का प्रभाव बढ़ता गया। यहां तक कि इस काल में आर्यों के शक्तिशाली झुण्ड विन्ध्याचल पर्वत के सघन जंगलों में भी घुसने आरम्भ हो गये थे। इन्होंने गोदावरी के उत्तर में अनेक राज्यों की नीव डाली। अब पंजाब से हट कर आर्य जाति के सांस्कृतिक केन्द्र गंगा के विशाल मैदानों में आ गये। उस समय यह प्रदेश मध्य प्रदेश अथवा आर्यवर्त कहलाता था। इसी केन्द्र से आर्य सभ्यता दक्षिण तथा पूर्व की ओर विस्तृत हुई। साथ साथ जातियों में भी समावेश हुआ और बहुत नवीन मिश्रित जातियों ने जन्म लिया।

अब छोटे छोटे राज्यों के स्थान पर विशाल संगठित राज्य खड़े हो गये। प्रभावशाली राजवंशों का आधिपत्य स्थापित हो गया। कुरु पांचाल और काशी का उत्थान हो गया था। कुरुओं की राजधानी आसनदीवत थी। पांचालों की कांपिल्य और आगे की ओर कौशल राज्य था। विदेह उत्तर बिहार का राज्य था। कुरु राज्य में थानेश्वर देहली के आस पास का प्रदेश सम्मिलित था। इस समय के साहित्य

में महा प्रतापी राजाओं परीक्षित तथा जन्मेजय का वर्णन आता है। यहीं पांचालों का प्रभावशाली राज्य था उसका राजा प्रवहण जावालि था। आधुनिक तिरहुत प्रदेश विदेहों के आधिपत्य में था। उनका महान प्रतापी नरेश जनक हुआ है वह अपने समय का भारी दार्शनिक हुआ है। इस समय की दक्षिण में बसने वाली अनेक प्रसिद्ध जातियों का वर्णन भी साहित्य में दिखाई पड़ने हैं। वर्तमान बरार तक आर्यों का प्रभाव पहुँच गया था। मत्स्य, सूरसेन, गान्धार आदि जातियां थीं जिनका अपना पृथक स्वशासन था।

राज्यों की विशालता तथा संगठन के साथ साथ राजाओं की सत्ता तथा स्थिति में भी गम्भीर रूप से परिवर्तन आया उस के अधिकार व्यापक रूप से विस्तृत हो गये। "बिना ग्वाले के चौपायों की जो स्थिति होती है वही बिना राजा के मनुष्यों की होती है" यही सिद्धान्त धीरे धीरे जोर पकड़ रहा था और राजा की निरंकुश स्थिति सुदृढ़ हो रही थी। प्रजा पर राजा का नियन्त्रण असीमित सा होने लगा था। यहां तक कि ब्राह्मण भी उन के सम्मुख अपना प्रभाव खोने लगे थे। जन साधारण भिन्न भिन्न प्रकार के कर राजा को देते थे। राजा किसी को भी दण्ड दे सकता था अथवा निर्वासित कर सकता था। अनेकों प्रकार के यज्ञ किये जाते थे। जिनके द्वारा राजा अपनी अजय शक्ति का परिचय देते थे। जैसे 'राजसूय' 'अश्वमेध' इत्यादि। इस प्रकार धीरे धीरे सामन्तवाद और साम्राज्यवाद का बीजारोपण हो रहा था। और राजसत्ता दृढ़ होती जा रही थी।

राजा विशेष रूप से दो कार्य करता था। युद्धों में सैन्य संचालन तथा न्याय विभाग का उच्चतम अधिकारी। वह जनता के शत्रुओं का संहार और दुष्टों का दमन करने वाला था। सैनानी के साथ साथ युद्धों में अग्र गण्य था। वह कुलागत होता था परन्तु अथर्व वेद में ऐसे गीतों का विवरण आया है जो राज्याभिषेक के समय गाये जाते थे और जिनसे प्रगट होता है कि समय समय पर राजा का निर्वाचन भी होता था। माना कि राजा धीरे धीरे शक्तिशाली हो रहे थे परन्तु वह पूर्ण रूप से निरंकुश नहीं थे। राज्याभिषेक के समय उसको राज्य के नियमों के प्रति वफादार रहने ब्राह्मणों तथा धर्म की रक्षा करने की शपथ लेनी पड़ती थी। समारोह के अवसर पर सिंहासन से नीचे उतर कर उसको ब्राह्मणों को प्रणाम करना पड़ता था। राज्याभिषेक के समय उसको चेतावनी दी जाती थी कि "हे राजन् यह राज्य तुझे कृषि, प्रगति एवं साधारण जनता के सुख वैभव के लिये दिया जाता है" इससे प्रतीत होता है कि राज्य, राजा की अपनी सम्पत्ति नहीं मानी जाती थी अपितु वह एक धरोहर के समान थी जो इस आधार पर राजा को दी जाती थी कि राजा उसका संचालन इस प्रकार करे कि जनता का भला हो और सुख वैभव की स्थापना हो। ऋग्वैदिक काल की प्रतिनिधि संस्था सभा तथा समिति का उल्ले

अथर्ववेद में आया है। उसमें बताया गया है कि राजा और सभा या समिति में पूर्ण सहयोग होना अनिवार्य है और इसी सहयोग में राजा तथा प्रजा का कल्याण है। ऐसे उदाहरण भी हैं जबकि दुराचारी राजा और उसके दुराचारी कर्मचारियों को पद से हटा दिया जाता था। सरलता से कहा जा सकता है कि राजसत्ता बढ़ रही थी परन्तु राजा पूर्ण रूप से निरंकुश न हो पाये थे।

इस समय राजा और उसके अधिकारियों का प्रभाव बढ़ चला था और साथ साथ शासन व्यवस्था के सूत्रों का भी विस्तार हो रहा था। यह राज्याधिकारी वीर अथवा रत्न कहलाते थे। इनमें प्रमुख संग्रहाग्री अर्थात कोषाध्यक्ष, भाग दूघ अर्थात कर एकत्रित करने वाला, सूत यानी भाट क्षत्री यानी राज परिवार का निरीक्षक अक्षावाप या हिसाब रखने वाला, पालागल या सन्देश वाहक इत्यादि। ऋग्वैदिक काल के तीन मुख्य अधिकारी यानी पुरोहित, सेनानी और ग्रामाणी अब भी होते थे। ग्रामाणी अदालत का सभापति होता था। वह सैनिक तथा असैनिक दोनों प्रकार के कार्यों का अधिकारी था। पुलिस के अधिकारी उग्र या जीवग्रभ कहलाते थे। सौ गांव के अधिकारी को सभापति और सीमान्त शासक स्थपित कहलाते थे। न्याय विभाग का उच्च अधिकारी राजा था परन्तु अधिकतर यह कार्य अध्यक्ष करता था विशेष अवस्था में न्याय का काम एक प्रकार की सभा जो 'सभासद' कहलाती थी करती थी। ग्रामों के छोटे छोटे झगड़े पंचायतों द्वारा तय हो जाते थे।

राजतन्त्र के साथ साथ गणतन्त्र भी विकसित हो रहा था सौराष्ट्र, कच्छ में गणतन्त्र प्रणाली अपनाई हुई थी।

सामाजिक दशा—खान पान तथा वेशभूषा पहले जैसा ही था परन्तु सुरापान और मांस खाना कुदृष्टि से देखे जाने लगे थे। अथर्व वेद में ऐसे खाने को पाप कहा गया है। आमोद प्रमोद के नवीन साधन प्रचलित हो गये थे। समारोहों और उत्सवों के अवसरों पर वीणाओं के साथ साथ सुन्दर सुन्दर गीत गाये जाते थे। कहीं कहीं शैलूष (अभिनेता) का उल्लेख भी किया गया है।

इस काल में स्त्रियों की दशा अवनत हो गई थी। राजवन्शों में विशेष कर बहु विवाह की प्रथा जड़ पकड़ गई थी। प्रधान रानी को ही राजा के प्रेम तथा आदर का पात्र समझा जाता था और अन्य रानियां अपना जीवन ईर्षा में व्यतीत करती थी परन्तु धार्मिक विधियों तथा अनुष्ठानों के अवसरों पर अन्य रानियां भी उपस्थित रहती थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय बाल विवाह की प्रथा भी आरम्भ हो चली थी। इसका प्रथम उल्लेख गौतम सूत्र में आता है कि कन्या का विवाह बाल्यावस्था में ही कर देना चाहिये। स्त्रियों की शिक्षा का रिवाज घट गया था। परन्तु कुछ ऐसी स्त्रियां भी थीं जो उच्च प्रकार की शिक्षा प्राप्त करती थीं। गार्गी, याज्ञवल्की, मैत्रेयी के नाम उल्लेखनीय हैं। यह स्त्रियां राज दरबारों में बड़े

बड़े तर्क वितर्क में भाग लेती थी परन्तु साधारणतया स्त्रियां अशिक्षित रहती थीं। कर्म काण्ड की जटिलता के कारण स्त्रियां अपने पति के साथ पूर्ण रूप से कार्य नहीं कर सकती थी और उनका कार्य पुरोहित द्वारा पूर्ण करना पड़ता था। स्त्रियों की स म्पत्ति पर उनको कोई अधिकार न रह गया था अपितु उस पर उनके पति का का अधिकार माना जाने लगा था। इस प्रकार स्त्री का स्थान अवनत हो गया।

वर्ण व्यवस्था जैसी उपयोगी और आदर्श संस्था का उदय और वि आर्य जाति के द्वारा हुआ इसका उदाहरण दूसरे स्थानों पर नहीं मिलता। ऐ प्रतीत होता है कि ऋग्वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था तीन वर्गों तक ही सीमि थी। अथवा ब्राह्मण, राजन्य, विश या वैश्य इन में आपसी कठोरता उत्पन्न न हु थी। आपसी शादी विवाह में कोई रुकावट न थी। समाज एकता को श्रे समझता था परन्तु उत्तर वैदिक काल में नवीन स्थितियों के कारण वर्ण व्यवस्था कठोरता उत्पन्न हो चली थी। अब तीन के स्थान पर चार वर्ण बन गये थे ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र। पहले पहल इसी समय के शास्त्रों में वर्णों के कर्त का वर्णन आता है। इन वर्णों के भिन्न भिन्न नियम स्थिर किये गये। ब्राह्मण प्र वर्ग था जिसका कार्य पठन पाठन था। यह लोग धर्म, कर्म काण्ड और यज्ञ अनुष्ठा में दक्ष होते थे जन साधारण के आध्यात्मिक जीवन की संरक्षता करते थे। यह अपने पवित्र, त्याग पूर्ण जीवन से जन साधारण के जीवन में पवित्रता उत्पन्न करते थे।

दूसरा वर्ग क्षत्रियों का था। उनका भूमि पर अधिकार था उनका कार्य यु करना तथा राजनीति में सक्रिय भाग लेना था। परन्तु ज्ञानुपार्जन में भी क कभी यह श्रेष्ठता प्राप्त करते थे। जनक तथा विश्वामित्र ऐसे उदाहरण हैं। जनक महान आचार्य हुआ जिसके उपदेश बड़े बड़े पण्डित भी सुनते थे। विश्वामित्र महान सन्यासी हुआ जिसने बड़े बड़े शास्त्रों की रचना की।

तीसरा वर्ग वैश्यों का हुआ जिनका काम व्यौपार, कृषि तथा शिल्प सम्बन्धी कार्य करना था। अधिकतर साधारण जनता इस वर्ग में ही सम्मिलित थी। य वर्ग प्रथम दोनों वर्गों से निम्न समझा जाता था। इसके अधिकार भी उन जै न थे परन्तु इनमें धन सम्पन्न लोगों का राज दरबारों में बड़ा आदर होता था।

चौथा वर्ग शूद्रों का था। इसमें वह लोग थे जो आर्यों द्वारा जीते ग थे। यह दास कहलाते थे। इनका विशेष कार्य प्रथम तीनों वर्गों की सेवा कर था। वह अधिकतर परतन्त्र थे। एक स्थान पर कहा गया है कि "वह अन्य व्यक्ति का सेवक है जिसका इच्छानुकूल निष्कासन तथा वध किया जा सकता है" वह नी समझा जाता था, उस को पवित्र वस्तुयें छूने तक का अधिकार न था। परन्तु फि भी यह वर्ग समय समय पर वैश्यों से मिल कर प्रथम दो वर्गों की मुखालफत किया करता था। यह वर्ग समय के साथ साथ संख्या में बढ़ता ही चला गया।

इनके अतिरिक्त दो वर्ग और थे जो नगरों से बाहर रहते थे यह 'व्रात्य' और द्र' कहे जाते थे। यह प्राकृतिक भाषा बोलते थे और बहुधा भिन्न स्थानों पर ते रहते थे। उनका समाज एक प्रकार से अपना अलग समाज था। इस युग में व्यवस्था पूर्ण रूप से बन चुकी थी और उसमें कठोरता आरम्भ हो गई थी तु फिर भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि पारस्परिक यातायात सम्भव था और वर्ग दूसरे वर्ग के कार्य कर सकता था जैसे जनक और विश्वामित्र क्षत्री होते आचार्य तथा सन्यासी कहलाये। अजात शत्रु तथा जैवलि ने ब्रह्मज्ञान में ख्याति त की। राजन्य देवापि ने अपने भाई शान्तनु के अश्वमेध यज्ञ में पुरोहित का म किया। प्रथम तीनों वर्गों में खान पान तथा विवाह आदि वर्जित न हुवे थे। र न व्यवसाय परिवर्तन पर ही पाबन्दी थी।

परन्तु समय के साथ साथ समाज की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के कारण शिल्पियों तथा व्यापार के समूहों का विभाजन होना आरम्भ हो गया था। स्वतन्त्र शाल जाति छोटे छोटे वर्गों में विभाजित होने लगी थी। अपने अपने व्यवसाय अनुसार जाति भेद होने लगा था। कृषि कर्म के अतिरिक्त व्यापारी रथकार हेकार, बढ़ई इत्यादि जातियों का साफ उल्लेख होने लगा था। इनमें से कुछ तियां निम्न समझी जाने लगी थीं।

शिक्षा क्षेत्र में बड़ी उन्नती हो रही थी। वेदों, गौण ग्रन्थों और उपनिषदों साथ साथ व्याकरण, तर्क शास्त्र तथा कानून भी अध्ययन के विषय थे। विद्यार्थी वन अति सादा तथा सरल था। भिक्षा मांगकर निर्वाह करना, विनम्र रहना, वित्र जीवन व्यतीत करना विद्यार्थी के लक्षण थे। अपने सन्मुख उसे छः उद्देश्य रखने पड़ते थे। यह थे ज्ञान, श्रद्धा, प्रजा, धन, आयु तथा अमृत्व।

वेदों के मन्त्रों को लिखना अपवित्र माना जाता था। इनको कण्ठस्थ कर लिया जाता था और इसी रूप में उनको आने वाली सन्तति याद रखती थी। ज्योतिष शास्त्र में उन्नति हुई थी। तिथियों तथा चन्द्रमा की कलाओं का ज्ञान हो गया था। सूर्य के मार्गों को २७ भागों में बांट दिया गया था जो नक्षत्र कहलाते थे। धातुओं के विषय में भी इस काल में ज्ञान वृद्धि हुई अब शीशा, टिन, चांदी शिशा, लाल लोहे का ज्ञान हो गया था। स्वर्ण भी भिन्न भिन्न रीतियों से तैयार किया जाता था।

चिकित्सा ज्ञान पूर्व जैसा ही रहा होगा उस पर जादू टोने का प्रभाव अवश्य पड़ा था। भाषा के क्षेत्र में भी परिवर्तन हुये। जन साधारण की भाषा आदि वासियों के सम्पर्क के कारण बदली और भिन्न भिन्न प्रादेशिक प्रभाव के कारण प्राकृतिक भाषाओं का उदय हुआ। शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री पैशाची प्राकृत भाषायें थी जो भिन्न भिन्न प्रदेशों में बोली जाती थी। आगे चलकर इन भाषाओं

के और भी भाग हुये। इस प्रकार क्षेत्र में दो भाषायें थाईं, शुद्ध संस्कृत त प्राकृतिक, और समय तथा आवश्यकताओं के साथ साथ परिवर्तित होती रहीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सामाजिक क्षेत्र में भी अब काफी परिव हो गया था।

आर्थिक दशा—कृषि में बराबर प्रगति हो रही थी। अधिकाधिक भू प्रयोग में लाई जा रही थी, खाद भी दिया जाता था। अच्छी जमीन से दो फ उत्पन्न की जाती थी। उपज भी कई प्रकार की होती थीं। गेहूँ, चावल के साथ तिलहन भी पैदा होने लगी थी। हल का आकार बड़ा लिया गया था। कभी का हल में २४ बैल जोतने का उल्लेख आया है। कृषक आनन्द से रहते थे परन्तु प्रकृ के प्रकोप से कभी २ कृषक को आपत्ति का सामना भी करना पड़ता था, जैसे ओ या वर्षा का अभाव। कहीं २ ऐसा विदित होता है कि कृषक का स्थान धीरे धं जमींदार ले रहे थे। फिर भी पृथ्वी का इस प्रकार का परिवर्तन सुगम न । पाया था।

व्यापार तथा उद्यम में भी बड़ी उन्नति हो रही थी, श्रम विभाजन में वृ हो चली थी. ये पेशे जन्म से रहे थे। इस समय के ग्रन्थों में अनेकों कारीगरों उल्लेख आया है। बाणेरकारी, मछुवे, व्याध, घर के सेवक, हल जोतने वाले क्षेत्र श्रमिक—टोकरी बनाने वाले, रस्सी बनाने वाले, रथकार, धनुष बनाने वाले चर्मकार, बढ़ई, धीवर, गडरिये, धोबी, रंगसाज, जुलाहे, नाई, खटीक, कुम्हार धातुकार, व्यापारी, नट, गायक, ऋण देने वाले आदि। स्त्रियाँ भी कसीदेकारी तथ रंगसाजी का कार्य करती थीं।

पर्वतों पर रहने वाले किरातों से व्यापार होता था। किरात ऊंची चोटियों से जड़ी बूटियाँ लाते थे और आर्य लोग वस्त्र तथा चमड़े का सामान बदले में देते थे। समुद्र द्वारा भी व्यापार होता था। बेबीलोन से व्यापारिक संबंध स्थापित थे। इस समय के तीन प्रकार के सिक्कों का उल्लेख आया है। निष्क, शतमान तथा कृष्णल के द्वारा व्यापार सुगमता से हो जाता था। निष्क का नियत वजन ३२० रत्ती का वह स्वर्ण का टुकड़ा था। शतमान का भी यही वजन था। कृष्णल का वजन एक रत्ती था। इन इकाइयों में वर्तमान सिक्के के पूर्ण गुण विद्यमान न थे। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यापारियों ने अपने २ संघ स्थापित करने आरम्भ कर दिये थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्यों की आर्थिक अवस्था अब बहुत अच्छी हो गई थी।

धार्मिक दशा—धार्मिक क्षेत्र में बड़ा परिवर्तन हुआ। देवताओं का जो ऋग्वैदिक काल में था वह कम हो गया। वरुण, अग्नि तथा इन्द्र का महत्व था। इन देवताओं के प्रति प्रेम तथा श्रद्धा तो कम न हुई थी परन्तु इनके

लोक प्रियता तथा आदर में कमी आने लगी थी। रुद्र को अब पशुपति अथवा देव कहते थे। उसमें अब भीषणता का अंश कम हो गया था। अब विष्णु ा का प्रभाव और महत्व अधिकाधिक बढ़ रहा था। उसको देवताओं तथा मनुष्यों ों का कल्याणकारी समझते थे। अब ऋषि महात्माओं का लक्ष्य विष्णु देवता को. न्न करना होगया। अब प्रकृति से हटकर मनुष्य ने अपने चिन्तन तथा मनन की र अधिक ध्यान देना आरम्भ कर दिया। उसने अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति के ं अपने मन्त्रों द्वारा देवताओं को वश में करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिये। अब ुष्य ने प्रकृति के सजीव दृश्यों से प्रेरणा लेनी बन्द कर दी। इसी कारण से ृतिक शक्तियों के रूप अर्थात् देवताओं का प्रभाव कम होता गया।

दूसरा महत्वपूर्ण परिवर्तन वैदिक धर्म की क्रिया-विधियों तथा समारोहों में ा। अब पहले जैसी सादगी और सरलता जाती रही पहले परिवार का पिता सब ा विधियों को स्वयं पूर्ण कर लेता था और सार्वजनिक समारोह जाति का प्रधान ता था परन्तु अब यह विधियाँ जटिल हो गईं और अब इनके कराने के लिये ोहितों की आवश्यकता होने लगी। अब यज्ञों का महत्व बढ़ गया और उनकी सम्पूर्ण ने की विधियाँ भी जटिल हो गईं यदि इनको सम्पूर्ण रूप से सफल बना दिया ता तो देवता भी स्वयं प्रसन्न हो जाते थे। यज्ञों से सम्बन्ध रखने वाले मन्त्र और ायें रहस्यमय होती चली जा रहीं थीं। यज्ञ की हर क्रिया को विधि पूर्वक तथा र्ण रूप से करने पर ही उसका फल प्राप्त होता था अन्यथा यज्ञ करने वाला उल्टा प का भागी बनता था। यज्ञों का महत्व इतना अधिक होगया कि फल से हटकर नको करना ही लक्ष्य मान लिया गया। इन विधियों के जटिल होने के कारण अब ोहितों का मान बढ़ने लगा। लोग प्रेत आत्माओं, जादू-टोना, वशीकरण मन्त्र त्यादि में विश्वास करने लगे और इस प्रकार वह अन्धविश्वास की ओर बढ़ चले। ब जन साधारण का धार्मिक जीवन पुरोहित के हाथ में पहुँच गया। कर्म काण्ड में आडम्बर की भावना घुस ई है।

पूर्व वैदिक काल की सरलता समाप्त होने पर विचारधाराओं में भी रिवर्तन हुआ। मनुष्य ने गहन मनन द्वारा यह नतीजा निकाला कि सबसे श्रेष्ठ ह्म है और वही सब सृष्टि पर नियन्त्रण रखता है। वह हर जीवधारी में विद्यमान । देहावसान के पश्चात आत्मा दूसरा देह धारण करती है इसी प्रकार जब तक ह पूर्ण रूप से पवित्र होकर परमात्मा में विलीन नहीं होती तब तक बराबर जन्म ेती रहती है। इस प्रकार पुनर्जन्म के सिद्धान्त का विकास हुआ। साथ ही साथ र्म सिद्धांत भी उत्पन्न हुआ अच्छे अथवा बुरे हर प्रकार के कर्मों का फल अनिवार्य ूप से प्राप्त होता है। इन दोनों सिद्धान्तों के साथ २ मोक्ष का सिद्धांत भी आया। ानी जन्म-मरण से मुक्ति प्राप्त करना और परमात्मा में विलीन होना ही जीवन

का नष्ट होना चाहिये । यह दशा अमृत्व की दशा है । इस सिद्धान्त से प्र
होकर मनुष्य को प्रेरणा मिलनी आरम्भ हुई । इस युग में उपनिषदों की रच
जिनमें ईश्वर, प्रकृति, आत्मा तथा जीवन मरण के गूढ़ विषयों पर तत्त्व चिन्तन किया
और ये रचनायें विश्व दर्शन की धारों को महत्व पूर्ण देन है।

उत्तर वैदिक युग की समाप्ति के पूर्व एक और नवीन विचार धारा का
हुआ। यह तप तथा वैराग्य पूर्ण जीवन व्यतीत करने का था। तपस्वी का जीवन
परन्तु कठोर होता था। वह तरह २ यातनायें सहकर शरीर को साधता था।
लोभ और मोह से दूर रहता था। उसका विश्वास होता था कि इन यातनाओं
सहकर लोभ और मोह से दूर रहकर मनुष्य आत्मा की शुद्धि करता है और वं
परम पिता परमात्मा में विलीन हो जाता है। ब्रह्मचारी के जीवन को भी म
दिया गया।

इस प्रकार इस युग का धर्म पूर्व वैदिक युग के धर्म से भिन्न प्रकार का
गया इसमें नये २ सिद्धांत उत्पन्न हुये और पूर्व कालीन सरलता का लोप होने
आडम्बरों ने सरलता का स्थान ले लिया। पुरोहितों का महत्त्व बढ़ गया
धार्मिक क्रियाओं का वह एक मात्र कराने वाला बन गया।

—o—

Q. 8—Which age is known as the epic age? What do yo
know about the social, political and religious condition of the peopl
during that period?

प्रश्न ८—इतिहास का कौनसा युग महाकाव्यों का युग कहलाता है?
आप उस काल में लोगों की सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक दशा के विष
में क्या जानते हैं।

उत्तर रामायण तथा महाभारत दो महा काव्य हैं जो आज भी हिन्दू घरों
में प्रेम और प्रतिष्ठा के पात्र हैं। आज भी इनकी कथा हर हिन्दू भली प्रकार जानता
है। जिस समय इनकी रचना हुई वह काल भारतीय इतिहास में महाकाव्यों का
काल कहलाता है। यह समय कौनसा था इस पर विद्वानों में मत भेद है। प्रोफेसर
जैकोबी (Professor Jacoby) का मत है कि बाल्मीक रामायण में केवल पांच
कांड थे शेष दो कांड बाद में जोड़े गये। बाल्मीक रामायण का समय बुद्ध काल से
पूर्व का है क्योंकि राम की कथा दशरथ जातक में पाली भाषा में लिखी हुई मिलती
है। रामायण, महाभारत के पूर्व लिखी गई या बाद में इस विषय में भी कुछ
निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता। एक बात अवश्य है कि रामायण के कई
श्लोक महाभारत में मिलते हैं, परन्तु महाभारत का कोई भी श्लोक रामायण के मूल
ग्रन्थ में नहीं मिलता। इससे सिद्ध होता है कि अवश्य ही रामायण की रचना

महाभारत से पूर्ण हो चुकी थी। परन्तु कुछ विद्वानों का मत इस से भिन्न है, उनके कथनानुसार महाभारत की रचना पहले हुई। उनके अनुसार रामायण के मूल ग्रन्थ की रचना ई० पू० ३०० या ३०० वर्ष माना जाता है और महाभारत का रचना काल ई० पू० ४०० वर्ष है फिर भी दोनों ग्रन्थों की रचना ई० पू० २०० वर्ष तक पूर्ण हो चुकी थी। कुछ लोग इन ग्रन्थों के काल को और भी पीछे ले जाते हैं। एक बात अवश्य है कि यह दोनों ग्रन्थ अपने समय से बहुत पीछे की दशा का वर्णन करते हैं।

यह ग्रन्थ अनेकों दृष्टियों से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इन में महा काव्य काल की राजनैतिक-सामाजिक अथवा धार्मिक दशा का पूर्ण रूप से विवरण किया गया है उस समय की संस्थाओं, रीति रिवाजों, जीवन प्रणालियों पर प्रकाश डाला गया है। यह भारतीय साहित्य की सर्व श्रेष्ठ कृतियां हैं। राम की दक्षिण यात्रा आर्यों की दक्षिण की ओर प्रथम यात्रा प्रतीत होती है। इसके पश्चात आर्य सभ्यता ने दक्षिणी भारत में पदार्पण किया होगा। यह महाकाव्य रीति रिवाजों के अतिरिक्त आदर्शों के पूर्ण भन्डार हैं। परिवार के सदस्यों का एक दूसरे के प्रति क्या व्यवहार हो। राजा का प्रजा के और प्रजा का राजा के प्रति क्या व्यवहार हो। इस की शिक्षा इन ग्रन्थों में दी गई है। शताब्दियों से यह शिक्षायें भारतीय नर और नारियों का पथ प्रदर्शन कर रही हैं। इन काव्यों के पात्र सदा से हिन्दुओं के चरित्र निर्माण में विशेष रूप से अपना पार्ट अदा करते हैं। सीता आज भी भारतीय नारी का आदर्श बनी हुई है। राम आज भी पुरुषों के सम्मुख उदाहरण है।

आज भी इन ग्रन्थों से स्थापित की गई परम्परायें हिन्दु जगत में प्रकाश फैला रही हैं। महाभारत धार्मिक, नैतिक दार्शनिक और ऐतिहासिक आदर्शों का भन्डार है। विद्वान इसको बड़ा महत्व देते हैं। यह प्रथम काव्य, समस्त दर्शनों का रहस्य, चरित्र चित्रण की खान तथा पन्चम वेद तक कहा जाता है। यह बड़ा ही विशाल काव्य है यूनानियों के काव्य ईलियड तथा ओडेसी मिला कर महाभारत का महज आठवां भाग है। जीवन के हर पहलू पर महाभारत में पूर्ण रूप से प्रकाश डाला गया है। युद्ध में हिन्दु वीरों की कितनी सुन्दर नीति थी। किस प्रकार वह युद्ध नियमों का पालन करते थे और युद्ध के पश्चात शत्रु से भी प्रेम पूर्वक मिलते थे। इन आदर्शों का महाभारत भण्डार है।

"महाभारत के बाहर जहां कहीं भी हिन्दू संस्कृति का प्रसार हुआ। रामायण के साथ साथ वहां महाभारत का भी प्रचार हुआ। दूसरी सदी ई० पू० में यूनानी राजदूत इस के उपदेशों को उद्धृत करते हैं। छठी सदी ई० में सुदूर कम्बोडिया के मन्दिरों में इसका पाठ होने लगता है, सातवीं सदी में मंगोलिया के तुर्क अपनी भाषा में हिडम्बा बध आदि उपाख्यानों का आनन्द लेने लगते हैं और

दसवीं सदी में जावा की लोक भाषा में इसका अनुवाद हो जाता है" यह
भारतीय संस्कृति के अनोखे तथा अद्भुत दर्पण हैं। यह राष्ट्रीय सम्पत्ति है जि
कोई जाति जितना भी गर्व करे कम है।

उपरोक्त ग्रन्थों के आधार पर उस काल की राजनैतिक, सामाजि
धार्मिक दशा का पता चलता है।

राजनैतिक दशा—अब शक्तिशाली साम्राज्यों का निर्माण होने ल
सम्राट बनने की प्रबल इच्छा राजाओं को अन्य राज्यों पर विजय प्राप्त
ओर प्रेरित करने लगी थी। छोटे छोटे राजों को अपने आधिपत्य करने प
सम्राट की उपाधि ग्रहण करता था। 'दिग्विजय' राजनैतिक प्रभुता का प्रती
राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञों की प्राप्ति ही राजा के लिये उच्चतम आदर्श थे।

सम्राट जब कोई समारोह करते तो अधीनस्थ राजा उसके सन्मुख स
की तरह उपस्थित रहते थे, युद्ध काल में हर प्रकार से सम्राट की सहायता करते
महाभारत के युद्ध के समय इस प्रकार के अनेकों राजाओं ने दुर्योधन तथा यु
की सहायता की थी और युद्ध क्षेत्र में लाखों की संख्या में अपने सैनिक दृ
कर लिए थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस काल में ही सामन्तवाद का बी
रोपण हो चुका था।

राजा का पद कुलागत था वंश परम्परानुसार राजा का ज्येष्ठ पुत्र ही उस
उत्तराधिकारी बनता था। पर यदि शारीरिक या मानसिक रोग के कारण राजा
ज्येष्ठ पुत्र राजा होने के योग्य न होता तो उसको गद्दी से वंचित कर दिया ज
धृतराष्ट्र के जन्मान्ध होने के कारण पाण्डु को राज्य मिला था। उत्तराधिक
होने में जनमत का भी ध्यान रक्खा जाता था।

हालांकि इस काल का राजा बड़ी सीमा तक प्रतिभाशाली तथा शक्तिशा
होगया था परन्तु पूर्ण रूप से निरंकुश और स्वेच्छाचारी न हो पाया था। उस
अपने बन्धुओं, मन्त्रियों परामर्शदाताओं तथा पुरोहितों की राय का आदर कर
रखता था। कुल तथा जाति के रीति रिवाजों के सन्मुख उसको सिर झुकाना पड़
था। प्रजा अपने राजा का आदर सत्कार करती थी। उसकी इच्छाओं का पूर्ण रू
से पालन करती थी। परन्तु यदि राजा दुष्ट या अत्याचारी होता था और जनता
प्रति अपना व्यवहार ठीक न रखता था तो ऐसे राजा को या तो पद से हटा दिय
जाता था या 'पागल कुत्ते की भांति' उसका वध करा दिया जाता था।

राजा वैभवशाली होता था वह बड़ी शान और चमक दमक से रहता था।
उसके मनोरंजन तथा आमोद प्रमोद के सब साधन जुटे रहते थे। मृगिकायें एव
शिथिल आचरण की नारियां राजा की अनुगामिनी रहती थीं आखेट तथा मल्ल युद
की ओर इनकी बड़ी रुचि रहती थी। अत्यन्त दान करना राजा का परम कर्तव्य था।

ाधानी के चारों ओर प्राचीर होती थी जो चारों ओर पानी की गहरी खाई से
ी रहती थी। अन्दर जाने के लिये बड़ा द्वार होता था। राजधानी के अन्दर
श्यक वस्तुए पूर्ण मात्रा में एकत्रित रहती थीं। अनेकों भव्य भवन, राजप्रासाद,
ान, वैभवशाली, सुन्दर राज मार्ग राजधानी को सुशोभित करते थे। राजधानी
आनन्द की सब सामग्री प्रस्तुत रहती थी। राज्य का शासन संचालन राजा
ने मन्त्रियों द्वारा करता था। मन्त्रियों के नीचे कुशल, ईमानदार, सच्चरित्र,
मित्र तथा कार्य में निपुण पदाधिकारी होते थे। ग्रामों में ग्रामीण शासन का
स चलाते थे। सब अधिकारी राजा के प्रति उत्तरदायी थे। दोषपूर्ण अधिकारियों
प्रजा की रक्षा करना राजा का कर्तव्य समझा जाता था। राज्य की आय के कई
ाधन थे। पैदावार का छठा भाग लगान के रूप में लिया जाता था। वाणिज्य,
्यापार, खानों समुद्र तथा वनों की पैदावार पर भी कर लगाए गए यह समस्त
ाय प्रजा के हित के कार्यों में खर्च होती थी।

इस समय गणराज्य भी मौजूद थे। कई-कई गणराज्य मिलकर संघ भी
ना लेते थे। गणराज्यों में लोकमत का आदर तथा सम्मान था।

राज्य की सुरक्षा के हेतु एक विशाल तथा सुसंगठित सेना रखी जाती थी।
ह स्थायी भी होती थी और स्वयंसेवकों द्वारा भी इस का निर्माण होता था।
्थायी सेना द्वारा कभी कभी राजा अपनी सत्ता को सुदृढ़ करने का प्रयत्न भी करते
े और कभी उनको सफलता भी प्राप्त होती थी। इन सेनाओं द्वारा ही राजा अन्य
छोटे २ राजाओं पर आधिपत्य स्थापित कर महाराजाधिराज और सम्राट की उपाधि
धारण करते थे। सेना के चार भाग थे पदाति, अश्व, हाथी और रथ। रथों में
बैठ कर युद्ध करने का श्रेय सामन्तों तथा राजवंश के आदमियों को होता था। थल
सेना तथा गुप्तचर विभाग भी था। भिन्न भिन्न प्रकार के अस्त्र शस्त्र प्रयोग में
लाये जाते थे। ढाल, तलवार, गदा, भाला, धनुष बाण हथियार थे। कवच शरीर
रक्षा के लिये धारण किया जाता था। विनाशकारी बाण आग लगाने के काम में
लाये जाते थे। सेना को भिन्न भिन्न प्रकार से तरतीब देकर युद्ध किया जाता था।
द्रोणाचार्य ने एक अद्भुत व्यूह की रचना कर अभिमन्यु का वध किया था। वीर
पुरुष युद्ध में लड़ते-लड़ते प्राण त्यागना सौभाग्य समझते थे और मोक्ष का साधन
मानते थे। युद्ध नियमपूर्वक होते थे। निःशस्त्र, निष्कवच, पीठ दिखाकर भागने
वाले तथा शरण में आये हुए शत्रु पर प्रहार नहीं किया जाता था। आत्मसमर्पण
करने वाला विजेता के सम्मुख मुख में तिनका दबाकर उपस्थित होता था। केवल
शत्रु के प्रति दया का बर्ताव किया जाता था। युद्ध क्षेत्र में भी आर्यों का नैतिक स्तर
बहुत ही ऊंचा था।

सामाजिक दशा—इस समय लोगों का जीवन सादा, सरल, न्याय प्रिय
तथा सत्य का जीवन था। वह अपना नित्य कर्म बड़ी तत्परता से पूरा करते थे।

प्रतिदिन स्नान करना, मन्त्रों का उच्चारण करना इत्यादि अपना कर्तव्य समझते थे उनकी वेष-भूषा सादा थी। यह शरीर पर तीन वस्त्र धारण करते थे। धड़ से ऊपर भाग के लिये लम्बा कपड़ा, सिर के लिए पगड़ी और नीचे के लिये एक धो टुकड़ा। इनका खान-पान भी सादा था। मांस का उपभोग घट गया था। दूध, घी सब्जी अन्न भोजन के मुख्य तत्व थे। सुरापान बुरा समझा जाता था। ग्राम का प्रयोग प्रथम बार इसी काल में आया है।

इन लोगों का जीवन आशावादी था। पुरुषार्थ में इनका अधिक विश्वास था। यह भाग्य पर अधिक आधारित न थे। परिश्रम सम्पत्ति की उत्पत्ति का सबसे महत्वपूर्ण साधन था। ग्राम वाले अधिकतर कृषि करते थे उनके ग्रामों के मध्य में एक दुर्ग होता था जिसमें आपत्ति के समय आश्रय लिया जाता था।

जाति प्रथा अब दृढ़ होगई थी। पुरोहितों का प्रभाव अधिकाधिक बढ़ र था। उपनिषदों के युग में उन के प्रभाव में जो कमी आगई थी अब उसकी पू होगई थी। ब्राह्मणों का आदर बढ़ रहा था। जन साधारण ब्राह्मण गुरु की नारा करने का साहस न कर सकते थे। अनार्य शूद्र अब भी शोचनीय स्थिति में जीवन बिता रहे थे। उनका काम दासों का ही रह गया था। उनके स्वयं के अधिकार न थे। उनके जीवन का लक्ष्य ही उच्च श्रेणी के लोगों की सेवा करने त ही सीमित था। उनका जीवन पशुओं से कुछ ही अच्छा रहा होगा।

स्त्रियों की दशा अवनत थी उनके मान तथा प्रतिष्ठा में कमी आगई थी। इ युग में प्रथम बार सती की प्रथा का उल्लेख हुआ। बहु-विवाह की प्रथा भ विस्त हुई उच्च वर्णों के पुरुष कई पत्नी रख सकते थे। यह लोग अपने से निम्न श्रे के वर्ण की कन्या से विवाह कर सकते थे। परन्तु शूद्रों का विवाह अपने ही वर्ग हो सकता था। बाल विवाह का रिवाज न था यौवन अवस्था में ही कन्या विवाह किया जाता था। वर के चुनने में कन्या को स्वतन्त्रता थी। स्वयंवर प्रथा चालू थी। परदे का रिवाज बहुत कम था। स्त्रियां स्वतन्त्रता से घूम फि सकती थीं। वह पति के समान ही प्रभाव रखती थीं और अपने सतीत्व तथ पवित्रता का पूर्ण रूप से पालन करती थीं। लोगों का मत था कि स्त्रियों का आदर करने से देवता प्रसन्न होते हैं और घर में सम्पत्ति आती है।

इस युग में शिक्षा केन्द्रों का विवरण भी आता है इन संस्थाओं में बाल काल से ही शिष्य गुरु के पास रहता था। उसका जीवन संयम और त्याग का होत था। इन संस्थाओं में उच्च कोटि की शिक्षा दी जाती थी वेदों की शिक्षा उत्तम मानी जाती थी। राजकुमारों तथा क्षत्रिय घराने के बच्चों को युद्ध शिक्षा में निपुण बना दिया जाता था। धनुष बाण चलाना, भाला, तलवार आदि का प्रयोग करना बताया जाता था। इनके अतिरिक्त अन्य विषयों की शिक्षा दी जाती थी। ऐस

प्रतीत होता है कि इन्हीं संस्थाओं ने आगे चलकर आश्रमों का रूप धारण कर लिया था जिनमें गुरु शिष्य प्रेमपूर्वक साथ-साथ रहते थे। शिष्य आने वाले भविष्य के लिए अपने को हर प्रकार से उपयुक्त बनाते थे।

आर्थिक दशा— आर्थिक दशा उन्नति पर थी। अधिकतर लोग कृषि करते थे। पैदावार बढ़ रही थी। सिंचाई का काम राज्य की ओर से होता था। उद्यान का काम विकसित हो रहा था पशु पालन अब भी अधिकता से होता था। व्यवसाय उन्नति कर रहे थे। कपड़े का व्यवसाय बहुत अधिक था। समुद्रों से मोती निकाले जाते थे। उद्योग-धन्धों को उन्नत करने के लिए राज्य से सहायता मिलती थी। व्यापार वैश्यों के हाथ में था सौदागर दूर के प्रदेशों से सौदा लाकर बेचते थे। और राज्य को इनके द्वारा चुङ्गी के रूप में आय होती थी। शिल्पियों ने अपने संघ बनाने आरम्भ कर दिये थे। इन सङ्घों के प्रधान महाजन होते थे। इनका समाज में बड़ा मान और आदर होता था। माल ढोने का काम पशुओं तथा बैल गाड़ियों से लिया जाता था। सोना, चांदी, रांगा, लोहा तथा सीसा भिन्न-भिन्न वस्तुएं बनाने के काम में आता था। रेशमी वस्त्र भी तैयार किये जाते। व्यापार अधिकाधिक बढ़ रहा था और जनता आर्थिक स्थिति दृढ़ थी।

धार्मिक दशा :—इस क्षेत्र में वैदिक कालों की अपेक्षा प्रकृति की पूजा समाप्त हो गई पुराने देवताओं का महत्त्व भी घट गया और नवीन देवी देवताओं का उदय हुआ। ब्रह्मा सृष्टि का उत्पादक माना गया विष्णु संसार का पालन करने वाला और महेश संसार का संहार करने वाले माने गये इस त्रिमूर्ति की इस काल की विशेषता थी। विष्णु की उपासना विशेष प्रकार से की जाने लगी वह लोकप्रिय देवता बन गया। राम और कृष्ण उस के अवतार माने गये। लोगों का विश्वास बन गया था कि जब जब मर्यादा नष्ट हो जाती है विष्णु भगवान मनुष्य का रूप धारण कर विश्व कल्याण हेतु स्वयं अवतार धारण करते हैं। यज्ञों की प्रथा का लोप तो नहीं हुआ था परन्तु अब आत्म संयम तथा आत्म शुद्धि पर बल दिया जाने लगा था। चरित्र निर्माण पर विशेष रूप से ज़ोर था। वीर पूजा की ओर भी लोगों की प्रवृत्ति हो चली थी।

भगवद्गीता ने इस समय के धार्मिक विचारों के सार को बताया है। कर्म के आधार पर कोई व्यक्ति चाहे वह किसी भी वर्ग अथवा जाति का हो मोक्ष प्राप्त कर सकता है। आत्म संयम और श्रेष्ठ कर्म करने वाला धीरे धीरे परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। किसी देवता की पूजा करने वाला, यदि वह श्रद्धा से की गई है, अपना कल्याण कर सकता है। इस प्रकार गीता ने उस विचार धारा को जन्म दिया जिसने हिन्दु धर्म को जाति, देश या सम्प्रदाय के संकीर्ण बन्धनों से ऊपर

बढ़ा दिया। भक्ति योग की महत्ता बढ़ती गई। भगवान का भजन करना ही उद्धार करने में समर्थ हो जाता है। ऐसी लोगों की धारणा बन चुकी थी।

जाति प्रथा की सीमा अत्यन्त दृढ़ और व्यापक हो रही थी। कर्मेण्य पुनर्जन्म का सिद्धांत धीरे धीरे जड़ पकड़ रहा था।

राम और कृष्ण के अनेकों उपासकों में जो उनको विष्णु का अवतार मा कर उनकी उपासना करते थे, इस प्रकार अवतारवाद और भक्ति मार्ग जन्म हो गया था। जब वैदिक काल की सरलता समाप्त हो चुकी थी और आ वाद फैलने लगा था। धार्मिक क्षेत्र में भिन्न भिन्न प्रकार के ढोंग उत्पन्न हो रहे लोगों में शूद्रों और अन्य निम्न श्रेणियों के प्रति घृणा और उपेक्षा बढ़ रही और ब्राह्मण पुरोहित का आदर और प्रभाव दिन प्रतिदिन बढ़ रहा था, धा रीतियां तथा विधियां ऐसी बन गईं थी कि उनको योग्य पुरोहितों के अतिरिक्त कोई न करा सकता था। पशुओं की बलि दी जाती थी, यज्ञ इत्यादि का बड़ा रिवाज था। धर्म ऐसी स्थिति में पहुँच रहा था कि इसके प्रति निम्न श्रेणी के लोगों की श्रद्धा कम होने लगी थी। उनका धार्मिक क्षेत्रों से कोई वास्ता न रह गया था और धीरे धीरे हिन्दू धर्म में वह संकीर्णता आ रही थी, जिसके वि आगे चल कर महात्मा बुद्ध तथा महावीर स्वामी ने आवाज लगाई और देखते दे महात्मा बुद्ध के करोड़ों की संख्या में अनुयायी बन गये। फिर भी इस काल धार्मिक क्षेत्रों में अनेकों प्रकार की प्रगति हुई और इस प्रगति ने मनुष्य के म जीवन को बड़ी सीमा तक प्रभावित किया। एक गीता ने ही संसार की सभ को इतना प्रभावित किया कि आज भी यह ग्रन्थ हर देश में आदर प्राप्त कर रहा और करता रहेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकाव्य काल की धार्मिक दशा प्रगति शी रही और आने वाले विचारों को जन्म दे रही थी।

Q—9. How was the Caste system originated? Discuss it merits & demerits.

प्रश्न—९ जाति प्रथा की उत्पत्ति किस प्रकार हुई? इस के गुण तथा दोषों की विवेचना करो।

उत्तर :—ऋगवैदिक काल या उस से पूर्व, जाति प्रथा जैसी कोई चीज नहीं थी। परन्तु उत्तर वैदिक और महाकाव्य काल में जाति प्रथा का उदय तथा विकास होना आरम्भ हो गया और यह विकास अधिक ही होता चला गया, जब आर्य जाति ने भारत को अपना निवास स्थान बना लिया तो उनका सम्पर्क यहां की आदिजातियों से हुआ। आर्य श्वेत वर्ण के सुडौल लोग थे परन्तु यहां के आदि निवासी श्याम वर्ण के थे। इसलिये आर्यों ने अपने रंग और रक्त की शुद्धता की ओर ध्यान देना

प्रारम्भ करदिया। इस प्रकार पृथकता का प्रथम आधार रंग वालों तथा वर्णकी भिन्नता थी। यह दो वर्ग आर्यों तथा अनार्योंके बने। अबतक पेशा वर या सामाजिक समुदाय उत्पन्न न हुये थे। आर्यों ने अपने आप को विजेता समझ यहां के निवासियों को निम्न श्रेणी का माना। उन्होंने यहां के निवासियों को दास और दस्यु कहना आरम्भ कर दिया। यही पृथकता आगे चल कर जाति प्रथा की आधार शिला सिद्ध हुई। वर्गों का यही आधार शताब्दियों तक चलता रहा।

इसके पश्चात साधारण मनुष्य अपने दैनिक कार्यों में इतने संलग्न रहने लगे कि उनका ध्यान धार्मिक कर्मकाण्डों से हटना आरम्भ हो गया। इसके अतिरिक्त पवित्र तथा क्लिष्ट मन्त्रों के महत्व को समझना और जन साधारण के लिये असम्भव हो गया। ऋग वैदिक काल में यह विधियां इतनी सरल थीं कि परिवार का मुखिया इन सब को सरलता पूर्वक पूरा करता था। शताब्दियों तक यही रीति बनी रही और पुरोहित जैसी किसी भी जाति की आवश्यकता अनुभव नहीं की गई। परन्तु उत्तर वैदिक काल तक आते आते सरलता का स्थान आडम्बरों और जटिलता ने ले लिया और इसका फल यह हुआ कि धार्मिक कृत्यों को पूरा करने का काम कुछ विशेषज्ञों द्वारा होने लगा। इस वर्ग ने राजाओं की कीर्तियां गानी आरम्भ करदीं। उनके लिये धार्मिक कृत्य और विधियोंको करना आरम्भ कर दिया। समय के साथ साथ यज्ञ और पूजन की क्रिया और विधियां कठोरतम होती चली गईं और उनमें दक्ष होने के लिये कठोर परिश्रम की आवश्यकता पड़ने लगी। इस आवश्यकता को पुरोहित वर्ग ने पूरा किया। इन लोगों ने कड़े परिश्रम द्वारा मन्त्रों को कन्ठस्थ किया। संयम के साथ विशेष क्रियाओं को सीखा। इसलिये इस वर्ग ने अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा उच्च स्थान प्राप्त कर लिया।

आरम्भ में यह वर्ग निःस्वार्थ रहा और शताब्दियों तक उच्च भावनाओं से प्रेरित हो समाज सेवा करता रहा। परन्तु कालोपरान्त उनमे गर्व उत्पन्न होतागया। उन्होंने अपने प्रति अलौकिक और मनघड़न्त परम्परायें जोड़ना आरम्भ कर दीं। अपनी काल्पनिक उत्पत्तियों का स्पष्टीकरण करने के लिये धर्म शास्त्रों और सूत्रों का आश्रय लेना आरम्भ कर दिया। उन्होंने समाज पर अपना प्रभुत्व बनाये रखने के हेतु नवीन सिद्धान्तों को जन्म देना आरम्भ कर दिया। इन्होंने आगे चलकर अन्धविश्वास भी उत्पन्न करने में सहायता पहुंचाई। फल यह हुआ कि जन साधारण में परोहितों की आज्ञाओं का उलंघन करने का साहस जाता रहा और शताब्दियों तक इस वर्ग का प्रभुत्व कायम रहा।

दूसरा वर्ग क्षत्रियों का बना। आरम्भ में जब छोटे छोटे राज्य थे, जावन सरल था युद्धों की व्यापकता भी कम थी। जब युद्ध के समय जाति के युवक युद्ध के समय अपनी जाति के प्रधान के साथ युद्ध क्षेत्र में जाते थे और शान्ति के समय

फिर कृषि में लग जाते थे। परन्तु आगे चलकर आर्यों को बराबर युद्ध करने की आवश्यकता रहने लगी राज्य बढ़ने लगे और सीमाओं की सुरक्षा के लिये स्थायी सेनाओं की आवश्यकतायें होने लगी। इस कारण ऐसा अनुभव हुआ कि एक वर्ग का काम युद्ध करना मात्र ही बन गया। इस वर्ग का कार्य समाज की रक्षा और राज्य का विस्तार करना ही बन गया। फल यह हुआ कि सेनानियों तथा योद्धाओं का यह वर्ग पृथक हो गया। यही क्षत्री वर्ग कहलाया। शक्ति और सत्ता प्राप्त होने पर शासन व्यवस्था भी इसी वर्ग के हाथों में आई। इस प्रकार इस वर्ग में राजा और उनके उच्च अधिकारी भी सम्मिलित हो गये।

तीसरा वर्ग वैश्यों का था इस में वह लोग सम्मिलित थे जो उद्योग धन्धों व्यापार तथा कृषि में लगे हुए थे। यह प्रथम दोनों वर्गों से निम्न समझे जाते थे। परन्तु शताब्दियों तक इन वर्गों में पृथकता और वंश की भावना जाग्रत न हुई। सामान्य रूप से इन तीनों वर्गों से हर प्रकार के सम्बन्ध कायम रहे और इनका मिला जुला जीवन प्रेम पूर्वक व्यतीत होता रहा।

चौथा वर्ग शूद्रों का था। इनका काम प्रथम तीनों वर्गों की सेवा करने का था। इस वर्ग में यहां की आदि जातियां भी सम्मिलित की और इस वर्ग की बड़ी संख्या थी। प्रथम तीन वर्गों से इस वर्ग के खान पान या शादी विवाह इत्यादि के किसी प्रकार के सम्बन्ध न थे। जाति प्रथा की उत्पत्ति के विषय में एक यह विचार भी है कि जाति प्रथा का जन्म आर्यों के बीच नहीं हुआ। आर्यों के आगमन से पूर्व यह प्रथा पहले से ही द्राविड़ों के समय में विद्यमान थी। कालान्तर में जब आर्यों और द्राविड़ों का सम्मिश्रण आरम्भ हुआ तो आर्यों ने भी अपने समाज में इस प्रथा को अपना लिया। परन्तु एक बात अवश्य है कि इस प्रथा का आधार श्रम विभाजन ही था। इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज का यह विभाजन श्रम विभाजन के आधार पर था और जाति प्रथा की अपेक्षा यह एक प्रकार का वर्गीकरण था। यह वर्गीकरण वैज्ञानिक तथा विवेकशील आधार पर होने के कारण दोष रहित था। एक वर्ग का आदमी सुगमता से श्रम के आधार पर एक वर्ग से दूसरे वर्ग में प्रवेश कर सकता था। उस समय जाति प्रथा में कठोरता और अपरिवर्तनशीलता न थी। उस समय का इतिहास इस प्रकार के परिवर्तनों से परिपूर्ण है। जन्म किसी वर्ण में हो, कर्म प्रधान था। द्रोणाचार्य ब्राह्मण होते हुवे युद्ध क्षेत्र में ऊंचे स्तर के सेनापति बने। उन्होंने युद्ध विद्या में निपुणता प्राप्त की। महर्षि वशिष्ठ वेश्या के घर जन्म लेकर भी महान पण्डित बने। विदुर दासी पुत्र होकर भी महान दार्शनिक बने, जनक महाराजा थे परन्तु ज्ञान के आचार्य भी थे।

कालान्तर में यह वर्ग और अधिक वर्गों में विभाजित होते चले गये और जाति प्रथा का रूप विकसित ही होता चला गया। समय में इस प्रवाह को ...

दाने में सहायता ही पहुँचाई हर जाति अपना संगठन करती रही फल यह हुआ कि जाति वंश परम्परागत होती गईं। अब एक जाति से दूसरी जाति में प्रवेश करना कठोर हो गया, जन्म ने कर्म का स्थान ले लिया और पृथकता की भावना सुदृढ़ होती चली गई।

इसके अतिरिक्त नवीन धन्धे उत्पन्न हुये और इन नवीन धन्धों को अपनाने वालों ने नये नये समुदायों को जन्म दिया और जातियों से उप जातियां बनीं। लोहार, धोबी, नाई, तेली इत्यादि ने अपनी भिन्न भिन्न जातियां बना लीं। यहां की आदि जातियों ने अपना विभाजन दूसरी ही जातियों में कर डाला। जैसे बंगाल के राजवन्शी या मध्य प्रदेश के गौड़। जैसे जैसे विदेशी जातियां भारत में आईं और यहां के निवासियों में मिलीं वैसे वैसे और भी नवीन जातियां बनीं जैसे—हूण, शक विदेशियों ने गूजर तथा जाटों की जातियां बनाईं, जातियों को लोगों ने जब एक स्थान को छोड़ कर दूसरे स्थान पर रहना आरम्भ किया तो उन के रीति रिवाज पूर्व स्थान पर रहने वाले अपने बन्धुओं के भिन्न हो गये और उन्होंने नवीन जाति को उत्पत्ति कर डाली। कभी कभी एक जाति से बहिष्कृत होने पर इस प्रकार के लोगों ने अपनी अलग जाति का निर्माण कर लिया।

अहिंसा के सिद्धांतों ने भी जाति विकास पर काफी प्रभाव डाला महावीर स्वामी के अनुयाइयों ने जैन धर्म में पहुँच कर दूसरी ही जातियां बना डालीं। जब मुसलमानों ने भारत में प्रवेश किया और वह अपनी पृथक संस्कृति रखने के कारण यहां के हिन्दुओं से न मिल पाये तो हिन्दुओं ने अपनी जातियों की कठोरता को और भी दृढ़ कर लिया तथा विदेशियों के साथ अपना सम्पर्क न होने दिया। इस समय के आते आते जातियों की पृथकता पूर्ण रूप से दृढ़ हो गई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रक्त और वंश की भावना से आरम्भ हो कर जाति प्रथा ने कैसा रूप धारण किया और इस प्रथा ने भारतीय इतिहास में किस प्रकार अपना प्रभाव डाला—

जाति प्रथा के गुण :—श्रम विभाजन के आधार पर जातियां बनीं और बनती ही चली गईं। एक जाति का एक विशेष प्रकार का धन्धा हो गया और पीढ़ी दर पीढ़ी उसी धन्धे को करने के कारण उस में दक्षता बढ़ती चली गई हर प्रकार की कला में ऐसा ही हुआ और इस कारण के उद्योग धन्धों में उन्नति होती चली गई। व्यवसायिक कुशलता में प्रगति हुई, महाजन का लड़का महाजन बना और उसने अपनी शिक्षा घर में ही प्राप्त कर ली। साथ ही साथ सब धन्धे सुगमता पूर्वक बने रहे। इस प्रकार इस प्रथा ने उद्योग धन्धों, शिल्प कलाओं को बनाये रखा, नहीं, स्वच्छ अपितु उनकी उन्नति में भी सहायता पहुँचाई।

एक ही प्रकार के व्यापार और उद्योग को जो एक ही जाति द्वारा होता थ आपसी प्रतिस्पर्धा से बचाया और वर्तमान समय के श्रमिक संघों का कार्य किर जाति में अनुशासन कायम रक्खा, जाति में प्रेम बनाए रखने में इस प्रथा ने अद्भुत कार्य किया।

इस प्रथा ने आपसी बन्धुत्व भावना को बढ़ाया। एक जाति का आदमी अप जाति के आदमियों को अपना भाई समझता है। इस प्रकार आपसी प्रेम भाव उत्प होता है, एकता बढ़ती है, अपनी जाति के लोग ही समय समय पर आर्थिक सहाय भी कर देते हैं और इस प्रकार लोक सेवा से स्वार्थ त्याग की भावना को बल मिल है। इसके अतिरिक्त जातियों के संघठन ने मनुष्यों को अनेकों दुर्गुणों से दूर रक्ख है जैसे यदि कोई ब्राह्मण माँस खाये या सुरापान करे तो उस को जाति से बहिष्क कर दिया जाये, या यदि एक जाति का पुरुष निम्न श्रेणी की जाति में विवाह का तो उसकी जाति उस का बहिष्कार कर देती है। जातियों द्वारा अपने रीति रिव परम्परायें, गुण इत्यादि सुरक्षित रक्खे गये हैं। इस प्रकार अपनी संस्कृति कायम रखने में जाति प्रथा ने किले बन्दी का कार्य आरम्भ किया।

आरम्भ काल में जब आर्यों को यहां के आदि निवासियों से संघर्ष कर पड़ा और उसके पश्चात दोनों जातियों में सम्पर्क हुआ और यह बात प्रत्यक्ष होग कि दोनों को साथ साथ रहना है तो जाति प्रथा ने इस गुत्थी को सुलझाया और दो जातियों की सभ्यता अपने रूप में कायम रह सकी। यहां की निम्न सभ्यता ने अप निम्न स्थान को पाकर ही संतुष्टि प्रगट की। इस प्रकार एक नवीन स्थान का जन्म हुआ जिसका उद्देश्य था कि 'समाज में हर प्रकार की सभ्यता को स्थान मिलना आवश्यक है तथा उसी में सब का भला है।'

आगे चल कर जब विदेशियों ने भारत पर आक्रमण किये तो जाति प्रथा के द्वारा ही उनका समावेश हिन्दु जाति में हो सका जैसे शक तथा हूण लोगों ने यहं आकर जाट, गूजर जातियां बनाईं और शान्ति पूर्वक हिन्दू समाज का ए अंग बन गये।

परन्तु जब इस प्रकार का समावेश असम्भव हो गया तो जाति प्रथा ने ए दूसरा ही कार्य किया। जैसे कि मुसलमानों के आक्रमणों के समय हुआ। मुसलमान अपनी नवीन सभ्यता लेकर आये और यहां आकर इस सभ्यता ने अपने पैर जमान आरम्भ किये। धर्मान्ध मुसलमानों ने हिन्दु धर्म पर आघात किये तब जाति प्रथ ने हिन्दू धर्म की रक्षा की। जातियों ने अपने बन्धनों को और भी कठोर बना लिय और प्राचीन प्रथाओं को इस्लाम के प्रभाव से दूर रक्खा। जब मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन शुरु किये तो जातियों ने अपनी रक्षा की। यदि किसी राजपूत ने अपनी बेटी किसी मुसलमान को दी तो शेष जाति ने उसका बहिष्कार कर दिया। इस प्रकार

ति की रक्षा हुई और समस्त हिन्दु धर्म क्षीण होने से बचा। जातीय स्वाभिमान
बचाने के लिये समस्त जाति एक साथ रही और विरोधियों के आक्रमणों को
फल किया। इस प्रकार हम देखते हैं कि जाति प्रथा ने यदि एक ओर समाज की
कता को भंग किया है तो दूसरी ओर उसने अनेक प्रकार से समाज का हित
ी किया है। आज आवश्यकता न हो परन्तु जब आवश्यकता पड़ी इस प्रथा ने
हन्दू सभ्यता को लाभ पहुंचाया।

दोष—समाज तथा देश की एकता के ऊपर इस प्रथा ने गहरी और गंभीर
ोट लगाई। हिन्दुओं को अनेकों जातियों तथा उपजातियों में विभाजित कर दिया
ौर आपस में संकीर्णता तथा पृथकता की भावनाओं को प्रज्वलित किया। आपसी
त भेद उत्पन्न किये, द्वेष और झगड़े पैदा हुवे, ऊंच और नीच के प्रश्न पैदा हुवे।
ाष्ट्रीय भावना के उत्पन्न होने तथा उसके विकास में बाधक हुई। इस प्रकार देश
की प्रगति को रोका और समाज के भ्रातृ भाव को हानि पहुंचाई। इस प्रथा ने
आर्थिक तथा बौद्धिक प्रगति को रोका। क्योंकि इन क्षेत्रों में प्रगति करने के अवसर
सब व्यक्तियों को समान रूप से प्राप्त न हो सके। चर्मकार का लड़का चमड़े का
पेशा ही कर सकता था। चाहे उस में बुद्धि बल कितना ही विलक्षण क्यों न हो।
भंगी का लड़का अपने जातीय पेशे को छोड़ कर नहीं जा सकता था और शिक्षा द्वारा
ज्ञान वृद्धि नहीं कर सकता था। इस प्रकार जातियों ने सुअवसर तथा सुसाधन
सीमित कर दिये और व्यापक रूप से जो प्रगति होती उसको रोक दिया। फल यह
हुआ कि विलक्षण बुद्धि वालों को अपने विकास का मौका न मिल सका और समाज
को भी इसमें हानि ही हुई। जाति प्रथा ने बड़ी हानि यह की है कि इसने सदा
उन वर्गों की रक्षा की है जो आज शोषित वर्ग कहलाता है और उन वर्गों को
पददलित करने में सहायता पहुँचाई है जिनका शोषण होता रहा है। इसलिये
सामाजिक क्षेत्र में इस ने असन्तोष और बेचैनी का बीजारोपण करके उसको अशक्त
बनाया है। ईर्ष्या तथा द्वेष भाव को प्रोत्साहित किया है। दीन,दुर्बल वर्गों को उन्नत
नहीं होने दिया। जातियों के कठोर नियम, अपरिवर्तनशीलता तथा आवश्यक
प्रतिबन्ध स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने वालों के रास्ते में बाधक सिद्ध हुई हैं।
नवयुवकों ने जाति के बन्धनों को तोड़ कर यदि आगे बढ़ने का साहस किया भी है
और रूढ़ीवादी प्रभावों को चुनौती दी है तो जाति वालों ने उनका घोर विरोध किया
है। यहां तक उनको बहिष्कृत करने तक के प्रयत्न किये गये हैं और उनसे सामाजिक
बन्धन तोड़ लिये गये हैं। उनका इस प्रकार निरादर होता हुआ देख अन्य लोगों
का उत्साह स्वयं ही दब जाता है। इस प्रकार प्रगतिशील लोगों को आगे बढ़ने से
रोका गया है।

हिन्दू जातियों में प्रवेश करने के द्वार बन्द कर देने के परिणाम घातक

सिद्ध हुये हैं। संकोच तथा संकीर्णता बढ़ी है। इच्छा रखने वाले व्यक्ति भी इन जातियों में प्रवेश नहीं कर सकते। विदेशी तो अपवित्र माने गये और किसी भी जाति ने उनका आवाहन नहीं किया। फल यह हुआ कि हिन्दू समाज अपेक्षाकृत ही चला गया और उसकी शक्ति दिन प्रतिदिन क्षीण ही होती चली गई। उंग पर गिने हुये मुसलमान भारत में आये परन्तु आज उनकी संख्या करोड़ों पर गई। इसका कारण हिन्दू जातियों की संकीर्णता, द्वारों का जाने वालों के लिये रहना और आने वालों के लिये बन्द रहना है। इसके अतिरिक्त अन्य जातियों तथा विदेशियों से पूर्ण संपर्क न होने देने से सभ्यताओं का भली प्रकार आ प्रदान न होने दिया अपितु दूसरों के गुणों को भी अवगुण समझा। जाति प्रथा बहुसंख्यक लोगों को पतन की ओर ढकेला है और इतना ढकेला है कि उत्थान तथा उत्कर्ष की कोई सम्भावना ही नहीं है। छूत छात जैसी बीमारी शिकार आज भी करोड़ों की संख्या में लोगों में मौजूद है। हरिजन शताब्दियों से सा में जाति प्रथा के कारण पददलित होते रहे हैं और आज भी उनकी वही दु अवस्था है परन्तु अच्छा है। हमारे विधान ने छूत छात को कानूनी जुर्म करार दे दि है। आशा है इस अवगुण का शीघ्र ही अन्त हो जायेगा और हम अ ही अपने बिछड़े हुये भाइयों को गले लगा लेंगे। राजनैतिक क्षेत्र में भी इस प्र ने हानि पहुँचाई है। संकट काल में भी जातियों ने आपस में सहयोग नहीं किय विदेशी आक्रमणों के समय सारा बोझ क्षत्रियों के कन्धों पर पड़ा। जन साधारण राजपूतों का साथ न दिया। फल यह हुआ कि विदेशियों ने हमारे ही मध्य में र कर हमारे ऊपर राज्य किया। अंग्रेजों के समय में भी हम जातियों के भेद भावों ऊपर न उठ सके और बहुत दिनों तक अंग्रेजों के हाथों का खिलौना बने रहे औ राजनैतिक क्षेत्र में बहुत सी कठिनाइयाँ जातीय मतभेदों के कारण आती रहीं। इ प्रकार हम देखते हैं कि जाति प्रथा ने जहाँ लाभ पहुँचाया है वहाँ हमें अनेक हानियाँ भी पहुँचाई हैं और वर्तमान काल में तो यह प्रथा पूर्णरूप से अनावश्य सिद्ध हो रही है।

आज की परिस्थितियाँ बदल चुकी हैं। पाश्चात्य सभ्यता और शिक्ष र्गियों की रूढ़िवादिता तथा संकीर्णता पर घातक प्रहार किये हैं। यातायात साधन, आधुनिक पेशों की स्वतन्त्रता, व्यावसायिक संगठन ने इस प्रथा को दु बनाने में विशेष कार्य किया है। आज ऐसी दशा है कि मनुष्य अपने जन्म स्थान पर ही कार्य नहीं करता। जिस ओर उसकी रुचि रहती है और मार्ग मिलता है मनुष्य उस ओर बढ़ने के लिये स्वतन्त्र है। कारखानों की स्थापना, शिक्ष तथा अन्य शिक्षा केन्द्रों, सिनेमा घरों तथा होटलों ने छूत छात का अन्त किया है राजनैतिक, सांस्कृतिक संस्थाओं ने भी जाति प्रथा को ढीला किया है। शासन ने

न दिशा में अच्छा कार्य किया है। हमारे नवीन विधान ने जाति के भेद भाव को लकुल भुला दिया है और कानूनों द्वारा छूत छात करने वालों को दण्डित करने । भय दिखाया है। इसलिये आशा है जल्दी से इस प्रथा का अन्त समीप आ येगा। और देश तथा समाज एकता के सूत्र में बंध कर आगे प्रगति कर सकेंगे।

Q. 10. What contribution has been made by the Aryans the Indian Culture of civilization?

प्रश्न १०—आर्यों की, भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता को क्या देन है?

उत्तर—आर्यों ने ही विशेष रूप से भारतीय सभ्यता का निर्माण किया है। स जाति की भारतीय सभ्यता को विलक्षण देन है। इस देन में मुख्य ८ बातें ाह हैं—(१) धार्मिक साहित्य तथा ग्रन्थ (२) हिन्दू धर्म और उसका दर्शन (३) जीवन के चार भाग तथा जाति प्रथा (४) आश्रम (५) पारिवारिक जीवन (६) ग्राम जीवन (७) नारी सम्मान (८) संस्कृत भाषा।

आर्यों ने गहन मनन के पश्चात धर्म तथा आध्यात्मिक ज्ञान के बड़े ही रहस्य पूर्ण सिद्धान्तों की उत्पत्ति की। इन्होंने दूसरे धर्म वालों के सिद्धान्तों को भी सम्मिलित कर लिया और यह क्रिया बराबर चलती रही और नये नये विचार जन्म लेते रहे। आत्मा अमर है, कर्म सिद्धान्त, पुनर्जन्म का सिद्धान्त, मोक्ष प्राप्ति अवतारावाद, वेदों को सर्व श्रेष्ठ मानना इत्यादि, व्रत उपवास, सतसंग, सरल जीवन पवित्रता, जप और तप, सन्ध्या, उपासना इत्यादि इस धर्म के लक्षण हैं। इस प्रकार जो धर्म आज हिन्दू धर्म कहलाता है उसका निर्माण आर्यों द्वारा ही हुआ उसमें जो स्वर्ण सिद्धान्त दिखाई पड़ते हैं वह आर्यों द्वारा ही प्रतिपादित किये गये। इस धर्म की महानता और अद्भुत उदारता का श्रेय आर्यों को ही है वर्तमान काल की संकीर्णता बाद में उत्पन्न हुई। अन्यथा पूर्व काल में यह धर्म महान गंगा के सदृश रहा है।

आर्यों ने जिस साहित्य को जन्म दिया वह भारत की ही नहीं अपितु विश्व की सम्पत्ति है। आज भी हमारे साहित्यिक ग्रन्थों का महत्व महान है। विश्व में उनका स्थान प्रथम श्रेणी में है। यह ग्रन्थ आज भी बेजोड़ है। वेद, उपवेद, संहिता ब्राह्मण, उपनिषद्, वेदांग, सूत्र, दर्शन, स्मृतियाँ, रामायण, महाभारत, भगवद्गीता, पुराण, नामक ग्रन्थों में ज्ञान के भण्डार भरे पड़े हैं। सूक्ष्म से सूक्ष्म सिद्धान्तों का इनमें विलक्षणता के साथ विश्लेषण किया गया है। इनमें महान ऋषियों की विलक्षण बुद्धि का चमत्कार देदीप्यमान है। वेद आर्यों की प्राचीनतम कृतियाँ हैं। यह चार हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्वेद तथा सामवेद।

ऋग्वेद में १० मंडल, १०१७ सूक्त तथा १०५८० ऋचायें हैं, मधुच्छ कारात्र विश्वामित्र इत्यादि इस वेद के महान ऋषि हुवे हैं। इसमें बहु देववाद के सिद्धान्त का विशलेषण किया गया है। अनेकों मन्त्रों की रचना की गई है।

यजुर्वेद में कर्मकान्ड सम्बन्धी बातों का वर्णन है। इसके दो भाग हैं। के अन्तिम भाग में ब्रह्मविद्या के विषय में उपदेश दिया गया है। इस वेद के अध्य से पता चलता है कि ऋग्वेद कालीन सभ्यता अब बदल गई थी। सामवेद विद्या का वर्णन दिया गया है। इसमें ७५ मूल मन्त्र हैं। अथर्ववेद में उस स घरेलू जीवन का वर्णन किया गया है। इस में औषधियों का हाल भी है पिशाचों से बचने की विधियां बताई गई हैं। दार्शनिक विषयों पर भी प्रकाश गया है। इनके साथ साथ एक वेद का एक उपवेद है। ऋग्वेद का उपवेद है। इस उपवेद के प्रधान आचार्य धनवन्त्री अश्वनी कुमार चर्क सुश्रुत पातन्जलि आदि हुवे हैं। यजुर्वेद का उपवेद धनुर्वेद या शस्त्र वेद है। इसमें विद्या का वर्णन है। सामवेद का उपवेद गन्धर्व वेद है। अथर्ववेद का अर्थ शास्त्र है। आजकल केवल कौटल्य का अर्थ शास्त्र प्राप्य है।

ब्राह्मण वह ग्रन्थ है जिनमें वेद मन्त्रों की व्याख्या की गई हैं। सरलता पूर्वक विधि से समझाने का प्रयत्न किया गया है। इनमें गद्य का है। इनमें यज्ञादि की विधियां बताई गई हैं। ऐतरय तथा कौषीत ब्राह्मण हैं। इन ग्रन्थों की रचना ब्रह्मर्षि के ब्राह्मणों द्वारा की गई। ग्रन्थों में अपनी बुद्धि का आलौकिक चमत्कार दिखाया है।

आरण्यक अन्य ग्रन्थ हैं जिनकी भाषा ब्राह्मणों जैसी है। उपनिषद प्रधान ग्रन्थ है। आध्यात्मिक क्षेत्र विश्व का कोई भी अन्य ग्रन्थ इन का मु नहीं करता। इनकी संख्या बहुत है परन्तु मुख्य ईश, केन, कठ, प्रश्न, तैत्तरीय इत्यादि हैं। यह दार्शनिक ग्रन्थ हैं।

वेदों के वास्तविक ज्ञान को समझने के लिये वेदांग ग्रन्थों को आवश्यक है। इनमें शिक्षा शास्त्र, व्याकरण, ज्योतिष इत्यादि सम्मि व्याकरण के मुख्य निर्माता महर्षि पातन्जलि पाणिनी हुवे हैं। ज्योतिष के हैं गणित और कथन।

दर्शन अमूल्य ग्रन्थ है। विशेषिक दर्शन के ऋषि कणाद हुवे हैं। दर्शन का विद्वान जैमिनी है। इसी प्रकार वेदान्त दर्शन के विद्वान व्यास सख्य दर्शन के विद्वान कपिल, योग दर्शन के आचार्य पातन्जलि गोत है। स्मृति ग्रन्थ में धर्म सूत्रों की व्याख्या की गई है। इस शास्त्र के मनु, विष्णु, पराशर, व्यास इत्यादि २० विद्वान हुवे हैं। सूत्र साहित्य में धार्मिक, सामाजिक नियमों का वर्णन किया गया है। फौजदारी तथा दी

कानूनों का प्रथम रूप से सूत्र साहित्य में विवरण आया है। पुराण वह ग्रन्थ हैं। जिनमें संसार की उत्पत्ति देवताओं के पराक्रम तथा प्राचीन वंशों के ऐतिहासिक वृतान्त दिये गये हैं। इनमें प्राचीन इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ता है। इन ग्रन्थों की संख्या १८ है। इनमें भागवत पुराण तथा विष्णु पुराण सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यह ग्रन्थ एक समय नहीं लिखे गये अपितु भिन्न भिन्न समय पर लिखे गये। यह बहुत पुराने ग्रन्थ हैं। इन साहित्यिक ग्रन्थों ने भारतीय विचारधारा पर ही नहीं बल्कि विश्व की विचार धारा पर गहरा प्रभाव डाला है। आध्यात्मिक क्षेत्र में आर्यों की देन बड़ी ही विलक्षण देन है।

आर्यों ने मनुष्य की आयु को १०० वर्ष माना और उसके चार विभाग किये। ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम। इस प्रकार जीवन का विभाजन करके आर्यों ने जीवन को वैज्ञानिक रूप दिया। परन्तु धीरे धीरे यह प्रथा विलीन हो गई और लोगों के स्वास्थ गिरते ही चले गये। बाल विवाह की प्रथा चालू हुई और इस कारण आयु भी घटने लगी। उस अनुपम आदर्श को छोड़ कर समाज ने अपना बड़ा ही अनहित किया और दोष पूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे।

फिर अपने समय की आवश्यकताओं को अनुभव करके वर्ण व्यवस्था स्थापित की गई। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण स्थापित किये गये। यदि वर्ण व्यवस्था कालान्तर जाति प्रथा में परिणित हो गई। जाति प्रथा ने भारतीय परम्पराओं तथा संस्थाओं के रूप को बनाये रखने में भारी योग दिया है हिन्दू संस्कृति की रक्षा की गई है और हिन्दू धर्म को मुसलमानों के क्रूर हाथों से बचाया है। जाति प्रथा ने श्रम समुदाय उत्पन्न करके पेशों की प्रगति में सहायता दी है। श्रम में दक्षता तथा निपुणता को उत्पन्न किया है। इस प्रकार जाति प्रथा शताब्दियों से समाज की सेवा करती रही है।

पारिवारिक जीवन भी आर्यों की महत्व पूर्ण देन है। परिवार समाज की दृढ़ इकाई बनी रही है। उनके परिवार का प्रधान घर का पिता होता था उसी के नियन्त्रण में परिवार के सब सदस्य रहते थे। उसकी सत्ता पूर्ण रूप से स्थित थी। मातृसत्तात्मक न होकर आर्य-परिवार पितृ सत्तात्मक था। परिवार का पिता सौजन्य तथा दया का स्वरूप माना जाता था। वह सब सदस्यों के प्रति प्रेमपूर्वक रहता था और हर एक के गुण दोषों पर दृष्टि रखता था। परिवार में रह कर मनुष्य वह शिक्षायें प्राप्त करता था जो उसको भावी जीवन में सफल सामाजिक सदस्य बनाती थीं। यह परिवार मिले-जुले होते थे और इनके द्वारा स्वस्थ समाज प्रगति करता था यह संस्था आज भी उसी रूप में चल रही है और समाज तथा जाति और देश के हितकर सिद्ध हो रही है।

आर्यों की मुख्य देन नारी जाति का सम्मान है। आर्यों ने अपनी स्त्रियों को

यह सुविधायें तथा अधिकार प्रदान किए जिन के बिना आत्मा का विकास हा
है। शिक्षा के द्वार खुले हुए थे और साधारण रूप से स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्त
थीं। उनमें से अनेकों उच्च शिक्षा भी प्राप्त करती थीं अनेकों विदुषी स्त्रि
हमारे देश और समाज को सम्मानित किया था। आलौकिक काम में घर की
हर धार्मिक विधि में अपने पति का साथ देती थी। हवन यज्ञ आदि में वह पूर्ण
से सम्मिलित रहती थी। यज्ञ बिना स्त्री के अपूर्ण नहीं माने जाते थे। घर में
की सत्ता थी परन्तु स्त्री का सम्मान किसी प्रकार भी कम न था। आर्यों का वि
था कि जिस घर में स्त्रियाँ सुख से रहती हैं वह घर सम्पत्ति से परिपूर्ण रहता
मानसिक तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ स्त्रियाँ स्वस्थ सन्तान पैदा करती हैं।
स्वस्थ समाज उत्पन्न होता है। नारियों का इतना उचित स्थान आर्यों ने स्थिर कि
और आज भी किसी न किसी सीमा तक उनका आदर होता है। यद्यपि
स्थिति बदल चुकी है और वह अशिक्षित होकर अपना स्थान खो बैठी है। स्त्री
इस प्रकार पिछड़ जाने से हमारे समाज को बड़ी हानि हुई है और आज भी हो
है। जब तक हमारा समाज अपनी नारियों को वह अधिकार और सुविधायें प्र
न करेगा जो प्राचीन काल में उसको प्राप्त थीं तब तक हमारे समाज का उ
होना असम्भव है।

ग्रामीण जीवन भी आर्यों की अलौकिक देन है। आर्य जाति प्रधानत
कृषकों तथा चरवाहों की जाति थी इसी कारण से उन्होंने ग्रामों की स्थापना की
उनमें ही अपना सरल जीवन व्यतीत करते रहे। ग्राम आत्म-निर्भर इकाई
अपनी आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु ग्रामवासी स्वयं उत्पन्न करते थे। पुरोहि
काम परिवार का मुखिया कर लेता था। ग्रामों की पञ्चायतें अदालतों का क
करती थी। ग्राम सामाजिक इकाई ही नहीं अपितु राजनैतिक इकाई भी थी। ग्र
में स्थानीय स्वराज्य का उदय हुआ और इस व्यवस्था ने प्रजातन्त्र की नींव डा
शताब्दियों तक प्रजातन्त्र प्रणाली ग्रामों में ही फलती-फूलती रही और इस रू
इसका विकास होता रहा। मुसलमानों के आक्रमणों ने भी ग्राम-जीवन
विशेष रूप से प्रभावित नहीं किया और वहाँ की स्वसत्ता ज्यों की त्यों बनी रह
अंग्रेजी शासन के समय में अवश्य परिवर्तन हुआ और ग्राम का महत्व कम होगया
इस समय महत्व का केन्द्र ग्रामों से उठ कर नगरों में चला गया। परन्तु भारत
स्वशासन आने से फिर ग्रामों को उन्नत करने की ओर ध्यान हुआ है। ग्रामों
उद्योगों को प्रोत्साहन मिलने की अनेकों योजनायें (Plan) बनाई जा रही हैं। ग्रा
में पूर्ण रूप से स्वशासन स्थापित करने के लिए पञ्चायतों को शक्तियाँ द
की हैं और ग्रामीण शिक्षा के प्रबन्ध किये जा रहे हैं। आशा है कि फिर ग्राम
महत्व प्राप्त कर लेंगे जो प्राचीन भारत में था।

तपोवन आश्रम आर्यों की एक अनुपम देन है। संस्कृति और ज्ञान के विकास इन आश्रमों ने बड़ा भारी योग दिया है। तपोवन आश्रम बस्तियों से दूर एकान्त र रमणीय स्थानों में होते थे। यहाँ बड़े-बड़े ऋषि मुनि परिवार-सहित रहते थे। हीं पर शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करने के लिये जनसाधारण से लेकर राजकुमार तक आ रहते थे और ब्रह्मचर्य आश्रम पूरा करते थे। ऋषियों का कार्य बर्बर और अन्य जातियों को इन आश्रमों में रहकर सभ्यता का पाठ पढ़ाना था। सभ्य आर्यों । ज्ञान देना था। और आश्रमों के एकान्त वातावरण में जीवन के गूढ़ विषयों । गहन अध्ययन करना था। सामाजिक और राजनैतिक गुत्थियों को सुलझाना ।। इस प्रकार यह आश्रम ज्ञान वृद्धि के महान् केन्द्र बने हुए थे। हमारे लौकि शास्त्रों और ग्रन्थों का जन्म इन्हीं आश्रमों में हुआ था। राम और लक्ष्मण । उनके गुरु विश्वामित्र ने इसी प्रकार के आश्रम में विद्या देकर हर प्रकार से पुण बनाया था। हिन्दुओं का उच्च कोटि का साहित्य जिसके ऊपर जितना भी र्व किया जाय कम है, ऐसे ही आश्रमों के एकान्त वातावरण तथा महान ऋषियों ी तीक्ष्ण बुद्धि और उनके गहन चिन्तन की अद्भुत देन है। इन आश्रमों के षय में सर जदुनाथ सरकार (Sir Jadunath Sarkar) ने लिखा है कि, श्रम प्रथा द्वारा शान्तिमय उपवनों में हमारे दर्शन-शास्त्र की उन्नति हुई तथा चार-शास्त्र, नीतिशास्त्र और साहित्य की शाखाओं को जीवन मिला। यहीं पर मारी सच्ची प्राचीन सभ्यता विद्यमान थी और इन सब बातों का श्रेय हमारे चीन आर्यों को था।" सभ्यता का प्रकाश इन आश्रमों से निकलकर समस्त देश । कोने-कोने में फैला और देश की सीमाओं को लांघ कर अन्य देश-देशान्तरों तक हुँचा। इस प्रकार आश्रमों की देन विश्व को प्राप्त हुई।

आर्यों की अन्तिम देन संस्कृत भाषा है। इस भाषा ने भारत की अन्य षाओं को शब्द भण्डार दिया है। हिन्दी, बंगला, मराठी इत्यादि भाषायें स्कृत से ही निकली हैं। तामिल भाषा जो संस्कृत से बहुत पूर्व ही विकसित हो की थी, इससे प्रभावित हुए बिना न रह सकी। विद्वानों का मत है कि भारत की स्त भाषाओं का मूल-स्रोत संस्कृत ही है। बाद में आकर विदेशी भाषाओं ने स्कृत के स्थान को लेना चाहा परन्तु उनको उतनी सफलता प्राप्त न हो सकी। र संस्कृत ने अवसर पाकर फिर अपना प्रभाव डालना आरम्भ कर दिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्यों की सभ्यता ने भारत में ही नहीं अपितु श्व में अपने प्रकाश की किरणों को फैलाया है। विश्व सभ्यता पर जितनी छाप र्य सभ्यता की पड़ी है उतनी किसी अन्य सभ्यता की नहीं। जब योरोपीय प्रदेश न्धकार में पड़े थे, वहाँ के निवासी बर्बरता पूर्ण जीवन बिता रहे थे। सभ्यता ी कोई वस्तु वहाँ पर नहीं थी। ठीक उसी समय आर्यों के ग्राम तथा आश्रम

ते प्रथा के कठोर बन्धनों के खिलाफ इसकी एक चुनौती भी थी। इन नवीन
वादों में व्यक्तिवाद तथा आध्यात्मवाद को अपनाने की ओर प्रेरणा देना था।
नव बुद्धि विवेक का विकास करना इस आन्दोलन का ध्येय था। यह आन्दोलन
दमनकारी सिद्धान्तों के विरुद्ध था जो पुरोहितों ने अपनी सत्ता को सदा के लिये
क्षित रखने के लिये बना लिये थे। जो सारहीन थे और बुद्धि की प्रगति पर
तक प्रहार कर रहे थे, जो जाति प्रथा को आधार बनाकर हर व्यक्ति को
ी सीमित क्षेत्र में रोकना चाहते थे जहाँ ,वह पैदा हुआ। उसका जाति प्रथा
ऊपर उठ कर प्रगति की ओर बढ़ना मानो हिन्दू-धर्म का विनाश करना था।
र फौलादी कड़ियों को—जिन्होंने मनुष्य की बुद्धि को जकड़ लिया था—तोड़ना
इन आन्दोलनों का मुख्य उद्देश्य था। फल यह हुआ कि जन-साधारण में एक
हर उठी और सुधारवाद की ओर बह निकली। नवीन धार्मिक नेताओं ने गहन
ध्ययन और मनन के पश्चात् वेदों की प्रमाणिकता तथा पुरोहितों की
यान्ता को अस्वीकार किया। उन्होंने ईश्वर के अस्तित्व को भी चुनौती
ी। उन्होंने बताया कि कर्म ही प्रधान है और सब व्यर्थ। सत्कर्म करने वाला
यक्ति ही पूज्य है चाहे वह कोई भी हो जाति-भेद-भाव या अन्य प्रकार
ी ऊंच-नीच उसके पूज्य होने में बाधक नहीं बन सकती। सत्कर्म
करने वाला व्यक्ति ही मोक्ष की ओर प्रगति करता है। उसकी ही आत्मा पवित्रता
ग्रहण करती है चाहे वह किसी भी वर्ग अथवा जाति का हो। पुरोहित, यदि वह
नीच कर्म करता है तो पाप का भागी है पूजा का भागी नहीं। नवीन उपदेशों ने
मोक्ष के दरवाजे सब के लिये एक ही प्रकार खोल दिये। अब मोक्ष दिलवाने की
ठेकेदारी पुरोहितों के हाथों से निकल सत्कर्मों के हाथों में चली गई। नवीन उपदेशों
में अहिंसा पर ज़ोर दिया गया यह सिद्धान्त भेंट चढ़ाने और बलि देने के विरोध
के कारण था।

यदि गौर से देखा जाय तो पता चलता है कि भारत में जो धार्मिक
आन्दोलन उठे उनका उद्देश्य हिन्दू-धर्म का विनाश नहीं अपितु इसकी कुरीतियों
का विनाश था। यह आन्दोलन विनाशकारी न होकर सुधारवादी थे। जिस प्रकार
यूरोप में मार्टिन लूथर (Martin Luther) तथा काल्विन (Calvin) रोमन
कैथोलिक धर्म में रहकर ही सुधार करना चाहते थे उसी प्रकार भारत में महात्मा
बुद्ध और महावीर स्वामी हिन्दू-धर्म में सुधार चाहते थे। उनका उद्देश्य उन बन्धनों
को तोड़ना था जिनके कारण बुद्धि का विकास तथा उसकी प्रगति रुकी पड़ी थी।
इन दोनों सुधारकों ने जिन सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया वह पहले ही हिन्दू
उपनिषदों में आ चुके थे जिस तर्क-वितर्क तथा वाद-विवाद को प्रोत्साहन दिया वह
भी कोई नवीन बात न थी उपनिषदों में उसका भी वर्णन आ चुका था। ज्ञान

की वृद्धि विद्वतापूर्ण वाद-विवाद बड़ा ही सहायक और महत्वपूर्ण था। इसे हि ऋषियों ने भी माना था तथा नये सुधारवादियों ने भी। नवीन धर्मों ने वैरा तपस्या, एकान्तवास पर जोर दिया, परन्तु इन पर हिन्दू ऋषियों ने भी जोर दि था। जिनके प्रज्ज्वलित उदाहरण तपोवन आश्रम थे। जहाँ पर ज्ञान के जिज्ञ सन्यासी घोर तप करते और मनन द्वारा ज्ञान तथा सत्य की खोज करते उपनिषदों में स्पष्ट रूप से बताया गया था कि सत्य तथा ज्ञान की खोज करने व वालों को संसार से वैराग्य धारण कर एकान्त में जाकर अध्ययन तथा म करना चाहिये। इतना ही नहीं जीवन को चार भागों में विभाजित कर चौथे आश्र पर अधिक जोर दिया। चौथा आश्रम सन्यास आश्रम था। इस प्रकार आध्यात्मि ज्ञान पर हिन्दुओं का बड़ा ही जोर रहा था। जिस प्रकार महात्मा बुद्ध और महावी स्वामी ने अपने समुदाय बनाये उसी प्रकार के समुदायों का पहले भी आश्रय लि या चुका था। आजीविक, जटिलक तथा मुण्डशावक इत्यादि ऋषियों ने इस प्रक के समुदाय बनाये थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नवीन दो धर्मों ने किसी ऐसे नवीन सिद्धा को जन्म नहीं दिया था जिसका उल्लेख अभी तक हिन्दू धर्म के ग्रन्थों में न आ हो। हिन्दू धर्म के विरोधी सुधारवादी बुद्ध धर्म तथा जैन धर्म की इतनी सफ उन्नति इतनी जल्दी क्यों होगई। इसके कई कारण थे। परिस्थितियाँ उन अनुकूल थी। वातावरण उनके प्रति सहायक सिद्ध हुआ। समाज की कुरीति धार्मिक आडम्बर और कठोर क्रियाओं तथा कठिन विधियों से ऊब कर जनत सरलता की ओर जाना चाहती थी। सादे आचार-विचार के लिये जनता तरस र थी। बुद्धि-विकास तथा ज्ञान-प्राप्ति के लिये अनेकों लोग तरस रहे थे जो अनेक बन्धनों के कारण विवश दशा में रह रहे थे। आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए जि साधनों की आवश्यकता थी, जनसाधारण के लिये उनका लोप होगया था इन साधनों की प्राप्ति के लिये लोगों को प्रबल इच्छा थी। मोक्ष-प्राप्ति जिनके लिये बन्द करदी गई थी उनके सब्र का पैमाना अब पूर्ण रूप से भर चुका था और और वह कुछ न कुछ करना चाहते थे। इस प्रकार सुधारों की तीव्र आवश्यकत अनुभव हो रही थी बुद्ध तथा जैन धर्म द्वारा इस आवश्यकता की पूर्ति हुई। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यह दोनों धर्म कोई नये नहीं अपितु हिन् धर्म में ही दो सुधारवादी प्रवृत्तियाँ मात्र थे। इनकी सफलता के बहुत से कारण थे।

(१) कर्मकाण्ड तथा हवन-यज्ञ इत्यादि की क्रिया-विधियां जटिल हो चली थीं। प्राचीन काल का वैदिक धर्म का रूप-भ्रष्ट सा हो रहा था। इस की विधियाँ अनावश्यक रूप में विस्तृत और खर्चीली होगईं कि जन साधारण उनसे ऊबने लगे। निरर्थक और अनावश्यक कर्मकाण्ड ने, सरल से सरल कार्यों को रहस्यपूर्ण

ोर आडम्बर बना दिया। और इनके अनुसार कार्य करना लोगों के लिये कठिन ोगया। इसलिये जब बुद्ध जी ने इस कर्मकाण्ड का विरोध किया तो स्वाभाविक ्प से जनसाधारण उनके साथ होगये।

(२) मन्त्रों का महत्वः—समय के साथ-साथ ज्ञान का स्थान अन्धविश्वास ने े लिया। पूर्वकाल में मन्त्रों द्वारा देवताओं की उपासना की जाती थी परन्तु अब न्त्रों को ही सब कुछ मान लिया गया वह जिस भावना को प्रदर्शित करते थे। ह अन्धकार में जा पड़ी और उच्चारण मात्र को महत्वपूर्ण समझा गया। मन्त्रों ्रारा प्रत्येक कार्य हो सकता था। रोग दूर किये जा सकते थे, स्वास्थ्य प्राप्त किया ा सकता था, ज्ञान प्राप्त किया जा सकता था, शत्रुओं पर विजय प्राप्त हो सकती ी, राज्य की सीमायें बढ़ाई जा सकती थी। इस प्रकार के लोगों के विचार बन चुके थे। इस अन्धविश्वास ने लोगों में पुरुषार्थ का अभाव उत्पन्न किया और उन्होंने मस्तिष्क से काम लेना बन्द कर दिया और ज्ञान की वृद्धि को आघात पहुँचा। किसी भी प्रकार की प्रगति रुक गई। यह क्रिया असीमित समय तक नहीं चल सकती थी। इसका अन्त होना था और वह अन्त नये विप्लव के रूप में आया। नवीन प्रकाश की ज्योति ने अन्धविश्वास की घटाओं को तितर-बितर कर दिया।

(३) यज्ञः—आर्यों ने यज्ञ को जन्म दिया। यज्ञों में आर्यों का बड़ा विश्वास था। उनकी दैवी शक्ति से वह बराबर प्रभावित होते थे परन्तु धीरे धीरे इनकी सरलता जाती रही। ब्राह्मणों ने अपना अनुचित प्रभाव जमाये रखने के कारण इन यज्ञों में अनोखी अनोखी विधियों का सम्मिश्रण कर दिया और दिनों तथा महीनों चलने वाले यज्ञों की उत्पत्ति कर डाली जिनमें अनुचित रूप से समय तथा सामग्री खर्च होती थी। अनेकों निरर्थक संस्कार रच डाले। सार्वजनिक अवसरों पर लाखों की सम्पत्ति बेकार खर्च हो जाती थी। यज्ञों में निर्दयता के साथ पशुओं की बलि चढ़ा दी जाती थी। इतना ही नहीं, मानव तक का बलिदान कर दिया जाता था। इनको देखकर मनुष्यों के दिलों में अनेक प्रकार के कुकृत्यों के खिलाफ नफरत उत्पन्न हो रही थी। उनके मनों में उन पुरोहितों के प्रति घृणा और क्षोभ उत्पन्न हो रहा था जो इन कुकर्मों के लिए ज़िम्मेदार थे। यहाँ तक कि उनकी घृणा पुरोहितों से हटकर उस समस्त व्यवस्था के प्रति ही जाग उठी थी जिस का प्रतिनिधित्व पुरोहितों द्वारा हो रहा था। केवल समय आने की देर थी।

(४) जाति प्रथाः— छठी शताब्दी के आते आते जाति प्रथा कठोर होगई। एक जाति से दूसरी जाति में प्रवेश करना असम्भव हो गया। कर्म के आधार पर व्यक्ति का उत्थान रोक दिया गया। निम्न जाति के लोगों को तप तथा सन्यास और मन्त्रोच्चारण के अधिकार से भी वञ्चित कर दिया। उन पर ऐसे प्रतिबन्ध लगा दिये गये कि उनको अपना समस्त जीवन ही अन्धकारमय प्रतीत होने लगा।

उनका जीवन धर्महीन होगया। मोक्ष का द्वार उन व्यक्तियों के लिये ही खुलता था जो यज्ञ इत्यादि करें। यज्ञ, दान करें, ग्रन्थों का ज्ञान करें। पर इन क्रियाओं से निम्न जातियों को दूर रखा जाता था तो फिर इन जाति मोक्ष का द्वार भी बन्द मिला और इस दुख पूर्ण जीवन के कठोर बन्धनों से उ मुक्ति रोक दी गई। उनको धार्मिक या सामाजिक दृष्टि से तो हीन दशा थी अब उनको परलोक की आशा भी नष्ट हो गई। इस प्रकार वह वास्तव अधिक पददलित हो रहे थे और इस दशा में विद्रोह की ज्वाला धधक रही बुद्ध जी ने इस शक्ति का प्रयोग अपने सुधारवादी आन्दोलन में किया और उ महान् सफलता प्राप्त हुई।

धर्म, तप तथा बुद्धिवाद:-सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र में अनेकों बुरा उत्पन्न होने के कारण जनता में असन्तोष प्रगट हो रहा था। उसी समय व्यक्ति गहन चिन्तन में संलग्न होकर जीवन और मृत्यु की कठिन समस्याओं सुलझाने का प्रयत्न कर रहे थे। आत्मा किस प्रकार पवित्र होकर मोक्ष प्राप्त और सांसारिक बन्धनों से छुटकारा प्राप्त करे इस कठिन समस्या का हल पुरोहि ने अपने ढंग से किया। उन्होंने बताया कि यदि मनुष्यों को मोक्ष प्राप्त करना है तो उनको चाहिए कि धार्मिक क्रियाविधियों अनुष्ठान एवं संस्कार इत्यादि रूप से करें। परन्तु यह सब इतने कठोर तथा रहस्यपूर्ण हो गये थे कि जनसाधा इनसे पहले ही ऊब रहे थे।

तत्पश्चात् कर्म मार्ग के साथ साथ तप मार्ग के सिद्धान्त का प्रतिपाद किया गया। एकान्त में रहकर, इच्छाओं का दमन करके तप किया जाय; यही ए मात्र मोक्ष प्राप्ति का साधन बताया गया। इस लोक से विमुख होकर परलो सुधारने का परिश्रम करे। जो व्यक्ति अपनी सांसारिक वासनाओं का दमन कर ब्रह्म के ध्यान में रहने का पूर्ण अभ्यास कर लेता है वह देवताओं का स्थान प्रा कर लेता है। देवता भी उस की इच्छानुसार झुक जाते हैं।

तप तथा कर्म मार्गों के साथ साथ ज्ञान मार्ग का विकास भी हुआ। बुद्धि वादियों ने बताया कि ईश्वर को वही प्राप्त कर सकता है जो ईश्वर का पूर्ण ज्ञा रखता है। मोक्ष का अर्थ ही आत्मा का ईश्वर में विलीन होना है।

परन्तु यह सिद्धान्त ऐसे गूढ़ तथा सूक्ष्म थे कि स्थूल बुद्धि वाले लोगों की समझ में नहीं आ सकते थे। इन सिद्धान्तों से जन साधारण की मोक्ष प्राप्ति की प्यास तृप्त न हो सकी। उल्टा हुआ यह कि जनता इन रहस्यपूर्ण तथा गूढ़ सिद्धान्तों की भूल-भुलैयों में घूमने लगे। उनकी बुद्धियों में एक प्रकार की परिभ्रान्ति सी उत्पन्न होगई। नवीन सिद्धान्तों ने हित तो किया ही नहीं और *अन्धविश्वास* को जन्म दिया। इस कारण आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रकाश का अभाव

होता चला गया। इसलिये यह स्वाभाविक ही था कि सरल तथा सामान्य सिद्धान्तों का जनता स्वागत करती।

पुरोहितों का अनुचित प्रभुत्व—समय के साथ साथ जैसे जैसे पूर्व वैदिक काल की सरलता नष्ट होती गई और जटिल तथा गूढ़ सिद्धान्तों का जन्म होता गया वैसे ही वैसे पुरोहित वर्ग का प्रभुत्व बढ़ता गया। जन्म से मृत्यु तक जो अनेकों संस्कार होते थे उन सब में ब्राह्मण का होना अनिवार्य था। वैदिक धर्म तथा उसके सिद्धान्तों की व्याख्या के एक मात्र ठेकेदार यह ब्राह्मण ही थे। इन्होंने धार्मिक क्षेत्र पर एकाधिकार प्राप्त कर लिया था। साथ ही साथ इनमें आवश्यक रूप से अहंकार पैदा हो गया था और वह जिस जनता का लाते थे उसी को बन्धन मुक्त होने से रोकते थे। जनता उनकी क्रोधाग्नि से भयभीत रहती थी। उनमें तथा जन साधारण में प्रेम तथा दयाभाव का स्थान भय ने ले लिया था। इतना ही नहीं अपितु शासन में भी उनका प्रभुत्व हो गया था। वह क्षत्रियों के धर्म गुरु के नाते उनके मन्त्री तथा सलाहकार बन गये थे। इस प्रकार इन्होंने राज्य के प्रभावशाली पदों पर भी अपना अधिकार जमा लिया था। वह अन्य सब लोगों से उच्च समझे जाते थे और पूज्य थे। परन्तु किसी भी समाज में यह स्थिति सामान्य नहीं हो सकती और कभी न कभी इस स्थिति के विरुद्ध आन्दोलन होना आवश्यक और अनिवार्य ही है। नवीन आन्दोलन जो बुद्ध जी की अध्यक्षता में हुआ वह ब्राह्मणों की इस अनुचित प्रभुत्व का भी विरोधी था। ब्राह्मणों की मुखालफत के साथ साथ उस व्यवस्था का भी विरोध होना अनिवार्य था जिसका वह प्रतिनिधित्व करते थे।

स्वतन्त्रता की प्रवृत्ति—आर्यों की सामाजिक व्यवस्था इस प्रकार की थी कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को पूर्ण रूप से विकसित होने के पूरे अवसर प्राप्त थे। परन्तु धीरे धीरे इस स्वतन्त्रता का अन्त सा हो गया और इसका स्थान उच्च वर्गों के प्रभुत्व ने ले लिया। निम्नश्रेणी के बहु संख्यक लोग पददलित होते रहे और व्यक्तिगत रूप से उनका बौद्धिक विकास रुक गया। अब छठी शताब्दी में लोगों में स्वतन्त्रता के विचार जाग्रत हुये और धार्मिक बन्धनों के साथ साथ सामाजिक तथा राजनैतिक बन्धनों के खिलाफ भी उन्होंने आवाज उठानी आरम्भ की। इस नवीन तथा जाग्रत भावना ने भी सुधारवादी आन्दोलनों को सहयोग दिया और इन आन्दोलनों की सफलता अवश्यम्भावी हो गई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस महत्व पूर्ण शताब्दी में भिन्न भिन्न प्रवृत्तियां एक ही दिशा में कार्य कर रहीं थी। सब का लक्ष्य एक ही था और वह था प्रगति की ओर बढ़ना तथा विकास करना। शताब्दी की यह भावना अनेकों रूपों में प्रगट हुई। अनेकों विचारकों तथा विद्वानों ने इस भावना को अपने नवीन विचारों तथा सिद्धान्तों के रूप में प्रदर्शित किया। उन्होंने ऐसे सरल, सुलभ और व्यवहारिक

साधनों को जनता और जनसाधारण के सम्मुख प्रस्तुत किया जिसके द्वारा प्रत्येक किसी श्रेणी का हो क्यों न हो मुक्ति प्राप्त कर सकता था। आत्म ज्ञान की खोज कर सकता था। आत्मा को पवित्र कर सकता था। आत्मा तथा परमात्मा के रहस्यों को समझ कर जन्म मरण की गुत्थियों को सुलझा सकता था। इन सुधारकों ने अपने अपने सम्प्रदाय बनाये और उनके द्वारा नवीन सिद्धान्तों का प्रचार आरम्भ कर दिया। पाली भाषा के ग्रन्थों के अनुसार इस प्रकार के सम्प्रदायों की संख्या बासठ के लगभग थी परन्तु जैन ग्रन्थों के अनुसार यह संख्या तीन सौ से अधिक थी। परन्तु समय के साथ साथ यह संख्या कम होती गई और अन्त में दो सम्प्रदाय बाकी बुद्ध तथा जैन दो पंथ में रह गये और इन्होंने सफलता पूर्वक उन सामाजिक धार्मिक तथा राजनैतिक कुरीतियों के खिलाफ युद्ध किया जिन्होंने समाज को अनावश्यक बन्धनों में जकड़ रक्खा था।

Q. 12—What do you know about the teachings of Jain religion *Give an account of its rise and decline in India.*

प्रश्न १२—आप जैन धर्म की शिक्षाओं के विषय में क्या जानते हैं? इस धर्म के उत्कर्ष तथा अपकर्ष का विवरण करो।

उत्तर—सुधारवादी आन्दोलनों ने छठी शताब्दी में जन्म लिया उसी समय वर्धमान महावीर ने ५९९ ई० पू० में कुण्ड ग्राम में जो मुजफ्फरपुर जिले में स्थित था। एक प्रभावशाली क्षत्रि कुल में जन्म लिया उनके पिता सिद्धार्थ एक क्षत्री कुल के प्रधान तथा माता त्रिशला वैशाली के लच्छवी राजा चेटक की बहन थी। महावीर स्वामी को उच्च प्रकार की शिक्षा मिली। उन्होंने उस समय के वातावरण से प्रभावित हो ३० वर्ष की आयु में सांसारिक बन्धनों से अपने आप को अलग कर लिया और अपनी स्त्री यशोदा तथा एक मात्र कन्या को छोड़ ज्ञान प्राप्ति की खोज में घर से निकल गये। अनेकों साधुओं से मिलते रहे परन्तु उनकी तृप्ति न हो सकी। आखिर १२ वर्ष की कठोर तथा यात्रा पूर्ण तप के पश्चात ज्ञान प्राप्ति हुई और अब इन्होंने जैन धर्म का प्रचार आरम्भ कर दिया जैन धर्म के प्रथम संस्थापक ऋषभ देव माने गये हैं इसके पश्चात अन्य तीर्थङ्करों का कुछ पता नहीं चलता। तेईसवां तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ थे जो स्वयं एक राजकुमार थे। इन्होंने ही अपने धर्म प्रचार के लिये संघ बनाया था महावीर स्वामी जैन धर्म के प्राचीन सिद्धान्तों से बड़े प्रभावित हुये थे। इन्होंने महान परिश्रम करके जैन धर्म का उत्थान किया और चौबीसवें तीर्थङ्कर कहलाये। इन्होंने जैन धर्म के सिद्धान्तों को विकसित किया और सरलता पूर्वक जन साधारण तक पहुँचाया।

महावीर का मत था कि प्रकृति तथा आत्मा दो ऐसे तत्व हैं जो सदैव रहे हैं। प्रकृति परिवर्तन शील है परन्तु आत्मा अमर और अजर है परन्तु आत्मा सदैव एकसी रहती है उसका गुण पूर्ण पवित्रता है। परन्तु प्रश्न उठता है कि यदि ऐसा है तो फिर आत्मा जीवन और मरण के बन्धन में क्यों आ हुई है? जैन धर्म के मतानुसार आत्मा कर्म के कारण युगों की वासनाओं तथा अपूर्ण इच्छाओं के बन्धन में जकड़ जाती है। यदि कर्मों का विनाश कर दिया जा और उनके विनाश के फलस्वरूप मनुष्य वासनायें तथा अभिलाषायें रखना बा करदे तो उसके पूर्व कालों के बन्धन धीरे धीरे स्वयं ही नाश हो जाते हैं। ऐ तब सम्भव होता है जब कि तपस्या-पूर्ण जीवन व्यतीत किया जाय। मनुष्य स्व को अनुशासन में बांध कर रक्खे। इस प्रकार जीवन व्यतीत करने से नवीन क का एकत्रित होना और केन्द्रित होकर आत्मा की विशुद्धता को ढकना रुक जाता और पुराने सञ्चित कर्मों का विनाश हो जाता है। तब आत्मा अपने शुद्ध अं पवित्र तथा प्रतिभाशाली रूप में प्रदर्शित होती है। वह मोक्ष की ओर चलती और परमात्मा में विलीन हो जाती है। ऐसी विशुद्ध आत्मा वाला व्यक्ति तीरथङ्कर कहलाता है। ज्ञान प्राप्त करना ही आत्मा का शुद्ध करना है। वह ज वस्तुओं में भी जीव का होना मानते थे उनका मत था कि जड़ वस्तुयें भी सु और दुख का अनुभव करती हैं। उन्होंने छः जीव श्रेणियां मानी हैं पृथ्वी, वा जल, वनस्पति, तेज तथा त्रस सृष्टि आदि हैं।

वह परमात्मा का होना नहीं मानते। उनका मत है कि संसार के प को चलाने के लिये किसी सत्ता की आवश्यकता नहीं। निर्माण करने वाले के मार्थत होने आवश्यक हैं परन्तु ईश्वर निराकार माना गया है। संसार अनादि अनन्त है। ऐसा उनका मत है। "ईश्वर उन शक्तियों का उच्चतम, शालीन और पूर्णतम व्यक्ति करण है जो मनुष्य की आत्मा में निहित होती हैं।"

वह वेदों की सत्ता को भी स्वीकार नहीं करते न उनको प्रमाण ही मा हैं। उन्होंने ब्राह्मणों की बताई हुई क्रिया विधियों को अंगीकार ही नहीं कि अपितु उनका घोर विरोध भी किया। पुरोहितों के प्रभुत्व को उन्होंने नष्ट करने प्रयत्न किये। उन्होंने जीवन के लिये सरल नियम बनाये परन्तु संयासियों के कठोर संयम एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया।

मोक्ष प्राप्ति पर इन्होंने बड़ा ज़ोर दिया। मोक्ष प्राप्ति के लिये तीन स बताये। (१) सम्यक् ज्ञान (२) सम्यक् दर्शन (३) सम्यक् चरित्र वह विरत्न कहलाते हैं। सम्यक् ज्ञान का अर्थ है सच्चा तथा पूर्ण ज्ञान। यह तीरथ द्वारा उपदेशों का गहन अध्ययन करने से प्राप्त होता है। सम्यक् दर्शन का है। तीरथङ्करों में अटूट और पूर्ण विश्वास।

उन्होंने गृहस्थ में रहने वालों के लिये पांच बातें बताईं और इन पांच प्रतिज्ञाओं पर जोर दिया। यह पांचों प्रतिज्ञायें इस प्रकार हैं १–अहिंसा २–सत्य ३–अस्तेय ४–अपरिग्रह ५–ब्रह्मचर्य इसको सम्यक व्यवहार कहते हैं। इन नियमों से कठोर नियम साधुओं के लिये बनाये गये हैं। अहिंसा इस धर्म का प्रमुख सिद्धान्त माना गया है वह निम्नतम जीव पर भी दया करना आवश्यक समझते हैं। इस धर्म में तपस्या पर भी बड़ा जोर दिया गया है। यह दो प्रकार की बताई गई है। १—बाह्य २—आभ्यान्तर प्रथम में अनशन चन्द्रायण व्रत, भिक्षाचर्या, रस परित्याग, *कायक्लेश तथा सन्लीनता सम्मिलित हैं। दूसरे में विनय, सेवा, स्वाध्याय* ध्यान, तथा शरीर त्याग को गिनते हैं।

साधुओं के लिये नियन्त्रण पूर्ण तथा तपस्या मय जीवन बिताने का आदेश दिया। कोई भी इस मार्ग को अपना सकता था और मोक्ष की ओर बढ़ सकता था। इस प्रकार मोक्ष प्राप्ति के हेतु अनेकों मनुष्य महावीर के अनुयायी बन गये और उनके बताये हुये सिद्धान्तों पर एक मन से चलने का यत्न करने लगे। उनके सैंकड़ों अनुयायी बन गये। इस धर्म के मानने वालों की अधिकतर संख्या व्यापारी वर्ग में रही और शान्ति के सिद्धान्त ने विशेषकर इस वर्ग को ही प्रभावित किया।

उत्थान—इस धर्म के उत्थान के अनेकों कारण थे। जनता की साधारण बोल चाल में धर्म प्रचार, धार्मिक सिद्धान्तों का सरल तथा व्यवहारिक होना, समानता का प्रचार, सब के लिये मोक्ष का द्वार खुलना, संघों की स्थापना, राजकीय सहायता इत्यादि अनेकों बातों ने जैन धर्म को फैलाने में सहायता पहुंचाई।

ब्राह्मणों ने धार्मिक ग्रन्थ संस्कृत में लिखे और धार्मिक सिद्धान्तों को संस्कृत *भाषा तक ही सीमित रक्खा। जन साधारण तक उन सिद्धान्तों तथा मन्त्रादि की* पहुंच ही न थी। इसलिये उनकी धर्म के प्रति रुचि घट रही थी। इसलिये स्वाभाविक ही था कि जैन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार अपनी साधारण भाषा में होता हुआ देख जनता उस ओर झुक जाती और ठीक हुआ भी ऐसा ही।

जैन धर्म के सिद्धान्त व्यावहारिक थे। गृहस्थियों के लिये भिन्न प्रकार के नियमों का प्रतिपादन किया गया और साधु सन्तों के लिये दूसरे। इसलिये जन साधारण को भी इन सिद्धान्तों और नियमों के मानने में कोई कठिनाई नहीं होती थी और यह शान्ति के सिद्धान्त सर्व प्रिय होते गये और इनका प्रचार बढ़ता गया। यह धर्म कर्म काण्ड रहित तथा निरर्थक क्रिया विधियों से वंचित था और पशु बलि का इसमें निषेध था। इसलिये लोगों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा और इसकी उन्नति होती गई।

इस धर्म ने जन साधारण में एक रूप से बिना भेद भाव के बिना एक ही अविनश्वर आत्मा का प्रचार किया। यह आत्मा सब जीवों में एक ही समान विद्यमान

और अज्ञानता का परदा हटने से इसका प्रकाश जगमगाने लगता है। यह सिद्धान्त जनता को बड़ा ही सुन्दर लगा और मन मोहक भी प्रतीत हुआ। मोक्ष का द्वार सबके लिये समान रूप से खुल गया। ऊंच नीच का इस में भेद नहीं था। अब तक मोक्ष का दरवाजा निम्न श्रेणियों के लिये बन्द था और इस जीवन में तो वह पददलित हो ही रही थी। परलोक में भी उनको कोई आशा प्रतीत न होती थी। इस प्रकार चारों ओर उनका जीवन अन्धकार-मय दिखाई पड़ता था। इस अन्धकार में जैन धर्म के मुक्ति सिद्धान्त ने प्रकाश पैदा किया और जनसाधारण की आत्मा प्रफुल्लित हो उठी। इस कारण से भी जैन धर्म की उन्नति सुगमता पूर्वक हुई।

संघ—महावीर स्वामी ने संघ की स्थापना की। इन संघों के सदस्य सरल, सादा व संयम पूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। उनका काम अध्ययन करना तथा धर्म प्रचार करना था। महावीर का एक प्रिय अनुयायी आर्य सुधर्मन उनके पश्चात् संघ का प्रधान हो गया और २२ वर्ष तक इस पद पर आरूढ़ रहकर संघ का संचालन करके जैन धर्म की सेवा करता रहा। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसका स्थान जम्बू ने लिया और ४४ वर्ष तक अपने पद पर रहकर उसने संघ संस्था की सेवा की। इस प्रकार संघ में रहने वाले जैन साधु तथा सन्त जैन धर्म का बराबर प्रचार करते रहते थे और अपने पवित्र तथा संयम पूर्ण जीवन के उदाहरण से जनता को प्रभावित करते रहते थे। यह बहुत परिश्रमी विचारक थे और इनके अथक परिश्रम के कारण जैन धर्म की बराबर उन्नति होती चली गई। एक विशेष कारण, जिसके फलस्वरूप जैन धर्म ने उन्नति की, यह भी था कि आवश्यकतानुसार इनके साधु सन्त एकत्रित होकर अपने खोये तथा बिखरे हुवे ग्रन्थों तथा सिद्धान्तों को नवीन रूप देने का निरन्तर प्रयास करते रहते थे। इनकी इस प्रकार की परिषदें ठोस कार्य करती थी और इनके इस प्रकार के अधिवेशन प्रचार के साधन बनते थे। इस प्रकार की एक परिषद् संभूत विजय के शिष्य स्थूल भद्र के नेतृत्व में खोये हुवे धार्मिक ग्रन्थों की खोज करने के लिये पाटलीपुत्र में की गई थी। जिसने बारह 'अंगों की रचना की थी जो जैन धर्म के सिद्धान्तों के महत्वशाली भाग हैं।

इसी प्रकार की एक परिषद् ५१२ ई० में वलभि के स्थान पर देवर्धिक्षमा श्रमण के सभा पतित्व में हुई थी जिसका उद्देश्य श्वेताम्बरों के नियमों का पुनः प्रतिपादन किया जाना था।

इस प्रकार के प्रयास यह प्रगट करते हैं कि इस धर्म के प्रचारकों में कितना अधिक धार्मिक उत्साह था। जिस धर्म का प्रसार ऐसे विचारकों तथा प्रचारकों पर हो वह धर्म अवश्य ही उन्नति करता। इस धर्म को राजकीय संरक्षण भी प्राप्त हुआ। चन्द्रगुप्त मौर्य जैन धर्म में बड़ी श्रद्धा रखते थे। वह महान विद्वान भद्रबाहु

के शिष्य होकर दक्षिण गये थे, जिनको वहाँ एक गुफा समर्पित की गई थ
पर्वत जिसमें यह गुफा बनी हुई है चन्द्रगिरि कहलाया। सम्राट की इस
की रुचि को देख कर जनता पर अवश्य ही प्रभाव पड़ा होगा। ईसा से २ १
पूर्व में उड़ीसा का राजा खारबेल जैन धर्म का अनुयाई हो गया। वह एक
जैन प्रतिमा की उपासना करने लगा। जैन धर्म के ग्रन्थों के अनुसार अजा
(जो महावीर स्वामी के मित्रों में था) के उत्तराधिकारी उदयन अनुरागी जै
में विशेष श्रद्धा रखता था। मगध के नरेश नन्द भी सम्भवतः जैन धर्म के अ
थे। जब मगध में बारह वर्ष का प्रसिद्ध अकाल पड़ा तो भद्रबाहु के नेतृत्व में
जैनियों ने दक्षिण को प्रस्थान किया और बेलगोला को केन्द्र बना समस्त
में जैन धर्म का प्रसार किया। दक्षिण में व्यवसायी वर्ग में यह धर्म बहुत
प्रिय बन गया था। ई० पू० प्रथम शताब्दी में उज्जैन जैन धर्म का प्रसिद्ध
रहा था। कुशान काल में मथुरा इस धर्म का केन्द्र बन गया और यहां से क
इस धर्म का प्रचार होने लगा। इस प्रकार दक्षिण में बेलगोला और उत्तर में म
से शताब्दियों तक इस धर्म का प्रचार होता रहा। इन दोनों स्थानों पर जो शि
लेख व मूर्तियां मिली हैं उन से इस कथन की पुष्टि होती है। पांचवी से बार
शताब्दी तक दक्षिण भारत के अनेकों राजवंशों ने इस धर्म को प्रोत्साहित कि
इन में गंग, कदम्ब, चालुक्य और राष्ट्रकूट प्रमुख हैं। कतिपय राष्ट्रकूटों ने वि
रूप से जैन धर्म को सहायता पहुँचाई। उन्होंने जैन साहित्य तथा कला का उ
किया। अमोघ वर्ष के राज्य दरबार में जिन सेन तथा गुण भद्र ने आदि म
पुराण की रचना की। अमोघ वर्ष स्वयं भी अच्छा लेखक था। उसने भी ए
प्रसिद्ध जैन ग्रन्थ की रचना की। अपने अन्तिम काल में वह जैन साधु बन ग
था। इसी वंश के एक राजा इन्द्र चौथे ने राज्य छोड़ और तपस्या करते करते अ
जीवन को ही समाप्त कर दिया था। ११०० ई० के लगभग अन्हिलवाड़ा के रा
तथा गुजरात नरेश सिद्धराज चालुक्य तथा उसके पुत्र कुमार पाल ने इस धर्म क
बड़ी सहायता की और इसकी कला तथा साहित्य को विशेष प्रोत्साहन दिया
उन्होंने जैन धर्म स्वीकार कर लिया था। कुमार पाल के राज्य दरबार में मुनिगण
तथा आचार्यों का प्रसिद्ध विद्वान हेम चन्द्र रहता था। वह राज पुरोहित थ
और राजा उसका बड़ा आदर और सम्मान करता था। वह प्राकृत तथा संस्कृत का
प्रकाण्ड पंडित माना जाता था।

मुस्लिम काल में भी यह धर्म बना रहा। इसकी उन्नति तो अवश्य रु
गई परन्तु यह मुस्लिम अत्याचारों और आघातों से सुरक्षित बना रहा क्योंकि इसमें
आक्रोश तथा हलचल को स्थान न था। इस समय इसकी कुछ उन्नति राजपूताना
प्रदेश में अवश्य हुई अन्यथा धीरे धीरे इसका पतन होने लगा।

अवनति—मध्यकाल के उपरान्त जैन धर्म का ह्रास होने लगा। इसके हुत से कारण थे। इस धर्म के उन प्रचारकों का अभाव हो गया जिनके महान रिश्रम से इस धर्म का प्रसार हुआ था। जो थोड़े बहुत प्रचारक थे भी उनमें त्साह क्षीण हो गया। उन्होंने अपने नियम छोड़ दिये। आत्म संयम तथा घोर पस्या जिनके कारण वह जन साधारण के आदर के पात्र थे उन्होंने छोड़ दिया। सके अतिरिक्त इस सम्प्रदाय में मत भेद खड़ा हो गया। श्वेताम्बर और दिगम्बर ो अलग अलग सम्प्रदाय बन गये इस मत भेद ने ठोस कार्य जिसकी धर्म प्रसार ं आवश्यकता होती है—न होने दिया—दक्षिणी भारत में शिव मत का उत्कर्ष ोने लगा और इस मत ने जैन धर्म की नींव उखाड़ना आरम्भ कर दी। अब राज हायता भी मिलना बन्द हो गई। इतना ही नहीं अपितु स्वयं इस धर्म के सेद्धान्तों में भी मत भेद पैदा होकर गड़बड़ होने लगे। हिन्दू प्रचारकों ने हिन्दू धर्म को फिर से पवित्र कर लिया और उन्होंने उन खराबियों को दूर कर दिया जिनके कारण हिन्दू धर्म लोकप्रिय न रह गया था—इन सब कारणों ने मिल कर जैन धर्म को आघात पहुँचाये और उसको पतन की ओर धकेल दिया।

जैन धर्म के प्रचारक अति संयम शील जीवन बिताते थे, घोर तपस्या करते थे तथा शरीर को यातनायें पहुँचा कर इच्छाओं को छोड़ने का अभ्यास करते थे। उनकी इस प्रकार आत्म शुद्धि का प्रभाव जन साधारण पर बड़ा अच्छा पड़ता था। परन्तु अब उन्होंने इस प्रकार के साधन बन्द कर दिये। जनता पर उनका प्रभाव समाप्त हो गया। उनके साथ साथ उत्साही प्रचारकों की कमी हो गई और प्रचार का कार्य रुक गया। संघों के सदस्य धीरे धीरे समाप्त होने लगे।

धर्म में आपसी बखेड़े आरम्भ हो गये, मगध में अकाल के कारण जो जैनी दक्षिण भारत की ओर चले गये थे उन्होंने वापिस आने पर पाटली पुत्र की परिषद् के निर्णयों को नहीं स्वीकार किया और अब जैनी दो वर्गों में विभाजित हो गये। वह श्वेताम्बर तथा दिगम्बर सम्प्रदाय बने। इन आपसी मत भेदों ने प्रचार के ठोस कार्य को हानि पहुँचाई। दक्षिणी भारत में शिव की पूजा बढ़ गई और उसको राजों से सहायता मिलने लगी। इसके विपरीत जैन धर्म पर उलटे प्रहार होने लगे। चोल राजाओं ने जैन धर्म का घोर विरोध किया। मदुरा के मन्दिर में शैव साधुओं की प्रतिमाएं बनवा कर रखवा दीं। इसी प्रकार अन्तिम चालोकियों ने जैन प्रतिमाओं के स्थान पर हिन्दू प्रतिमायें स्थापित करा दीं। चोल राजाओं ने गंग वंश को परास्त कर दिया और इस प्रकार गङ्ग वंश द्वारा जो संरक्षण जैन धर्म को प्राप्त था वह जाता रहा।

रामानुज आचार्य ने विष्णु मत चलाया और मैसूर में इसका प्रभाव बढ़ने लगा और जैन मत क्षीण होने लगा। उड़ीसा में भी शिव धर्म फैलने के कारण

जैन मत का पतन हो गया। जाति प्रथा के भेद भाव फिर से जाग उठे और ह बन्धन फिर से जनता पर लाद दिये गये। हिन्दु धर्म के फिर से उन्नति करने कारण जैन धर्म का ह्रास आरम्भ होना ही था क्योंकि हिन्दु धर्म की दुर्बलता पर ही जैन धर्म की नींव डाली गई थी। हिन्दु आचार्यों ने हिन्दु धर्म में अनेकों ऐसे सुधार कर दिये जि के कारण जनता इसमें ऊबने लगी थी।

इन सब का यह फल हुआ कि जैन धर्म वालों की संख्या घीरे धीरे होने लगी और आज समस्त भारत में इनकी कुल संख्या तेरह लाख के लगभग है। यह लोग अधिकतर व्यापारिक वर्ग से सम्बन्ध रखते हैं और मालदार हैं इनकी ज्यादा संख्या राजस्थान, गुजरात व मध्य भारत में रहती है। इन्होंने धार्मिक सिद्धान्तों से प्रभावित होकर अनेकों चिकित्सालाएं खुलवाई हैं, अनेक मन्दिर बनवाये हैं और दान करने के अन्य साधन जुटाये हैं।

अब फिर जैन धर्म वालों ने धर्म प्रचार की ओर ध्यान दिया है। उन्होंने अपने प्राचीन मन्दिरों से हस्तलिखित पुस्तकें प्राप्त कर उनका प्रकाशन आरम्भ कराया है। धार्मिक शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया है। जैनियों के अनेकों स्कूल हैं जिनमें जैन धर्म की शिक्षा का प्रबन्ध किया गया है। इस प्रकार धर्म में फिर से जाग्रति हो रही है और उसका संगठन दृढ़ होता जा रहा है। आज चाहे उनकी अधिक संख्या न हो परन्तु जितने भी जैनी आज भारत में बसते हैं वह संगठित रूप से मिल जुल कर रहते हैं और अपने साधु सन्तों का बड़ा ही मान और आदर करते हैं। आज शताब्दियों पश्चात् भी उनमें प्राचीन काल का उत्साह विद्यमान है।

Q—Give an account of the doctrines of Budhism and discuss the causes of its phenomenal rise and fall.

बुद्ध धर्म के सिद्धान्तों का उल्लेख करो तथा उसके महत्वपूर्ण उत्थान और पतन के कारणों पर प्रकाश डालो।

उत्तर—वह सुधारवादी आन्दोलन जिसने सबसे अधिक शक्तिशाली प्रकार से हिन्दु धर्म को आघात पहुंचाये गौतम बुद्ध द्वारा आरम्भ किया गया था। इनका जन्म राजकुल में हुआ था। वह बाल्यकाल से ही चिन्तन प्रकृति के थे। राजकीय वैभव से वह प्रभावित न होते थे। वह सांसारिक जीवन के प्रति उदासीन रहते थे। इस कारण से उनका विवाह एक सुन्दर राजकुमारी से कर दिया गया। परन्तु २९ वर्ष की आयु से (५३३ ई० पू०) भ्रमण करते रहे परन्तु उनको शान्ति प्राप्त न हुई। उन्होंने तपस्या की परन्तु वह भी निरर्थक रही। फिर गया में एक पीपल वृक्ष के नीचे अचानक उनको ज्ञान प्राप्त हुआ। अब उन्होंने संसार का हित करने के लिये भ्रमण कर अपने उपदेशों द्वारा अपने पवित्र सिद्धान्तों का प्रचार करना आरम्भ कर दिया।

उन्होंने किसी नवीनतम धर्म की स्थापना करने का दावा नहीं किया तथा किसी धर्म का विरोध अपने प्रचार में नहीं किया। वह हिन्दू धर्म की क्रिया, विधियों अथवा धार्मिक सिद्धान्तों के विषय में कुछ नहीं कहते थे। उन्होंने तो सात्विक तथा पवित्र जीवन व्यतीत करने की एक नवीन योजना बनाई। जीवन-मरण के बन्धनों से मुक्त होकर आत्मा किस प्रकार मोक्ष प्राप्त कर सकती है इसके साधनों का उन्होंने प्रतिपादन किया। वह ईश्वर के बखेड़ों में नहीं पड़े। उन्होंने विश्व के रचयिता के प्रति उदासीनता दिखाई। उन्होंने वेदों की प्रमाणिकता को मानने से इन्कार किया। जाति प्रथा को निरर्थक और अपवित्र बताया, पुरोहितों के प्रभुत्व को हितकारी न कहकर विनाशकारी कहा तथा कर्मकाण्ड तथा अनुष्ठानों को बेकार बताया। उन्होंने कहा कि कोई भी व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के आधार पर न तो अपना विकास ही कर सकता है और न मोक्ष की प्राप्ति में प्रगति कर सकता है। अपना विकास और मोक्ष की ओर प्रगति करने के साधन उसके अपने कर्म ही हैं। पवित्र तथा सात्विक जीवन बिताने से ही आत्मा अपनी पवित्रता प्राप्त कर सकती है। उनकी ओर से यदि ब्राह्मण कुछ कर भी दें तो व्यर्थ होगा क्योंकि मनुष्य का वर्तमान तथा भविष्य उसके स्वयं के कर्मों द्वारा बनता है। अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का फल बुरा ही होगा। जो बोयेगा सो काटेगा और जैसा बीज होगा वैसा ही फल मिलेगा। यह सिद्धान्त अटल तथा अपरिवर्तनशील है। उन्होंने जिन व्यवहारिक सद्गुणों को बताया है वह नैतिक गुणों का एक समूह है जो विवेकपूर्ण हैं।

बुद्ध जी संसार में फैले हुए घोर कष्टों से प्रभावित हुए थे। उनका दयापूर्ण हृदय पददलित मनुष्यों की यातनाओं को देखकर पिघला था। इन्हीं कष्टों को आधार मानकर वह आगे बढ़े और इन कष्टों का निवारण करना ही उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बनाया।

उन्होंने अपने उपदेशों में अपने अनुयायियों को चार आर्य सत्य बताये। इनको "चत्वारि आर्य सत्यानि" कहते हैं। वह इस प्रकार हैं (१) दुःख (२) दुःख का कारण (दुःख समुदाय), (३) दुःख का दमन (दुःख निरोध) (४) दुःख का दमन करने का उपाय (दुःख निरोध गामिनी प्रतिपाद)—सरल शब्दों में यह कह सकते हैं कि जीवन में कष्ट हैं। कष्टों के अनेकों कारण हैं। इन कारणों को नष्ट करके कष्टों का निवारण किया जा सकता है।

कष्टों के कारणों पर प्रकाश डालते हुए बुद्धजी ने बताया कि सांसारिक वस्तुओं को प्राप्त करना व उनका भोग करना ही दुःख का कारण बनता है। इन वस्तुओं के भोग की इच्छा और वासना ही सब कष्टों की जननी है, और यह तृष्णा ही आत्मा को जन्म-मरण के चक्कर में फंसाये रहती है। यदि इस तृष्णा

का नाश कर दिया तो वहां का नाश ही नहीं हो सका अपितु मोक्ष का द्वार खुल जाता है। आत्मा पवित्र होकर जीवन तथा मृत्यु के बन्धनों से छुट प्राप्त कर लेती है। इस प्रकार की वासना का किस प्रकार नाश किया जाय य महत्वपूर्ण प्रश्न है। बुद्धजी के मतानुसार किसी प्रकार की तपस्या या शारीरि यातनाएं इस वासना का नाश नहीं कर सकतीं। वैदिक क्रियाएँ, वेद मन्त्रों बार बार उच्चारण व यज्ञ इत्यादि भी इस वासना का नहीं हटा सकते। बुद्ध कहते थे कि इन वासनाओं का नाश अष्टांगिक मार्ग द्वारा ही किया जा सकता है इसमें निम्नलिखित आठ नियम सम्मिलित हैं :—

(1) सम्यक् दृष्टि (विश्वास) Right Thought.
(2) सम्यक् संकल्प (विचार) Right Belief.
(3) सम्यक् वाक् (वचन) Right speech.
(4) सम्यक् कर्मान्त (कर्म) Right Action.
(5) सम्यक् आजीविका (वृत्ति) Right means of livlihood.
(6) सम्यक् व्यायाम (श्रम) Right Endeavour.
(7) सम्यक् स्मृति Right Recollection.
(8) सम्यक् समाधि Right Meditation.

इस प्रकार हम देखते हैं कि बुद्ध मत के अनुसार कष्टों से छुटकारा पाने के लिये न तो कठोर तप की ही आवश्यकता है और न अति अधिक भोग विलास की। उनका मत मध्य मत है। वह उपरोक्त आठ नियमों के पालन करने पर ही अधिक जोर देते हैं और उनके अनुसार जीवन व्यतीत करने से ही निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है। निर्वाण का अर्थ जीवन-मरण के बन्धन से मुक्ति प्राप्त करना है।

उन्होंने चरित्र की पवित्रता, सत्य, प्रेम व बड़ों का आदर सत्कार पर बल दिया। अनिष्टकारी कार्यों पर प्रतिबन्ध लगाया। वह जीवों के प्रति दया भाव पर जोर देते थे। वह किसी के द्वारा की गई मिथ्या बड़ाई को बुरा समझते थे। वह ऊँच नीच व भेद भाव के विरुद्ध थे। वह दुष्कर्मों से घृणा करते थे। उनके करने वालों से नहीं। उनके करने वालों को अच्छे मार्ग पर लाना ही तो बुद्धजी का उद्देश्य माना था।

दूसरा सिद्धान्त जिस पर बुद्धजी बल देते थे उसके अनुसार कर्म ही सब कुछ है, कर्म द्वारा ही व्यक्ति का वर्तमान तथा भविष्य बनते हैं, यह लोक और परलोक उसकी स्वयं की दशा पर निर्भर करते हैं। यदि वह अच्छे कर्म करेगा तो उसका कल्याण होगा अथवा वह पतित हो जायेगा। वह अपने आपका स्वयं ही निर्माता है क्योंकि कर्म करने में वह स्वाधीन है। वह कहते थे कि न तो यज्ञ और न देवता की उपासना ही मनुष्य के दुष्कर्मों का अन्त कर सकती है और न

र्मों को प्रथम रखकर ही मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर सकता है। मनुष्य का जब भी उद्धार होगा वह अपने ही त्याग तथा परिश्रम द्वारा होगा। हमको अपने का फल भोगना ही होगा। उनके बचने का अन्य कोई उपाय है ही नहीं। दुष्कर्मों का विनाश कर मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लेता है और जब से बच जाता है तो पुनर्जन्म से भी उसकी मुक्ति हो जाती है। यह अवस्था निर्वाण की अवस्था है।

अहिंसा भी उनका एक सिद्धान्त था। जीवों के प्रति प्रेम तथा दया भाव प्रचार करने के हेतु अहिंसा का पालन अनिवार्य है। प्राणी मात्र के प्रति इस न्त का पालन कर मनुष्य अनेकों दुष्कर्मों से बच जाता है। ऐसा ही उनका था। परन्तु उन्होंने अहिंसा को उस पराकाष्ठा तक नहीं पहुंचाया जिस पर वीर स्वामी ने पहुंचाया था। ईश्वर के प्रति बुद्धजी उदासीन थे। उनका ना था कि ईश्वर और देवता भी कर्म के नियमों में बंधे हुए हैं। सत्य तो यह कि वह ईश्वर के वाद विवाद में पड़ते ही न थे। वह तो उन साधनों की खोज में थे जिनके द्वारा मनुष्य का भला होता हो, व्यर्थ के वाद विवाद में पड़ना के उद्देश्य के विपरीत था।

बुद्धजी ने जिन संघों का निर्माण किया उनके सदस्यों के लिये और भी न नियमों का प्रतिपादन किया गया। यह नियम इस प्रकार थे :—

१—पर द्रव्य की चाह न करना। २—हिंसा न करना। ३—असत्य भाषण करना। ४—मद्यपान या मादक द्रव्यों का सेवन न करना। ५—व्यभिचार न ना। ६—संगीत व नृत्य में भाग न लेना। ७—अञ्जन, फूल और सुवासित यों का प्रयोग न करना। ८—कुसमय भोजन न करना। ९—सुखप्रद शय्या उपयोग न करना। १०—द्रव्य ग्रहण न करना और न रखना। इनमें पहले व साधारण उपासक के लिये भी लागू थे। यह नियम साधारण व्यक्तियों से र भी कठोर थे। इनको पालन करने वाले भिक्षु अपना सर्वस्व त्याग धर्म प्रचार कार्य ही करते थे। इसीलिये उनके लिये अधिक संयम से रहने की आवश्यकता थी।

उत्थान के कारण

बुद्ध धर्म ने बड़ी ही जल्दी उन्नति करली। इसके अनेकों कारण थे। बुद्ध धर्म की सरलता, समानता की भावना, अनुकूलता की शक्ति, लोक प्रिय भाषा का योग, बुद्ध जी का अपना व्यक्तित्व और पवित्र जीवन, राजकीय संरक्षण, बौद्धों के संघ व्यवस्था, उग्र प्रतिस्पर्धा रखने वाले सम्प्रदाय का अभाव, हिन्दू धर्म में अनेकों सामाजिक तथा धार्मिक बुराइयों का होना इत्यादि भिन्न कारणों ने मिलकर इस धर्म प्रसार में बहुत योग दिया। स्वयं बुद्ध जी के जीवन काल में ही भारत

के कई राज्यों में यह फैल चुका था। मगध, कौशल, कौशाम्बी के शासकों। प्रजा ने समान रूप से इस धर्म को अपना लिया। मल्ल तथा शाक्य के प्रजा राज्यों में भी इसका पूर्ण रूप से प्रसार हो गया था। उसी समय मध्य भारत अनेकों विहार स्थापित हो गये थे। नालन्द में महत्व पूर्ण विहार थे। अशोक कनिष्क के समय में यह राज धर्म बन गया। बारहवीं तथा तेरहवीं शताब्दी बंगाल तथा बिहार के पाल राजाओं ने इस धर्म को पूरी सहायता पहुँचाई। उस समय में योग्य प्रचारक तिब्बत गये और धार्मिक प्रचार किया तथा अनेकों ग्रन्थों का तिब्बती भाषा में अनुवाद भी किया गया।

ईसा से तीसरी शताब्दी पूर्व सम्राट अशोक ने इस धर्म पर अति की। वह स्वयं भी बुद्ध जी के भक्त तथा उपासक हो गये थे। इनकी संरक्षता यह महान धर्म भारत की सीमाओं को पार कर अन्य देशों में फैला। ब्रह्मा, लंका तिब्बत, चीन आदि देशों में इसका अच्छा प्रभाव हुआ। इनके अतिरिक्त इस ध के प्रचारक मैसोपोटामिया, सीरिया तथा सीरिया के पड़ौसी प्रदेशों में, अफरीका मिस्त्र और मकदूनिया में भी गये। सन् ६६ में मातङ्ग ने बुद्ध ग्रंथों का अनुवा चीनी भाषा में किया था। ३७२ सन् में यह धर्म कोरिया तथा ५३८ में जापा तक पहुँच गया। हिन्द चीन व तिब्बत में इस धर्म का बड़ा प्रचार हुआ। धर्म की इस सफलता के निम्नलिखित कारण थे जो बड़े ही प्रभाव शाल सिद्ध हुवे।

१—धार्मिक सरलता—छटी शताब्दी में हिन्दू धर्म में अनेकों सामाजि और धार्मिक कुरीतियां पैदा हो चुकीं थी। कर्म काण्डों का जाल सा बिछ गया उनकी कठोर तथा उलझनदार दशाओं से जनता ऊब रही थी। ब्राह्मण अपने आदर्श से गिर चुके थे। फिर भी वह जन साधारण पर अपना प्राचीन प्रभुत्व कायम रखना चाहते थे। तपस्या, शारीरिक यातनायें, घोर पश्चाताप, आडम्बर पूर्ण यज्ञ तथा कर्म काण्ड जनता के लिये कष्टमय सिद्ध हो रहे थे। बुद्ध जी ने इनके विपरीत सादे, सरल अथवा व्यवहारिक नियमों का प्रतिपादन किया। उन्होंने ऐसे सिद्धान्तों का प्रचार किया जिन का पालन करना हर व्यक्ति के लिये सम्भव था। ब्राह्मणों ने निर्गुण ब्रह्म के प्रति गूढ़ गीत गाये। उन्होंने एक रहस्य पूर्ण ढंग से क्लिष्ट सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया जिनको सीधी सादी जनता कुछ नहीं समझ पाती थी। परन्तु बुद्ध जी ने बड़े बड़े सिद्धान्तों को बिल्कुल सरल ढंग से प्रस्तुत किया जो प्रत्येक व्यक्ति की समझ में आ सकते थे।

२—समानता की भावना—वैदिक काल की सीधी सादी तथा सरल वर्ण व्यवस्था छटी सदी तक आते आते कठोर जाति प्रथा में बदल चुकी थी, जिसके कठोर बन्धन जन साधारण के लिये भारी शिला सिद्ध हो रहे थे, मनुष्य का स्था

गिर गया था। ऊँच-नीच, जाति भेद भाव प्रिय हो गये थे। ऐसी अवस्था में बुद्ध जी का समानता का प्रचार जन साधारण के सम्मुख आया उनके मतानुसार ऊँच-नीच, अमीरी-गरीबी तथा अन्य प्रकार के भेदभाव व्यक्ति के उत्थान में बाधक नहीं बन सकते थे। वह कहते थे कि शुद्ध आचरण करके कोई भी व्यक्ति उन्नति के उच्चतम शिखर पर पहुंच सकता था। उन्होंने प्रथम बार समाज में प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों का प्रचार किया और बताया कि सब मनुष्य में एक ही प्रकार की पवित्र आत्मा विद्यमान है। प्रथम बार निम्न श्रेणियों को सामाजिक तथा धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और उन्होंने अपने जीवन को अर्थपूर्ण समझा। इसी कारण से जनता उनकी ओर आकर्षित होती चली गई।

(३) अनुकूलता की शक्ति - इस धर्म में व्यवहारिकता अधिक थी। इसी कारण से परिस्थिति के बदलने पर थोड़े ही सुधार से यह अपने आपको उसके अनुकूल बना लेता था। भिन्न भिन्न देशों में जाकर इस धर्म ने अपने आपको वहां के वातावरण तथा परिस्थिति के अनुकूल बना लिया और वहाँ के लोगों पर गहरा प्रभाव डाला। यही वजह थी कि यह धर्म इतनी सुगमता से चीन, जापान, बरमा, हिन्द चीन आदि देशों में प्रसारित हुआ और आज भी करोड़ों की संख्या में लोग इसको मानते हैं।

(४) लोक प्रिय भाषा—अब तक धार्मिक सिद्धान्तों का वाद विवाद तथा प्रचार संस्कृत भाषा में होता था जो जन साधारण के लिये बेकार था, क्योंकि वह संस्कृत नहीं समझते थे, बुद्ध जी ने अपने सिद्धान्त जनता की अपनी ही भाषा में प्रस्तुत किये। इन नियमों को अपनी भाषा में सुनकर जनता ने बड़ा आनन्द अनुभव किया और वह बुद्ध जी के धर्म की ओर आकर्षित होती चली गई।

(५) बुद्ध जी की अपनी महानता—बुद्ध जी का जीवन अति सरल और पवित्र था। उनका मन मानवता के कष्टों को दूर करना चाहता था। वह दिन रात दूसरों के लिये ही सोचते थे। जो व्यक्ति उनके थोड़े सम्पर्क में भी आया वही उनका दिल से उपासक हो जाता। उनकी सरलता प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण रूप से प्रभावित किये बिना न रहती थी। वह तर्क वितर्क के महान पंडित थे, ब्राह्मणों की अति क्लिष्ट युक्तियों का सरलता पूर्वक अकाट्य तर्क से खण्डन करते थे और विरोधी बगलें झांकते थे। उनका स्वभाव अति मधुर और दयापूर्ण था। इसके विपरीत ब्राह्मण विद्वान अहंकारी और घमण्डी थे। उनके ऊपर खुले शास्त्रार्थों में बुद्ध जी ने सरलता से विजय प्राप्त कर ली। अनेकों ब्राह्मण विद्वान उनके अनुयायी बन गये। महाकश्यप, सारिपुत्र जैसे विद्वान ब्राह्मण उनके प्रिय शिष्यों में थे। बुद्ध जी की महानता बड़ी ही अद्भुत थी। अपने आदर्शों को अपने ही जीवन काल में वह पूर्ण रूप से समझा चुके थे।

(६) राजकीय संरक्षण—बुद्ध धर्म के इस प्रकार फैलने का एक और मुख्य कारण था। राजाओं द्वारा इसका प्रचार होता था। बुद्ध जी स्वयं एक राजकुमार थे। उन्होंने एश्वर्य तथा सुख के जीवन को त्याग कर तप तथा संयम जीवन अंगीकार किया था। इसने जन साधारण पर बड़ा ही गहरा प्रभाव अन्य राजाओं ने भी बुद्ध जी के आदेशों को अच्छी तरह सुना और उस धर्म ग्रहण किया। मगध नरेश बिम्बसार और उनका पुत्र अजात शत्रु दोनों ही बुद्ध के मित्र थे। दोनों ही उनके धर्म में विश्वास रखते थे। फिर भारत के महान अशोक इस धर्म का अनुयायी बन गया। उसने इस धर्म को राजधर्म बना दि तथा इसके प्रसार में कोई कसर न छोड़ी। उसके समय में भारत के अनेकों प्रचा विदेशों में गये और इस धर्म का प्रचार किया। सम्राट अशोक का लड़का महे तथा लड़की संघमित्रा इस धर्म के प्रचारक होकर लंका गये और अपने त्याग उदाहरण द्वारा बड़ी सफलता प्राप्त की। बुद्ध धर्म के सिद्धान्त स्तम्भों तथा शिला पर लिखवा दिये गये ताकि साधारण जनता प्रतिदिन उनको देख सके। धार्मि परिषदों द्वारा भी इस धर्म का अच्छा प्रचार होता था। अशोक के अनेकों प्रय द्वारा इस धर्म ने अद्भुत उन्नति की। उनके पश्चात प्रतापी सम्राट कनिष्क इस ध का उपासक हुआ जिसने अशोक की तरह इस धर्म की ख्याति को फैलाया। उस समय में भी इस धर्म की एक महान परिषद् बुलाई गई थी। हर्ष ने भी इस धर्म आश्रय दिया और बुद्ध साधु सन्तों को आदर सम्मान दिया। इस प्रकार राजाओं संरक्षण में रह कर बुद्ध धर्म की बड़ी ही उन्नति हुई और यह भारत की सीमाओं पार कर अन्य देशों और जातियों का भी प्रिय बना। उन देशों में आज भी करो की संख्या में लोग इस धर्म की उपासना करते हैं।

(७) बुद्ध सङ्घ—बुद्ध जी ने जो धार्मिक संघ स्थापित किये उन्होंने इ धर्म के प्रचार और प्रसार में विलक्षण कार्य किया। उनकी व्यवस्था ही इस प्रक की गई थी। अठारह वर्ष से अधिक आयु के स्त्री अथवा पुरुष, ऊँच अथवा नी बिना किसी भेद भाव के यदि वह शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ होता था संघ का सदस्य बन सकता था। उसका जीवन संयम में बंध जाता था। यह भिक्षु निःस्वार्थ, त्यागी व सच्चरित्र थे। जिनमें सेवा भाव कूट कूट कर भरा हुआ था, जिन्होंने सांसारि बन्धनों से मुक्ति प्राप्त कर धर्म सेवा के स्वयं को अर्पण कर दिया था। इनका पवित्र जीवन महान उदाहरण बन कर जनता को प्रभावित करता था। यह ध प्रचार में बराबर संलग्न रहते थे। बुद्ध जी का इनको यह आदेश था कि "सदा भ्रमण करते रहो" उनका कहना था "ऐ भिक्षुओं, अनेकों के लाभ के लिये, अनेकों के सुख के लिये, विश्व के प्रति दयालुता के लिये शुभ कार्य के लिये, एवं मनुष्य और देवताओं के कल्याण के लिये जाओ और भ्रमण करो।" इस प्रकार भ्रम

करके यह उपासक धर्म प्रचार करते थे। वर्ष के आठ महीने विहारों से निकल कर निकटवर्ती प्रदेश के जन साधारण को अपने गुरु के आदेश सुनाते थे और शेष चार महीनों के लिये विहारों में रह कर प्रातः सायं एकत्रित जनता को धार्मिक आदेश देते थे। इनका अधिकतर समय धर्म प्रचार में ही लगता था। विहार धार्मिक ज्ञान के प्रसार केन्द्र बने हुये थे। जनता की आत्मा इन विहारों में पहुँच कर आनन्द का अनुभव करती थी और उसका कल्याण होता था। इसके अतिरिक्त इन धर्म प्रचारकों के उपदेश सरल भाषा में दिये जाने के कारण जन साधारण को अच्छे लगते थे और ब्राह्मणों के प्रकाण्ड तथा विवाद ग्रस्त व्याख्यानों को सुनने के लिये न आकर यह लोग विहारों की ओर उमड़ पड़ते थे। ब्राह्मण विद्वानों की युक्तियां बड़ी रहस्यमयी होती थीं जिनका समझना साधारण मनुष्य के लिये कठिन होता था। परन्तु बुद्ध प्रचारक सादी युक्तियों द्वारा गूढ़ से गूढ़ विषय को समझाते थे। बुद्ध प्रचारकों में धर्म प्रसार की उतनी ही लगन थी जितनी उनके गुरु की लगन मानव जाति का उद्धार करने की थी। भिक्षुओं और भिक्षाथियों में जितना उत्साह था, उसका उदाहरण इतिहास में कहीं नहीं मिलता।

प्रतिस्पर्धा वाले सम्प्रदाय का अभाव—हिन्दू धर्म की कुरीतियों के विरुद्ध जितने भी सम्प्रदाय बने उनमें सबसे शक्तिशाली बुद्ध धर्म ही था। अन्य सम्प्रदाय उसके आगे व्यर्थ से थे, इस कारण से बुद्ध धर्म बराबर फैलता ही चला गया। विदेशों में प्रसार करने का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी था कि उस समय ईसाई तथा इस्लाम धर्म का तो आविर्भाव ही नहीं हुआ था। इसलिये बुद्ध प्रचारकों को मैदान खाली मिला और वह सरलता पूर्वक अपने धर्म का प्रसार कर सके।

पतन के कारण

पूर्ण उत्थान के पश्चात् पतन तो होता ही है। परन्तु इसके अनेकों कारण भी हुआ करते हैं। बुद्ध धर्म ने बड़ी तेजी के साथ प्रगति की और उसका उत्कर्ष इस कारण हुआ कि हिन्दू धर्म की कुरीतियों से तंग आकर जनता ने उससे मुख मोड़ लिया था। परन्तु इसका यह अर्थ न था कि जनता हिन्दू धर्म से नफरत करने लगी थी। बुद्ध धर्म महत्वपूर्ण शक्ति प्राप्त करने के पश्चात भी हिन्दू धर्म का विनाश न कर सका। सम्राटों के अनेकों प्रयत्न भी हिन्दू धर्म को मूलतः नष्ट न कर सके और समय आने पर हिन्दू धर्म ने बुद्ध धर्म पर विजय प्राप्त की और उसको उसकी जन्म भूमि से ही निकाल दिया। इसके अनेकों कारण थे। प्रथम तो बुद्ध धर्म में दोष उत्पन्न हो चले थे। इस धर्म का नैतिक पतन हो चला था, संघ व्यवस्था ढीली पड़ गई थी। उसका अनुशासन शिथिल हो चला था, भिक्षुओं का त्यागमय जीवन विलासिता प्रिय होता जा रहा था। राजाओं की सहायता मिलनी बन्द हो चुकी थी,

का आदर और सम्मान प्राप्त करते थे तथा वह उदाहरण का काम करते थे, उनका तपस्यापूर्ण जीवन अब अवगुणों का पिटारा बन कर रह गया। भोग-विलास तथा सुख वैभव का वातावरण उत्पन्न होने से भिक्षुओं के उत्साह का अन्त हो गया, अब वह जनता के लिये आदर्श न रह गये थे। इस प्रकार उनके निरन्तर प्रचार की मशीन ही खोटी पड़ गई थी और उसका पतन अवश्यम्भावी था।

(४) राजाओं की सहायता—राजाओं और सम्राटों के अथक तथा निरन्तर प्रयासों के कारण बुद्ध धर्म केवल भारत का ही नहीं विश्व धर्म बन चुका था। अशोक तथा कनिष्क ने बुद्ध धर्म को राज्य-धर्म बनाकर इस धर्म के प्रसार में भारी सहायता दी थी और भारत की सीमाओं को पार कर अन्य देशों में प्रसारित होने की क्षमता प्रदान की थी। अब इस प्रकार की सहायता का अन्त हो गया। हिन्दू धर्म के पुनरुत्थान के कारण राजाओं ने भी बुद्ध धर्म के प्रति उदासीनता का भाव अपना लिया था। अब उनको उस पवित्रता का आभास होना बन्द हो गया था जो प्राचीन समय में इस महान धर्म में अशोक ने देखी थी। अब इस सहायता के बन्द हो जाने से बुद्ध धर्म की प्रगति भी बन्द हो गई।

(५) हिन्दू धम की एकीकरण की शक्ति—हिन्दू धर्म एक सागर के समान सिद्ध हुआ है। जिस प्रकार छोटी छोटी नदियां भिन्न भिन्न दिशाओं से आकर सागर में विलीन हो जाती हैं। उसी प्रकार भिन्न भिन्न सभ्यतायें तथा संस्कृति आई और सबका समावेश महान हिन्दू धर्म में हो गया। इसी प्रकार हिन्दू धर्म ने ऊंचा उठकर बौध धर्म के अनेकों सिद्धान्तों को मिला लिया। इस नवीन धर्म का अपने में समावेश कर लिया। फल यह हुआ कि बुद्ध धर्म के उपासकों की संख्या घटती चली गई।

(६) ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान—ब्राह्मण धर्म में जो शिथिलता आ गई थी उसका अन्त होने लगा। उसके उत्साही विचारकों ने नवीन आभा का प्रदर्शन किया, उन्होंने शुद्ध तथा पवित्र सिद्धान्तों को नवीन तथा आकर्षक रूप दे बुद्ध धर्म का घोर विरोध आरम्भ कर दिया। गुप्त सम्राटों ने हिन्दू धर्म का संरक्षण किया और उनको प्रचार के साधन जुटाये। राजकीय सक्रिय सहायता पा ब्राह्मण विचारकों का उत्साह अति अधिक बढ़ गया और हिन्दू धर्म की नये सिरे से जय पताका फहराने लगी। बुद्ध धर्म की श्री का अन्त हो गया। इतना ही नहीं उस काल में ब्राह्मण धर्म ने अनेकों विलक्षण विद्वानों और प्रचारकों को जन्म दिया जिन्होंने अद्भुत वाद-विवाद की शक्तियों का प्रदर्शन किया और तर्क वितर्क की विलक्षण तथा अलौकिक बुद्धि का परिचय दिया। हिन्दू धर्म के पुनरुत्थान ने बुद्ध धर्म का पतन अनिवार्य कर दिया।

(८) मुसलमानों के आक्रमण—जिस समय बुद्ध धर्म का ह्रास हो रहा था उसी समय इस देश पर मुसलमानों के आक्रमण होने लगे। मुसलमान आक्रमण-

कारी धर्मान्धता तथा कृपाहीनता से ओत प्रोत थे। उनकी प्रबल इच्छा विरोधी धर्मावलम्बियों को नष्ट भ्रष्ट करने की रहती थी। शत्रु का विनाश ही उनका ध्येय रहता था। जब उनका भारत में पदार्पण हुआ तो उन्होंने अनेकों बुद्ध अनुयाइयों की निर्मम हत्या की, उनके विहारों को नष्ट किया, नालन्द का विहार भी नष्ट कर दिया गया। अनेकों भिक्षु या तो मार डाले गये या तिब्बत इत्यादि देशों में भागने के लिये विवश किये गये कुछ ने भारत में रह कर ही अपना धर्म परिवर्तन कर लिया।

(६) राजपूतों का उदय होने के कारण भी इस धर्म को ठेस पहुँची। अहिंसा का सिद्धान्त उनको रुचिकर न था वह आखेट इत्यादि के लिये बाधक था। इसलिये उन्होंने भी इस धर्म का विरोध ही किया।

इन कारणों ने बुद्ध धर्म को उसकी जन्म भूमि से ही निकाल दिया। परन्तु इस कार्य में सबसे अधिक योग बुद्ध धर्म में उत्पन्न होने वाले अपने दोषों ने ही दिया। संघ में रहने वाले भिक्षुक लज्जा जनक तथा विलासिता का शिथिल जीवन व्यतीत कर रहे थे। जनता की गाढ़ी कमाई जो उसने उपहार के रूप में दी थी दुरुपयोग की जा रही थी। अब इनमें वह उत्साह तथा स्फूर्ति न रह गई थी जिससे इस धर्म का प्रसार विदेशों में भी किया था। इसका अपना अधःपतन अपने ही हाथों से हुआ। अन्य बाहरी कारणों ने तो इसके जर जर शरीर को धराशाई करने में ही योग दिया अन्यथा शरीर तो पहले ही अस्वस्थ्य होकर पिंजर बन चुका था इस प्रकार इस धर्म की भारत भूमि से समाप्ति हो गई।

Q. Assess the contribution of Buddhism to the enrichment of Indian Culture. (B. A. III (a)Paper 1951).

Or

Analyse the contribution of Buddhism to our cultural heritage (III (a) 1953).

भारतीय सभ्यता को बुद्ध धर्म की देन का माप करो।

बुद्ध धर्म भारत भूमि की ही अनुपम उपज थी। जिन सिद्धान्तों को इस धर्म ने अपनाया वह पहले ही उपनिषदों में आ चुके थे। यह धर्म आरम्भ में सुधारवादी धर्म था। परन्तु काल उपरान्त इसमें और हिन्दू धर्म में मतभेद बढ़ता ही चला गया इस धर्म ने भारतीय सभ्यता को अनेकों प्रकार से प्रभावित किया और अपनी अनुपम देन इस देश को प्रदान की भारतीय संस्कृति युग युगान्तरों तक इस विलक्षण देन की आभारी रहेगी। भिन्न भिन्न क्षेत्रों में इस धर्म की गहरी छाप पड़ी। धार्मिक सामाजिक तथा राजनैतिक अङ्गों पर गहरा प्रभाव पड़ा। कला को भी इस धर्म ने प्रभावित किया।

(१) ब्राह्मण धर्म ने सीधे तथा सरल सिद्धान्तों को भी जटिल रूप देकर सर्वसाधारण की बुद्धि से दूर कर दिया था। साधारण बातें भी रहस्य पूर्ण बना दी

गई थीं, कर्मकाण्ड तथा अन्ध विश्वास का वातावरण बना हुआ था। पुरोहित जी कहते थे अकाट्य समझा जाता था। परन्तु इस क्लिष्टता का अन्त बुद्ध धर्म के सरल सिद्धान्तों ने कर दिया रहस्य पूर्ण बातों को सरलता से समझाने का श्रेय इस धर्म को दिया जाता है। इस धर्म की सादगी, नैतिकता, दयाभाव, जन प्रिय भाषा का प्रयोग, सरल उदाहरणों द्वारा धर्म उपदेश देने का ढंग इन सब ने मिल कर जन साधारण को आकर्षित कर लिया। धार्मिक क्षेत्र में इस प्रकार की सरलता एक अनोखी ही बात थी। गूढ़ सिद्धान्तों को जन साधारण की भाषा में उपदेश देना भी एक अद्भुत चमत्कार सिद्ध हुआ। पहले क्लिष्ट संस्कृत में धर्म उपदेश दिया जाता था। जिसको जनसाधारण समझ ही नहीं पाते थे। परन्तु अब अपनी ही भाषा में धार्मिक बातों को सुन कर समस्त लोगों की आत्मा को प्रसन्नता प्राप्त होती थी। धार्मिक क्षेत्र में सरलता लाने का कार्य पहले पहल बुद्ध धर्म ने ही किया।

(२) उच्च नैतिक आदर्श—इस धर्म ने नैतिक नियमों पर अधिक बल दिया। सत्य बोलना, दूसरों के प्रति सेवा भाव रखना, किसी से ईर्षा द्वेष न रखना, सादा जीवन व्यतीत करना, स्वार्थ त्याग की भावना से ओत प्रोत होना, नशीली वस्तुओं से परहेज करना, दूसरों की वस्तुओं के प्राप्त करने की लालसा न रखने की इच्छा से दूर रहना इत्यादि अनेकों नियम का इस धर्म ने प्रतिपादन किया। इन नियमों के लगातार प्रचार से जनता का नैतिक स्तर ऊंचा उठा और ब्राह्मण धर्म पर भी गहरा प्रभाव पड़ा, कर्म सिद्धान्त पर बुद्ध जी ने बड़ा जोर दिया, कर्म ही को सब का आधार बताया गया। जो जैसा करेगा वैसा भरेगा इसलिये आत्मा को पवित्र करने के लिये शुद्ध कर्मों का करना अति आवश्यक है। उनके मतानुसार देवता भी कर्म बन्धनों से मुक्त नहीं है। इस प्रचार ने व्यक्तिगत धर्म को उत्साहित किया। इस सरल सिद्धान्त ने बड़ा ही असर डाला।

बुद्ध धर्म ने हिन्दू धर्म को बड़ी सीमा तक दुर्बल किया परन्तु फिर भी यह धर्म अपने आपको बचा सका और इसका अपना स्थान बराबर बना रहा। बुद्ध धर्म ने हिन्दुओं पर अपनी गहरी छाप लगाई जो बराबर बनी रही। अहिंसा के सिद्धान्त ने पशु बलि को रोक दिया और यज्ञों में वह महत्व न रह गया जो पहले था। आगे चल कर जब हिन्दू धर्म का पुनरुत्थान हुआ तो उसमें अहिंसा का सिद्धान्त विद्यमान हुआ। आगे चल कर इसी सिद्धान्त को हम भागवत धर्म में भी पाते हैं जिसने पूर्ण रूप से इस सिद्धान्त को अपना लिया था। दयाभाव को हिन्दू धर्म के क्षेत्र में भी अब उच्च स्थान प्राप्त हो गया।

(३) संघ व्यवस्था—प्राचीनकाल में धर्मोपदेश का कार्य अधिकतर आश्रमों में हुआ करता था। इन आश्रमों में सन्यासी लोग निवास करते थे और अपने परिवार सहित रहते थे। वहीं पर उनके शिष्य भी ज्ञानोपार्जन करते थे। परन्तु धर्म प्रसार

का कोई अन्य ऐसा नहीं था जैसा बुद्ध संघ थे। एक सुसंगठित, संस्था बनाने
श्रेय महात्मा बुद्ध को ही था। धर्म प्रचार में इस अनोखे संस्था ने अलौकिक क
करके दिखाया और आगे चलकर इसी प्रकार के संगठन हमको हिन्दू धर्म में
देखने को मिले। हिन्दू धर्म के शंकराचार्य-मठ तथा सन्यासियों के अखाड़े ऐसे ही सं
के उदाहरण हैं। संगठित तथा सुव्यवस्थित ढंग से वैदिक शिक्षा प्रचार का प्र
प्रथम इन संघों द्वारा ही किया गया और उसमें भारी सफलता प्राप्त हुई। इ
कारण आगे चल कर अनेकों प्रचारकों ने इनका अनुकरण करने के प्रयास किये।

इन संस्थाओं में कार्य प्रजातन्त्रात्मक ढंग से चलाया जाता था। सब मे
प्रस्ताव राशि द्वारा तय होता था। प्रत्येक मनुष्य चाहे वह किसी भी सामाजिक व
से आया हो एक समान नियम के अनुसार ही रहने के लिये बाध्य रहता था। सं
का अनुशासन सबके ऊपर एक ही प्रकार से लागू रहता था। ऊंच, नीच व जा
प्रथा के भेद भाव संघ के जीवन से परे की वस्तु था। इसमें रहने वाले भिक्षुक ए
दूसरे का एक ही रूप से आदर सम्मान करते थे। अर्थ यह है कि संघ व्यवस्था
प्रजातन्त्र सिद्धान्तों को कार्य रूप में परिणित कर व्यक्ति वाद के आदर्शों को ऊंच
उठाया और राजनैतिक क्षेत्र में भी इन प्रथाओं को स्थान मिला। व्यक्तियों ने अपने
व्यक्तित्व को पहचाना और अब धार्मिक क्षेत्र से निकल कर राजनैतिक क्षेत्र में भ
साधारण जनता ने प्रजातन्त्र प्रणाली को लागू करने की प्रवृत्ति दिखाई। इस प्रकार
संघ व्यवस्था ने धार्मिक क्षेत्र में ही नहीं अपितु राजनैतिक क्षेत्र में भी अपना प्रभाव
डाला और भारतीय सभ्यता को एक अलौकिक देन सिद्ध हुई।

(४) मूर्ति-पूजा—प्राचीन आर्य धर्म में मूर्ति-पूजा का कोई स्थान न था।
खुले आकाश के नीचे ही हवन तथा यज्ञ हुआ करते थे। परन्तु बुद्ध काल में आकर
महायान वर्ग द्वारा बुद्ध जी की प्रतिमायें बना कर बुद्ध जी की उपासना होने लगी।
बुद्ध जी का व्यक्तित्व इतना महान था कि लोग उनका आदर तथा सम्मान इतना
अधिक करते थे कि उनके जीवनकाल में ही उनकी पूजा होने लगी और दूर के
स्थानों में उनकी मूर्तियां बनाकर लोग उनकी पूजा करने लगे। इनका अनुकरण
हिन्दुओं में भी हुआ और वह भी अपने देवताओं की प्रतिमायें बनाकर उनकी
उपासना करने लगे। इस प्रकार मूर्ति पूजा का रिवाज धीरे-धीरे फैलता ही गया।
इसलिए कहा जा सकता है कि भारतीय सभ्यता में मूर्ति-पूजा का अविर्भाव बुद्ध
धर्म द्वारा हुआ।

(५) समानता और सहनशीलता के सिद्धान्त—बुद्ध जी से पूर्व
असमानता का वातावरण बना हुआ था। अनेकों प्रकार के भेद-भावों ने समाज को
दूषित कर रखा था जाति प्रथा के कारण समाज वर्गीकरण का शिकार हो रहा था।
शूद्र श्रेणी का जीवन ही निरर्थक तथा बेकार प्रतीत होता था। साथ ही साथ

साथ-में सहनशीलता का अभाव था। लोगों में वर्गीकरण के कारण ईर्ष्या तथा द्वेष फैले हुए थे। ऐसे समय में महात्मा बुद्ध ने समानता के सिद्धान्त का उपदेश दिया और उनके उत्साही शिष्यों ने उनका संदेश दूर-दूर देश-देशान्तरों में अमीर-गरीब, उच्च और नीच, स्त्री तथा पुरुष प्रत्येक व्यक्ति के पास समान रूप से पहुँचाया इस नवीन सिद्धांत ने समाज में एक नवीन स्फूर्ति तथा उत्साह उत्पन्न कर दिया। निम्न श्रेणियों ने शांति की सांस ली और इस प्रकार कर्म के बल पर वह भी उच्च से उच्च पद प्राप्त कर सकते थे। समानता के साथ साथ दया भाव का प्रचार हुआ जिसने सहनशीलता को जन्म दिया। आपस में प्रेम भाव बढ़ा और ईर्ष्या व द्वेष का स्थान प्रेम भाव ने ले लिया। इसका प्रभाव राजाओं पर भी पड़ा वह भी प्रजा को अपनी औलाद समझने लगे। प्रजा भी उनसे प्रेम करने लगी। इस प्रकार के सम्बन्धों की पराकाष्ठा हमको सम्राट अशोक के राज्यकाल में देखने को मिलती है और भावी राजाओं ने सहनशीलता के अच्छे उदाहरण इतिहास में छोड़े। गुप्त सम्राट हिन्दू होते हुए भी अन्य धर्मों का भी समान रूप से उतना ही आदर तथा सम्मान करते थे जितना हिन्दू धर्म का। हर्ष स्वयं हिन्दू था परन्तु बौद्धों तथा जैनियों का भी उतना ही आदर करता था। यह सम्राट अपनी सम्पूर्ण प्रजा को अपने पुत्र तथा पुत्रियां समझते थे। इन दोनों सिद्धान्तों ने राजा तथा प्रजा दोनों को समान रूप से प्रभावित किया। समानता के सिद्धान्त ने भावी प्रजातन्त्रों के लिए आधार शिला का कार्य किया।

(६) साहित्य—ब्राह्मणों के जितने भी ग्रन्थ लिखे गये वह संस्कृत भाषा में लिखे गये और जन साधारण की पहुँच से बाहर रहे। वेद, पुराण, दर्शन, उपनिषद्, संहितायें इत्यादि सब की रचना संस्कृत में की गई। इस प्रकार अब तक का साहित्य जन साधारण से अलग की वस्तु थी। वह विद्वानों तक ही सीमित था। परन्तु बुद्ध जी ने अपने समस्त धर्मोपदेश जन-साधारण की साधारण भाषा में दिए। बुद्ध विहारों में जो प्रार्थनायें होती थीं। प्रचारकों ने अपने प्रचार का माध्यम भी बोली जाने वाली भाषा को बनाया। इस कारण से बुद्ध धर्म के साथ-साथ लोकप्रिय भाषा का भी उत्थान हुआ। पाली भाषा का समस्त साहित्य बुद्ध धर्म के प्रयत्नों का ही फल था। इस प्रकार पाली भाषा के साहित्य को उत्पन्न करने का पूरा श्रेय बुद्ध धर्म को ही है।

(७) राजनैतिक तथा राष्ट्रीय एकता—बुद्ध धर्म की भाषा जन साधारण की भाषा थी जिसको देश की समस्त जनता बोलती थी एक ही भाषा बोलने के कारण देश में एकता की भावना का सूत्रपात हुआ और राष्ट्रीयता जागृत हुई। यह धर्म व्यापक रूप से समाज की भिन्न-भिन्न श्रेणियों में फैला और देशकी

समस्त जनता इस धर्म को देश का धर्म समझने लगी और सब एक ही म
पुरुष को अपना गुरु मानने लगे इस प्रकार सब में एकता की भावना जाग गई।

इस सामाजिक एकता ने राजनैतिक एकता के लिये भी मार्ग सुगम किया। सम्राट अशोक का साम्राज्य काबुल तथा कन्धार से लेकर कन्याकु तक और बिलोचिस्तान से लेकर आसाम तक विस्तृत था। फिर भी बिना किसी यु किए हुए यह महान साम्राज्य अशोक की छत्रछाया में अडिग खड़ा रहा। इ समस्त स्थानों में शान्ति बनी रही। यह इतिहास की एक विचित्र घटना परन्तु यदि हम उस समय के धार्मिक तथा सामाजिक ढांचे को देखें तो हम इ को आसानी से समझ सकेंगे। एक धर्म और एक भाषा ने राष्ट्र को एक ही सूत्र बाँध दिया था और साथ ही साथ अशोक की महानता ने इस सूत्र को दृ प्रदान की थी। अर्थ यह कि बुद्ध धर्म ने देश में एकता की भावना को श प्रदान की।

(८) बौद्धिक स्वतन्त्रता—प्राचीन हिन्दु काल धर्म का ठेकेदार पुरोहि वर्ग था। वेद ईश्वरीय ग्रंथ थे तथा कर्मकाण्ड ऐसी विधियां थीं जो सब के लि माननीय थीं। उन सब की प्रमाणिकता को चुनौती नहीं दी जा सकती थी जिस फल यह हुआ कि व्यक्तित्व का विनाश होगया। साधारण विवेक भी जंग खाने लग और बौद्धिक उन्नति के पैरों में बेड़ियां पड़ गईं। प्रथम बार बुद्ध जी ने इस रुकी हुई प्रगति को उकसाया। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि गुरु की बात इसलिये ही न मान जाओ कि तुम्हारा गुरु है अपितु उस बात को अपने विवेक की कसौटी पर कसो यदि सत्य उतरे तो मानो अन्यथा नहीं। इस उपदेश से बौद्धिक क्षेत्र में एक प्रकार की क्रान्ति का उदय हुआ। व्यक्ति ने सोचना तथा विवेक से काम लेना आरम्भ कर दिया। बुद्ध जी के आदेशानुसार उनके उपासकों ने अपनी आत्मा को अपना पथ-प्रदर्शक बनाया। उन्होंने हर बात को अपने विवेक की कसौटी पर कसना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार स्वतन्त्र विचारकों का जन्म हुआ और बौद्धिक स्वतन्त्रता के वातावरण ने अनेकों विद्वानों को पैदा किया। जिनकी विचार धाराएं भारतीय दर्शन क्षेत्र में उच्चतम विकास की ओर संकेत करती हैं। नागार्जुन, वसुबन्धु, धर्मकीर्ति विश्व-दर्शन के क्षेत्र में अपने उदाहरण आप ही हैं।

(९) भारतीय कला—प्राचीन काल में कला तथा धर्म का गहरा सम्बन्ध रहा था। हिन्दुओं में मूर्ति पूजा का रिवाज तो था नहीं। यज्ञ इत्यादि के समय मण्डप बनाने की आवश्यकता होती थी। परन्तु यज्ञ के समाप्त होने पर यह मण्डप भी समाप्त हो जाते थे। और कला का रूप भी स्थायी न हो पाता था। इस कारण से उनकी विशेष रूप से कोई प्रगति न हो सकी। परन्तु बुद्ध काल

में बात बदल गई। बुद्ध जी की प्रतिमायें बनाई गईं और मूर्ति खींचने की ओर कलाकारों का ध्यान आकृष्ट हुआ। बुद्ध धर्म ने इसको बड़ा प्रोत्साहन दिया। देश भर में विहार निर्माण किए गए और इनमें स्थापत्य कला को स्थायी रूप धारण करने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। धार्मिक उपदेश लिखने के कारण अनेकों स्तूप बनवाये गये। इस प्रकार विहार स्तूप-स्तम्भ स्थायी वस्तुयें थी जिनके कारण द्वारा स्थापत्य कला को भी स्थायी रूप प्राप्त होने का अवसर मिला! बुद्ध जी की मूर्तियों को सुरक्षा से रखने के लिए बुद्ध-मन्दिरों को निर्माण किया गया। इन मन्दिरों तथा स्मारकों को भिन्न-भिन्न प्रकार के चित्रों से सुन्दर बनाया गया। इस प्रकार वास्तुकला तथा स्थापत्य कला को विशेष रूप से उन्नति हुई। आज भी इस कला के अद्भुत नमूने साँची, अमरावती के स्तूपों में प्रदर्शित होते हैं। अशोक के स्तम्भ आज भी अलौकिक वस्तुयें प्रतीत होती हैं। कार्ली की बुद्ध गुफायें संसार में विशेष स्थान रखती हैं। अजन्ता, इलौरा बारवरा की गुफायें और उनमें की गई चित्रकारी विश्व-विख्यात वस्तुयें हैं। अमरावती, मथुरा के सुन्दर मन्दिर तथा भव्य भवन बुद्ध कालीन कला की श्रेष्ठता को प्रदर्शित करते हैं। मन्दिरों तथा गुफाओं की चहारदीवारी पर जो चित्र अलंकृत किये गये हैं वह बेजोड़ हैं। इस प्रकार बुद्ध धर्म ने स्थापत्य-कला, चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला को महान प्रगति प्रदान की और उस कला ने विश्व में विशेष स्थान प्राप्त किया। इस क्षेत्र में बुद्ध धर्म की सचमुच अलौकिक देन रही।

(१०) इतिहास पर प्रभाव—बुद्ध धर्म ने भारत के राजनैतिक इतिहासपर भी गहरा प्रभाव डाला। उसने अहिंसा और दया भाव पर इतना अधिक जोर दिया कि जन साधारण तथा राजाओं और सम्राटों परसमान रूप से इनका असर हुआ। सम्राट अशोक ने अपनी समस्त नीति ही बदल डाली, उसने युद्ध न करने की शपथ ग्रहण की और अपने राज्य काल के ३० वर्ष तक कोई युद्ध न किया, इसका परिणाम बड़ा ही गहरा पड़ा। सेना में आलस्य तथा शिथिलता आ गई और जब विदेशी आक्रमण हुये तो यह सेना शत्रु के सन्मुख ठहर न सकी। इसके पैर उखड़ गये और विदेशियों ने विजय प्राप्त की। भारत के आन्तरिक इतिहास पर यह प्रभाव पड़ा कि इतना विस्तृत साम्राज्य बिना एक सुव्यवस्थित तथा संगठित सेना के और युद्धों के एक सूत्र में बांधे रखना सुगम नहीं था। जिस समय महान अशोक का अपना हाथ हट गया उसका साम्राज्य ही छिन्न भिन्न हो गया और देश छोटी छोटी इकाईयों में विभाजित हो गया। इतना ही नहीं मगध का विस्तार भी न हो पाया। बुद्ध धर्म के प्रभाव में आकर सम्राट अशोक ने दन्ड विधान में भी परिवर्तन किया और इसकी कठोरता को ढीला किया पहले जिन अपराधों के लिये कठोर दण्ड दिये जाते थे अब हल्का ही दण्ड देकर अभियुक्तों को छोड़ दिया जाता था।

अशोक ने आदेश जारी किये थे कि राज्य कर्मचारी धर्म प्रचार का कार्य व जनता के प्रति दया का व्यवहार करें। इस प्रकार सरकारी कर्मचारियों का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया था और उनका बहुत अधिक समय धर्म प्रचार में लग लगा था और अनेकों अवसरों पर सरकारी कार्यों में बाधा पड़ती थी।

इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भारत की सैनिक शक्ति में ह्रास उत्पन्न हो गया। भारतवासी युद्धों से नफरत करने लगे। उन्होंने तलवार का प्रयोग बन्द कर दिया। रक्तपात तथा शत्रु संहार से वह बचने लगे, युद्धों की भीषणता से वह भयभीत होने लगे। इस प्रकार भारत से दीर्घ काल के लिये सैनिक भावना का लोप हो गया। और विदेशियों का यहां आक्रमण करते समय अच्छा काम बना। वह सुगमता से विजय प्राप्त कर सके।

(११) भारतीय संस्कृति का प्रसार—सबसे महान कार्य जो बुद्ध धर्म द्वारा हुआ वह था अन्य देशों से भारत का सम्बन्ध तथा भारतीय संस्कृति का अन्य देशों में प्रसार। बुद्ध धर्म के उत्साही प्रचारक भारत के बाहर बुद्ध धर्म का प्रकाश लेकर गये। चीन, जापान, मंगोलिया, तिब्बत, बरमा, जावा, सुमात्रा, श्रादि इन प्रचारकों ने भारतीय संस्कृति प्रसारित की। बुद्ध जी के महान आदर्श ने विदेशी जातियों को समर्पित किये। आगे चलकर बुद्ध जी के उपासक विदेशों से भारत की पवित्र भूमि के दर्शन करने तथा विद्या प्राप्ति के कारण भारत में आये। चीनी यात्री फाहियान १५ वर्ष भारत में गुप्त सम्राटों के काल में रहा और धार्मिक शिक्षा का अध्ययन करता रहा। ह्वानसांग ने छः वर्ष भारत में निवास किया और देश का भ्रमण करता था। इस प्रकार हम देखते हैं कि बुद्ध धर्म द्वारा भारत तथा अन्य देशों में संस्कृति का आदान प्रदान हुआ। भारत की पवित्र भूमि से निकलने वाला अनुपम प्रकाश विदेशों में फैला और भारत ने दूसरों का धर्म गुरु बन कर उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान की। इस प्रकार भारत और अन्य एशियाई देशों में सम्पर्क का सुदृढ़ बुद्ध धर्म द्वारा ही बाधा।

उपरोक्त कथन से साफ प्रगट होता है कि बुद्ध धर्म ने अनेकों प्रकार से भारतीय सभ्यता पर अमिट प्रभाव डाले हैं। इसके इतिहास, संस्कृति को अपनी अनुपम देन दी है। यहां की नैतिकता को बढ़ाया है। यहां को कला को प्रगति प्रदान की नहीं को अपितु उसको स्थाई रूप भी देने का प्रयत्न किया है और यह प्रयत्न सफल भी हुआ है। इसलिये कहा जा सकता है कि भारतीय सभ्यता सदा लिये इस महान धर्म की आभारी रहेगी, आने वाले युग युगान्तरों में बुद्ध धर्म की देन सूर्य के समान देदीप्यमान रहेगी।

Q. Give a critical account of Political, Social Economic and religious condition of India during the Pre mauryan age.

मौर्यों से पूर्व के युग में भारत की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दशा का वर्णन करो।

सातवीं ई० पू० से पूर्व काल की ऐतिहासिक तिथियाँ भारतीय इतिहास में निश्चित करना कठिन है अनुमानों द्वारा इनको निश्चित करने का प्रयास किया गया है परन्तु इसके बाद समस्त इतिहास की तिथियों पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है जैन तथा बुद्ध धर्म के ग्रंथ इस दिशा में अति अधिक उपयोगी तथा सहायक सिद्ध हुये हैं। इन ग्रंथों से ही देश की हर प्रकार की स्थिति का पता चलता है।

राजनैतिक दशा –ई० पू० सातवीं शताब्दी के आरम्भ काल में भारत अनेक छोटे छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। इनमें प्रमुख कौशल, काशी, अवन्ती, वत्स, कौशाम्बी, मगध तथा जनतन्त्र वृज इत्यादि लगभग सोलह राज्य थे। तत्पश्चात् मगध राज्य का उत्कर्ष आरम्भ हुआ। नाग वन्श तथा नन्द वन्श ने अपनी छत्रछाया में मगध राज्य का विस्तार किया और भारत में यह सबसे शक्तिशाली साम्राज्य बन गया। इसी समय पंजाब का अधिकतर भाग ईरान के सम्राट दारा प्रथम (Darius I) के साम्राज्य का एक प्रान्त था जहां से लगभग डेढ़ करोड़ रुपया ईरान को जाता था। ईरानी साम्राज्य के दुर्बल होने पर पंजाब में कई छोटे राज्य बन गये थे जिनमें पोरस का राज्य तथा तक्षशिला के राज्य प्रसिद्ध थे। सिकन्दर के आक्रमण के समय तक्षशिला के राजा ने उसकी आधीनता स्वीकार कर ली परन्तु पोरस ने यूनानी आक्रमण को रोकना चाहा और कर्री के मैदान में युद्ध हुआ परन्तु विजय यूनानियों की ही हुई। पोरस से प्रसन्न होकर सिकन्दर लौटते समय पोरस का राज्य उसी को लौटा गया।

मगध का राज्य ई० पू० ३२१ में चन्द्रगुप्त मौर्य ने चाणक्य की सहायता से नन्द वन्श को परास्त करके अपने आधिपत्य में कर लिया और पञ्जाब से यूनानियों को खदेड़ एक महान साम्राज्य की नींव डाली।

मौर्य साम्राज्य के उदय से पूर्व ३०० वर्ष तक राजनैतिक दृष्टि से भारत अनेक छोटे छोटे राज्यों में विभाजित था। कई गणतन्त्र भी थे। राजा को बड़ी शक्तियां तथा सुविधायें प्राप्त रहती थीं परन्तु उसको जनमत का आदर करना भी पड़ता था। राज्य में कई प्रकार के कर लगाये जाते थे। भूमि कर प्रधान कर था। उत्तराधिकारी के जन्म समय पर भी एक प्रकार का कर लगाया जाता था। जंगल की भूमि तथा बिना स्वामी की सम्पत्ति पर राजा का स्वत्व होता था। व्यापारी लोग चुंगी कर देते थे।

राजा कुलागत नियम के अनुसार बनता था। परन्तु कभी कभी निर्वाचन पद्धति को भी काम में लाया जाता था। राजा भी अपने उत्तराधिकारी को मनोनीत करता था। निर्वाचित राजाओं का ग्रंथों में कई स्थानों पर विवरण आता है।

राजा के अतिरिक्त राज्य के दूर के भागों में प्रान्तपति (Governor) थे। इस पद पर बहुधा राजकुमार या राजवंश के आदमी रक्खे जाते थे। कभी राज सभा का कोई भी सदस्य इस पद पर नियुक्त कर दिया जाता। यह पद बड़ा ही महत्वशाली होता था। दूसरा महत्वपूर्ण पद पुरोहित का होता। तीसरा उच्च अधिकारी सेनापति था। इस पद पर भी बहुधा राज का ही आदमी रक्खा जाता था। सेनापति कभी कभी न्याय कार्य करता था। राजा को सहायता के लिये मन्त्री परिषद् होती थी जिसके सदस्य सेनापति, पुरोहित तथा अन्य मन्त्री हुआ करते थे। इस परिषद् की राय से ही राजा कार्य करता था। इसके सदस्यों का राज भर में बड़ा सम्मान रहता था। इस युग की एक नई शासन व्यवस्था उस समय उत्पन्न हुई जब महामात्र नामी उच्च अधिकारी वर्ग का जन्म हुआ। इस प्रकार की संस्था वैदिक काल में नहीं थी और मौर्य काल के पश्चात् भी इसका लोप हो गया। महामात्रों के अन्तर्गत में अनेकों प्रकार के काम रहते थे। कुछ न्याय विभाग में तथा कुछ सेना सम्बन्धी कार्य करते थे।

न्याय विभाग का सर्वोत्तम अधिकारी राजा स्वयं था। परन्तु न्यायाधीश उसकी ओर से सारा कार्य करते थे। इस विभाग में अनेकों अधिकारी काम करते थे। यह विभाग राज्य का एक महत्वपूर्ण विभाग था। सेना की व्यवस्था अच्छी थी। इसमें पैदल, घुड़सवार, हाथी तथा रथ सम्मिलित थे। उच्च अधिकारी हाथियों तथा रथों में सवार होकर युद्ध करते थे। युद्ध कला में भारतीय बड़े निपुण थे।

उसी समय कुछ राज्यों में प्रजातन्त्र प्रणाली को भी अपनाया गया था। वह 'गण' या 'संघ' कहलाते थे। यह दो प्रकार के थे। एक वह जो सार्वभूमि थे तथा दूसरे वह जो किसी अन्य सार्वभौम राज्य के अधीन रह कर स्वायत्त शासन के लाभ उठाते थे। इस प्रकार के राज्यों में केन्द्र में एक निर्वाचित परिषद् कार्य करती थी। उसका काम कानून बनाना भी था। केन्द्रीय सभा के अतिरिक्त अन्य स्थानों में भी निर्वाचित सभायें होती थीं। इन राज्यों का शासन चलाने का कार्य एक प्रधान अथवा कई प्रधान व्यक्तियों द्वारा चलाया जाता था। यह प्रमुख व्यक्ति 'संघ मुख्य' या 'राजन्' कहलाते थे। इनके अतिरिक्त दूसरे अधिकारी भी होते थे जो 'उप राजन्' कहलाते थे और पुलिस अधिकारी भी राज्य की सुरक्षा करते थे।

सामाजिक दशा—देश में अधिकतर जनता ग्रामों में निवास करती थी, परन्तु वैभवशाली नगर भी देश के एक छोर से दूसरे छोर तक फैले हुये थे। साधारण लोग अपने मकान कच्चे बनाते थे, परन्तु धनिक लोगों के मकान साफ, खुले हुये और आकर्षक होते थे। इनमें सुख तथा वैभव का पूरा पूरा ध्यान रक्खा जाता था। नगरों में मुख्यतः व्यापारी तथा भिन्न भिन्न प्रकार के कलाकार रहते थे।

इकें साफ, सुथरी और खुली हुई होती थी। मकान कई कई मञ्जिल के भी होते । राजमहल, न्यायालय, परिषद् भवन विशेष रूप से वैभवशाली बनाये जाते थे। रों में हर प्रकार की सुविधा के साधन जुटाये जाते थे। जैसे—मनोरंजन के लिये ग बगीचे, जुआ घर, नृत्य भवन, आनन्द उठाने वाले अन्य स्थान इत्यादि। बड़े सार्वजनिक प्रयोग के गगन चुम्बी भवन तथा राज महल आमतौर से लकड़ी र पाषाण के बनाये जाते थे और उन पर चित्र बनाये जाते थे।

लोग सुख का जीवन व्यतीत करते थे। वह जीवन के प्रति उदासीन न थे। को आमोद प्रमोद से बड़ी रुचि थी। संगीत तथा नृत्य के वह शौक़ीन थे। पशुओं युद्ध, नरों की कलायें, आखेट करना, कसरत करना इत्यादि में उन लोगों की बड़ी चि थी। पुरुष भी कई प्रकार के आभूषण प्रयोग में लाते थे। कानों में बालियों रिवाज था स्त्रियां भिन्न भिन्न रंगों की चूड़ियां पहनती थी। कुलीन वर्ग की न्यायें हार, कन्दौरे, नुपुर, पायजेब प्रयोग में लाती थीं। यह रंग बिरंगे सूती तथा शमी बस्त्र धारण करती थीं।

परिवार मिले जुले रहते थे, घर का पिता घर का स्वामी माना जाता था। रवार के सब सदस्य उसके अधीन रहकर कार्य करते थे। सन्तानोत्पत्ति पर समारोह नाया जाता था। शिशु के माता पिता को उपहार दिये जाते थे। लड़के को कन्या मुकाबले में अधिक खुशी मनाई जाती थी। समारोहों के अवसरों पर दान दिया जाता था। अतिथि सत्कार करना गृहस्थ जीवन का मुख्य कर्म समझा जाता था। लोग ईमानदार थे और पवित्र जीवन बिताते थे।

लोगों का खाना स्वास्थ्यवर्धक होता था। मद्यपान का अधिक रिवाज न था। मांस का प्रयोग कम हो चला था। यूनानियों के कथनानुसार पंजाब प्रदेश में मांस प्रयोग अधिक था। इस प्रदेश के लोग मांस को कई प्रकार से बनाते थे। चावल भी प्रयोग में आता था। बहुधा भोजन साथ साथ किया जाता था गाय की इज्जत होने लगी थी।

समाज में नारी सम्मान उस स्तर से गिर चुका था जो वैदिक काल में था। स्त्रियां शिक्षा क्षेत्र में अब पिछड़ गई थीं। ऐसी स्त्रियां अवश्य थी जो उच्च शिक्षा प्राप्त करती और विद्वानों की पंक्ति में स्थान प्राप्त करती थीं वे धार्मिक वाद-विवादों में भाग लेती थीं। कई तो सांसारिक मोह को छोड़ कर वैराग्य भी धारण कर लेती किन्तु साधारणतया नारी वर्ग में शिक्षा का प्रचार कम हो गया था। बाल विवाह प्रथा चल चुकी थी। सती का रिवाज था, यद्यपि इसमें कठोरता उत्पन्न न हो ई थी। एक सेनापति की स्त्री के सती होने का यूनानियों ने वर्णन किया है। सी स्त्रियों का भी उल्लेख आया है जो अपने सम्बन्धियों के युद्ध क्षेत्र में मारे जाने र उनके स्थान शस्त्र धारण कर युद्ध क्षेत्र में देश के शत्रुओं का संहार करती थीं।

ऐसी वीरांगनायें या तो विजय प्राप्त करतीं या युद्ध क्षेत्र में ही अपना जीवन बलि दान कर देती थी। परदे की प्रथा न थी केवल राजकुल की स्त्रियां परदेदार पालकियों में बैठती थीं। साधारण स्त्रियां समारोहों, उत्सवों तथा खेल तमाशों में स्वतन्त्रता पूर्वक सम्मिलित होती थीं।

जाति प्रथा धीरे धीरे कठोर हो रही थी और सुगमता पूर्वक पेशे का परिवर्तन नहीं होता था। अन्तर्जातीय विवाह नहीं होते थे, परन्तु फिर भी उच्च वर्गों में विवाहों के उदाहरण मिलते हैं। विवाह के समय जो भोज होते थे उनमें एक ही पंक्ति में बैठ कर क्षत्रिय, ब्राह्मण तथा वैश्य साथ साथ भोजन करते थे। शूद्र अलग भोजन करते थे। उनके साथ शादी विवाह के सम्बन्ध निषेध थे। यद्यपि बुद्ध तथा जैन धर्म जाति प्रथा पर कठोर आघात कर रहे थे, फिर भी यह प्रथा बराबर प्रचलित थी।

सिकन्दर के समकालीन लेखकों ने पंजाब में फैले हुये अनेकों रिवाजों का वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है कि पंजाब में सौन्दर्य की बड़ी महिमा थी। यदि पैदा होते समय बच्चा अङ्गहीन या अस्वस्थ होता था तो उसको त्याग दिया जाता था। विवाह के समय मुख्य ध्यान सौन्दर्य और शारीरिक आकर्षण पर दिया जाता था, ऊंच तथा नीच का ध्यान भी कभी कभी नहीं रक्खा जाता था, बहु पत्नी विवाह भी हो जाते थे, समाज में ब्राह्मण का बड़ा आदर होता था।

आर्थिक दशा —देश की आर्थिक दशा अच्छी थी। कृषि मुख्य पेशा था। ग्राम के लोग अधिकतर कृषि में ही संलग्न रहते थे। प्रत्येक परिवार अपने खेतों में उन श्रमिकों द्वारा जो शूद्रों में से लगा लिये जाते थे, खेती करता था। ग्राम के चारों ओर छोटे छोटे खेत होते थे। बड़े खेतों का ही अभाव न था। ग्राम का शासन स्वयं ग्रामीण ही कर लेते थे। ग्राम भोजक अथवा ग्राम का मुखिया एक परिषद् द्वारा शासन का कार्य करता था। पैदावार का $\frac{1}{6}$ से लेकर $\frac{1}{12}$ भाग कर के रूप में राजा को दिया जाता था। इसका भार भी ग्राम भोजक पर रहता था। कर पैदावार के रूप में लिया जाता था, सरकारी अनाज सुरक्षित रख लिया जाता था जो अकाल के समय जनता की सहायता के रूप में काम आता था। कृषि के अतिरिक्त पशुओं के पालने का काम भी होता था। गोपालक ग्राम के पशुओं को अनेक स्थानों पर चराने ले जाते थे। ग्रामवासी सादा जीवन व्यतीत करते थे। वे अपनी समस्त आवश्यकतायें स्वयं पूर्ण कर लेते थे।

परन्तु इसके साथ साथ नगर जीवन भी उन्नतिशील था। धीरे धीरे बड़े बड़े नगर फैलते जा रहे थे। यूनानियों ने बहुत से नगरों का उल्लेख किया है। मस्सग, ओरनस, तक्षशिला, संगल, पत्तल इत्यादि नगरों का वर्णन आया है।

समृद्धिशाली नगर देश की आर्थिक स्थिति तथा सुदृढ़ स्थिति का सजीव प्रमाण थे। इनकी सुरक्षा के हेतु चारों ओर दृढ़ प्राचीर बनवाने की व्यवस्था की गई थी।

लोग भिन्न भिन्न प्रकार के धन्धे करते थे। सब दिशाओं में धन्धे बढ़ रहे थे। कोई भी किसी प्रकार का पेशा कर सकता था। यह आवश्यक था कि कुछ पेशे अन्य पेशों से निम्न समझे जाते थे जिनको उच्च जाति के लोग अपनाने में संकोच अनुभव करते थे। जैसे—चर्म का काम, मछुवे का काम, सपेरे का काम, गाने तथा नाचने का काम, नाई का काम तथा माली का काम ये सब काम निम्न समझे जाते थे। हस्त शिल्पकारों ने अपने कार्यों में अच्छी दक्षता प्राप्त करली थी। अधिकतर उद्योग धन्धे परिवारों तक ही सीमित रहते थे जिसके कारण पेशे से ही जातियों का निर्माण होने लगा था। पेशे कुलागत होते थे। एक ही पेशे वाले अपने अनेक हितों के कारण संघ अथवा श्रेणी बना लेते थे। उन संघों के प्रधान यानी सभापति होते थे जो 'प्रमुख' 'ज्येष्ठक' या श्रेष्ठिन् कहलाते थे। इन संघों के उपप्रधान भी होते थे। यह संघ अपने अपने संघ विधान भी रखते थे। इन संघों में बड़ी सीमा तक अनुशासन रहता था, संघ का प्रत्येक सदस्य संघ के नियमों के पालन करने के लिये बाध्य होता था। संघ व्यवस्था सुदृढ़ रूप धारण करती जा रही थी।

व्यापार उन्नति पर था। देश के अन्दर तो व्यापार चलता ही था विदेशों के साथ भी खूब व्यापार था। देश के अन्दर सामान लद्दू पशुओं तथा बैल गाड़ियों के द्वारा ढोया जाता था। रास्तों में अवश्य कठिनाई पड़ती थी। ऐसे रास्तों पर जो सुरक्षा के दृष्टिकोण से खराब तथा खतरनाक होते थे व्यापारी तथा साधारण पथिक काफले बनाकर चलते थे और किराये के सशस्त्र सिपाही साथ ले लेते थे। भारत में इस प्रकार के अनेकों व्यापारी रास्ते थे। एक बड़ा प्रसिद्ध पथ श्रावस्ती, नालन्दा, राजगृह जैसे औद्योगिक केन्द्रों को जोड़ता था। फिर तक्षशिला होता हुआ मध्य एशिया तक जाता था। दूसरा रास्ता राजगृह से श्रीवास्ती होकर गोदावरी तक जाता था। एक दुर्गम पथ नर्वदा नदी से राजस्थान में होता हुआ सिन्ध तक जाता था। श्रावास्ती, कौशाम्बी, बनारस और उज्जैन प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र थे। थल मार्गों के समान जल मार्गों द्वारा भी खूब व्यापार चलता था।

भारत के बाहर विदेशों से अच्छा व्यापार था। एक प्रसिद्ध रास्ता तक्षशिला से मध्य एशिया में होता हुआ रूम सागर के तटीय प्रदेशों में पहुँचता था। जल मार्ग फारिस की खाड़ी से लाल सागर में होकर था। लंका, बर्मा, जावा, सुमात्रा तथा मलाया प्रदेशों से भारत का व्यापार जलमार्ग द्वारा होता था। भारत में कई प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। जैसे भृगुकच्छ, भरौंच, सूरपरक (सौपारा, बम्बई के उत्तर में) और ताम्रलिप्त (बंगाल में तामलुक) इत्यादि। नदियों के किनारे अनेकों वैभवशाली

व्यापार के केन्द्र थे। जैसे गंगा पर बनारस तथा पाटलीपुत्र, जमुना पर और सरयू पर अयोध्या, राप्ती पर श्रावस्ती, सिन्ध पर पटल इत्यादि।

निर्यात की मुख्य मुख्य वस्तुयें यह थी, रेशम, मलमल, कालीन, बने हुये वस्त्र, रत्न जटित आभूषण, हाथी दांत तथा हाथी दांत की बनी वस्तुयें, दवाइयाँ इत्यादि। ग्रामों में सिक्कों का अधिक रिवाज न था, परन्तु तथा विदेशों में कई प्रकार के सिक्के काम में आते जाते थे। जैसे—तांबे का सि 'कर्षापण' १४६ ग्रेन से कुछ अधिक होता था। चांदी का 'कर्षापण' ३२ ग्रे लगभग था। 'निष्क' सोने का सिक्का था। तांबे के छोटे सिक्के 'मासक' 'काहनिक' होते थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यापार अच्छी उन्नति कर रहा देश धनधान्य से पूर्ण था। विदेशों से हमारे कीमती सामान के बदले चांदी सोना लिया चला आता था। इस व्यापार के कारण यहां अनेकों नगर उत्पन्न रहे थे। उद्योग धन्धे दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति कर रहे थे। देश का व्या वर्ग माला माल हो रहा था। वह नगरों के वैभवशाली मकानों में आनन्द का जी व्यतीत करता था। नगरों में सुख तथा सुविधा के सब साधन एकत्रित रहते व्यापार के कारण उद्योग भी प्रगतिशील थे और वह बराबर बढ़ रहे थे।

धार्मिक दशा—इस समय तक आते आते हिन्दू धर्म में अनेकों दोष आ हो गये थे, कर्मकाण्ड-यज्ञों के भार से जन साधारण ऊब रहे थे। क्रिया-विधि कठोर होने के कारण लोगों में अप्रिय हो रही थीं। ब्राह्मणों का प्रभुत्व असाधारण रूप से अधिक बढ़ गया था। उनसे जनता भयभीत रहती थी। जाति प्रथा में कठोरता उत्पन्न हो चली थी। समाज इस प्रथा के कारण विभाजित होता चला जा रहा था। इस प्रकार के अनेकों कारणों से समाज में सुधार आन्दोलनों की एक लहर उत्पन्न हुई छठी शताब्दी इसी प्रकार के आन्दोलनों से भरी पड़ी है। [इन] आन्दोलनों का नेतृत्व महावीर स्वामी तथा गौतम बुद्ध ने किया। इन्होंने जैन तथा बुद्ध धर्म चलाये। इन्होंने उन तमाम दोषों को छोड़ दिया जो ब्राह्मण धर्म में आ गये थे, इन्होंने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। वेदों की प्रामाणिकता को चुनौती दी। संस्कृत को छोड़ जन साधारण की भाषा को अपने प्रचार का साधन बनाया। कर्म सिद्धान्त पर भारी बल दिया। इस प्रकार यह दोनों नवीन धर्म लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे। बुद्ध धर्म बराबर जन साधारण के दिलों में घर कर रहा था। उसको राजा भी मानने लगे थे। बिम्बसार तथा उसका पुत्र अजातशत्रु बुद्ध जी के मित्र थे और उनके धर्म में विश्वास रखते थे।

एक ओर बुद्ध धर्म का प्रसार हो रहा था, दूसरी ओर ब्राह्मण धर्म भी अपनी खोई हुई सत्ता को फिर से स्थित करने की सोच रहा था। इनके अतिरिक्त अन्य बहुत से छोटे छोटे समुदाय धार्मिक क्षेत्र में अपना अपना प्रचार कर रहे थे। लिहाजा

समकालीन इतिहासकारों ने लिखा है कि पन्जाब प्रदेश में ब्राह्मण धर्म का विशेष ...त्व था। अपने गंभीर ज्ञान, पवित्र जीवन, त्याग तथा तप के कारण हिन्दू ऋषि ...र तथा सम्मान के पात्र थे। राजा भी उनका आदर करते थे और उनके आदेशों ...चलते थे। इनके अतिरिक्त बुद्ध धर्म के साधु संत भी वनों में रहकर जीवन निर्वाह ...ते थे। जन साधारण में अब भी देवताओं की पूजा होती थी और गंगा की ...त्रता सबके लिये मान्य थी। अनेकों वृक्ष पवित्र माने जाते थे जिनकी पूजा भी ...जाती थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जनता में धार्मिक दृष्टि से स्थिरता न थी। ...का विभाजन हो रहा था वह सम्प्रदायों में विभाजित हो रही थी। उसके विचारों ...चिर्ण चल रहा था।

Q. What do you know about the administration of Mauryan ...perors? Express your opinion on the fact that it was based on ...d scientific principles of government.

मौर्यों के शासन प्रबन्ध के विषय में तुम क्या जानते हो? इस विषय ...अपना मत प्रगट करो कि यह स्वस्थ वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित था।

मौर्य सम्राट जन प्रिय सम्राट थे वह जनता को अपने पुत्रों की तरह प्रिय ...ते थे, और जन सेवा ही अपना परम कर्तव्य समझते थे। साथ ही साथ वह ...कुश भी थे। राज्य की समस्त सत्ता उनमें ही केन्द्रित थी। उनका निर्णय ...म होता था। जनता उनको ईश्वर का रूप मानती थी। अशोक ने 'देवांग ...अर्थात देवताओं का प्यारा उपाधि ग्रहण की थी। वह निरंकुश होते हुये भी ...चारी नहीं थे। उनका राज्य शासन उदार निरंकुश शासन था। वह पवित्र ...शों से प्रेरित रहते थे। चन्द्रगुप्त के गुरु चाणक्य ने अर्थशास्त्र में राजाओं के ...यों के विषय में लिखा है "सुकर्म वह नहीं है जिससे केवल राजा का मनोरञ्जन ...वास्तविक सुकर्म वह है जिससे प्रजा सुखी व प्रसन्न हो' "In the happiness ... his subjects lies the happiness of the king, in their good ... own good and not in what is pleasing to him. He must find ... pleasure in the pleasure of his subjects" यही आदर्श मौर्य सम्राटों ...प्रेरणा देता था और उनके सब कार्य इसी आदर्श से प्रभावित रहते थे। वह घूम घूम ...प्रजा की दशा को देखते और उसकी कठिनाइयों को समझ कर दूर करने के प्रयत्न ...थे। वह देश की धार्मिक तथा सामाजिक परम्पराओं का आदर करते थे। ...का शासन 'उदार निरंकुश' प्रकार का कहा जा सकता है। राजा के तीन मुख्य ...य समझे जाते थे। (१) शासन सम्बन्धी (२) न्याय सम्बन्धी (३) सैनिक कार्य। ...न कार्यों में वह विदेशी राजदूतों से भेंट करना और विदेशों के लिये अपने

राजदूतों की नियुक्ति करता था। अपने शासन के लिये संपूर्ण अधिकारियों की नि करता था। अर्थ-विभाग का निरीक्षण करके उसका उचित संचालन करता था। गु द्वारा साम्राज्य के विविध भागों से समाचार प्राप्त करता था और उनके अनुसार देता था। न्यायाधीश की हैसियत से वह अपीलों की अंतिम अदालत का कार्य करता देश के विविध भागों के न्यायालयों की अपीलें सम्राट के यहां आती थीं, वह इन को स्वयं सुनता और उन पर अपने निर्णय देता था। वह जनता द्वारा प्रस्तुत पत्र भी लेता था और उनपर भी अपने निर्णय देता था। उसका निर्णय अन्तिम हो जिसके विरुद्ध कोई अपील नहीं हो सकती थी। सम्राट प्रायः सेना नायक का का करता था। इस प्रकार सम्राट का विस्तृत कार्य था। "Administration not be the work of one man just as one wheel can not d cart." इसलिये राजा की सहायता के लिये मन्त्रि-परिषद होती थी। सदस्यों की संख्या १२ से २० तक होती थी, आवश्यकता के अनुसार यह घट बढ़ जाती थी। यदि किसी विषय पर मत प्राप्त करना होता था तो अनुप सदस्यों का मत पत्र द्वारा मंगा लिया जाता था। मन्त्रि-परिषद का कार्य म देना होता था। सम्राट को मन्त्रियों की बात मानना अनिवार्य नहीं था कि वह प्राय मन्त्रियों की सलाह से ही कार्य करता था। मन्त्रि परिषद से अधि सदस्य अमात्य नामक अधिकारियों में से चुने जाते थे। मन्त्रि-परिषद के कार्य होते थे सम्राट को मन्त्रणा देने के अतिरिक्त उसके यह कार्य थे—(१) का जो काम आरम्भ न हुआ हो उसे आरम्भ कराना। (२) आरम्भ हुये काम पूरा कराना। (३) पूर्ण कार्य में और वृद्धि कराना। (४) सब कार्यों की पूर्ति लिये साधन जुटाना और उन साधनों का उचित रीति से प्रयोग कराना। इस के विषय में कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में इस प्रकार लिखा है, "राज्य त तभी रह सकता है जब कि उसे राज्य कर्मचारियों की सहायता प्राप्त हो अन वह एक पहिये की भांति नहीं चल सकता" शासन को सुचारु रूप से चलाने के लि नीचे से ऊपर तक समस्त अधिकारियों में पूर्ण सहयोग होना आवश्यक है।

सरकार को सुदृढ़ बनाने के हेतु एक प्रकार की सिविल सर्विस की स्थ की गई थी। इन शासन संचालन करने वाले उच्च अधिकारियों को अमात्य क थे। अशोक ने आगे चल कर धार्मिक कार्यों के लिये धर्म महामात्रों की नियुक्ति थी। इस सर्विस के सदस्यों की नियुक्ति सब उच्च पदों पर की जाती थी। अं शासन की सिविल सर्विस से यह प्राचीन सर्विस किसी प्रकार कम न थी। इस संचालन के लिये एक सुव्यवस्थित सचिवालय था जिसके अनेकों विभाग थे। सचिवालय का कार्य बड़ी योग्यता से चलाया जाता था। प्रत्येक विभाग एक

धिकारी अथवा सुपरिन्टेन्डेण्ट के आधीन होता था। कौटल्य ने इस प्रकार के ३० विभागों का उल्लेख किया है। जैसे शिक्षा विभाग, सिंचाई विभाग आदि।

उच्च अधिकारी महामात्र या आमात्य होते थे इनके अतिरिक्त देहातों के लिये राजुक नगरों के लिये अस्त्यनोमी जिलों के लिये अग्रनोमी नामक अधिकारी होते थे। अन्य प्रकार के निम्न पदाधिकारी भी होते थे जैसे लिपिकार जो लेखक का कार्य करता था या प्रतिवेदक जो सम्राट को सूचना देता था।

कौटल्य ने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र में १८ उच्च पदों का उल्लेख किया है। इनमें से पुरोहित, युवराज, मन्त्रि, सेनापति अधिकारी पद अधिक प्रभावशाली थे। इन पदाधिकारियों में से ही मन्त्रि परिषद के सदस्यों की नियुक्ति होती थी। उच्च तथा निम्न पदाधिकारी बनाने के लिये जाति भेदभाव का कोई ध्यान नहीं किया जाता था वैश्य तथा यवन भी उच्च पदों पर नियुक्त किये जाते थे। शासन की दृष्टि में देश का प्रत्येक व्यक्ति समान था और योग्य व्यक्ति चाहे जिस वर्ग का क्यों न हो उच्च से उच्च पद पर नियुक्ति प्राप्त कर सकता था। इसी कारण से मौर्यों के शासन को समस्त जनता का सहयोग प्राप्त था। यह बड़ा ही सुव्यवस्थित शासन था। इसका रूप आधुनिक प्रकार का था। डा० स्मिथ ने बड़े ही रोचक शब्दों में इस शासन की प्रशंसा इस प्रकार की है।

"मौर्य शासन पद्धति एक उच्चकोटि की तथा पूर्ण सरकारी मशीन थी जिसमें प्रत्येक विभाग में विभिन्न श्रेणी के कर्मचारी अपने स्पष्ट लिखित कर्तव्यों के अनुसार कार्य करते थे वह पूर्णतया दृढ़ तथा सुचारु रूप के चलने वाली थी जो कि बाहरी तथा आन्तरिक शान्ति रखने में पूर्णतया सफल थी यह कार्य कुशलता से वर्तमान सरकार के समान थी तथा अकबर की नौकरशाही सरकार से कहीं अधिक उत्तम थी' स्मिथ का यह कथन सर्वथा सत्य है क्योंकि यह शासन उन समस्त सिद्धान्तों को आधार भूत समझता था जिन पर वर्तमान समय की अच्छी से अच्छी सरकार बनाई जाती है।

प्रान्त की सरकार—मौर्यों का साम्राज्य शासन सुविधा के लिये प्रान्तों में विभाजित था। इन नगर में मुख्य यह थे तक्षशिला, उत्तरी प्रान्त, उज्जैन, पश्चिमी प्रान्त, स्वर्ण गिरि, दक्षिणी प्रान्त और तोशाली प्रान्त के केन्द्र थे, प्रान्त जिलों में विभक्त था, जिले आहार-विषय-प्रदेश नामों से पुकारे जाते थे। प्रान्तों का उच्चतम अधिकारी 'कुमार' कहलाता था। वह राजकुमार या राजवंश का ही सदस्य होता था। उसकी नियुक्ति सम्राट स्वयं करता था। सम्राट द्वारा उसको आदेश दिये जाते थे। उसकी सहायता के लिये महामात्र होते थे। इन महामात्रों के निरीक्षण के हेतु समय समय पर राजधानी से विशेष पद अधिकारी भेजे जाते थे। राजधानी के आस पास का प्रदेश स्वयं सम्राट के द्वारा सञ्चालित होता था।

इमारत का भरपूर प्रबन्ध था। भंडार तथा नई सेना के साथ साथ रहती थी। होने वाला विभाग करने वालों को बड़ी सुन्दरता से करता था।

सेना का हाथी विभाग बड़ा दृढ़ था। एक हाथी पर महावत के अति-रिक्त ३ धनुर्धारी रहते थे। रथ में २ सैनिक रहते थे। सेना में ६०,०००० पैदल, ३०,००० घुड़सवार ८०,००० रथ तथा ६००० हाथी थे। यह एक विशाल सेना थी। यूनानियों ने मुक्त कण्ठ से इस सेना के युद्ध कौशल की प्रशंसा की है। गुप्त के सैन्य संचालन से वह बड़े ही प्रभावित हुए थे।

आय—राज्य की आय के भिन्न-भिन्न साधन थे। मुख्य साधन लगान का था यह उपज का ¼ होता था। यह ग्राम अधिकारियों द्वारा एकत्र किया जाता था। अन्य कर इस प्रकार थे—विक्रय कर, मदिरा कर, बन्दरगाहों पर कर, मोती निकालने पर कर, मछलियों के पकड़ने पर कर, विभिन्न दण्ड के जुर्माने इत्यादि। जमीन का लगान पैदावार या धन दोनों प्रकार में वसूल किया जाता था। राज्य कर वसूल करने के लिए भिन्न भिन्न कर्मचारी होते थे। यह समाहर्त्ता कहलाते थे। अधिकारियों पर भी कर लगाया जाता था। पशुओं पर भी कर लगता था। जो वस्तुयें नगर में आती या बाहर जाती उन पर भी चुंगी जैसा कर लगाया जाता था। इन भिन्न करों द्वारा अपार सम्पत्ति एकत्रित होती थी। इस आय का अधिकतर भाग सेना पर खर्च होता था। शेष सड़कों की मरम्मत, सिंचाई का प्रबन्ध आदि में लगता था, कारीगरों, ब्राह्मणों तथा विशेषज्ञों को सहायता दी जाती थी। इस प्रकार मौर्यों की कर व्यवस्था वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित थी। वर्तमान काल में कुछ परिवर्तनों सहित इसी नीति को अपनाया गया है। किसी भी 'कर' प्रणाली से यह किसी दशा में भी कम न थी।

सिंचाई व्यवस्था भी उत्तम प्रकार की थी। इसके लिए अलग सरकारी विभाग था जो नहरों तथा तालाबों का निर्माण कराता था। तथा अन्य साधन जुटाता था। सिंचाई होने वाली भूमि की नाप करता था। मेगस्थनीज लिखता है कि विशेष कर्मचारी जमीन की नाप करते तथा तालाबों को देख भाल करते थे। चन्द्रगुप्त के प्रान्तीय गवर्नर ने जूनागढ़ के प्रदेश में सुदर्शन नहर का निर्माण इसी युग में कराया था। मेगस्थनीज के कथनानुसार देश में अकाल नहीं पड़ते थे। इस सब का श्रेय सिंचाई विभाग पर था।

सड़कें—इन सम्राटों ने सड़कों की देख भाल के लिए एक अलग विभाग का निर्माण किया था। इसका काम सड़कों की मरम्मत करना, नई सड़कें बनवाना था। सड़कों पर २००० गज पर पत्थर गाड़ा जाता था। सड़कें ३२ फीट तक चौड़ी होती थीं, कभी-कभी यह चौड़ाई दूनी, करदी जाती थी। दक्षिण की ओर जाने वाली

ड़कों का बड़ा महत्व था क्योंकि उनके द्वारा मोती, जवाहिरात, सोना आता था।
क सड़क पाटलिपुत्र को तक्षशिला से मिलाती थी। सड़कों के दोनों ओर वृक्ष
गाये गये थे। जगह-जगह विश्राम गृह तथा कुएं बनाये जाते थे। अशोक का
ान इस ओर बहुत अधिक था। नदी तथा नहरें भी यातायात का साधन थी।
र्यों ने नौवाहिनी विभाग का भी निर्माण किया था उस का कार्य एक मन्त्री
ारा होता था। सरकारी पोत बनवाये जाते थे जो सामान लाने ले जाने के लिए
ाये पर दिये जाते थे।

जन-गणना—मैगस्थनीज तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र द्वारा ऐसा पता
ला है कि जन-गणना का एक स्थायी विभाग था। प्रत्येक ग्राम अथवा नगर
जन-गणना का हिसाब रखता था। कृषकों, ग्वालों, शिल्पकारों, व्यापारियों,
ासों, प्रत्येक परिवार के युवकों तथा वृद्धों का लेखा-जोखा रहता था। उनकी
ाय-व्यय का हिसाब भी सरकार रखती थी। बाहर से आने वालों पर भी निगा.
खी जाती थी।

स्वास्थ्य—जनता के स्वास्थ्य का भी बड़ा ध्यान रखा जाता था। बड़े-बड़े
औषधालय बनवाये गये थे। औषधियों के बांटने का उचित प्रबन्ध था। अर्थशास्त्र
में शल्य मन्त्रों, शल्य-चिकित्सकों, विष-विशेषज्ञों तथा नर्सों का उल्लेख आता है।
सफाई का अच्छा प्रबन्ध था। सड़क या सार्वजनिक स्थानों पर, कुओं या तालाबों
के आस-पास कूड़ा-करकट नहीं डाला जाता था। ग्राम में या नजदीक मुर्दा पशु
भी नहीं डाल सकते थे। मन्दिरों, राजकीय भवनों, तीर्थ स्थानों के समीप मल-मूत्र
नहीं किया जा सकता था। इस प्रकार स्वास्थ्य तथा सफाई बड़ा सुन्दर प्रबन्ध था।

कार्य क्षेत्र—इस काल के शासन के दृष्टिकोण की यह महत्ता है कि अब
तक शासन के दो कार्य-क्षेत्र समझे जाते थे—देश के भीतर शान्ति रखना तथा
विदेशी आक्रमणों को रोकना। परन्तु इस काल में मौर्य सम्राटों ने सरकार का
कार्य-क्षेत्र बहुत ही विस्तृत कर दिया था। अब सरकार का कार्य भिन्न भिन्न
दिशाओं में उन्नति करना था। आर्थिक, भौतिक उन्नति ही नहीं अपितु अशोक ने
तो धार्मिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों को भी अपनी सीमा में ले लिया था। उसने
सरकार में एक नवीन विभाग की स्थापना की थी। इसमें उच्च तथा निम्न
अधिकारियों का काम धर्म प्रचार करना, जनता की नैतिकता के स्तर को ऊँचा
उठाना था। आर्थिक क्षेत्र में उद्योग धन्धों, व्यवसायों को चलाने तथा उन्नत करने
का सरकार पूरा प्रयास करती थी। दस्त शिल्पियों को संरक्षण देती थी। उनको
आर्थिक सहायता की जाती थी। उनका अङ्ग भंग करने वाले या उनको शारीरिक
कष्ट देने वाले को मृत्यु तक का दण्ड देने की व्यवस्था की गई थी। श्रमिक नि

बनाये गये थे। यह नियम आज की नवीन सरकारें भी बना रही हैं परन्तु आज ढाई हजार वर्ष पूर्व इस प्रकार के नियमों का बनना सचमुच एक विलक्षण घटना अनाथों, दरिद्रों विधवाओं की रक्षार्थ सरकारी सहायता दी जाती थी। सड़कें, बांध इत्यादि का निर्माण करके कृषि की उन्नति के प्रयत्न किए जाते थे। इस प्र हम देखते हैं कि मौर्य शासन का कार्य क्षेत्र बहुत ही विस्तृत तथा व्यापक और वह वर्तमान के किसी शासन से भी पीछे न था।

उस शासन ने उन सिद्धान्तों को जन्म दिया जिन का अनुकरण मौर्यों पश्चात् आने वाले सब राजाओं ने किया। बाटों की नाप तोल, उनका निरीक्ष अलाउद्दीन खिलजी ने भी किया था। जमीन की नाप तोल शेरशाह तथा अक ने भी कराई। इतना ही नहीं अंग्रेजी शासन में भी उन्हीं सिद्धान्तों को काम लाया गया था। नवीन युग के आई० सी० एस० उस समय के महामात्यों समानता रखते हैं। वर्तमान काल में स्थानीय स्वशासन उस काल में भी नग तथा ग्रामों में फैला हुआ था पाटलिपुत्र में ३० सदस्यों की पंचायत या परिषद् क करती थी! उस समय का चर विभाग आज के सी० आई० डी० विभाग से कि प्रकार भी कम सङ्गठित न था। उस शासन को यदि आज के शासन से मिलायें त साफ प्रगट होगा कि जो सिद्धान्त मौर्यों ने अपनाये थे वही आज भी अपनाये गये हैं। यह शासन पूर्ण रूप से वैज्ञानिक सिद्धान्तों पेर आधारित था।

Q. Give a critical account of the social and economic condi tion of the people during the Mauryan age.

मौर्य युग में जनता की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति का विवेच नात्मक उल्लेख करो।

इस काल में आते आते वर्ण व्यवस्था स्पष्ट हो चुकी थी। अर्थशास्त्र के अनुसार जनता चार भागों में विभाजित थी, ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य तथा शूद्र। इ वर्णों में कठोरता बढ़ती जा रही थी। एक वर्ग का आदमी दूसरे वर्ग में परिवर्तित न हो पाता था। परन्तु मैगस्थनीज ने जनसाधारण को सात वर्गों में विभाजित किया था। उसके अनुसार दार्शनिक, कृषक, शिकारी, गौ पालक, व्यापारी, शिल्पी, सैनिक, गुप्तचर या निरीक्षक और मन्त्री यह सात वर्ग थे। प्रथम वर्ग अर्थात् दार्शनिकों तथा ब्राह्मणों का कार्य यज्ञ कराना, शुभ मुहूर्त बताना तथा ज्योतिष का हिसाब लगाना था। कृषक अतिसरल स्वभाव के आदमी होते थे, वह शान्ति का जीवन व्यतीत करते थे। शिकारी का काम जंगली पशुओं को मारना तथा हाथी पकड़ना होता था। शिल्पियों को राज्य की ओर से सहायता दी जाती थी। इसी प्रकार अन्य वर्गों के कार्य निश्चित किये गये थे। दार्शनिकों में अनेकों आश्रम बनाकर जंगलों में रहते, कन्द मूल खाकर जीवन निर्वाह करके सदा मनन करते थे। दूसरी मेगस्थनीज भी स्थायी होती थी।

टल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार वैश्य तथा शूद्र दोनों ही कृषि, पशु पालन तथा व्यापार का कार्य कर लेते थे। इससे संकेत मिलता है कि शूद्रों का सम्मिश्रण आरम्भ हो गया था।

समाज में दास प्रथा प्रचलित थी। शिलालेख इसका प्रमाण देते हैं। अशोक ने दास और श्रमिक का भेद बताया था। उसने दासों के प्रति दयाभाव का भाव दिया था। सती प्रथा का आम रिवाज प्रतीत नहीं होता था।

मैगस्थनीज के कथनानुसार जनता का व्यक्तिगत तथा सामाजिक स्तर बहुत ऊँचा था लोग एक दूसरे के प्रति प्रेम भाव रखते थे। एक दूसरे पर श्रद्धा विश्वास रखते थे। अपनी कितनी ही मूल्यवान वस्तु धरोहर के रूप में रखने में तनिक संकोच न करते थे। पाप-पुण्य, लोक-परलोक का इन लोगों को ज्ञान था। वह धर्मपरायण लोग थे, सत्यवादी थे। असत्य का प्रयोग उनके स्वभाव के दूर की वस्तु थी। दोष उनमें तनिक भी न था। उनके आपसी झगड़े बहुत कम होते थे, मुकदमेबाजी कम होती थी। झूठी गवाही के उदाहरण बहुत कम होते थे, चोरी भी कभी ही होती थी। अधिकतर लोग ईमानदार थे। इस विषय में मैगस्थनीज ने यहां तक लिखा है कि लोग मकानों में ताला लगाने की आवश्यकता अनुभव न करते थे। अपराध बहुत ही कम संख्या में होते थे।

लोग आनन्द का जीवन व्यतीत करते थे। वह आमोद प्रमोद के हेतु तरह तरह के उत्सव और समारोह मनाते थे। तरह तरह के खेल खेले जाते थे। स्त्रियां बाहर से खेले जाने वाले गेन्दों में बहुत ही अभिरुचि रखती थी। लोगों को आखेट का बड़ा चाव था। मनुष्यों, पशुओं में मल्लयुद्ध होते थे। इनमें रक्तपात भी हो जाता था। बाद में इसी कारण से अशोक ने इन युद्धों को रोक दिया था। नाच गाना, खेल, घुड़दौड़ खेलने आदि का लोगों को बड़ा चस्का लगता था। अर्थशास्त्र में ऐसे वर्गों का उल्लेख आया है जिनका कार्य ही लोगों का मनोरंजन ही होता था। जैसे नट, नर्तक, गायक, वादक (बाजा बजाने वाला) वाग्जीवी (कई बोली बोलने वाला), सौभिक (मदारी), चारण, कशीलव इत्यादि। मैगस्थनीज ने रथ दौड़, घुड़ दौड़, सांड युद्ध को भी मनो-विनोद के साधनों में गिनाया है। लोग उत्सवों में खूब मनोरंजन करते थे। स्त्री पुरुष दोनों ही सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण धारण करने के शौकीन थे। स्त्रियां उन वस्त्रों को बहुत अधिक पसन्द करती थीं जिन पर सोने के तारों द्वारा गोल सितारे बने रहते थे।

स्त्रियां दोनों प्रकार की होती थीं। दर्शन अध्ययन करने वाली तथा अशिक्षित। यूनानी लेखक लिखते हैं कि स्त्रियां स्वतन्त्रता पूर्वक जीवन व्यतीत करती थीं। परन्तु पतियों के साथ पवित्र ज्ञान की प्राप्ति उनके लिये मना थी। बुद्ध भिक्षुणियां स्वतन्त्रता पूर्वक कुटि तथा महलों में आ जा सकती थीं। राजा या सामन्त बहु

विवाह कर लेते थे। नारियाँ गुप्तचर विभाग में भी कार्य करती थीं। वह सम्राट की अंग रक्षक भी होती थीं। चन्द्रगुप्त की अंग रक्षक स्त्रियाँ होती थीं। अशोक ने भी प्रगट किया है कि नारियाँ अनेकों मनोरंजक तथा शुभ समारोहों में रुचि रखती थीं। सम्राट अशोक की द्वितीय पत्नि के अनुसार रानियाँ अपने पतियों के साथ अनेकों क्रिया-विधियों में भाग लेती थीं। स्त्रियों की सुरक्षा का बड़ा ध्यान रक्खा जाता था। उनके प्रति छोटे से छोटा अपराध भी दण्डनीय था। कारागृहों के अधिकारी भी उनके प्रति किये गये अपराध के लिये कठोरता से दंडित किये जाते थे। इतनी ही बात न थी अपितु पति के दुर्व्यवहार के विरुद्ध भी पत्नी न्यायालय में जा सकती थी। कौटल्य ने ऐसी नारियों का भी उल्लेख किया है जो बाहर न निकलती थीं। इससे अनुमान होता है कि कुछ नारी पर्दे में रहती थीं। अशोक के लेखों द्वारा भी पता चलता है कि स्त्रियाँ अंध विश्वास की शिकार थीं और इन्हें सभ्य जातियों में इनको नीचा भी जाना था।

चाणक्य के अनुसार १२ वर्ष की कन्या तथा १६ वर्ष के लड़के का विवाह कर देना चाहिये। उसने भिन्न भिन्न प्रकार के आठ विवाहों का वर्णन किया है जो इस प्रकार हैं—ब्रह्म, शौल्क, प्रजापति, दैव, गन्धर्व, आसुर, राक्षस तथा पिशाच। प्रथम चार धर्म के अनुसार माने जाते थे शेष चार अधार्मिक थे। कौटल्य ने विवाह विच्छेद का वर्णन भी किया है। यह विच्छेद तीन प्रकार से हो सकता था। १-परस्पर का द्वेष, २-दीर्घ प्रवास, ३-तिरस्कार की आशंका। कौटल्य के अनुसार दूसरा विवाह उस दशा में हो सकता था जब प्रथम पत्नी से पुत्र न हुआ हो। कौटल्य के अनुसार प्रथम तीनों वर्णों में अन्तर जातीय विवाह हो जाते थे। जाति से बहिष्कृत होने का कोई प्रश्न न होता था। बालक की जाति पिता की जाति से निश्चय होती थी। पुनः विवाह के विषय में अर्थशास्त्र में इस प्रकार आया है कि स्त्रियाँ सन्तान उत्पन्न करें इसलिये एक पुरुष कई स्त्रियां रख सकता है। स्त्री-पुरुष दोनों पुनर्विवाह कर सकते थे।

शिक्षा क्षेत्र में उस समय का भारत बहुत बढ़ा चढ़ा था। कई विश्व-विद्यालय थे, तक्षशिला का मुख्य था। उसमें शिक्षा आरम्भ करने की आयु १६ वर्ष थी। इसमें बहुत से विषयों की शिक्षा दी जाती थी। मुख्य यह थे—वेद, अठारह विद्यायें, व्याकरण, धनुर्विद्या, मन्त्र विद्या, चिकित्सा शास्त्र आदि। चिकित्सा शास्त्रों पर विशेष ध्यान दिया जाता था। धर्म शास्त्र, व्याकरण, अलंकार शास्त्र, व्रत आदि विषयों की गणना अनिवार्य विषयों में आती है।

पाणिनी के समय में व्याकरण के अध्ययन पर बड़ा बल दिया जाने लगा था। तक्षशिला के विश्व विद्यालय में राजाओं तथा मालदार लोगों के पुत्र शिक्षा प्राप्त करते थे। गरीब विद्यार्थी भी दिन में कार्य करते तथा रात को शिक्षा पाते थे। अनेकों विद्यार्थियों को

ग्रालय की ओर से सहायता प्रदान की जाती थी तथा कार्य भी दिया जाता
ार्थियों के आचार विचार पर विशेष ध्यान दिया जाता था। विश्व विद्यालय की
ाप्त करने के बाद विद्यार्थी प्रैक्टिकल अध्ययन प्राप्त करता था। तक्षशिला
य, पातन्जली, जीवक जैसे विद्यार्थियों तथा अध्यापकों को उत्पन्न किया था।
तिरिक्त बनारस तथा उज्जैन अन्य शिक्षा केन्द्र थे। बुद्ध विहार भी शिक्षा
ाते थे।

इस समय शिक्षा क्षेत्र में बहुत से विद्वान उत्पन्न हुये। रामायण तथा महा-
कई भागों की रचना इसी काल में हुई। धर्म सूत्र इसी काल की कृति है।
ान नागसेन इस काल में हुआ जिसने साहित्य की बड़ी सेवा की। संस्कृत
ो बड़ी उन्नति हुई कात्यायन और पातन्जली ने संस्कृत की उन्नति में बड़ा
या। पातन्जली की व्याकरण उस समय को अद्भुत देन है। अर्थशास्त्र भद्र
, अश्वसूत्र, बौद्ध कथा, वन्धु भी शानदार वस्तुयें हैं। बौद्ध त्रिपटक भी उसी
लिखा गया। अर्थशास्त्र एक अमूल्य ग्रन्थ है जिसमें राजनीति के अलौकिक
ों का विश्लेषण किया गया है।

शिक्षा प्रचार जन साधारण में भी बहुत था। डा० स्मिथ (Dr Smith)
है कि यदि लोग अधिकतर अशिक्षित होते तो अशोक कभी भी स्तम्भों पर
ा लिखवाता। मैगस्नीज भी शिक्षा प्रसार का उल्लेख करता है उच्च पदों पर
के लिए शिक्षा आवश्यक थी।

उस समय दो प्रकार की लिपियां थीं। १—ब्राह्मी लिपि २–खरोष्ठी लिपि।
ने नागरी लिपि तथा द्वितीय ने फारसी लिपि को जन्म दिया। पाली भाषा
ी उन्नति हुई इसमें बुद्ध धर्म के अनेकों ग्रंथ लिखे गये।

स्त्रियों की शिक्षा के विषय में कम पता चलता है।

इस समय लोग समृद्ध थे और स्वादिष्ट भोजन के बड़े शौकीन थे। अन्न,
दूध, मांस का प्रयोग करते थे। चावल भी खूब खाया जाता था। मांस के
में अशोक के एक शिलालेख पर लिखा है, "मेरे भोजनालय में पहले प्रतिदिन
ं जानवर शोरबे के लिए मारे जाते थे। परन्तु आज जब यह धर्म लिपि लिखी
ी है केवल तीन जीव एक मृग और दो मोर मारे जायेंगे भविष्य में यह भी नहीं मारे
े।" इससे पता चलता है कि उस समय मांस का खूब रिवाज था। तैयार रोटी,
की दुकानें निश्चित होती थीं। शराब भी कई प्रकार की होती थी उस पर सरकार
नियन्त्रण होता था। खाने के ढङ्ग के विषय में मेगस्थनीज ने इस प्रकार लिखा है,
ः भारतीय खाने बैठते हैं तो प्रत्येक व्यक्ति के सम्मुख तिपाई के प्रकार की एक
रखी जाती है, इसके ऊपर एक सोने का प्याला रखा जाता है जिसमें सर्वप्रथम
ल डाले जाते हैं इसके पश्चात अन्य पदार्थ रक्खे जाते हैं जो भारतीय विधि

से तैयार होते हैं" भारतीयों में प्रतिदिन सामूहिक भोजन करने की
नहीं थी।

कृषकों की अवस्था बहुत अच्छी थी। इनको सेना में कार्य करना नहीं प
था। निश्चित होकर कृषि में लगे रहते थे। यह समस्त जनता के हितकारी स
जाते थे। यह अनेकों वस्तुयें उत्पन्न करते थे और ग्रामों में निवास करते थे।
उपज का $\frac{1}{4}$ भाग राज्य को देते थे। बाढ़ और टिड्डियों का भय रहता था। वि
काल में राज्य की ओर से बीज तथा धन से कृषकों को सहायता दी जाती
सरकार कृषकों की आवश्यकता की वस्तुओं का प्रबन्ध करती थी। फसलों को
पहुँचाने वाले जानवरों को भगाने के लिये शिकारी तथा बहेलिये रहते थे। शि
किसानों के लिये यन्त्र बनाते थे जो करों से मुक्त होते थे। उनको कुछ वेतन
मिलता था। फसलों को आग से बचाने का सरकार की ओर से अच्छा प्रबन्ध था
इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि किसान हर प्रकार से सुखी थे।

आर्थिक दशा—मौर्य युग में भारत की आर्थिक व्यवस्था बड़ी उन्नत थी।
कृषि, शिल्प तथा व्यापार अधिक उन्नत दशा में थे। कृषि भारत का प्रधान व्यवसाय
था, कृषि की अच्छी दशा थी, कृषक अनाज तथा फल अधिक मात्रा में उगाते थे।
सरकार की ओर से कृषि की उन्नति के लिये भिन्न भिन्न प्रकार के साधन
अपनाये जाते थे। सिंचाई की अच्छी व्यवस्था की गई थी। फसलों को विनाशकारी
पशुओं से बचाने के लिये गड़रिये तथा बहेलिये नियुक्त किये जाते थे जिनको सरकारी
सहायता प्राप्त होती थी। अग्नि द्वारा या टिड्डियों द्वारा या वर्षा के अभाव के कारण
अकाल के भय का मुकाबला करने के लिये सरकारी गोदामों में अनाज भर लिया
जाता था। जिससे समय आने पर कृषकों या अन्य व्यक्तियों की सहायता की जाती
थी। आपत्ति के समय राज्य की ओर से बीज दिया जाता था और पशु तथा अन्य
आवश्यक वस्तु खरीदने के लिये धन के सहायता की जाती थी। जो शिल्पी कृषि
के औजार बनाते थे उन पर राज्य कर नहीं लगता था, अपितु उनकी धन से और
अधिक सहायता की जाती थी। अग्नि से फसलों को बचाने के लिये इस प्रकार
यन्त्रों का प्रयोग किया जाता था। ये इस प्रकार के थे—सीढ़ी, कुल्हाड़ी, ढोल
बर्तन इत्यादि।

कृषक राज्य की अन्य सेवाओं से मुक्त रक्खे जाते थे। उन्हें साधारण रूप
अपनी पैदावार का $\frac{1}{4}$ से लेकर $\frac{1}{6}$ भाग भूमि कर के रूप में देना पड़ता था
आवश्यकता पड़ने पर इस कर के रूप में वृद्धि भी की जा सकती थी परन्तु ऐसी स्थिति
बहुत कम आती थी। कृषक पशु पालन का कार्य भी करते थे। इनकी दशा अच्छी
थी, वे आनन्द का जीवन व्यतीत करते थे। राज्य इनकी देखभाल करता था।

राज्य के साथ पूर्ण सहयोग रखता था। इसी कारण से भारत की आर्थिक उन्नत थी।

अन्य व्यवसाय—यूनानी लेखकों द्वारा पता चलता है कि देश में अनेकों न-धन्धे होते थे। अस्त्र-शस्त्र तथा कृषि यन्त्रों का निर्माण किया जाता था। न भी बनाये जाते थे। वस्त्र उद्योग इतना अधिक उन्नत था कि विश्व का कोई देश इतना अधिक तथा सुन्दर कपड़ा तैयार नहीं करता था। इस देश वाहे भारत की आवश्यकताओं को ही पूरा नहीं करते थे। अपितु विश्व के अन्य देशों की आवश्यकताओं को भी पूरा करते थे। सूती, रेशमी तथा ऊनी तीनों के वस्त्र तैयार किए जाते थे। स्ट्रेबो ने वेश-भूषा के विषय से लिखा है कि पर सोने का काम होता था। इनको कीमती रत्नों से सजाया जाता था और मखमल पर आकर्षक फूल बनाए जाते। उत्तरी भारत तथा दक्षिण भारत नेकों नगरों में उच्च कोटि की मखमल तैयार की जाती थी। दक्षिणी भारत विशाल मण्डियां प्रतिवर्ष सहस्रों रुपये की मखमल का निर्यात करती थी। ों में भारत की मखमल तथा अन्य सुन्दर वस्त्रों की बड़ी अधिक मांग रहती कपड़े का उद्योग बड़ा ही समृद्ध था। जुलाहों ने अपने शक्तिशाली संघ बना थे। जुलाहों के अतिरिक्त अन्य शिल्पी भी सङ्घों में संगठित रहते थे। ठठेरों, तेलियों, वैश्यों तथा बनियों के प्रभावशाली सङ्घ बने हुए थे। यह सङ्घ उस के बैंकों का कार्य भी करते थे और आपसी झगड़ों का अन्त भी करते थे। के प्रधान का बड़ा आदर होता था। राज्य भी इन सङ्घों की सुविधा का ध्यान ा था। यह सङ्घ अच्छे प्रभावशाली होते थे। सांची स्तूप पर जो अभिलेख है पता चलता है कि वहाँ पर की गई नक्काशी हाथी-दांत का कार्य करने वाले ों सङ्घ द्वारा की गई। इन सङ्घों का राजनीति में भी अच्छा प्रभाव था।

व्यापार—उद्योगोंकी उन्नत दशा के कारण व्यापार बहुत उन्नत दशा में था। की उन्नति का एक और भी विशेष कारण था वह यह कि देश में मौर्य काल मार्गों ओर शान्ति स्थापित थी। राज्य द्वारा जल तथा थल मार्गों की पूर्ण रूप सुरक्षा की गई थी। नदियों में प्रगति के साथ नावमाल लाती और ले जाती थीं। समय अनेकों राजपथ तथा व्यापारिक पथ बने हुए थे। देश के व्यापारिक केन्द्रों सुरक्षित मार्गों द्वारा जोड़ दिया गया था। एक सड़क जो ग्राण्ड ट्रंक रोड की नामी सिद्ध हुई पाटलिपुत्र को तक्षशिला तथा उत्तर के अन्य नगरों से मिलाती । दूसरा दीर्घ पथ पाटलिपुत्र से बनारस तथा उज्जैन होता हुआ पश्चिम के रगाहों तक जाता था। एक अन्य पथ निर्माण किया गया था जो पाटलिपुत्र को म्रलिप्ति के प्रसिद्ध बन्दरगाह से जोड़ता था। दक्षिण को जाने वाले मार्गों की रक्षा का विशेष प्रबन्ध किया गया था और देश के आन्तरिक तथा बाहरी व्यापार

की बड़ी उन्नति की गई थी। इस प्रकार व्यापारिक उन्नति के कारण ... अनेकों समृद्धिशाली नगरों का उदय और विकास होगया था। तक्षशिला, ... कौशाम्बी, काशी, पाटलिपुत्र इत्यादि महान व्यापारिक केन्द्र तथा समृद्ध नगर थे।

मौर्य-युग में समुद्रों द्वारा किये गये विदेशी व्यापार की भी बड़ी ... हुई। कलिङ्ग विजय के पश्चात पूर्वी समुद्र तट के बन्दरगाह भी मौर्य सम्राट के प्रभाव में आगये थे। इनके द्वारा जो व्यापार विदेशों से होता था उस पर मौर्य अधिकार होगया। इस प्रकार मिस्र, सीरिया, यूनान तथा रोम के साथ मौर्य सम्बन्ध स्थापित हो गये थे। रोम के बाजारों में भारतीय वस्त्रों की बड़ी ... रहती थी। भारत की मलमल विशेष रूप से पसन्द की जाती थी। पाटलि... विश्व विख्यात नगर बन गया था। व्यापार करने वाले विदेशियों की पाटलिपुत्र बाजारों में बराबर भीड़ लगी रहती थी।

भारत के निर्यात की वस्तुयें अधिकतर वस्त्र, भोग-विलास की वस्तुएं थीं और आयात की वस्तुओं में चाँदी के बर्तन, शराब, दास, लावण्यमयी सुन्दरी अधिक प्रसिद्ध वस्तुयें थीं।

प्राचीन ग्रन्थों में इस प्रकार के अनेकों उदाहरण आये हैं जिनसे पता चलता है कि उस समय भारत के नाविक बड़े साहसी और प्रसिद्ध थे। यहाँ के बने जलपोत भी अधिक उत्तम माने जाते थे। इस प्रकार मौर्य युग में भारत व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण देश था।

उद्योग धन्धों की वृद्धि, व्यापार की उन्नति, कृषि की उन्नति के कारण ... धन धान्य से परिपूर्ण था और देश की जनता सुख का जीवन व्यतीत करती ... साँची स्तूप के अभिलेख से पता चलता है कि धनाढ्य व्यापारी बड़े बड़े दान ... थे। ऐसे दान देने वाले व्यापारियों के नामों का भी उल्लेख आया है। ... अभिलेख भी भारत के धन के बाहुल्य का वर्णन करते हैं। बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों से भी भारत के धन की अधिकता के प्रमाण मिलते हैं। बौद्ध विहारों ... मन्दिरों को बड़े बड़े दान दिये जाते थे। अधिकतर शिक्षा इन दानों द्वारा चलती थी।

नगर—आर्थिक स्थिति के सुदृढ़ होने के कारण अनेक भव्य नगर ... होगये थे। पाटलिपुत्र साम्राज्य की राजधानी होने के कारण व्यापार का भी ... केन्द्र बन गया था। इसकी लम्बाई नौ मील तथा चौड़ाई १॥ मील थी। ... चारों ओर ऐक विशाल प्राचीर थी जिसमें ६४ द्वार तथा ५७० बुर्ज थे। ... केन्द्र में सम्राट का महल था जिसकी प्रशंसा करते हुए मेगस्थनीज कहता है ... भव्यता, सुन्दरता तथा आकर्षण में यह महल सूसा के राजप्रासादों से भी बढ़...

था सहित सागर' में इसको पुर्यों का नगर-ललित कलाओं का भण्डार तथा विश्व नगरों की रानी कहा गया है इसके अतिरिक्त अन्य प्रसिद्ध नगर काशी उज्जैन शा कौशाम्बी आदि थे।

नगर में रहने वाले धनी लोग बड़ा ही ऐश्वर्य पूर्ण जीवन व्यतीत करते । घरों के चारों ओर बगीचा होता था, जिसमें खुशबू भरे हुये पुष्प महकते रहते थे तथा फलों से लदे हुये वृक्ष शोभायमान होते थे। मेज कुर्सियों का खूब प्रयोग होता था। संगीत तथा नृत्य कलाओं का बड़ा चाव था। वेश भूषा बड़ी आकर्षक होती थी, मैगस्थनीज के अनुसार नगर के लोग ललित कलाओं व भूषाओं और रत्न जड़ित अलंकारों में निपुण थे, "वे सुन्दरता और अलंकारों प्रेम करते हैं उनके वस्त्रों में स्वर्ण के तारों का कसीदा होता है और वह बहुमूल्य रत्नों से अलंकृत होती हैं और वह सबसे सुन्दर महीन मलमल के पुष्पित वसन पहनते हैं' इन लोगों का खाना भी अति उत्तम होता था, ये लोग कीमती आसव या सुरा का प्रयोग भी करते थे।

इस प्रकार धनाढ्य मध्यम श्रेणी के लोग सुसंस्कृत तथा ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करते थे, ग्रामवासी तथा निम्न श्रेणी के लोग भी सुख का जीवन बिताते थे हालांकि उनके जीवन में भोग विलास का अभाव रहता था।

सामूहिक रूप से यह कहना बड़ा ही सत्य है कि मौर्य युग का भारत आर्थिक दृष्टि से बड़ा ही उन्नत तथा समृद्ध शाली देश था उसमें विविध उद्योग व्यापार कृषि सभी की समान रूप से प्रगति हो रही थी वह हमारे देश का महान गौरवमय युग सिद्ध हुआ है।

धार्मिक स्थिति:—इस युग में कई धर्म साथ साथ चल रहे थे। बुद्ध धर्म-हिन्दू धर्म, जैन धर्म और इनके अतिरिक्त और भी कई समप्रदाय थे। साधु सन्त, सन्यासी-योगी तथा आजीविक भी फल फूल रहे थे। यह छोटे छोटे समप्रदाय प्रचारों के द्वारा दान प्राप्त करते थे और इनको अपने विचार फैलाने की पूर्ण स्वतंत्रता थी, चन्द्रगुप्त मौर्य अन्त में जैन हो गया था, वह स्वयं जैन साधु भद्रबाहु के साथ उनके शिष्य के रूप में दक्षिण की ओर गये थे। अनुश्रुति के अनुसार सम्राट ने जैन साधुओं की तरह उपवास करके ही प्राण त्याग किया था।

इसी काल में बुद्ध धर्म भी उन्नति कर रहा था, कलिंग विजय के पश्चात् सम्राट अशोक ने इसको स्वीकार कर लिया था और इसके प्रचार में उसने सब ही सम्भव साधन अपनाये थे, बुद्ध प्रचारकों के लिये अनेकों सुविधायें प्रदान की थी। बुद्ध भिक्षुओं तथा भिक्षुणियों के लिये अनेकों बिहार बनवाये थे अन्य देशों में जाने वाले प्रचारकों का प्रबन्ध किया, स्वयं उसका पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संगमित्रा लंका गये और बुद्ध धर्म का प्रचार किया। मिश्र, यूनान, चीन, बर्मा, स्याम इत्यादि

में बुद्ध धर्म प्रचारक पहुंचे, अशोक ने एक नया विभाग ही 'धर्म म---
का धर्म प्रचार के लिये खोल दिया था, उसने स्तम्भों तथा शिलाओं पर
के सिद्धांत खुदवाये पशु वध निषेध कर दिया। इस प्रकार इस धर्म को
बनाकर अशोक ने बड़ी सेवा की आगे चलकर कनिष्क ने भी इ
का अच्छा प्रचार कराया।

इस काल में भी देवताओं की पूजा जारी रही, इन्द्र तथा वरुण की उ
की जाती थी, गंगा को पूज्य मानते थे, पातांजलि ने जुमायरा में शिव-स्क
मूर्तियों के विक्रय का उल्लेख करा है इसी प्रकार पाणिनि भी वासुदेव का
करता है, कृष्ण जी के भ्राता बलराम की उपासना भी हो रही थी, हालांकि
चलकर कृष्ण जी की उपासना ही अधिक हो गई थी, यज्ञों का भी रिवा
इनमें अब भी बलि होती थी, परन्तु अशोक ने पशु वध को निषेध कर दि
ऐसे अवसरों पर जनता मद पान करती थी, समारोहों के समय मौर्य सम्र
बाहर निकलते थे।

अशोक की मृत्यु के पश्चात् वैष्णव तथा भागवत धर्म का प्रचार हो
था, भागवत धर्म भक्ति पर अधिक बल देता था, शिव धर्म भी फैल रहा था,
प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भिन्न भिन्न विचार धारायें काम कर रही थी, अशोक की
के पश्चात् फिर से हिन्दू धर्म का पुनरुत्थान होने लगा था, धार्मिक क्षेत्र में
मौर्य सम्राट बड़े ही उदार विचार रखते थे सब धर्मों का आदर करते थे, दान
थे, सब धर्म के साधु सन्यासियों की अच्छी आवभगत करते थे। इस समस्त वि
से स्पष्ट है कि मौर्य काल में चारों ओर उन्नति हुई, सामाजिक, आर्थिक, धार्
सब ही क्षेत्रों में यह युग महान् था, यह युग भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग क
जा सकता है। शासन के क्षेत्र में इसने उन सिद्धांतों को जन्म दिया जो आज
इसी प्रकार प्रचलित हैं और आज के शासन भी उन पर चलते हैं, उस समय भौति
उन्नति भी अपनी पराकाष्ठा पर पहुंची थी, शान्ति का बोल बाला था, धार्मिक क्षे
में सहिष्णुता विद्यमान थी, सब धर्मों के प्रति आदर की भावना रहती थी सम्रा
निज धर्म रखते हुये भी सब धर्मों को सम्मान देते थे, यह वह युग था जिसने
भारत से विश्व को शांति का पाठ पढ़ाया था, अशोक ने आदर्श सम्राट का उदाहरण
किया था, यह युग भारत का ही नहीं विश्व का आदर्श युग था।

Q. Give an account of the Mauryan Art & discuss its
Special features.

प्रश्न—मौर्य कला का विवरण देते हुये उसकी विशेषताओं का
विवेचन करो।

उत्तर—कला के क्षेत्रों में भी मौर्य काल महत्वपूर्ण है, इस दिशा में भी सम्राट अशोक का स्थान ही ऊंचा है, इस युग से पूर्व के स्मारकों के चिन्ह उपलब्ध नहीं होते; समय ने उन सब को नष्ट कर दिया, अशोक से पूर्व लकड़ी के प्रयोग के कारण स्मारकों का विनाश हो गया, परन्तु अशोक ने पाषाण का प्रयोग किया और उसके अनेकों स्मारक आज भी भारतीय भास्कर कला के अनुपम नमूनों का प्रदर्शन कर रहे हैं।

उस काल की कला चार भिन्न भिन्न स्मारकों में विभाजित की जा सकती है।

१—राज प्रासाद तथा भव्य भवन।

२—गुफायें।

३—स्तूप।

४—स्तम्भ या लाट।

१—चन्द्रगुप्त मौर्य ने अनेकों भवन तथा राज प्रासादों का निर्माण कराया था, इसका सभा भवन स्तम्भों पर खड़ा हुआ था, इन स्तम्भों पर तरह तरह की आकर्षक मूर्तियां बनाई गई थी, मैगस्थनीज ने इन राज प्रसादों की बड़ी ही प्रशंसा की थी, उसका मत था कि चन्द्रगुप्त का राज प्रसाद ईरान की राजधानी सूसा के राज प्रसादों से अधिक सजे हुये थे, अशोक ने भी अनेकों भवनों का निर्माण कराया था, उस समय के यूनानी लेखकों ने इन भवनों के बड़े ही सुन्दर तथा अनुपम विवरण दिये हैं, ७०० वर्ष पश्चात् जब चीनी यात्री फाह्यान भारत में आया तो वह इन राज प्रासादों को देखकर चकित रह गया, इनकी निर्माण शैली ने उसे बड़ा ही प्रभावित किया था, अशोक के राज महल देखकर तो वह विश्वास ही न कर सका कि ऐसा राजमहल मनुष्य भी बना सकते हैं। उसकी राय में यह भवन प्रेत आत्माओं द्वारा ही बनाया गया था, अब यह सुन्दर प्रासाद नष्ट हो गये और इनके चिह्नमात्र ही रह गये हैं।

२ गुफायें—उस समय गुफाओं के निर्माण कराने का भी बड़ा रिवाज था, यह पाषाण से काटी जाती थीं इनमें अन्दर की ओर चमकीला रोगन किया जाता था, जो दर्पण की तरह चमकता था यह भिक्षुओं के रहने के लिये, उपासना करने के लिये तथा सभा भवन का काम देने के लिये बनाई जाती थीं, अशोक तथा दशरथ ने इस प्रकार की अनेकों गुफाओं का निर्माण कराया था ऐसी गुफायें, नागार्जुन तथा बराबर की पहाड़ियों पर बनाई गई थी अशोक ने गया में एक मन्दिर का निर्माण कराया था जो गिर चुका था अब उसके स्थान पर एक नया मन्दिर बना हुआ है। यह गुफायें उस समय की कला के अनुपम नमूने हैं।

३ स्तूप—बुद्ध जी या अन्य किसी बुद्ध साधु सन्त की अस्थी आदि के ऊपर समाधि के रूप में स्तूपों का निर्माण होता था। इन धार्मिक पवित्रता का भाव

जुड़ा रहता था, यह गोल गुम्बद के आकार का पाषाण या ईंटों से बनाया था, इसके चारों ओर एक पाषाण से बना हुआ घेरा होता था, जिस पर तर के चित्र अंकित होते थे जो उस समय की मूर्ति कला के सजीव प्रमाण हैं, ये बड़े भव्य आकार के बनाये जाते थे, कहते हैं कि सम्राट अशोक ने इस प्र के ८४००० स्तूप भारत तथा अफगानिस्तान में बनवाये थे, जिनमें से अनेक हो गये, ९०० वर्ष पश्चात् ह्वानसांग ने ऐसे अनेकों स्तूपों को देखा था उसने उल्लेख किया है। आजकल सबसे अधिक प्रसिद्ध स्तूप, सांची का स्तूप है स्तूप के आकार का अनुमान इस प्रकार लगाया जा सकता है कि इसका १२१½ फीट तथा ऊंचाई ७७½ फीट है इसके चारों ओर ११ फीट ऊंचाई का बना है सरजान मार्शल (Srijahn Marshal) का मत है कि अशोक वाला आकार में इससे आधा था बाद में इसका आकार बड़ा दिया गया, स्तूपों की स संख्या इस बात का प्रमाण है कि अशोक को स्थापत्य कला का कितना च चाव था और भारतीय कला कितनी उन्नत थी ?

४ स्तम्भ या लाट—ठोस पाषाण से बनाये हुये यह स्तम्भ जिनका ५० टन तक तथा ऊंचाई ५० फीट तक है भास्कर कला के सर्वोत्कृष्ट तथा अनु नमूने हैं, यह उस समय की इञ्जिनियरिंग की प्रगति पर प्रकाश डालते हैं क्यों इन विशाल कार्य स्तम्भों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर दूर दूर ले जाया जा था कभी कभी ऊंची पहाड़ियों पर भी इनको चढ़ाया जाता था, वी० ए० स्मि (V. A. Smith) का कथन है कि इन स्तम्भों की स्थापना, निर्माण त स्थानान्तर इस बात के प्रमाण हैं कि उस समय के शिल्पी और इञ्जिनियर कि भी देश के कलाकारों से कम न थे। स्तम्भ के तीन विशेष भाग होते हैं। १–ज़मीन में गड़ा हुआ भाग, २–ज़मीन के ऊपर का गोल तना, ३–तने पर बना हुआ शीर्ष

१ पृथ्वी में गड़ा हुआ भाग—इस पर मोरों की आकृतियां बनी होती थी ऐसा अनुमान यह है कि चूंकि चन्द्रगुप्त का पिता मोर रखता था इसलिये अशोक ने यह आकृतियां बनवाई होंगी, यह आकृतियां कला के अच्छे नमूने हैं।

२ पृथ्वी के ऊपर का तना—यह इस प्रकार बनाया जाता था कि ज्यों ज्यों इस की गोलाई कम होती जाय, इससे इसकी सुन्दरता बढ़ती थी, यह प्रा ५० फीट ऊंचा रहता है एक ही पाषाण से बनाया जाता था, इसके ऊपर एक पत्थर में से कटा हुआ शीर्ष इसकी शोभा बढ़ाता था।

३ शीर्ष—शीर्ष के ऊपर सिंह, अश्व, वृषभ आदि की आकृतियां बनी हैं इनके साथ ही साथ धर्म चक्र अंकित किया गया है और उनके नीचे उल्टा कम का पुष्प बनाया गया है, यह शीर्ष, कला चातुर्य का ऐसा अद्भुत नमूना है कि कलाकार इसे देखकर चकित रह जाते हैं। अब तक इन स्तम्भों में सबसे बढ़ा

स्तम्भ सार नाथ का स्तम्भ है कलाकारों ने इसको सर्वोत्तम बताया है इस पर चार सिंहों की सुन्दर मूर्तियां है जिनके मुख बाहर को ओर हैं यह सजीवता के नमूने हैं इनकी मांस पेशियां सुडौल और उभरी हुई हैं इनके नीचे की ओर अन्य आकृतियाँ चित्र कला के अनुपम नमूने हैं और कला की श्रेष्ठता प्रकट करते हैं। सिंहों की और पशुओं की आकृतियां दर्शनीय तथा गौरवपूर्ण हैं कला आलोचकों ने मुक्त कण्ठ से इनके सौंदर्य की प्रशंसा की है, इनमें वास्तविकता तथा कल्पना का अनुपम मिश्रण किया गया है एक विद्वान का कथन है कि "शिल्पकला विज्ञान और कलात्मक शैली के रूप में अशोक की यह कृतियां सर्व सुन्दर शिल्प और चित्रकला के उत्कृष्ट प्रमाण हैं जो भारत ने अब तक प्रस्तुत की तथा उनका पार पाना कठिन है।' सिंहों के निर्माण में कला अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गई है सरजान मार्शल का मत है कि यह सिंह कला शैली और टैकनिक की दृष्टि से कला के सर्वोत्तम नमूने हैं, सारनाथ के शीर्ष के विषय में डा० वी० ए० स्मिथ (Dr. V. A. Smith) का कथन है कि "संसार के किसी भी देश में प्राचीन भास्कर कला के ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण अथवा कला के ऐसे सुन्दर नमूने जिनमें सजीव कला कृतियों का और आदर्शवाद का सफलता पूर्वक समन्वय हुआ हो और जिनमें प्रत्येक बात का पृथक पृथक सविस्तार प्रदर्शन हुआ हो माना दुष्कर है।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि अशोक स्तम्भों ने भास्कर कला की श्रेष्ठता तथा पवित्रता का जितना सुन्दर प्रदर्शन किया है अन्य किसी वस्तु ने नहीं भास्कर कला उस समय उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई थी।

भास्कर कला की अपनी कुछ अलग विशेषतायें हैं ठोस पाषाणों से स्तम्भों का काटना उन पर सिंहों तथा अन्य पशुओं का बनाना फिर चमकीला पालिश करना इत्यादि बड़े ही कला पूर्ण कार्य हैं इस समय की कला का एक सर्वोत्तम गुण और भी है कि भाव प्रकाशन को पूर्ण रूप से दिखाया गया है उस युग की मूर्तियों में सजीवता भाव प्रदर्शन तथा सौंदर्य अपनी प्रकाष्ठा पर पहुँच गये हैं और इनसे भारतीय कलाकार की ख्याति का विलक्षण प्रदर्शन हुआ है। मौर्य काल कला के क्षेत्र में भी अपना विशेष स्थान रखता है।

Q. Making special reference to Kanishk say what contribution has been made in the field of Art and literature by the kushans.

प्रश्न—विशेष रूप से कनिष्क का विवरण देते हुये बताओ, कुषाणों को कला तथा साहित्य के क्षेत्र में क्या देन है ?

उत्तर—बैक्ट्रिया, अफगानिस्तान, पंजाब में जो यूनानी अधिका[र] उसका अन्त शक जाति के आक्रमणों द्वारा हुआ परन्तु शकों का विनाश हु[आ] जाति यूची जाति की एक शाखा थी, कुषाणों के प्रसिद्ध राजा कडफिसेस तथा द्वितीय हुये और उसके पश्चात् सन् ७८ से १०१ अथवा ११६ तक क कनिष्क ने राज्य किया यह इस वंश का महा प्रतापी तथा प्रतिभाशाली सम्राट् उसने पेशावर को अपनी राजधानी बनाया उसका साम्राज्य पूरब में बनार[स] उत्तर में तुर्किस्तान तक दक्षिण पश्चिम में मालवा तथा गुजरात तक फैला हु[आ] यह बुद्ध धर्म से बड़ा प्रभावित हुआ और इसके प्रचार में उसका स्थान अशोक से ही द्वितीय है यह साहित्य तथा कला का भी प्रेमी था, वास्तु कला स्थापत्य कला का उसको चाव था इसके शासनकाल में गान्धार नामक नवीन का आविर्भाव हुआ इसने भारतीय कला को प्रभावित किया इस सम्राट के राज्य में नागार्जुन अश्वघोष जैसे महान् विद्वान इसके दरबार की शोभा बढ़ा उसने पेशावर में एक स्मारक स्तम्भ बनवाया तथा कनिष्कपुर नामक नगर बसाया उसके राज्यकाल में विदेशों से गहरे सम्बन्ध रहे, चीन, रोम, ईरान इ देशों से व्यापारिक सम्बन्ध रहे. इस प्रकार भारत का कनिष्क द्वारा विदे मान बढ़ा, विदेशों से सम्बन्ध बढ़ने के कारण संस्कृतियों का आदान प्रदान हु कला के क्षेत्र में एक नवीन शैली उत्पन्न हुई जो गान्धार शैली के ना प्रसिद्ध है।

गान्धार शैली

उस समय गान्धार एक ऐसा प्रदेश था जहां कई संस्कृतियां आकर मि पूरब से भारतीय तथा उत्तर पश्चिम से यूरोप की संस्कृतियों का मिलाप जिनके सम्मिश्रण से एक नवीन मूर्ति कला का उदय हुआ जो कुषाण काल में फूली और पूर्ण रूप से विकसित हुई यूरोप से आने वाली सब संस्कृतियों में यू संस्कृति है जो सबसे अधिक प्रभावशाली थी और सिकन्दर के आक्रमण के पश इसका सम्बन्ध किसी न किसी रूप में भारत से बना ही रहा, इसलिये भार कला पर उसी का प्रभाव अधिक हुआ इसलिये गान्धार शैली को 'हिन्दू-यूना (Indo greek) 'ग्रीको-रोमन कला (Graeco Roman art) इत्यादि दिये गये हैं कभी कभी इस कला को 'ग्रीको बुद्धिस्ट (Graeco Budhi या हिन्द हेलेनिक (Indo Helienic) भी कहते हैं परन्तु गान्धार में उत्पन्न के कारण इसको गान्धार शैली कहते हैं।

इस कला में निर्माण शैली यूनानी है परन्तु भाव प्रकाशन भारतीय है आकार यूनानी परन्तु आत्मा भारतीय ही है इस कला का विषय प्रधान रू धर्म रहा, बुद्ध जी की मूर्तियां प्रथम बार इसी कला में बनाई गई हैं

पहले कभी बुद्ध जी की प्रतिमा न बनाई गई थी पहले जातक कथाओं और बुद्ध सम्बन्धी अन्य कहानियों को तथा घटनाओं को सांची तथा भारहुत के कलाकारों ने पाषाण चित्रण किया था परन्तु उन्होंने भी बुद्ध जी की कोई प्रतिमा न बनाई थी महायान वर्ग ने इस शैली को बड़ा प्रोत्साहन दिया अब बुद्ध और बोधिसत्वों की सुन्दर प्रतिमायें ध्यान मुद्रा धर्म चक्र मुद्रा अन्य मुद्रा आदि में प्रदर्शित की गईं बुद्ध जी के वृत्तांत तथा पिछले जन्मों की अनेक घटनाओं का काले पत्थर में अलौकिक ढंग से चित्रण किया गया इस कला को देखकर सरलता से यह कहा जा सकता है कि इसमें कलाकार का हाथ यूनानी तथा मस्तिष्क भारतीय है बुद्ध बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की प्रतिमायें यूनानी देवताओं तथा राजाओं जैसी प्रतीत होती हैं उनकी वेशभूषा तथा सजावट यूनानी है यूनानी कला का उद्देश्य बहरी सौंदर्य का चित्रण परन्तु भारतीय कला का उद्देश्य प्रतीकवाद तथा भावना वाद था यही सम्मिश्रण मूर्तियों से साफ प्रगट होता है इस कला की बड़ी उन्नति हुई परन्तु इसका कार्य क्षेत्र प्रधानतः उत्तर पश्चिम भारत ही रहा।

सम्राट कनिष्क के समय में अनेकों स्तूप-मठ तथा मूर्तियों का निर्माण इस कला के सुन्दर नमूने हैं। इसके अनेकों नमूने तक्षशिला पाकिस्तान के सीमान्त प्रान्त तथा अफगानिस्तान में उपलब्ध हुये हैं इनमें पाषाणों पर बुद्ध की मूर्तियां तथा धार्मिक ग्रन्थों की कथायें दिखाई गई हैं जिनको भिन्न भिन्न रंगों से रंगा गया है इन मूर्तियों तथा दृश्यों के बनाने में पाषाण तथा पकी हुई ईंटों और चूने का प्रयोग किया गया है, पेशावर तथा लाहौर के अजायबघरों में जो मूर्तियां रक्खी हैं वह पाषाण की बनी हैं परन्तु तक्षशिला में खुदाईयों से जो मूर्तियां मिली हैं वह पकी हुई ईंटों और चूने से बनाई गई हैं।

यह शैली लग भग ३०० वर्षों तक कार्यक्षेत्र में बनी रही परन्तु इसके पश्चात् स्वयं ही इसका ह्रास हो गया।

इस कला की अपनी कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जिन पर ध्यान करने से इस शैली को पहचाना जा सकता है ये निम्नलिखित हैं:—

१—इस शैली में उच्चकोटि की नक्काशी का प्रयोग किया गया है और भावना तथा अलंकारों का उत्तम सम्मिश्रण है।

२ - बुद्ध की मूर्तियां निर्माण करने में कलाकार ने पूर्ण रूप से इतनी स्वतंत्रता का दिग्दर्शन किया कि बुद्ध जी यूनानी देवता अपोलों की तरह बना दिये गये हैं बुद्ध जी एक विशेष प्रकार की आकृति मान ली गई और उसी को नकल चलती रही।

३—इस शैली के कलाकार ने मूर्ति बनाने में वास्तविकता पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया बाहरी सौंदर्य को लक्ष बनाया, शरीर के गठन की बनावट

को पूर्ण रूप से दिखाने का प्रयत्न किया इन मूर्तियों में मांस पेशियां साफ झलकती हैं वस्त्रों की सलवटें साफ दिखाई देती हैं महीन वस्त्रों का अनुपम प्रदर्शन किया गया है।

इन बातों को ध्यान में रखकर बताया जा सकता है कि किस मूर्ति में गान्धार कला के कलाकार के हाथों ने कार्य किया है। इस शैली ने भारत की शैलियों को किस सीमा तक प्रभावित किया यह एक मतभेद का विषय है दीर्घकाल तक यह समझा जाता रहा था कि गान्धार शैली द्वारा निर्मित मूर्ति भारत की अन्य शैलियों के लिये आदर्श नमूने माने जाते थे परन्तु बाद में पता चला कि मथुरा केन्द्र की निर्मित मूर्तियाँ तथा गान्धार शैली की मूर्तियां एक दूसरे से भिन्नता रखती हैं गान्धार शैली ने बाहरी सौंदर्य तथा अङ्ग प्रत्यंग की शोभा को दिखाने का प्रयत्न किया है परन्तु मथुरा शैली में आध्यात्मिकता की भावना प्रदर्शित करने का सफल प्रयास किया है प्रथम शैली यथार्थवादी रही है और वास्तविकता इसका प्रधान विषय रहा है। परन्तु शुद्ध भारतीय शैली भावना को प्रधानता देती है। विशेष रूप से आदर्शवादी है गान्धार शैली भारत में ही सीमित न रही। मध्य एशिया में गई जहां से चीन और जापान पहुंचकर वहां की कलाओं को प्रभावित किया।

कला के क्षेत्र में उस समय दो शैलियां, मथुरा शैली तथा अमरावती शैली भी विद्यमान थी, मथुरा शैली दो भागों में बांटी गई है पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध प्रथम काल की मूर्तियां अनगढ़ प्रतीत होती हैं परन्तु बाद की सादगी और सौंदर्य से परिपूर्ण हैं।

अमरावती की शैली भी उत्तम प्रकार की थी अमरावती के स्तूप में बनी हुई मूर्तियां गम्भीर मुद्रा में खड़ी हुई प्रत्येक दर्शक के त्याग भाव को उत्पन्न करती हुई प्रतीत होती हैं उनमें त्याग भाव की बाहुल्यता है यहां की मूर्तियां विशेष रूप से अलंकृत की गई हैं यह चित्र अधिकतर पुष्पों के बनाये गये हैं यह मूर्तियां भक्ति भाव से ओतप्रोत प्रतीत होती हैं।

इस प्रकार गान्धार शैली कनिष्क की छत्र छाया में विकसित हुई और अपने अमूल्य नमूनों द्वारा उस युग को चमकाया इस क्षेत्र में कुषाणों की देन अपूर्व अनुपम तथा अद्भुत देन थी।

साहित्य

कुषाण सम्राट और विशेष कर कनिष्क साहित्य प्रेमी थे उन्होंने अपना संरक्षण प्रदान कर साहित्य की बड़ी सेवा की इस संरक्षण को प्राप्त कर संस्कृत साहित्य ने बड़ी उन्नति की कनिष्क युग कई प्रतिभाशाली विद्वानों से सुशोभित था अश्वघोष, नागार्जुन, वसुमित्र, चरक जैसे महान् विभूतियां इस काल में थीं

द्वता का प्रमाण दे रही थी, अश्वघोष की अनुपम कृतियां 'बुद्ध चरित्र' सारिपुत्र-करण' तथा वज्रसूचि' हैं वह कुशलता पूर्ण व्यक्ति था; संगीत दर्शन-साहित्य तथा कै वितर्क में वह बेजोड़ था नागार्जुन महान् आचार्य तथा दार्शनिक था वसुमित्र 'महाविभाषा शास्त्र' का इसी समय निर्माण किया, चक्र कनिष्क के दरबार का चम वैद्याचार्य था उसने आयुर्वेद के कई ग्रन्थ लिखे और इस विद्या में अपनी ग़ुणता का प्रदर्शन किया इस प्रकार राज्य संरक्षण प्राप्त करके साहित्य संगीत र्शन आयुर्वेद इत्यादि ने उच्चकोटि की उन्नति की और कुषाणों को इसका श्रेय प्त हुआ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कुषाण काल में कला तथा साहित्य का अच्छा कास हुआ और कनिष्क ने इस बात का पूर्ण प्रमाण दिया कि भारतीय संस्कृति विदेशियों को अपने में विलीन करने की कितनी विलक्षण शक्ति थी तथा विदेशी ो समय समय पर किस प्रकार इस संस्कृति की सेवा करते थे।

---

4 Q. What part was played by the Kushan emperors in the ligious controverty of Budh religion? What various factors do ou consider, from made it of a permanent nature.

प्रश्न—बुद्ध धर्म के धार्मिक वाद विवाद में कुषाण सम्राटों ने क्या ाग लिया? आपकी राय में वह कौनसी भिन्न भिन्न बातें थीं जिन्होंने इस द विवाद को स्थाई रूप दिया है?

उत्तर—बुद्धजी के देहावसान के एक शताब्दी पश्चात् बुद्ध धर्म में मतभेद ारम्भ हो गया। कुछ ऐसे लोग थे जो प्राचीन अनुशासन की कठोरता को कुछ ीला करना चाहते थे वह इस विचार के थे कि यदि कठोर अनुशासन के कारण र्म की लोक प्रियता घटेगी और धर्म के प्रसार में बाधा होगी। इस प्रकार दो ाखाओं का जन्म हुआ 'स्थविर वादिन' जो प्राचीनता को छोड़ना न चाहते थे। हा सांघिक' जो समय के अनुसार बदलना चाहते थे। यह भिक्षुओं का प्रगतिशील भाग था यह धर्म को लोकप्रिय बनाना चाहते थे और इस कारण से वह परिवर्तन ाहते थे। वैशाली की द्वितीय महासभा जो ई० पू० ३८३ में इस मतभेद को दूर रने के लिये हुई इस उद्देश्य में सफल न हो सकी और मतभेद बढ़ता गया और पश्चात् चौथी महासभा कनिष्क के राज्य काल में वसुमित्र तथा अश्वघोष के भापतित्व में की गई। यह सभा ६ मास तक चलती रही। यह सम्भवतः उत्तरी ारत के हीन्यान वर्ग के आचार्यों द्वारा बुलाई गई थी। इस सभा के द्वारा उन द्धान्तों को निश्चित किया गया जो मतभेद के विषय बने हुए थे। तथा दोनों

पिटकों के तीन भागों की रचना हुई और इसी के आधार पर महायान विकास होता रहा।

बुद्ध धर्म की इसी महायान शाखा को कुषाण सम्राटों ने स्वयं और कनिष्क ने इसके सिद्धान्तों को अपनाकर उनके प्रसार में तन मन धन गया। कनिष्क द्वारा संरक्षण प्राप्त कर महायान वर्ग के सिद्धान्त तेजी विकसित और प्रसारित होते रहे।

इन दोनों वर्गों के मतभेद वास्तविक थे। बुद्ध तथा बोधिसत्व की हीनयान मत के सर्वथा प्रतिकूल थी परन्तु महायान वर्ग की यह विश्वास इसके अतिरिक्त हीनयान वर्ग के अनुसार सच्चरित्र रहने से ही निर्वाण सकता है परन्तु महायानियों का विश्वास था कि सच्चरित्रता के साथ साथ बु उपासना तथा उनमें श्रद्धा भक्ति रखना मोक्ष प्राप्ति के लिये आवश्यक अपितु अनिवार्य है। इसका परिणाम यह हुआ कि इस वर्ग वालों में स्थान श्रद्धा तथा विश्वास ने ले लिया। धार्मिक विधियाँ-समारोह तथा मनाये जाने लगे और धीरे धीरे यह लोग हीनयानियों से पृथक होते चले गये।

इसके अतिरिक्त हीनयान वालों के समस्त ग्रन्थ पाली भाषा में लि थे परन्तु महायानियों ने संस्कृत को भी अपनी ही भाषा माना और उस भाषा में लिखे।

इसी प्रकार के बहुत से आध्यात्मिक तथा दार्शनिक सिद्धान्तों में भी दोनों शाखाओं में मौलिक मतभेद था। हीनयान वर्ग समय तथा आवश्य साथ साथ न चलकर अपनी कठोर नीति का पालन करना चाहता था परन्तु म लोक सेवा के भाव से ओत प्रोत था। वह अपना क्षेत्र उन सबके लिये विस्त करना चाहता था जो उदार भाव लेकर बुद्धधर्म को अपनाना चाहते थे और ही साथ अपने रीति रिवाज तथा विशेष प्रथायें भी बनाये रखना चाहते थे। जि गुंजायश हीनयान वर्ग में न थी।

महायान धर्म का जन्म तो पहले ही हो चुका था। कनिष्क के राज्य में उसने जोरों के साथ प्रगति की और वह बराबर विकसित होता चला अपने गुरु 'पार्श्व' की आज्ञानुसार महासभा का अधिवेशन बुलाना इस प्रमाण है कि कनिष्क धर्म के व्यर्थ तथा अनावश्यक मतभेदों को नष्ट करना था परन्तु मौलिक मतभेद बने ही रहे। चूंकि महायान के सिद्धान्त उसका द्वार सब के लिये खुला था। वह सबके प्रति दया भाव तथा उदारता थे। इस कारण वह लोकप्रिय होता गया उनका कहना था कि स्वयं बुद्धजी मात्र की आत्मा शुद्ध करना चाहते थे। उनका उद्देश अपने उद्धार तक ही न था अपितु सारा विश्व उद्धार ही उनका अन्तिम लक्ष्य था। अब तक बुद्ध

ा पथ प्रदर्शक ही माना जाता था परन्तु अब उनको ईश्वर का रूप माना
इस धर्म ने अवतारवाद के सिद्धान्त को अपना लिया। हिन्दु देवताओं के
बोधिसत्व की कल्पना की गई जो निर्वाण प्राप्ति में सहायता करते थे भक्ति
ा देने से स्तूप आदि के बनवाने में सहायता मिली चूंकि कहा जाता था कि
श्रद्धा प्रगट करने के लिये स्तूप आदि का बनवाना अति आवश्यक कार्य है
निर्वाण की परिभाषा ही बदल डाली और कहा कि निर्वाण इच्छाओं का
नहीं अपितु उनकी पूर्ति है। इस धर्म में हिन्दु धर्म का जैसा पूजा पाठ
ा हो गया। बुद्ध धर्म की नई तब्दीली को सुन्दर शब्दों में बताया गया है
प्र प्रकार है "पुरातन बौद्ध की अपेक्षा यह कम संघोन्मुखी और अधिक
। प्रधान था दान तथा सहायता के लिये इसमें अधिक स्थान था। हीनयान
ाय इसकी अपेक्षा में अनुदार कठोर और अपने ही क्षेत्र में सीमित था। साथ
बोधिसत्वों, अवलोकितेश्वरों और देवी देवताओं की कल्पना की गई और
: धर्म की तरह बुद्ध का भी देव मण्डल बन गया। बुद्ध की प्रथम प्रतिमा का
ा प्रथम शताब्दी ई० पू० में हुआ फिर इसके पश्चात् देव मण्डल के अन्य
ों की भी मूर्तियां बनने लगीं। श्रद्धा और आदर अब पर्याप्त नहीं माने गये।
र और चढ़ावे चढ़ने लगे। इससे बुद्धों की विस्तृत पूजा पद्धति और धार्मिक
रिवाजों का विकास हुआ बुद्धधर्म का अनात्मवाद भी इस समय ढीला पड़
और उसका स्थान एक प्रकार का आत्मवाद लेने लगा।"

इस प्रकार यह बात साफ तौर से प्रगट हो जाती है कि इस सम्प्रदाय में
र्म को एक नवीन रूप दे दिया था। इस नवीन बुद्ध धर्म के विकास तथा
ें सम्राट कनिष्क का बड़ा ही भारी हाथ था उसने अनेकों स्तूप तथा मूर्तियां
ईं और उन विद्वानों को आसरा दिया जो इस नवीन रूपी बुद्ध धर्म के
े थे। नागार्जुन इस सम्प्रदाय के महान दार्शनिक हुए हैं। आर्यदेव, असंग
वसुबन्धु विद्वानों ने इस सम्प्रदाय की बड़ी उन्नति की यह सब उन्नति
क के संरक्षण द्वारा की गई।

आजकल महायान बुद्ध धर्म चीन, जापान तथा कोरिया में फैला हुआ है।
ा लंका, ब्रह्मा, स्याम में पुराना ही धर्म विद्यमान है। बुद्ध धर्म में इस प्रकार
भेद को, अनेकों कारणों ने सहयोग देकर स्थाई रूप दे दिया जो इस
र है :—

(१) उन विदेशियों ने जो बाहर से आये और पंजाब में बस गये। अपने
को छोड़ कर बुद्धधर्म ग्रहण किया परन्तु इन्होंने अपने धर्म त्याग के साथ साथ
रीति रिवाजों को नहीं त्यागा जो इनके जीवन से जुड़े हुवे थे। यह भारत
े से पूर्व अनेकों देवताओं की मूर्तियां बना कर पूजते थे। यहां पर भी इन्होंने

बुद्धजी की प्रतिमा बना कर उसी प्रकार उनकी उपासना आरम्भ कर दी। म दार्शनिकों ने इन जातियों की सन्तुष्टि करने के विचारार्थ मूर्ति पूजा को भी क एक अङ्ग मान लिया और इस प्रकार महायान शाखा बढ़ती चली गई। प्रकार से नवीन धर्म को शक्ति प्रदान करने में इन यूनानी, पार्थियन तथा शे जाति का बड़ा हाथ था।

(२) दूसरा महत्व पूर्ण कारण यह था कि विहारों में अतुल्य धन इ हो जाने के कारण भिक्षुक लोगों को अधिक अवकाश प्राप्त होने लगा और भिन्न भिन्न प्रकार की क्रिया, विधियां करने लगे। अब उनका जीवन वह अनुश यद्ध न रह गया था जो बुद्धजी ने स्वयं चालू किया था। अब वह लोग अ और सुख का भी ध्यान करने लगे थे। इस प्रकार उन्होंने एक ओर तो भिन्न भि प्रकार की विधियां चलाईं। दूसरी ओर उस कठोर अनुशासन शीलता को ढी किया जो प्राचीन समय से चलती आई थी। इन दोनों कारणों ने भिक्षुक महत्व वर्ग को जन्म देने तथा विकसित करने में बड़ा काम किया।

(३) जिस समय बुद्ध धर्म ने भारत से बाहर पदार्पण किया और विदे में उसका प्रचार होने लगा तो उसको भारत से अन्य प्रथायें, रीति रिवाज़ वातावरण का सामना करना पड़ा। इसलिये स्वाभाविक ही था कि नये नये री रिवाजों तथा आवश्यकताओं के अनुसार धार्मिक सिद्धान्तों में भी परिवर्तन दिया जाय। इस उद्देश पूर्ति के लिये धर्म में परिवर्तन आवश्यक हो गया औ महायान शाखा ने इस परिवर्तन का श्री गणेश किया इसी कारण से महायान शा विदेशों में फलीभूत हुई और इसका प्रचार दिनों दिन बढ़ता ही गया।

(४) मौर्य साम्राज्य के पतन के साथ साथ पाटलीपुत्र का प्रभाव भी क्षी होने लगा और वहां का विहार जो अब तक अन्य विहारों को आदेश देता तथा जिसकी श्रद्धा और भय के कारण उन आदेशों पर अमल होता था। प्रभाव रहित हो गया और अन्य विहारों ने विशेष कर दूर के विहारों ने इन प्रभावित होना बन्द कर दिया। गान्धार के विहारों ने नवीन विचार धार के प्रभाव को रोकने का प्रयत्न ही न किया अपितु उनके प्रभाव को फलने फू दिया जिनके कारण प्राचीन धर्म की काया पलट हुई और नवीन रूप में महाया उत्पन्न होकर विकसित होता गया। पाटलीपुत्र से बुद्धधर्म का केन्द्र हट क गान्धार चला गया और गान्धार कई संस्कृतियों का संगम होने के कारण न धार्मिक परिवर्तनों के लिये अति उपयुक्त वातावरण उत्पन्न कर सका। इसी प्रका से गांधार की स्थिति के प्रभाव से महायान का उदय हुआ और फिर उसक निरन्तर शक्ति मिलती रही।

(५) बुद्धजी ईश्वर पूजा के विरोधी थे वह देवताओं की उपासना को

ाग म समझते थे। किसी की पूजा करने से मोक्ष प्राप्ति में कोई सहायता मिलती। परन्तु फिर भी मनुष्य की ऐसी प्रकृति है कि वह अपने गुरु या दर्शक में श्रद्धा रखता ही है इसी कारण से अशोक के समय में आते आते ी की अस्थि अवशेषों पर स्तूप इत्यादि का निर्माण होने लगा और इतना ही अपितु अन्य देवताओं की प्रतिमाओं की पूजा होते हुए देखकर लोग बुद्धजी ातिमायें बना बनाकर उनकी पूजा करने लगे। इस सिद्धान्त के प्रसार ने ानों की प्रगति में सहायता पहुंचाई।

(६) हिन्दुओं के भक्ति सिद्धान्त ने भी बुद्ध धर्म के परिवर्तन में अधिक यता पहुंचाई। भक्ति मार्ग का सिद्धान्त है अपने इष्टदेव के प्रति असीमित श्रद्धा भक्ति रखना। इस सिद्धान्त में विवेक का स्थान निम्न श्रेणी में गिर जाता ौर श्रद्धा तथा विश्वास विवेक का स्थान ले लेता है। इस सिद्धान्त ने ईश्वर सना के स्थान पर व्यक्ति उपासना के भाव उत्पन्न किये। इस प्रकार साधारण ण्य बुद्धजी की प्रतिमा बना बना कर उसकी उपासना करने लगे और अपनी ा व्यक्त करने लगे। इसके साथ साथ हिन्दुओं ने बुद्धजी को भी ईश्वर का तार मान लिया और उसी दृष्टि से उनकी पूजा करने लगे। इसलिये बुद्ध धर्म ा हिन्दु धर्म एक दूसरे के सन्निकट आने लगे और नवीन वातावरण में बुद्ध की प्राचीन कट्टरता अधिक दिनों तक चल न सकती थी। इस कारण से बुद्ध को बनाये रखने के लिये उसमें नवीन परिवर्तनों का लाना आवश्यक था। कार्य महायान वर्ग द्वारा पूर्ण किया गया और हिन्दु धर्म के साथ साथ यह शताब्दियों तक चलता रहा।

(७) महायानियों ने सिद्धान्तों में ऐसे परिवर्तन किये थे कि उनके कारण धर्म का द्वार सबके लिये समान रूप से खुल गया भारतीय तथा विदेशी मूर्ति क अथवा मूर्ति न पूजने वाला प्रत्येक व्यक्ति सुगमता से इस परिवर्तित रूप में पना सकता था। साधारण जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति भी इस सरल रूप बुद्ध धर्म का अनुयायी बन सकता था। इसी कारण से महायानियों की उन्नति ती गई और वह अति लोक प्रिय होता गया। इसके विपरीत हीनयान का ाव घटता ही गया।

(८) भारतीय तथा विदेशी संस्कृतियों के अन्तर-संघर्ष का फल भी इस ीन धर्म के विकास में सहायक सिद्ध हुआ।

(६) इस नवीन सम्प्रदाय के विकास में सबसे अधिक महत्वपूर्ण योग कुषाण ्राटों की धार्मिक नीति ने दिया। यह सम्राट भारतीयता में विलीन हो गये न्होंने अपने प्राचीन नामों को भी छोड़ दिया और हिन्दु या बुद्ध धर्म अङ्गीकार रके अपने प्राचीन देवताओं की उपासना भी बन्द कर दी। ये सम्राट समय के

अनुसार चलने में विश्वास करते थे और इसी में अपना तथा जनता का कल्याण समझते थे कि उस धर्म को अपनाया जाय जो भिन्न भिन्न विचार धाराओं को स्थान दे सके। इस कारण से कनिष्क को अति उपयुक्त धर्म बुद्ध धर्म का महायान रूप ही लगा और उसने इसी धर्म की प्रगति में योग दिया।

(१०) महायान शाखा को जिन महान दार्शनिकों तथा विद्वानों का सहयोग प्राप्त हुआ वह असाधारण तथा विलक्षण व्यक्तित्व के मालिक थे। अपने समय के बेजोड़ व्यक्ति थे। उनके तर्क वितर्क के सम्मुख ठहरने वालों का अभाव था। ऐसे विद्वानों का सहयोग प्राप्त कर कोई भी धर्म अथवा सम्प्रदाय प्रगति की सीमा तक पहुँच सकता था। जिस सम्प्रदाय में नागार्जुन जैसे दार्शनिक—वसुबन्धु जैसे विद्वान् हों उसकी प्रगति होना अनिवार्य ही था।

इन ही भिन्न भिन्न कारणों ने मिलकर महायान धर्म को शक्ति प्रदान की और वह पूर्ण रूप से हीनयान धर्म से स्थाई रूप में पृथक हो गया।

Q. What do you know about the administrative system of the Gupta kings?

प्रश्न—आप गुप्त सम्राटों के शासन प्रबन्ध के विषय में क्या जानते हैं?

उत्तर—मौर्य सम्राटों ने देश में एक सुव्यवस्थित शासन प्रणाली को जन्म दिया था जिस की तुलना वर्तमान काल के किसी भी शासन से की जा सकती है। परन्तु उनके पश्चात् देश में फिर अनेकों राज्यों का संघर्ष हुआ। उत्तर पश्चिम में विदेशी राज्य स्थापित हो गये और देश में किसी एक संगठित शासन व्यवस्था का अभाव हो गया। परन्तु गुप्त साम्राज्य के उत्कर्ष होने पर फिर से देश एक ही छत्र के नीचे आ गया और इन सम्राटों ने देश में एक सुव्यवस्थित शासन व्यवस्था स्थापित की। इन्होंने विदेशियों को नष्ट कर देश में एक संगठित शासन को जन्म दिया और केन्द्र की सत्ता को दृढ़ किया और एक विशाल साम्राज्य की स्थापना करने के पश्चात देश में शान्ति फैलाई।

गुप्तों का युग साम्राज्यवाद का युग था। इस युग में छोटे छोटे राज्यों का अन्त कर दिया गया और बड़े बड़े साम्राज्य हो गये। राजतन्त्र के सिद्धान्त की शक्ति निखरी और सम्राट में दैवी शक्ति का आविर्भाव होने लगा।

राजा का पद पैतृक था। वह अपना उत्तराधिकारी स्वयं नियुक्त करता था। जैसे चन्द्रगुप्त प्रथम ने स्वयं ही समुद्रगुप्त को अपना उत्तराधिकारी बनाया परन्तु ऐसे उदाहरण भी हैं जहाँ [illegible] का निर्वाचन किया गया था।

से बंगाल में गोपाल का निर्वाचन हुआ। गुजरात के कुमार पाल भी उच्च
ों द्वारा निर्वाचित हुआ था। हर्ष को राज मुकुट भी उच्च वर्गों द्वारा ही सौंपा
गा था। इस प्रकार उस समय दोनों प्रणालियां प्रचलित थीं। गुप्त सम्राट देवता
समान माना जाता था। समुद्र गुप्त की तुलना कुबेर, वरुण तथा इन्द्र से की
ती थी। कहीं कहीं उसको शिव का प्रतिनिधि भी कहा गया है। राजा स्वयं
अच्छी अच्छी उपाधियां धारण करते थे। जैसे महाराजाधिराज विक्रमादित्य,
ादित्य, महेन्द्रादित्य इत्यादि। वह देखने में स्वेच्छाचारी प्रतीत होते हैं परन्तु
व्यवहार में ऐसा नहीं था। उनकी सत्ता प्राचीन परम्पराओं तथा स्मृतियों के
सिद्धान्तों और मन्त्रियों के परामर्श तथा लोक हित की भावनाओं से बन्धी हुई
। वह मन्त्रियों के परामर्श का सदैव आदर और सम्मान करते थे। वह दैवी
धिकार को इस सीमा तक कभी न ले गये कि जन साधारण में उनके प्रति कठोरता
भावना जाग्रत हुई हो वह तो जनता में सदा लोक प्रिय थे।

राजा समस्त शासन का केन्द्र था सब सूत्र आकर उस ही में अन्त होते
। वह राज्य के समस्त उच्च कर्मचारियों की नियुक्ति करता था। सेना शासन के
दाधिकारी तथा राजदूत इत्यादि उसी के आदेशानुसार नियुक्त किये जाते थे।
ह न्याय के क्षेत्र में उच्चतम न्यायालय का काम करता था। उसके फैसले अन्तिम
ोते थे। वह सम्मानीय व्यक्तियों को उपाधियां भी प्रदान करता था। केन्द्रीय
ार्यालय उसी के निरीक्षण में कार्य करता था। राज्य के सब पदाधिकारी उसके
ति ही उत्तरदायी थे। यह सब कार्य वह एक परिषद के परामर्श से ही करता था।

मौर्यों के समान गुप्त सम्राट भी मन्त्रिपरिषद द्वारा राज्य करते थे। इस
परिषद की रचना के विषय में तो कोई विशेष जानकारी नहीं हो पाई परन्तु यह
निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि इसके अधिकार में शासन के भिन्न भिन्न
विभाग होते थे और इन विभागों का संचालन सुचारु रूप से किया जाता था।
धर्म, सेना, भूमि, व्यापार, वैदेशिक नीति इत्यादि का कार्य इस परिषद द्वारा
चलाया जाता था। इस परिषद के सदस्य साधारणतया कुशल सेनानी या राजनीति
के विद्वान और अनुभवि होते थे। मन्त्रि अपने अपने विभाग को स्वयं चलाता था
परन्तु महत्वपूर्ण विषयों का निर्णय समस्त परिषद की बैठक द्वारा किया जाता था।
प्रत्येक विभाग का केन्द्र में अलग दफ्तर होता था। मन्त्रि पद धीरे धीरे पैतृक होता
जा रहा था।

केन्द्र का शासन एक 'सर्वाध्यक्ष' नामक उच्चाधिकारी द्वारा किया जाता
था। उसकी सहायता के लिये अनेकों उच्चाधिकारी होते थे जो मौर्य युग के
'महामन्त्रों' और आजकल के 'भारतीय शासन सर्विस' (Indian Administrative Service) के सदस्यों की तरह के थे। इनके द्वारा शासन सुचारु रूप

चलाया जाता था। शासन सुविधा के लिये साम्राज्य प्रान्तों में विभाजित प्रान्त को 'भुक्ति' कहते थे। प्रान्त का गवर्नर यौगिक-भोग पति या कहलाता था। प्रान्त प्रदेशों में तथा प्रदेश जिलों में जो 'विषय' कहे विभाजित होते थे। विषयों का उच्चतम अधिकारी विषयपति कहलाता था। ग्रामों में विभाजित थे। ग्राम अधिकारी ग्रामिक कहलाता था। ग्राम में प तथा नगरों में सभा होती थी। विषयों की राजधानी में एक परिषद् भी होत जिस के भिन्न भिन्न पदाधिकारी इस प्रकार थे। नगर श्रेष्ठिन, सार्थवाह व्यापारी) प्रथम कुलिक (कारीगरों का प्रधान), प्रथम कायस्थ (मुख्य ले पुस्तपाल (भूमि के मूल्य का निर्धारण करने वाला), इस परिषद् का क्या कार्य था। इस का निश्चय रूप से पता नहीं चलता।

न्याय व्यवस्था अच्छी थी। न्याय का अन्तिम अधिकारी सम्राट था। उ ओर से अन्य न्यायाधीश होते थे सरकारी न्यायालयों के अतिरिक्त शिल्प के भी न्यायालय होते थे जो शिल्पियों के विवादों का निर्णय करते थे। ग्रामों सभा वाद विवादों के निर्णयों में सहायता देती थी। नारद स्मृति के अनुसार समय चार प्रकार के न्यायालय होते थे। १-कुल २-श्रेणी ३-गण ४-राज न्यायालय। प्रथम तीन प्रकार के न्यायालय जनता के अपने होते थे। चतुर्थ सर होता था। गुप्त सम्राटों का दण्ड विधान कठोर न था। मृत्यु दण्ड न दिया ग था। देश द्रोह की सजा अंग भंग के रूप में दी जाती थी। अधिक तर द जुर्माने के रूप में दिये जाते थे। और स्थिति के अनुसार जुर्माने की मात्रा नि की जाती थी। फाह्यान के कथनानुसार अपराध कम होते थे। प्राणदण्ड व शरीर दण्ड नहीं दिया जाता था।

इस प्रकार यह विदित है कि न्याय व्यवस्था अति उत्तम थी। क्योंकि न्या विभाग का मुख्य कार्य अपराधों को रोकना ही तो है और गुप्त काल में कम से कम अपराध होते थे।

राज्य की आय के अनेकों साधन थे परन्तु मुख्य भूमि कर था जो उप का छठा भाग था। कुछ अभिलेखों से पता चलता है कि भिन्न भिन्न प्रकार के १८ कर थे परन्तु वह कौन कौन से थे यह पता नहीं चलता। भूमि कर जमीन के गुण के अनुसार था। अधिक पैदावार पर अधिक कर भी देना पड़ता था। इस क को भाग भी कहा गया है।

अन्य मुख्य कर चुंगी 'कर' था। जो वस्तुयें जैसे फल, दूध, दही इत्यादि चुंगी कर के विषय थे। इस कर का उल्लेख वाकाटों के अभिलेखों में आया है में बनने वाली वस्तुओं पर भी कर लगाया जाता था। इसके अतिरिक्त ... राजा सम्राट को कर तथा भेंट के रूप में अतुल्य धन देते थे। राज

अपनी निजी सम्पत्ति से भी अच्छी आय हो जाती थी। आवश्यकता पड़ने राज्य की ओर से करों में वृद्धि भी की जा सकती थी। इस प्रकार गुप्त ाटों के आय के साधन अनेकों थे और कोष धन से परिपूर्ण रहता था। यह य धन प्रजा के सुख साधनों पर व्यय किया जाता था इतने कर देने के मृद्ध भी जनता सुखी और समृद्धशाली थी इससे प्रगट होता है कि जन ारण भी धन धान्य से ओत प्रोत थे।

गुप्त साम्राज्य की स्थापना करने में एक विशाल शक्तिशाली सेना का ोग किया गया था। इस सेना की ओर गुप्त सम्राटों का विशेष ध्यान रहता था। के मुख्य अंग—पैदल, घुड़सवार तथा हाथी थे। रथों का प्रयोग कुछ कम हो ा था। कहीं कहीं ऊँटों से भी काम लिया जाता था। इन सम्राटों के पास कुछ सेना भी थी। सेनापति बड़ा ही विश्वासनीय व्यक्ति होता था। वह विग्राहक लाता था। उसको सन्धि करने का अधिकार था। उसके अधीन महादण्ड नायक वा प्रधान सेनापति बलाधिकृत (सैनिकों की नियुक्ति करने वाला) र ग्भांडा-रिक (सैनिक सामानों का अधिकारी) भटाश्वपति (पैदल तथा घुड़ सवारों का ान) इत्यादि अनेकों सैनिक पदाधिकारी थे। सम्राट् की अपनी सुव्यवस्थित ा संगठित सेना के अतिरिक्त सामन्तों तथा अधीन राजाओं की सेनायें होती थी आवश्यकता पड़ने पर सम्राट की सहायतार्थ एकत्रित हो जाती थीं। सेना के तिरिक्त इन सम्राटों ने आन्तरिक शान्ति रखने के लिये रक्षा विभाग का भी र्माण किया था। यह आधुनिक पुलिस के समान थी। इस विभाग का उच्चतम धिकारी दण्ड पाशाधिकारी कहलाता था। इसी विभाग से सम्बन्धित गुप्तचर भाग भी था जो अपराधों का पता लगाने में बड़ा ही कुशल था। चीनी यात्री ाहियान ने आन्तरिक शान्ति तथा अपराधों की कमी की प्रशंसा करते हुए लिखा कि उसने देश का सैकड़ों मील भ्रमण किया परन्तु उसको कहीं चोर या डाकुओं नुकसान उठाना न पड़ा। इस प्रकार देश में एक छोर से दूसरे छोर तक ान्ति स्थापित थी और शासन के सुव्यवस्थित तथा सुसंगठित होने से जनता मृद्धशाली होती हुई जा रही थी। इसी कारण से गुप्तकाल भारतीय इतिहास का देदीप्यमान काल है।

Q. 5. Give a detailed description of the economic condition f the people during the Gupta age.

प्रश्न—गुप्त काल में जनता की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति का विस्तार पूर्वक वर्णन करो ?

उत्तर—चीनी यात्री फाहियान जो बुद्धजी की जन्म भूमि के दर्शन करने तथा बुद्ध ग्रन्थों की खोज में चन्द्रगुप्त द्वितीय के राज्य काल में भारत आया था उसने यहां के लोगों की अवस्था का पूरा वर्णन दिया है। उस वर्णन के आधार पर तथा उस काल के शिला लेखों तथा मुद्रा लेखों से पता चलता है कि यहां के लोग समृद्धशाली धन सम्पन्न तथा सम्पन्न गुणो थे। मनेकों प्रतिभाशाली कलाकार अपनी अनुपम आभा के साथ समस्त साम्राज्य में फैले हुए थे। साम्राज्य भर में जन संख्या प्रगति के साथ बढ़ रही थी। चीनी यात्री ने मुक्त कण्ठ से यहां के लोगों के सदाचार और नैतिक गुणों का गुण गान किया है वह लिखता है कि लोगों का आपसी व्यवहार बड़ा सुन्दर था। आपसी प्रेम से जीवन व्यतीत होता था। लोग हर प्रकार से सन्तुष्ट जीवन व्यतीत करते थे। इन लोगों पर बुद्ध धर्म के अहिंसात्मक सिद्धान्त का प्रभाव दृष्टिगोचर होता था क्योंकि अधिकतर लोग शाकहारी थे और मांस से बचते थे। मद्यपान भी बहुत ही कम था। लहसन, प्याज का प्रयोग नहीं किया जाता था। सूअर तथा मुर्गी पालना घृणित समझा जाता था और यह काम चाण्डाल लोग ही कर सकते थे। चाण्डाल ही आखेट करते तथा मांस प्रयोग करते थे। लोगों में नैतिकता की भावना बहुत अधिक थी। द्वारा जनहित के कार्य करने की लोगों में होड़ रहती थी मन्दिर तथा धर्मशाला बनवाने का लोगों को चाव था। उदारता के भाव से प्रेरित होकर धनी व औषधालय स्थापित करते थे। अन्नक्षेत्र बनवाते थे। इन स्थानों पर यात्रियों को मुफ्त खाना मिलता था। और उनको खाना दिया जाता था। बाजारों में प्रत्येक आवश्यकता की वस्तु सरलता से प्राप्त हो जाती थी। लोग भोजन के पश्चात् प्रायः ताम्बूल खाया करते थे। ब्राह्मण लोग शराब का बिलकुल प्रयोग न करते थे। दक्षिणी भारत में राज घरानों के लिये पाश्चात्य देशों से अच्छी शराब मंगाई जाती थी परन्तु साधारण और निम्न श्रेणी के लोग देसी शराब का ही प्रयोग करते थे।

प्राचीन भारत में लोग धोती तथा एक अन्य वस्त्र ऊपरी जिस्म को ढांकने के लिये रखते थे। राजे महाराजे विदेशियों द्वारा लाये हुवे—कोट ओवरकोट तथा पायजामे जैसे वस्त्रों का भी प्रयोग करते थे परन्तु सभाओं की वेषभूषा प्राचीन भारतीय ही बनी रही। स्त्रियां नीचे दामन और ऊपर साड़ी का प्रयोग करती थीं। सीथियन स्त्रियां ब्लाउज, फराक तथा जैकेट जैसे वस्त्र धारण करती थीं। सीथियन महिलाओं का पहनावा भारतीय स्त्रियों में लोकप्रिय न हो सका। हां उनकी पोशाक नृतिकायें अवश्य प्रयोग में लाती थीं। साधारण लोग सूती वस्त्रों का प्रयोग करते थे परन्तु मालदार लोग उत्सवों तथा समारोहों के अवसर पर रेशमी वस्त्र धारण करते थे।

आभूषणों का बड़ा प्रचलन था, तरह तरह के आभूषण काम में लाये जाते थे इनमें कानों की बालियां, मोतियों की सुन्दर मालायें, फंदोरे, रत्नजड़ित चूड़ियां, अंगूठियां, हार, करधनी, कड़े इत्यादि होते थे। नथ का रिवाज मालूम नहीं पड़ता। केश बनाने, संवारने के अनेकों ढंग थे। इनके नमूने, अजन्ता की दीवारों पर बनाई हुई चित्रकारी से प्रगट होते हैं। ये नमूने बड़े ही मन मोहक होते थे मुख की तथा होठों की सुन्दरता बढ़ाने के लिये रंग प्रयोग में आते थे।

चौपड़ और शतरंज दोनों लोकप्रिय खेल थे। लोगों को महेंडों तथा मुर्गों की लड़ाई देखने का बड़ा चाव था। समारोहों के अवसरों पर स्त्रियां भी शारीरिक खेल खेलती थीं। आखेट भी मनोविनोद का अच्छा साधन था। यह लोग जीवन को सुख पूर्वक व्यतीत करने का प्रयत्न करते थे। महिलायें तथा बालक गेंद के कई खेल खेलते थे। नाटक और तमाशे भी मनोरञ्जन के अच्छे साधन माने जाते थे।

सामाजिक संस्थायें—उस समय इस प्रकार के असफल प्रयत्न किये गये कि जाति प्रथा में कठोरता उत्पन्न की जाय। अन्तर जातीय विवाह रुक जांय। पेशे द्वारा जाति निर्धारित हो। परन्तु इस दिशा में पूर्ण सफलता प्राप्त न हो सकी और जाति प्रथा में वह कठोरता न आई जो आजकल है। कोई व्यक्ति किसी भी जाति का होकर कोई भी पेशा कर सकता था। क्षत्रिय व्यापार कर सकता था, खेती कर सकता था। इसी प्रकार ब्राह्मण भी अन्य जाति का पेशा अपना सकता था। वैश्य भी किसी प्रकार अपने जातीय पेशे मे बंधा हुआ न था। अन्तरजातीय विवाह भी प्रचलित थे भिन्न भिन्न समुदाय इन बन्धनों की परवा न करते थे। कई प्रकार के विवाह वैध माने जाते थे जैसे यदि उच्च वर्ग का पुरुष निम्न वर्ग की स्त्री से विवाह कर ले तो वह विवाह अनुलोम समाज में वर्जित नहीं था। या निम्न वर्ग का पुरुष उच्च वर्ग की कन्या से प्रतिलोम विवाह कर सकता था इस प्रकार के अनेकों विवाह हो जाया करते थे। विदेशी जो उस समय हिन्दू धर्म में सुगमता पूर्वक प्रवेश कर सकते थे इस प्रकार के विवाह कर सकते थे और इसी कारण से हिन्दू धर्म व्यापक होता चला जा रहा था। वह एक विशालता रखता था जिसका विनाश मध्यकाल में हो गया। शूद्र सदा उच्च वर्गों की सेवा ही करता रहे ऐसा सिद्धान्त पूर्ण रूप से मान्य न था। शूद्र कोई भी कार्य करने के लिय स्वतन्त्र था सेना में भरती होकर उच्च से उच्च पद प्राप्त करने में कोई रुकावट न थी यदि उसमें योग्यता हो। वह शिल्पी, कृषक, व्यापारी कुछ भी हो सकता था। परन्तु छूत छात उस काल में था पुरुषों को नगरों से बाहर रहने वाले चाण्डाल अछूत माने जाते थे। जब कभी वह नगर में प्रवेश करते तो उनको लकड़ी के द्वारा आवाज करके चलना पड़ता था ताकि उनकी आवाज सुनकर उच्च वर्गीय हिन्दू अलग बच सके और अपवित्र न हो जायें। यह था अस्पृश्यता का सजीव

उदाहरण—यह अछूत शिकारी का काम, मेहतर का काम तथा अन्य घृणि कार्य करते थे।

दासता की प्रथा थी युद्ध बन्दी ऋणि जो ऋण न चुका सकते थे दास बना लिये जाते थे। परन्तु ऋणी अपना करजा चुका कर या दासी, दासता से मुक्ति कर सकते थे। युद्ध बन्दी भी अपने स्थान पर किसी अन्य को रखकर दासता बन्धन से छूट सकते थे। इस प्रकार भारत में दासता की प्रथा उतनी कठोर निर्दयता पूर्ण नहीं थी जैसे रोम या यूनान की। यहां दासों के प्रति अच्छा दया पूर्ण व्यवहार किया जाता था।

हिन्दु परिवार के रूप में मिल जुल कर रहते थे। पिता ही सम्पत्ति मालिक था परन्तु अन्य सदस्यों के भाग भी नियत किये जाते थे। विधवाओं अलग सम्पत्ति नहीं दी जाती थी। 'मिताक्षरा' के नियम लागू होते थे।

स्त्रियां—स्त्रियां अच्छा जीवन व्यतीत करती थीं। अनेकों स्त्रियां शिक्षा प्राप्त करती थीं और अच्छी लेखिकायें सिद्ध होती थीं जैसे शील भट्टारिका उसी समय में प्रख्यात हुई शिक्षा का प्रचार अधिकतर उच्च घरानों में ही था। कन्याओं के विवाह जल्दी कर दिये जाते थे स्मृतियों अनुसार कन्या को ऋतुमति होने से पूर्व ही विवाह कर देते थे। इससे यह प्रग कि कन्याओं को अपने वर के विषय में अपना मत प्रगट करने का अवसर ही न था। परन्तु राजघरानों में अब भी स्वयम्बर की प्रथा थी। हालांकि अब इस प्रचार कम हो चला था। विधवा विव. भी हो जाते थे। परन्तु कम था चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने भ्राता की विधवा पत्नि ध्रुव देवी से विवाह किया था बहुविवाह का रिवाज भी कुलीन घरानों तक ही सीमित था।

सती की प्रथा थी परन्तु बहुत कम। इस के उदाहरण तो मिलते हैं ५१० सन् में गोराज की पत्नि अपने मृत पति के साथ ही सती हो गई थी। धीरे यह रिवाज बढ़ रहा था परन्तु अब तक यह राज वंशों तक ही सीमित था इस प्रथा का कोई धार्मिक महत्व न था। भास, कालीदास, तथा शूद्रक ने अ ग्रन्थों में इस प्रथा का उल्लेख किया है। अनेकों स्त्रियां शासन कार्यों में कुश होती थी और सरकार में उच्च पद तक प्राप्त करती थीं दक्षिण में तो स्त्रियां ग्रामों के मुखिया तक होने के प्रमाण मिले हैं।

दक्षिण के अनेकों अभिलेखों से पता चलता है कि राज वंशों की स्त्रि गाने तथा नृत्य करने में निपुण होती थी और कभी कभी सार्वजनिक अवसरों पर भी अपने कला कौशल का प्रदर्शन करती थी। पर्दे का रिवाज न था। स्त्रि स्वच्छन्दता पूर्वक घूम सकती थी। अनेकों स्त्रियां गृहस्थ छोड़ कर तपस्वी जीवन

व्यतीत करती थीं। परदे की स्वतन्त्रता होने पर भी कुलीन वन्शों की स्त्रियां अपने वस्त्रों पर एक और कपड़ा ओढ़ती थीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज में स्त्री का स्थान ऊंचा था और वह सम्मान पूर्ण जीवन व्यतीत करती थी। वह घर की चार दीवारी में बन्द रखने की वस्तु न बनी थी और न उस को परदे के अन्दर बन्द रख कर बाहर के संसार से दूर रक्खा जाता था। अभी तक स्त्री का वह निम्न स्थान न आया था जो आगे चलकर आया और वह एक बेकार का जीवन व्यतीत करने लगी। वह शिक्षा से अलग करदी गई और महिला समाज की प्रगति रुकने से भारतीय समाज का भारी अहित हुआ। गुप्त काल का समाज ऊंचे स्तर का था। वह प्रगति शील था और समृद्धशाली, सुखी तथा सन्तुष्ट था।

आर्थिक दशा—गुप्त सम्राटों ने देश में शान्ति का वातावरण बनाये रक्खा इस समय इस शान्ति के कारण प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति होती रही। लोगों की आर्थिक दशा भी अति उत्तम थी। यहां के व्यवसाय, व्यापार, कृषि, हर प्रकार के उद्योग धन्धे दिन रात प्रगति कर रहे थे देश धन धान्य से परिपूर्ण था। फाहियान के अनुसार बाजार हर प्रकार की वस्तुओं से भरे पड़े थे।

इस समय कृषि द्वारा अनेकों वस्तुयें उत्पन्न की जाती थी। गेहूं, जौ, चावल जूट, बाजरा, कपास, मसाले, नील यहां पर खूब पैदा होते थे। जंगलों तथा वनों में कीमती लकड़ी मिलती थी। सागौन, आबनूस, सन्दल की लकड़ी बहुतात से प्रयोग में आती थी। धातुयें खानों से निकाली जाती थीं बहुमूल्य धातुयें विदेशों से भी लाई जाती थीं। मध्य भारत तथा दक्षिणी भारत में अनेकों खानें थीं। धातुओं से तरह तरह की वस्तुयें तैयार की जाती थी। हाथी दांत की वस्तुयें बड़ी सुन्दर प्रतीत होती थी। शिल्पी अन्य वस्तुयें बनाते थे। जलपोत भी बनाये जाते थे जिनके द्वारा विदेशों से व्यापार होता था। कपड़े का व्यवसाय विशेष रुप से उन्नत था। इस व्यवसाय के मुख्य केन्द्र दक्षिण भारत, बंगाल, गुजरात तथा तामिल प्रदेशों में स्थित थे, यहां का बहुमूल्य कपड़ा विदेशों में खूब जाता था। उस समय वस्तुओं द्वारा ही विनिमय हो जाता था। मुद्रा प्रयोग में बहुत कम आती थी। जीवन निर्वाह की वस्तुयें बड़ी सस्ती होती थी। कौड़ियों से वस्तुयें मिल जाती थी।

व्यापार आन्तरिक तथा बाहरी दोनों क्षेत्रों में अधिक मात्रा में होता था अन्न, मसाले, नमक, सोना, चांदी, वस्त्र आन्तरिक व्यापार की मुख्य वस्तुयें थीं व्यापार सड़कों, नदियों द्वारा होता था। व्यापार के कारण अनेकों नगरों का विस्तार हो रहा था। जो एक दूसरे से राज पथों द्वारा मिला दिये गये थे। भड़ौंच उज्जैन, वैशाली, कौशाम्बी, बनारस, मथुरा, प्रयाग, ताम्रलिपि, पुरषपुर, पाटलीपुत्र

प्रमुख व्यापार केन्द्र थे इन सब को एक चौड़ी सड़क जोड़ती थी। दक्षिणी भारत के साथ व्यापार बहुत बढ़ गया था . यह दो मार्गों द्वारा अधिक होता था। एक रास्ता पूर्वी तट के साथ साथ जबलपुर के दक्षिण से जाता था तथा दूसरा उज्जैन होकर पश्चिमी तट के साथ साथ जाता था। समुद्र के द्वारा भी बड़ा व्यापार होता था। ताम्रलिप्ति बंगाल का प्रसिद्ध बन्दरगाह था। कल्याण, भड़ौच, कम्बे, गुजरात के प्रमुख बन्दरगाह थे। इनके द्वारा चीन तथा पूर्वी द्वीप समूह के साथ व्यापार होता था। आंध्र देश में कृष्णा तथा गोदावरी के मुहानों पर कई बन्दरगाह थे जैसे पन्टशाल तथा कदूरा का उल्लेख 'टालमी' ने भी किया है। चोल तथा पाण्ड्य प्रदेशों के भी अनेकों प्रमुख बन्दरगाह थे। कावेरी पट्टम, टोंडाई चोल प्रदेश कोरकई तथा सलीमूर पान्डिया प्रदेश के उत्तम बन्दरगाह थे। इन बन्दरगाह द्वारा चीन आदि देशों से खूब व्यापार चलता था। पूरब के साथ पश्चिमी देशों भी अधिक व्यापार होता है। चन्द्रगुप्त द्वितीय के सौराष्ट्र के विजय करने से इस व्यापार में और भी अधिक उन्नति हुई। रोम साम्राज्य के उत्कर्ष के कारण रोम सभ्यता में उन्नति हुई, लोग विलास की सामग्रियों का प्रयोग करने लगे, महिलाएं सुन्दर वस्त्र धारण करने लगीं। इस लिये भारत से अनुपम रत्न, हाथीदांत के वस्तुयें, सुन्दर वस्त्र, सुगन्धित वस्तुयें, मसाले, नील, औषधियां अधिक मात्रा में विदेशों को जाती थी। ये वस्तुयें निर्यात होकर सोना, चांदी, तांबा, टिन सीसा, रेशम, कपूर, खजूर, घोड़े इत्यादि बदले में आती थीं। हमारे देश के बने रत्न जड़ित आभूषण, सुगन्धित वस्तुयें, रोम की युवतियों को विशेष रूप से आकर्षित करती थी। उनकी भारी मांग रहती थी। परिणाम यह होता था कि रोम से बड़ी मात्रा में धन खिंचा चला आता था। और उस देश से इस प्रकार धन के आने से वहां के दूरदर्शी लोगों को भय भी उत्पन्न हुआ था। एक विद्वान ने इस प्रकार आते हुवे धन को देख कर दुख भी प्रगट किया था। सम्राटों ने कुछ नियमों द्वारा अपने देश से निकलने के विरुद्ध कुछ नियम भी बनाये थे। इस प्रकार हमारा व्यापार किसी न किसी रूप में हमारे देश को धन धान्य से दिन प्रतिदिन परिपूर्ण कर रहा था और देश की आर्थिक दशा दिनों दिन समृद्ध हो रही थी। देश का वैभव बढ़ रहा था।

उस समय की महत्व पूर्ण संस्था शिल्पियों के संघ होते थे। ये उच्च तथा निम्न दोनों प्रकार के शिल्पियों के थे। शिला लेखों तथा मुद्राओं द्वारा प्रगट होता है कि बड़े बड़े महाजनों के साथ साथ जुलाहों, धोबियों, तेलियों इत्यादि शिल्पी भी अपने अपने संघ बनाते थे। इन संघों के अपने नियम होते थे। जिनको राज्य मान्यता देता था और इनके साथ आदर का बर्ताव करता था। संघों का कार्य ५ सदस्यों की कार्य कारिणी अपने प्रधान के सभापतित्व में करती थी। यह अपनी

वाद विवाद को तय करती थी। ये संघ सदस्यों के लिये बैंकों का काम देते थे। कई कई संघ तो बड़े मालदार होते थे और मन्दिर आदि का निर्माण कराते थे। प्रत्येक संघ अपनी अपना मोहर रखता था। ये संस्थायें बड़ा ही सहयोग रखती थी और सदस्यों के हित का विशेष ध्यान रखती थी।

इस प्रकार यह बात साफ तौर से प्रगट है कि गुप्त सम्राटों का भारत सामाजिक तथा आर्थिक दोनों क्षेत्रों में उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गया था। सभ्य संसार का कोई देश ऐसा न था जहाँ भारत की वस्तुओं की मांग न रहती हो और जहाँ का धन भारत में न आता हो। उस समय देश धन धान्य से परिपूर्ण था लोग समृद्धशाली थे और सुख तथा आनन्द का जीवन व्यतीत करते थे।

Q. 'In the religious field the Gupta Emperors supported Hinduism but they tolerated equally all other religions also and thus by that they served Hinduism still more' Comment on this.

प्रश्न—धार्मिक क्षेत्र में गुप्त सम्राटों ने हिन्दू धर्म को सहायता पहुँचाई परन्तु और सब धर्मों के प्रति भी समान रूप से सहिष्णुता रखी और ऐसा करके हिन्दू धर्म की और भी सेवा की। इसकी विवेचना करो।

उत्तर—सम्राट अशोक के पश्चात बुद्ध धर्म को उचित राज्य संरक्षण मिलना बन्द हो गया था। परन्तु मौर्य काल के अन्त के साथ साथ यह संरक्षण पूर्ण रूप से रुक गया। पुष्य मित्र जो शुङ्ग वंश का संस्थापक था स्वयं हिन्दू धर्म को प्रोत्साहन दे रहा था उसके पश्चात कारव वंश ने भी इसी धर्म को शक्ति पहुँचाई। वाकाटक राज्य वंश ने नाग वंश की धरी हुई नींव को नवीन शक्ति दी और उसके फल स्वरूप हिन्दू धर्म फिर से प्रगति के पथ पर अग्रसर होता गया। जब गुप्त साम्राज्य का उत्कर्ष हुआ तो हिन्दू धर्म भी अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। इस लिये यह कहना अति युक्त है कि पहले से प्रारम्भ किया हुआ कार्य गुप्त सम्राटों ने अपने उदार संरक्षण के द्वारा पूरा किया और हिन्दू धर्म को उस पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया जो अब तक उसको प्राप्त न हो पाई थी। हिन्दू धर्म का वह रूप जो उसको गुप्त काल में मिला था कुछ परिवर्तनों सहित आज भी मौजूद है।

उस समय के हिन्दू धर्म में अनेकों देवी देवताओं की पूजा होती थी। इन में विष्णु, शिव, सूर्य प्रधान थे। कहीं वैष्णव सम्प्रदाय या भागवत सम्प्रदाय अधिक लोक प्रिय था। कहीं शैव सम्प्रदाय। दोनों सम्प्रदायों में समान रूप से ही लोग श्रद्धा रखते थे और कोई एक दूसरे से लोक प्रियता में कम न था। गुप्त, पल्लव तथा गंग, नरेश, वैष्णव धर्म को मानते थे परन्तु वाकाटक, नाग, भारशिव, मैत्रक, कदम्ब, राजवंश, शिव मत में विश्वास करते थे।

गुप्त काल के वैष्णव धर्म में अवतार वाद का सिद्धान्त पूर्ण रूपेण विकसित हो चुका था और अब इस में लोगों का पूर्ण विश्वास हो गया था। हालांकि इससे पूर्व 'दस अवतार' का सिद्धान्त माना गया था परन्तु अब तक वह लोकप्रिय न हो पाया था। अब विष्णु देवता जो विश्व को आशा और विश्वास देने वाले पूर्ण रूप से जनता के प्रेम और श्रद्धा को प्राप्त कर चुके थे। अब भिन्न भिन्न नामों से उनकी पूजा तथा उपासना होती थी। चक्रभृत, गदाधर, जनार्दन, नारायण, वासुदेव इत्यादि नामों से इनको याद किया जाता था। लोग ऐसा विश्वास करते थे कि समय समय पर अधर्मियों और राक्षसों का संहार करने तथा विश्व कल्याण के हेतु विष्णु अवतार धारण करते हैं। इसी प्रकार कृष्ण जी को भी विष्णु का अवतार माना गया। यद्यपि ईसा से पूर्व कृष्ण जी को मानव का कल्याणकारी लिया गया था परन्तु उनको यह स्थान कि वह अनन्त अनादि तथा निर्गुण है साक्षात ईश्वर हैं जैसा गीता में माना गया था। गुप्त काल में ही प्राप्त हुआ। इस समय राम तथा सीता की उपासना आरम्भ न हो पाई थी।

शिव दूसरे देवता थे यह सृष्टि का संहारक माने गये इनकी पूजा तो होती थी परन्तु इनको वह प्रेम प्राप्त न था जो विष्णु को प्राप्त था। शिव के अनेक मन्दिर इस युग में निर्मित हुये उनकी मूर्तियों की उनमें स्थापना की गई। इस समय की शिव मूर्तियों में मानव तथा लिंग की आकृतियों का समन्वय है। शिव की प्रलयकारी मूर्ति का भी निर्माण किया गया था। जिसके ताण्डव नृत्य करते समय का रूप बड़ा ही भयानक है। शिव को गाय के साथ त्रिशूल लिये हुये दिखाया गया है।

उस समय कई देवियों की उपासना भी प्रचलित थी। इन में लक्ष्मी, दुर्गा, पार्वती इत्यादि था। इनके साथ साथ सूर्य देवता की उपासना भी की जाती थी। नाग की पूजा अधिकतर निम्न श्रेणी के लोग किया करते थे। राजगृह में एक देवालय मणि नाग के लिये बनाया गया था। उस समय की गणेश की मूर्ति भी प्राप्त हुई हैं। मन्दिरों में तथा देवालयों में पूजा पाठ उपासना का लोक प्रिय रिवाज गुप्त काल में बहुत अधिक हो चुका था। आज इस प्रकार के अनेकों मन्दिर के भग्नावशेष उपलब्ध हुये हैं। इस काल में बने हुये मन्दिरों देवालयों की संख्या इस बात का बड़ा ही सजीव उदाहरण है कि उस समय लोगों की इस ओर कितनी अधिक प्रवृत्ति थी। यह मन्दिर और उपासना गृह ही न थे अपितु हिन्दू संस्कृति के महत्व पूर्ण केन्द्र भी थे। इन्होंने अनेकों कलाओं के उत्कर्ष में सहायता पहुंचाई है। वास्तुकला, चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत तथा नृत्यकला इत्यादि इन पवित्र स्थानों में कलाकारों को प्रोत्साहन प्राप्त करने का वातावरण भी उत्पन्न किया और लोगों

तक स्तर को ऊपर उठाने में सहायता पहुंचाई। उस समय लोगों में तीर्थ यात्रा का व भी फैल रहा था।

यही हिन्दू धर्म गुप्त सम्राटों का प्रिय धर्म था। इस धर्म को ही उनका ार संरक्षण प्राप्त हुआ था और इनके संरक्षण ने ही हिन्दू धर्म के उत्थान में सब अधिक योग दिया। इसी समय में हिन्दू धर्म नवीन जीवन प्राप्त कर उत्थान ी ओर अग्रसर हुआ था। उस समय के लेखों से पता चला है कि नरेश, मन्त्री या अन्य दानशील व्यक्ति ब्राह्मणों को धन तथा भूमि का दान दिया करते थे। न्दिरों में भिन्न भिन्न देवताओं की मूर्तियां स्थापित की जाती थीं। मूर्तियों तथा ीवारों को सुन्दर सुन्दर रंगों से सजाया जाता था। और चित्रकला द्वारा अलंकृत िया जाता था देवताओं की पूजा इतना जोर पकड़ गई कि प्रत्येक पूज्य वस्तु के ीछे किसी देवी शक्ति का हाथ मान लिया जाता था। विस्तृत क्रिया विधियां तथा ज्ञों का चारों ओर बोल बाला हो गया।

देवास्थान लोगों के दिलों में भावना जाग्रत करते थे और उनके अन्दर हुँचने पर प्रत्येक व्यक्ति का मस्तिष्क श्रद्धा से नीचे झुक जाता था। सम्राटों ने दिल े हिन्दू धर्म को अपनाया। यज्ञ करने में उन्होंने महान अभिरुचि का प्रमाण दिया। अश्वमेध यज्ञ, वाजपेय, अग्निसोम इत्यादि यज्ञ तथा विधियां सम्राट स्वयं कराते थे। समुद्रगुप्त ने महान अश्वमेध यज्ञ किया था और इसकी याद बनाये रखने के लिये उसने मुद्रायें भी प्रसारित कराई थीं। उसने इस यज्ञ से सम्बन्धित एक उपाधि भी ग्रहण की थी। यही उपाधि बाद में कुमारगुप्त प्रथम ने भी धारण की थी। चन्द्रगुप्त द्वितीय, कुमारगुप्त प्रथम तथा स्कन्दगुप्त ने परम भागवत की भी उपाधि धारण की यह इस बात के जीते जागते उदाहरण हैं कि गुप्त सम्राट हिन्दू धर्म में कितना अधिक अनुराग रखते थे। उस समय उनसे प्रेरणा पाकर जन साधारण भी हिन्दू धर्म में रुचि रखने लगे थे। परन्तु कठोर विधियों को न अपना कर अधिकतर जन साधारण भक्ति मार्ग की ओर आकर्षित हो रहे थे।

गुप्त सम्राटों के साथ साथ ब्राह्मण दार्शनिक तथा विद्वान भी नवीन जागृति के लिये जिम्मेदार थे धर्म की आन्तरिक शक्ति फिर से प्रस्फुटित हो उठी और उन तमाम बातों को अपना कर जिन्होंने बुद्ध धर्म को लोकप्रिय बनाया था ब्राह्मण धर्म को उन्नत किया इस नवीन धर्म ने सहिष्णुता और उदारता की भावना से प्रेरित हो अपने द्वार विदेशियों के लिये भी खोल दिये थे और दिन प्रतिदिन हिन्दू-धर्म व्यापक रूप धारण करता चला गया हिन्दू-धर्म ने ऐसा रूप अपनाया जो आज तक चला आ रहा है हां इसने अपनी विशालता तथा उदारता की भावना तो अवश्य कम कर दी है।

बुद्ध तथा जैन धर्म—यह दोनों धर्म भी हिन्दू धर्म के साथ साथ फै रहे थे जैन धर्म के प्रधान केन्द्र समस्त देश में फैले हुये थे, मथुरा, बल्लभिद्र गिरि तथा कांची जैन धर्म के मुख्य केन्द्र थे, दक्षिण के हिन्दू राजा इस धर्म प्रति बड़ी दया, उदारता तथा सहिष्णुता रखते थे, उसी काल में जैनियों की ए सभा बल्लभि में धर्म ग्रन्थों में संशोधन करने के उद्देश से बुलाई गई थी इ समय जैनियों ने अपने धर्म शास्त्रों की अनेक टीकायें तथा भाष्यें लिखे इस सम के उनके ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे गये, जैन धर्म तथा शिव मत वालों में उ समय बड़ी ही प्रतिस्पर्धा थी परन्तु फिर भी सहिष्णुता का वातावरण रहता औरर यूरोप की दहकने वाली भट्टियां यहां कहीं देखने में न आती थीं।

बुद्ध धर्म की भी इस युग में उन्नति हो रही थी और हिन्दू धर्म ने इस स्थान नहीं लिया था हालांकि इस धर्म ने गुप्तायों का संरक्षण खो दिया परन्तु उन महान् सम्राटों की उदारता तथा सहिष्णुता इनके साथ थी फाह्यान ने लिखा है कि बुद्ध तथा हिन्दू दोनों धर्म साथ साथ साथ चल रहे थे और काश्मी पन्जाब तथा अफगानिस्तान तो बुद्ध धर्म घर बने हुये थे. भारत के अनेकों स्थान बुद्ध धर्म अब भी बड़ा ही लोकप्रिय था इसके अनेकों प्रभावशाली केन्द्र थे रा धनाढ्य व्यक्ति ही नहीं अपितु शिल्पियों के संघ तक बुद्ध धर्म को दान देते थे औ अनेकों प्रकार से बुद्ध भिक्षुओं की सहायता करते थे, बंगाल बिहार में बुद्ध ध उतना ही लोकप्रिय था जितना हिन्दू धर्म महाराष्ट्र में कुद, महार, बेदसा, जुनार कान्हेरी आदि स्थानों पर बने हुये मन्दिरों विहारों तथा गुफाओं की सहायता जनता उदार दान देती थी, अजन्ता और एलोरा की गुफायें इस बात का सश उदाहरण हैं कि वहां पर गुप्तकाल में भी बुद्ध धर्म के केन्द्र थे आंध्र प्रदेश बुद्ध स्तूपों तथा विहारों से भरा पड़ा था तामिल प्रदेश में कान्ची इस धर्म का प्रसिद्ध केन्द्र था दिग्नाग जैसे तर्क वितर्क के पण्डित तथा धर्मपाल जैसे विद्वानों को उत्प करने का श्रेय कान्ची को ही था, काठियावाड़ में बल्लभि भी प्रसिद्ध केन्द्र थ जहां अनेकों विहार बने हुये थे।

इस धर्म की कला, साहित्य, दार्शनिकों तथा विद्वानों का उस समय होन इस बात का बड़ा ही सजीव उदाहरण है कि बुद्ध धर्म का इस काल में पतन न हुआ था अपितु वह अब भी उन्नत था, इस धर्म की कला का स्वर्णयुग यही काल प्रतीत होता है, अजन्ता, एलोरा की गुफायें अपनी चित्रकारी तथा मूर्ति कला का आज एक हजार वर्षों के पश्चात् भी अपना अलौकिक प्रदर्शन कर रही हैं— पहाड़पुर, सारनाथ भी अपनी कला के अनुपम नमूने हैं महायान धर्म अधिक लोकप्रिय हो रहा था और उसके प्रभाव की बढ़ोतरी हो रही थी अनेकों बुद्ध मूर्ति बनाई जा रही थीं स्तूपों तथा विहारों का निर्माण हो रहा था उस समय तक यह

में निरर्थक विधियों से दूर था और जन्त्र तन्त्र का भी इस में स्थान न था परन्तु आगे चलकर यह इसमें प्रविष्ट होने लगे थे महायान वर्ग ने दार्शनिक क्षेत्र में इस समय में बड़ी उन्नति की उस समय कई बुद्ध विचारक दार्शनिक हुये जैसे आसंग, सुबन्धु, कुमार जीव, परमार्थ और दिग्नाग उस समय के प्रभावशाली व्यक्ति थे।

इस प्रकार यह बात प्रत्यक्ष रूप से प्रमाणित है कि गुप्तकाल में सम्राट और उनकी जनता कितनी उदार तथा सहिष्णुता से परिपूर्ण थी, यही कारण था कि हिन्दू धर्म के साथ साथ जैन तथा बुद्ध धर्म भी बराबर कार्य क्षेत्र में समान रूप से अपना काम कर रहे थे उनको भी जनता का सहयोग प्राप्त हो रहा था।

धार्मिक स्वतंत्रता तथा सहिष्णुता

इस युग की सर्वश्रेष्ठ तथा प्रधान प्रवृति धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता तथा उदारता का होना था देश में चारों ओर अपने अपने विश्वास के साथ किसी भी धर्म को अपना सकते थे किसी पर कोई बाहरी दबाव नहीं था सम्राट अथवा राजा किसी भी मत के क्यों न हों वह अन्य धर्मों वालों को राज्य कार्य के चलाने में अपने साथ रखते थे धर्म योग्यता के रास्ते में बाधक नहीं था, चन्द्रगुप्त का महान् सेनापति अम्रकादेव बुद्ध धर्मानुयायी था बुद्ध धर्म का दूसरा प्रसिद्ध विचारक बसुबन्धु सम्राट समुद्र गुप्त का घनिष्ट मित्र था इसके अतिरिक्त दूसरी तरह भी गुप्त सम्राट बुद्ध धर्म की सहायता करते थे जैसे कुमार गुप्त ने नालन्द के विहार का निर्माण किया था और अन्य सम्राटों ने समय समय पर दूसरे भवन निर्माण कराये थे बुद्ध ग्रन्थों में यह तो अवश्य आया है कि पुष्य मित्र उनके धर्म का शत्रु है परन्तु ऐसा आरोप गुप्त सम्राटों के प्रति कहीं नहीं लगाया गया उस समय की जो अनेकों मूर्तियां उपलब्ध हुई हैं विशेष कर सारनाथ मथुरा तथा नालन्दा से यह इस बात को स्पष्ट करती हैं कि उस काल में बुद्ध धर्म पूरी स्वतंत्रता से अपना काम कर रहा था फाह्यान का कहना है कि गंगा की घाटी में रहने वाले लोग धार्मिक भावना, दानशीलता तथा सहिष्णुता से परिपूर्ण थे यह अहिंसा के सिद्धांत में विश्वास रखते थे बुद्ध तथा जैन धर्म के साधु सन्तों का उतना ही आदर होता था किन्तु महात्माओं का बुद्ध विहारों मूर्तियों तथा जैन मन्दिरों को उस तत्परता से दान दिये जाते थे जिससे हिन्दू मन्दिरों के लिये सम्राट से लेकर साधारण व्यक्तियों तक में सहिष्णुता का भाव व्यापक था हिन्दू तथा जैनियों में बड़ी ही सद्भावना थी।

इस काल की विशेषता यह भी कि विष्णु के उपासना के हेतु या शिव की पूजा के हेतु ही मन्दिरों का निर्माण नहीं हुआ अपितु अन्य धर्मावलम्बियों के लिये विहारों स्तूपों तथा मन्दिरों का भी उसी गति के साथ निर्माण किया गया जिस प्रगति से लोगों की दौलत बढ़ती थी उसी अनुपात से लोगों की दानशीलता तथा धार्मिक

भावना बढ़ती थी यह लोग परलोक की भावना से भी प्रेरित रहते थे। इस
यह बात साफ तौर से विदित हो जाती है कि गुप्तकाल में हिन्दू धर्म ने
जीवन प्राप्त किया उसकी अन्तर आत्मा ने प्रकाश का अनुभव किया और
दार्शनिकों तथा विद्वानों का सहारा ले पूर्णशक्ति से यह धर्म फिर से जाग
गुप्त सम्राटों ने इसकी अनेकों प्रकार से सेवा की और इसमें नई स्फूर्ति आई,
रूप भी विशाल हुआ अन्य धर्मों के लोकप्रिय सिद्धांतों का हिन्दू धर्म ने अप
समाविष्ट कर लिया और अपनी उस कट्टरता को छोड़ दिया जिससे ऊब कर
ने उसको छोड़कर बुद्ध धर्म को अपना लिया था। गुप्त सम्राटों और उनकी
ने उदारता को अपना कर अपनी वृत्ति को ही संकुचित होने से नहीं बचाया
लोकप्रियता प्राप्त की और अपने द्वार को सब के लिये एक रूप से खोल,
धर्म की महान् सेवा की विशालता तथा उदारता की भावना ने ही विदेशियों
इस धर्म की ओर आकर्षित किया और दिनों दिन इस महान् धर्म का रूप व्या
होता चला गया, गुप्त सम्राटों के उदार दृष्टिकोण ने जनता के दृष्टिकोण को
उदार बनाया और ऐसा अच्छा वातावरण उत्पन्न किया जिस में प्रत्येक
की उन्नति सम्भव हो सकी, कला-साहित्य सब ही अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच
महान् विभूतियों ने इस काल में उत्पन्न होकर भारत के गौरव को महान् बना
और संसार के सम्मुख एक प्रकाश प्रस्तुत किया दर्शन क्षेत्र में भारतीय दार्शनि
ने ऊँची ऊँची उड़ानें भरीं और युग को प्रदीप्तमान किया यदि गुप्त सम्राटों
दृष्टिकोण संकुचित होता तो जनता में भी संकुचित भावना आती और पतन
विषैला वातावरण फैल जाता जिसमें किसी भी प्रकार की प्रगति न हो पाती, इ
ही नहीं अपितु भारतीय सभ्यता पतन की ओर अग्रसर हो जाती।

परन्तु गुप्त सम्राटों ने अपनी उदार नीति से हिन्दू धर्म को उन्नत बना
और भारतीय इतिहास को स्वर्णयुग प्रदान किया।

Q. What do you know about the achievement in the field of literature, scinee and education during the gupta age?

प्रश्न—गुप्तकाल में जो विकास साहित्य-विज्ञान तथा शिक्षा के क्षे
में हुआ उसके विषय में आप क्या जानते हैं?

उत्तर—बुद्ध धर्म तथा जैन धर्म ने अपने उपदेश लोक भाषा में दिये
और जनसाधारण ने अपनी साधारण दैनिक व्यवहार की भाषा को उन्नत कि
था अशोक के पश्चात् के समय में भी संस्कृत विद्वानों के बीच की ही भाषा
गई थी। बुद्ध साहित्य जो गुप्तकाल से पूर्व लिखा गया था, पाली भाषा में था

इस भाषा को बुद्ध धर्म द्वारा बड़ा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ इसी कारण से देश की प्राकृत भाषाओं का उत्कर्ष होता रहा और संस्कृत का विकास रुक सा गया परन्तु अशोक तथा गुप्त सम्राटों के बीच के युग में भी संस्कृत मृत न थी, उसमें अपनी वेलक्षणता और प्रगति का जीवन अब भी विद्यमान था और वह उस समय भी राष्ट्रभाषा का उच्च स्थान रखती थी। इसकी अद्भुत शक्ति उस समय भी इसको प्रगति देने की क्षमता रखती थी।

गुप्तकाल के आने पर जैसे ही सुअवसर मिला संस्कृत की वह विलक्षण शक्ति अपना प्रदर्शन करने लगी जो अब तक विकसित न हुई थी और सुअवसर की प्रतीक्षा में थी वैसे तो गुप्तकाल के आने से पूर्व ही इस भाषा का विकास आरम्भ हो चुका था और महायान शाखा ने अपने ग्रन्थ संस्कृत में लिखने आरम्भ कर दिये थे परन्तु गुप्तों के आगमन पर वह नवीन प्रगति आई कि संस्कृत का साहित्य बढ़ता चला गया अनुपम कृतियां उत्पन्न हुईं, विलक्षण विभूतियों ने अपने अपने मस्तिष्क की तीक्ष्णता का प्रदर्शन किया और संस्कृत के साहित्यिक क्षेत्र में बाढ़ सी आ गई और यह साहित्य उच्चकोटि का लिखा गया।

यह सम्राट इतने संस्कृत प्रेमी थे कि उन्होंने अपने राज महलों तथा अन्तःपुर तक में संस्कृत के प्रयोग के लिये आदर्श जारी किये थे संस्कृत भाषा राजभाषा घोषित कर दी गई और उनके समय में जो भी शिला लेख लिखे गये वह संस्कृत में ही लिखे गये, मुद्राओं पर संस्कृत अंकित की गई धर्मशास्त्रों, व्याख्यानों धार्मिक वाद विवादों में संस्कृत का अधिकाधिक प्रयोग होने लगा शासक वर्ग विद्वान वर्ग समान रूप से संस्कृत बोलने लगे और इसका प्रभाव बढ़ने लगा, इस प्रकार दिनों दिन के लगातार प्रयत्नों से संस्कृत ने राष्ट्र भाषा का स्थान प्राप्त कर लिया।

गुप्त सम्राट स्वयं संस्कृत में अच्छी योग्यता रखते थे वह अधिकतर महान् विद्वानों के सम्पर्क में रहते थे इसीलिये उनको संस्कृत से विशेष प्रेम था। इस युग में अनेकों महान् विभूतियों ने अपनी अनुपम कृतियां लिखी और इस युग की शोभा बढ़ाई। समुद्र गुप्त स्वयं एक उत्तम कवि तथा नीतिज्ञ और संगीत प्रेमी था, उसको बांसरी बजाने में कमाल हासिल था उसके राजदरबार में प्रख्यात कवि हरिषेण संस्कृत का भारी विद्वान था इसी प्रकार चन्द्रगुप्त द्वितीय के दरबार में वीरसेन शाब उत्तम कवि था वह बड़ी ही तीव्र बुद्धि रखता था वह राज्य का उच्च अधिकारी राज सभा का सदस्य व्याकरण का आचार्य तथा उत्तम राजनीतिज्ञ भी था। कुमार गुप्त प्रथम तथा द्वितीय का समकालीन कवि वत्स भट्टि भी अच्छा कवि था।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के दरबार के रत्नों में कालीदास की गणना की जाती है हालांकि उसकी ठीक ठीक तिथियों के विषय में विद्वानों में मतभेद परन्तु ऐसा ही सम्भव प्रतीत होता है कि कालीदास उसी समय अपने ग्रन्थों निर्माण कर रहा था उसकी कृतियां अनुपम तथा अद्भुत हैं और शकुन्तला मह विश्व की अद्भुत कृतियों में से एक है कालीदास के प्रसिद्ध नाटक 'शकुन्तला विक्रमोर्वशी तथा 'मालविकाग्नि मित्र' हैं उसका महाकाव्य 'रघुवंश' है इस अनुपम गीतों का संग्रह 'ऋतु संहार' है अपने ऊंचे भावों, चुने हुये भाव पूर्ण छ तथा अलंकारों और उच्च तथा सरल शैली के कारण संस्कृत का अद्वितीय लेख सिद्ध हुआ है उसी युग में भैरवी ने 'किरातार्जुनीय' की रचना की सबन्धु 'वासवदत्ता' लिखी अनेकों बुद्ध लेखक भी इस काल में पैदा हुये जैसे बसुबन्धु हीनयान तथा महायान के दर्शन पर कई ग्रन्थ लिखे असंग ने 'योगाचार भूमि शास्त्र' 'महायान-सम्परि ग्रह' जैसे ग्रन्थों की। रचना की 'दिगनाग' ने 'प्रमाण समुच्च' को भी इसी काल में लिखा, 'मुद्राराक्षस' का लेखक विशाख दत्त तथा 'अमर कोप' का रचियता अमरसिंह भी इसी काल की विभूतियां थी मृच्छकटि का रचियता शूद्रक भी उसी काल में हुआ 'दण्डिन' ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'दशकुमार' तथा काव्यदर्श इसी युग लिखे गये।

ललित तथा चपल जैसे वैरागी और दार्शनिक इसी युग में हुये बुद्ध भिक्षु चन्द्रगोपी ने अपनी व्याकरण 'चन्द्र व्याकरण' के नाम से इसी युग में लिखी जो बहुत ही लोकप्रिय हो गई थी। वरामहरि तथा श्रुत बोध द्वारा छन्द शास्त्र का विवेचन किया गया 'कामन्दकीय नीतिसार' तथा काम शास्त्र भी इसी युग में लिखे गये।

'पन्च तन्त्र' तथा 'हितोपदेश' भी इसी युग में लिखे गये इन ग्रन्थों की महत्वता इस प्रकार से आ सकती है कि इनका अनुवाद विश्व की पचास भिन्न भिन्न भाषाओं में किया गया है ये दोनों ग्रन्थ मध्य यूरोप में बड़ी रुचि से पढ़ी जाती थी 'न्याय भाषा' के लेखक वात्सयायन और भाष्य की टीका लिखने वाला उद्योतकर इसी काल के लेखक थे 'कामराकोष नीतिसार' ग्रन्थ जो अर्थशास्त्र का अच्छा तथा अनुपम ग्रंथ है उसी कालर की चना है दर्शन शास्त्र के क्षेत्र में 'सांख्य कारिका' जैसे महान् ग्रंथ का रचियता ईश्वर कृष्ण इसी युग में हुआ संभव है कि इसी काल में रामायणतथा महाभारत का अनुवाद तामिल भाषा में इसी युग में हुआ।

इस युग म साहित्य ने नवीन जीवन धारण कर अनुपम प्रगति से उन्नति की उस समय ब्राह्मण विद्वानों ने अपने धार्मिक ग्रंथों में अनेकों संशोधन किये उन पर अनेक भाष्य और टीकायें लिखीं उनको लोकप्रिय बनाने के लिये सरल रूप से उनको नवीन रूप दिया अनेकों पुराणों तथ महाकाव्यों की इसी समय रचना

हुई या उनका अन्तिम सम्पादन हुआ कई स्मृति और सूत्रों पर भाष्य लिखे गये कई प्रसिद्ध स्मृतियां इसी काल में लिखी गई याज्ञावल्क्य, नारद, कात्यायन, पाराशर तथा बृहस्पति की स्मृतियां इसी युग की अनुपम देन हैं समस्त हिन्दू कानून (Hindu law) इन स्मृतियों पर ही आधारित है याज्ञवल्क्य की स्मृति पर आगे चलकर ग्यारहवीं शताब्दी के अन्त में विज्ञानेश्वर (Vijnaneshwar) ने एक भाष्य लिखा। जिसके आधार पर मिताक्षरा (Mitakshara) स्कूल का जन्म हुआ और जिस पर हिन्दू कानून आधारित है।

इसी प्रकार के अनेकों ग्रंथ इसी युग में लिखे गये, संस्कृत का जितना साहित्य इस युग में उत्पन्न हुआ अन्य युग में नहीं हुआ, इसी समय को साहित्यिक दृष्टि से स्वर्णयुग कहा गया है।

शिक्षा तथा विज्ञान

इस काल में शिक्षा को अच्छी प्रगति हुई वेदों की शिक्षा के स्थान पर शास्त्र-स्मृति, तर्क-दर्शन, न्याय-व्याकरण आदि का अध्ययन किया जाता था इनके साथ साथ अन्य विषय भी पढ़ाये जाते थे विषय वाद विवाद के द्वारा पढ़ाये जाते थे, अध्ययन के अन्त पर किसी परीक्षा की प्रणाली न थी, व्यवसायिक शिक्षा परिवारों में ही दी जाती थी शिक्षा के लिये वर्तमान काल की तरह राज्य की ओर से शिक्षा संस्थायें न थीं अपितु आचार्य लोग अपने अपने आश्रमों में अपने शिष्यों को शिक्षा देते थे। ब्राह्मणों में शिक्षा का अधिक रिवाज था परन्तु अन्य जातियों के लोग भी शिक्षा ग्रहण कर सकते थे परन्तु शूद्रों तथा स्त्रियों में शिक्षा का अभाव था, इस काल में तक्षशिला का महत्व घट रहा था और नालन्दा का शिक्षा केन्द्र विकसित हो रहा था, गुप्त सम्राटों ने नालन्दा के शिक्षा केन्द्र को संरक्षण प्रदान कर उसके महत्व को बढ़ा दिया था, इनके अतिरिक्त और भी अनेकों शिक्षा केन्द्र थे जैसे पीठ में उज्जयिनि-उज्जैन, मथुरा, बनारस, नासिक, काचीपुरम, वल्लभी इत्यादि इस काल में शिक्षा की अवश्य उन्नति हो रही थी विज्ञान के क्षेत्र में भी इस समय अच्छी उन्नति हुई आर्य भट्ट इस समय का महान् गणितज्ञ तथा ज्योतिषि थे उन्होंने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ 'सूर्य सिद्धान्त' इसी काल में लिखा, उसमें चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण के सिद्धान्त निकाले उन्होंने प्रथम बार यह बताया कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है उन्होंने पृथ्वी के आकार के विषय में भी बहुत कुछ लिखा उनका निकाला हुआ वर्षमान आजकी के वर्षमान से बहुत अधिक शुद्ध है।

विज्ञान के क्षेत्र में दूसरा प्रसिद्ध ज्योतिषि तथा धातु विज्ञान का पण्डित वराहमिहिर था उसका प्रसिद्ध ग्रंथ 'वृहत संहिता' प्रमुख ग्रंथ है जिसमें ज्योतिष तथा वनस्पति विज्ञान की विस्तृत पूर्ण विवेचन है इसी समय ब्रह्मगुप्त ने न्यूटन के 'आकर्षण' के सिद्धान्त को बता दिया था उसका कहना था कि "प्रकृति के नियम

के अनुसार ही समस्त वस्तुयें पृथ्वी पर गिरती हैं क्योंकि पृथ्वी का स्वभाव वस्तुओं को आकर्षित करना तथा रखना है' महान् बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन रसायन शास्त्र तथा धातु विज्ञान का अनुपम ज्ञाता था चरक तथा सुश्रुत चिकित्सा के में अद्वितीय थे उनका चिकित्सा शास्त्र इसी काल की रचना है पशु चिकित्सा ऊपर भी 'हस्त्यायुर्वेद' उस समय की ही कृति है आयुर्वेद में विशेषकर वनस्पति द्वारा तैयार की गई औषधियाँ काम में आती थीं परन्तु धातुओं के यौगिक प्रयोग में आते थे। 'नवनीतकम' नामक ग्रंथ जिसमें चरक-सुश्रुत संहिताएँ प्रसिद्ध नुसखों का संग्रह है इसी काल की रचना है उस समय चीर फाड़ का विज्ञान भी उन्नत दशा में था।

गणित के क्षेत्र में बड़ी प्रगति हुई शून्य का सिद्धांत और उसके साथ साथ दशमलव प्रणाली ज्ञात की जा चुकि थी उस समय के ज्योतिषियों ने यह ज्ञात कर लिया था कि आकाश मण्डल के ग्रह प्रतिबिम्बित प्रकाश से चमकते हैं। इस प्रकार ज्योतिष, गणित तथा रसायन विज्ञान के क्षेत्रों में बड़ी ही महत्त्वपूर्ण उन्नति हुई।

इस युग में शिक्षा-साहित्य तथा विज्ञान सब ने ही उन्नति की ओर इस युग के गौरव को बढ़ाया।

---

155 Q. "Indian Art had reached its climax during the gupta age" Justify this statement.

प्रश्न "गुप्तकाल में भारतीय कला अपने उत्कर्ष की चरम सीमा पर पहुँच गई थी" इस कथन की पुष्टि करो।

उत्तर—कला की दृष्टि से यह युग अपनी श्रेष्ठता की उत्तम सीमा पर पहुँच चुका था। इस युग में हर प्रकार की कला में भारी उन्नति हुई। स्थापत्य कला, मूर्तिकला, चित्रकला, मुद्राकला इत्यादि में चका चौंध करने वाली प्रगति हुई। अब तक गांधार शैली जो भास्कर कला पर यूनानी कला के प्रभाव से उत्पन्न हुई थी शनैः शनैः क्षीण हो रही थी और लगभग विलुप्त हो गई थी। और फिर भारतीय कला ने अपने उच्च कोटि के नमूने उत्पन्न किये। इस में सौन्दर्य तथा भाव प्रदर्शन में कमाल हासिल किया और कलाकारों ने अपने सफल प्रयत्न द्वारा भावनाओं की सहायता से अनेकों रूपों को स्थायी रूप दिया इस काल की कला के जो आदर्श रक्खे उन्होंने भारत की भावी कला को तो प्रभावित किया ही। अन्य अन्य देशों की कला को भी प्रभावित किया।

भास्कर कला—उस समय अनेकों मूर्तियाँ बनाई गईं। इनमें दो प्रकार की मूर्तियाँ प्रधान हैं। बुद्धजी की मूर्तियाँ तथा हिन्दू धर्म की विष्णु, शिव, सूर्य की

ेमायें बुद्ध जी की मूर्तियों में कुछ नवीन बातों का प्रदर्शन है जो प्राचीन गान्धार ी में न थी। प्रथम तो यह कि कुषाण काल की बुद्ध जी की मूर्तियों में उनका र घुटा हुआ दिखाया गया है परन्तु गुप्त काल में इनको घुंघराले बालों से शोभित किया गया है। उनकी वेश भूषा में भी परिवर्तन किया गया है। इस ीन वेश भूषा में उनका शरीर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ता है। इस काल में नकी मुद्राओं में भी भारी परिवर्तन हुआ। अब इनके नेत्रों तथा मुख की आभा धिक शान्त तथा ध्यानस्थ प्रतीत होती है। उनकी मुद्रा भी कई प्रकार से प्रदर्शित ी गई है। उनके प्रभा मण्डलों को रेखाओं द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार से अलंकृत िया गया है। इस समय की मूर्तियों में एक प्रकार की ऐसी आभा सौन्दर्य तथा ोमलता प्रगट होती है जो गान्धार शैली में न थी। अब की मूर्तियों में गान्धार ली का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता। सारनाथ में बुद्ध जी की जो अनेकों तिमायें निकली हैं। उन सब में वह सब से अधिक आकर्षक है जिसमें बुद्धजी र्म चक्र प्रवर्तन मुद्रा में बैठे हुये हैं। मथुरा से प्राप्त की हुई मूर्तियों में वह मूर्ति सिमें करुणा के भाव को दिखाया गया है सब से अधिक रोचक है। इसी प्रकार द्ध जी की भिन्न भिन्न प्रकार की भाव पूर्ण प्रतिमा बना बना कर उस युग के लाकार ने अपने अनुपम चातुर्य का प्रमाण दिया है।

उसी समय की अनेकों प्रतिमायें हिन्दू देवताओं की प्राप्त हुई हैं। इनमें वेष्णु, शिव तथा सूर्य की विशेष रूप से कला पूर्ण हैं। इनके अतिरिक्त पुराणों की गाथाओं को बड़े ही रोचक ढंग से दिखाया है। विष्णु तथा शिव के अनेकों अवतारों की कथाओं को मूर्ति द्वारा दिखाने का सफल प्रयास किया है। गुप्त काल में कला की तीन शैलियां प्रसिद्ध थी। मथुरा शैली, पाटलीपुत्र शैली तथा सारनाथ शैली। ये तीनों गान्धार शैली के प्रभाव से सर्वथा अलग थीं इनमें पूर्णतया भारतीयता झलकती है। इनमें आदर्शवाद तथा सौन्दर्य की भावना का समन्वय सफलता पूर्वक दिखाई पड़ता है। इस काल की मूर्तियों में सजीवता दृष्टिगोचर होती है।

। दूसरे प्रकार की मूर्तियां पकी हुई ईंटों से बनाई गई हैं ये तीन प्रकार की मूर्तियां हैं १-देवी देवताओं की २-स्त्री पुरुषों की ३-पशु पक्षियों की। ये सजीव तथा सौन्दर्य पूर्ण होती थीं। उत्सवों के समय इस प्रकार की मूर्तियां अधिक मात्रा में बिकती थीं यह मन्दिरों में स्थापित की जाती थीं। इनके निर्माण करने वाले शिल्पियों ने अपनी अनुपम कला के उत्कृष्ट नमूने बड़े ही चातुर्य से प्रस्तुत किये हैं।

वास्तु कला—इस कला ने भी इस काल में उन्नति की ओर देश के एक छोर से दूसरे छोर तक अनेकों मन्दिरों, स्तूपों, विहारों का निर्माण किया गया। इनमें अनेकों आज भी विद्यमान हैं और अनेकों आक्रमणकारियों द्वारा नष्ट कर दिये

गये हैं जो हैं वह कला के गौरवपूर्ण नमूने हैं। झांसी जिले में देव गढ़ का दश तार मन्दिर, कानपुर जिले में भीतर गांव का मन्दिर, जबलपुर ज़िले में ति मन्दिर, भूमरा का शिव मन्दिर, खोह का शिव मन्दिर, आसाम में ब्रह्मपुत्र के तट पर एक सुन्दर मन्दिर उस काल की कला के अद्भुत नमूने हैं। इसी प्र सांची तथा गया में दो समाधियां बनाई गई हैं। इन मन्दिरों को बड़ी ही सुन्द पूर्ण कला से निर्मित किया गया है वर्गाकार क्षेत्र को घेर कर एक चहार दी बनाई गई है। उसके भीतर देवास्थान बनाया गया है। इसमें एक दरवाजा र था। उस समय मन्दिरों के ऊपर ऊंचे कलशों का रिवाज न हुआ था।

उसी समय अनेकों बौद्धों विहारों, स्तूपों इत्यादि का निर्माण हुआ। सार का स्तूप, एलोरा का चैत्य तथा नालन्दा का ३०० फीट ऊंचा बौद्ध मन्दिर समय की वास्तु कला के अच्छे नमूने हैं। उस समय अनेकों गुफाओं का भी निम हुआ। इनमें अजन्ता तथा एलोरा और आन्ध्र देश की गुफायें प्रसिद्ध हैं। इ में मोगुलराज पुरम, उन्दा विल्ली की गुफायें भी प्रसिद्ध गुफाओं में गिनी जाती उस समय स्तम्भों का भी निर्माण हुआ जैसे गाज़ीपुर में स्कन्दगुप्त का स्तम्भ महरौली में एक स्तम्भ इस काल की निर्माण कला के नमूने हैं। इन सब उदाह से प्रगट होता है कि उस समय की वास्तु कला भी अपनी उन्नति के शिखर पहुंच गई थी।

चित्र कला—चित्र कला का क्षेत्र भी अपनी विशेष महत्ता रखता अजन्ता की गुफाओं में दीवारों पर जो चित्रकारी की गई वह अपने प्रकार की अनु कला है। इन तस्वीरों की विश्व ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। इनके वि नाना प्रकार के हैं। इनको तीन भागों में बांटा जा सकता है। १—अलंकृत करने लिये आकृतियां जैसे पुष्प, वृक्ष, पशुपक्षी, देवी देवियां इत्यादि। २—बुद्ध त बोधि सत्वों के चित्र। ३—बौद्ध धर्म के ग्रन्थों से ली गई कथाओं के दृश्य चित्रों में अति उपयुक्त रंगों द्वारा भावना को इस कुशलता से दिखाया गया है देखने वाला मूक रह जाता है। कल्पना तथा सौन्दर्य का समन्वय बड़े ही अनु से किया गया है। इन चित्रों में भावों की भिन्नता आश्चर्यजनक है।

"अजन्ता के चित्रों में मैत्री, करुणा, प्रेम, क्रोध, लज्जा, हर्ष, उत्साह, चि म्रहण आदि सभी भाव, पद्मपाणि, अवलोकेश्वर, प्रशान्त तपस्वी और देव राजपरिवार से लेकर क्रूर व्याध, निर्दय वधिक, साधु वेशधारी धूर्त बार वनि आदि सब तरह के मानव भेद, समाधि मग्न बुद्ध से प्रणय क्रीड़ा में रत दम्पति श्रृंगार में लगी नारियों तक सकल मानव व्यापार चित्रित है" इस के साथ भिन्न भिन्न प्रकार की वेश भूषा और सजावट दिखाई गई है। सामाजिक धार्मिक सब प्रकार के जीवन पहलुओं को चित्रित किया गया है और प्रकार

...स्त विचार उद्गारों को प्रदर्शित किया है। इन चित्रों में मानव की भिन्न भिन्न ...नाओं तथा कल्पनाओं को दिखाया गया है परन्तु इन सब में एक विशेषता है कि आध्यात्मिक पहलू प्रत्येक में दृष्टिगोचर होता है। अजन्ता के अतिरिक्त ...य भारत की बाघ गुफायें तथा लंका में सिगिर्य की चट्टानों पर जो चित्रकारी है ... भी विश्व ख्याति की वस्तु है। चित्रकला के दृष्टिकोण से यह युग बहुत ही ...ान हो गया है।

मुद्रा कला :—इस काल में सोने तथा चांदी दोनों के सिक्के ढाले जाते ...ते थे। इनका आकार बड़ा ही आकर्षक है। इन पर गुप्त सम्राटों की मूर्तियां, ...नकी कीर्ति की गाथायें, लक्ष्मी की मूर्ति, गरुड़ ध्वज तथा सिंह की मूर्ति बड़े ही ...चक ढंग से अंकित की गई हैं। यह सिक्के बड़े ही कला पूर्ण ढंग से ...नाये गये थे।

धातु कार्य :—धातु क्षेत्र में भी इस युग में अद्भुत कार्य हुआ। लोह ...तम्भ जो कुतबमीनार के पास खड़ा है, कुमार गुप्त प्रथम द्वारा बनाया गया ...ा। यह ढाल कर बनाया गया था। इसकी ऊंचाई २३½ फीट तथा व्यास १६ इंच ...ौर भार लगभग ६ टन है। यह स्तम्भ समय के क्रूर आघातों को सहता हुआ ...ाज भी ज्यों का त्यों खड़ा है। इसका निर्माण ४१२ ई० में हुआ था। सुलतानगन्ज ...ं प्राप्त हुई तांबे की ढली हुई बुद्ध प्रतिमा एक अद्भुत वस्तु है इसकी ऊंचाई ...७½ फीट तथा वजन १ टन के लगभग है। इसी प्रकार बुद्ध की ८० फीट ऊंची ...तिमा नालन्द में ह्वानसांग ने भी देखी थी।

इन उदाहरणों द्वारा यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गुप्त काल में धातु कार्य भी बराबर प्रगति शील था और धातुओं के ढालने का कार्य बहुत उन्नत हो चुका था।

संगीत तथा नृत्यकला :—गुप्त सम्राट स्वयं संगीत प्रेमी थे इसी कारण से उन का पूर्ण सहयोग इस कला की उन्नति में लगा। समुद्र गुप्त अपने सिक्कों पर वीणा बजाता हुआ अंकित किया गया है जिससे प्रगट होता है कि वह बड़ा ही संगीत प्रेमी था। इलाहाबाद के शिलालेख में उसको नारद से भी अधिक श्रेष्ठ संगीतज्ञ माना है। उसके दरबार में कलाकारों को बड़ा उदारतापूर्ण आश्रय मिलता था। इसी लिये कला की बड़ी उन्नति हो रही थी।

भूमरा के शिव मन्दिर में शिव के गण भैरवी तथा झांझ बजाते हुए दिखाये गये हैं। उस समय के साहित्य में भी संगीत कला की प्रगति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है जैसे कालिदास ने रघुजन्म के समय मंगलकारी बाजों के बजने का उल्लेख किया है। सारनाथ में उस समय की एक नृत्य करती हुई नारी की प्रतिमा प्राप्त हुई है। इसके चारों ओर अन्य नारियां बांसुरी, भेरी इत्यादि को बजाती हुई खड़ी

हैं। उस समय के नाटकों में अनेकों प्रकार के वाद्यों का उल्लेख आता है।। नाटकों में रंग मञ्च तथा उस पर किये गये अभिनय का उल्लेख आया है। उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि इस काल की संगीत कला नृत्य कला अभिनय कला श्रेष्ठतम उन्नति कर चुकी थी। इस क्षेत्र के कलाकार कला के अतिरिक्त मधुर ध्वनि उत्पन्न करने वाले तथा सुन्दर सुर निकालने भिन्न भिन्न प्रकार के यन्त्रों पर भी अच्छा कंट्रोल रखते थे।

इस काल की कला में कुछ ऐसी विशेषतायें हैं कि जिन से यह कला कलाओं से अलग समझी जा सकती है। १—इस युग का कलाकार प्राचीन रूढ़िवाद को छोड़कर अपनी स्वतन्त्र शैली को अपनाता है और सौन्दर्य व अलंकार को वह विस्तृत रूप नहीं देता जिस से प्रतिमाओं की स्वाभाविकता नष्ट हो जाय। इनमें सन्तुलन का विशेष ध्यान रक्खा गया है। इन मूर्तियों में स्वाभाविकता टपकती है, कृत्रिमता को नहीं अपनाया गया है। इस युग के कलाकार ने सौन्दर्य की अपनी अलग कल्पना का थी। इसने सद्गुण के ... को ही सौन्दर्य का मार्ग माना। अपनी कला में आध्यात्मिकवाद को विशेष स्थान दिया। पवित्रतम जीवन की आवश्यकताओं के अनुसार अपनी कला एवं आकृतियें बनाईं और इसी कारण इनमें रोचकता तथा आकर्षण उत्पन्न हुआ। इस समय की कला में धार्मिक तत्व प्रधान है धार्मिक वातावरण ने विशेष रूप से इस कला को प्रेरणा दी और इस कला ने धर्म की ही महान सेवा की देवी देवताओं, साधु सन्तों की, मन्दिरों तथा भव्य भवनों की, धर्म संस्थापकों की कलापूर्ण आकृतियां बना कर धार्मिकता का प्रचार किया और अपनी कला का प्रदर्शन किया। अजन्ता की चित्रकारी तथा मूर्ति निर्माण आज भी विश्व विख्यात वस्तुयें हैं। आज भी उस काल की कला के सजीव प्रमाण हैं।

इस कला में आत्मा तथा आकार का पूर्ण सन्तुलन करके महान् से महान विचार को सरलता तथा स्वाभाविकता के साथ दिखाया गया है शरीर तथा धर्म का पूर्ण रूपेण समन्वय किया गया है।

इन सब विशेषताओं के कारण कला के विद्वानों ने इस कला को भारत की प्राचीन कला का सर्वोत्कृष्ट नमूना माना है और इस कला ने अन्य देशों की कलाओं के लिये प्रभावशाली परम्परायें तथा अनुपम आदर्श स्थापित किये। भारत की संस्कृति के साथ साथ यहां की कला भी एशिया के अन्य देशों में पहुँची और वहां पर अपना प्रभाव उत्पन्न किया। चीन तथा मध्य एशिया में इस कला का बड़ा आदर सत्कार हुआ। इस प्रकार विदेशियों ने भी इस कला की उत्तमता पर मुहर लगाई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुप्त काल की कला ने उन्नति के शिखर पर

पहुंच कर अपनी महानता तथा गौरव के साथ भारत का भी गौरव बढ़ाया और अन्य जातियों का पथ दर्शन किया।

---

45 Q "The Gupta age is the Golden Age of Indian history." Justify this statement.

प्रश्न—"गुप्त काल भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग है" इस कथन की पुष्टि करो ?

उत्तर—कुषाण साम्राज्य के अन्तिम दिनों में भारतीय आकाश मण्डल में एक नवीन शक्ति का सञ्चार हुआ। देश में एक छोर से दूसरे छोर तक एक ऐसी सजीवता उत्पन्न हुई जिसने समस्त देश को झकझोर दिया। राष्ट्रीयता की प्रबल धारा इस वेगपूर्ण गति से प्रवाहित हुई कि उसके सन्मुख जो भी विदेशी तत्व आया समाप्त हो गया। विदेशी शासन जो शताब्दियों से भारत की पवित्र भूमि पर एक दूसरे के पश्चात् स्थापित हो रहे थे वह समाप्त कर दिये गये। कला के क्षेत्र में गान्धार शैली जिसमें विदेशी प्रभाव था नष्ट करदी गई अब भारतीयता अपने विशुद्ध रूप में प्रगट हुई। इस राष्ट्रीय आन्दोलन का श्री गणेश नाग वंशीय राजाओं ने किया और इस प्रवाह को वाकाटकों ने अविरल गति से बहने दिया और गुप्त काल में यह वेग पूर्ण राष्ट्रीयता अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई।

इस काल में भारतीयता का पुनरुद्धार हुआ। आर्य संस्कृति की वृद्धि होकर विकास हुआ। संस्कृत भाषा के उत्कर्ष ने पाली तथा प्राकृत भाषाओं की गति को आगे बढ़ने से रोक दिया। ब्राह्मण धर्म ने फिर से करवट ली और वैदिक विधियों का पुनरुद्धार किया। नाग राजाओं के उदार संरक्षण ने देवनागरी लिपि की उन्नति की। इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में नवीन जीवन का उदय तथा वृद्धि हुई। जब यह वेग पूर्ण धारा बह रही थी उसी समय गुप्त साम्राज्य की नींव डाली गई और उस उन्नत वेग को गुप्तों ने आगे बढ़ा कर प्रगति के उच्च शिखर पर पहुँचाया। जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा न बचा जिस में गुप्त काल में महान उन्नति न की गई हो। इसी कारण से विद्वानों ने इस युग को स्वर्ण युग कह कर पुकारा है। कुछ लोगों ने इसको हिन्दु-नवाभ्युत्थान या पुनर्जागरण भी कहा है। मेक्समूलर (Maxmullar) जैसे विद्वान ने इस नवीन उन्नति को हिन्दू नवाभ्युत्थान कह कर पुकारा है। परन्तु यह न कहकर यदि यह कहा जाये कि हिन्दू धर्म तथा संस्कृति की उन्नति तो पहले ही आरम्भ हो चुकी थी 'इस काल में तो केवल यह उन्नति अपनी चरम सीमा पर पहुँची' अधिक युक्तिपूर्ण होगा—

गुप्त काल में प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति हुई यही इस युग की विशेषता है। साहित्यक तथा सांस्कृतिक विकास पूर्ण रूप से अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गया,

वास्तु कला, चित्र कला, भास्कर्य कला, संगीत, विज्ञान, शिक्षा, धर्म सब ने
रूप से नवीन सजीवता धारण की और देदीप्यमान विकास किया। समुद्र
जैसे सम्राट के समय यदि संस्कृति का उत्थान न हुआ होता तो इतिहास की
आश्चर्यजनक घटना घटित मानी जाती जो सम्राट स्वयम् एक महान संगी
तथा श्रेष्ठ कवि था उसके संरक्षण में कला तथा साहित्य की उन्नति होना अनि
था। इसी प्रकार अन्य गुप्त सम्राट भी भारतीय संस्कृति के उत्तम पुजारी थे।
उन्होंने अपने लगातार प्रयत्नों द्वारा हिन्दु सभ्यता को ऐसा वातावरण प्र
किया जिसमें इस संस्कृति को फूलने फलने की पूर्ण सुविधा प्राप्त हुई और जी
के हर क्षेत्र में अलौकिक तथा अनुपम प्रगति हुई। इस युग में अत्यन्त शा
रहने से उन समस्त कलाओं का विकास हुआ जिन्होंने भारत के गौरव को ब
बढ़ाया। हिन्दु साम्राज्यवाद की नींव पड़ी और हिन्दु संस्कृति विदेशों में
पहुंची। देश आध्यात्मिक क्षेत्र में ही नहीं, भौतिक क्षेत्र में भी बहुत उन्नत हुआ
इस युग को स्वर्ण युग कहने के लिये एक नहीं अनेकों कारण हैं।

प्रथम तो गुप्ताओं ने देश की पृथकता की भावना को समूल नष्ट कर दे
को एक सूत्र में बांधने का सफल प्रयास किया और एक छत्र शासन स्थापित
साम्राज्य बनाया। जिसके कारण देश में भिन्नताओं का अन्त हो गया और एक
का वातावरण उत्पन्न हुआ। देश में शान्ति फैली और सब का ध्यान अपनी ए
देश की उन्नति की ओर आकर्षित हो गया। सबके मिले जुले प्रयत्नों से ब
ओर प्रगति तथा सुख और आनन्द के जीवन का आरम्भ हुआ। अब देश के छ
छोटे राज्य नष्ट कर दिये गये। विदेशी सत्ता का अन्त कर दिया गया। केन्द्री
शासन के शक्तिशाली होने के कारण शासन व्यवस्था सुचारु रूप से चलने ल
और जनता ने सुख की साँस ली। अब तक शासक जल्दी जल्दी बदलते रहते
और शासन व्यवस्था ठीक न रहती थी। मनुष्य अपनी सुरक्षा अनुभव न कर
था और इसलिये देश में उन्नति न हो पा रही थी। सुव्यवस्थित तथा केन्द्री
शासन स्थापित करने का सफल प्रयास गुप्त सम्राटों ने ही प्रथम बार किया की
मौर्य युग के पश्चात् इन्होंने ही देश को एक सूत्र में बांधा। इसी में इनकी
महत्ता थी।

इन सम्राटों ने विदेशी सत्ता का अन्त कर देश में स्वाभिमान की जागृ
की और राष्ट्र जीवन को उन्नत बनाया समस्त देश में आत्म सम्मान की भाव
को जन्म दिया।

देश में हिन्दू धर्म का फिर से उत्कर्ष हुआ और प्राचीन काल की वैदि
क्रिया विधियां आरम्भ हो गईं अब जो रूप हिन्दू धर्म ने प्राप्त किया वह इत
स्थाई सिद्ध हुआ कि कुछ परिवर्तनों सहित वह रूप आज भी उसी अवस्था में वर

हुआ है विष्णु तथा शिव भक्तों ने इन सम्राटों का उदार संरक्षण प्राप्त कर बड़ी उन्नति की और जनसाधारण के नैतिक स्तर को ऊंचा उठाया परन्तु इससे महत्व-पूर्ण कार्य यह था कि इन सम्राटों ने संकुचित विचार धारा के स्थान पर उदारता को अपनाया और धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता से काम लिया इससे यह फल निकला कि देश में सब धर्मों की उन्नति हुई परन्तु हिन्दू धर्म के द्वार सबके लिये समान रूप से खुल जाने के कारण इसकी प्रगति विशेष रूप से हुई और गुप्त सम्राटों को इस उदार दृष्टिकोण के लिये श्रेय प्राप्त हुआ हिन्दू धर्म का पुनरुत्थान कर भारतीय संस्कृति का उद्धार किया।

शांत वातावरण के कारण देश की आर्थिक दशा सुधरी। आन्तरिक तथा बाहरी व्यापार बढ़ा तथा मार्ग सुरक्षित हो जाने के कारण आवागमन सुगम हो गया और राजमार्ग पर सुविधायें उपलब्ध होने से सफर करने की असुविधायें नष्ट हो गईं और इस से व्यापार में और भी वृद्धि हुई व्यापार के अनेकों केन्द्र स्थापित हो गए, पाटलीपुत्र, उज्जैन, कौशाम्बी, बनारस तक्षशिला विशेष रूप से प्रसिद्ध हुये। हमारे देश से अन्य देशों के साथ बहुत व्यापार बढ़ा, रोम, चीन, पूरबी द्वीप समूह हमारे व्यापार के बाजारों का काम देने लगे, रोम की फैशनपरस्त महिलायें भारतीय समान को इच्छुक रहने लगीं और वहां का सोना चांदी धीरे धीरे अधिक मात्रा में इस देश में आने लगा इस प्रकार हमारा देश धन धान्य से पूर्ण होता गया।

देश में सम्राटों ने कृषि की उन्नति को ओर भी ध्यान दिया सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध कराया, कृषकों की सुविधाओं की व्यवस्था की फल यह हुआ कि कृषि द्वारा उत्पादन बढ़ा, ग्रामों में जीवन स्तर ऊंचा हुआ और वहां पर सुख और आनन्द का जीवन व्यतीत होने लगा।

कृषि के अतिरिक्त उद्योग धन्धों की भी प्रगति हुई शिल्पियों को राज्य संरक्षण प्राप्त होने के कारण उनके धन्धों को प्रोत्साहन मिला और इस प्रकार देश में भिन्न भिन्न प्रकार की वस्तुयें तैयार होने लगीं भारत सुन्दर सुन्दर वस्त्रों का घर बना हुआ था।

सामाजिक क्षेत्र में भी बड़ी प्रगति हुई जनता का दृष्टिकोण विशाल तथा उदार था सब आपस में प्रेम भाव से रहते थे, लोग ईमानदार थे, भिन्न धर्म अनुयायियों के प्रति भी श्रद्धा और उदारता का व्यवहार रखते थे समाज में नारी सम्मान बहुत अधिक था अनेकों स्त्रियां उच्चतम शिक्षा प्राप्त करती थीं महिलायें अनेकों उच्च कलाओं में प्रवीण होती थीं उनकी वेश भूषा तथा आभूषण आकर्षक तथा सौंदर्य पूर्ण होते थे वह उन्नत समाज का उदाहरण प्रगट करती थीं। स्त्री तथा

पुरुष की वेश भूषा आचार विचार रहन-सहन आमोद-प्रमोद इत्यादि इस बात के सजीव प्रमाण हैं कि गुप्तकाल का समाज अति उन्नत समाज था।

भाषा तथा साहित्य के क्षेत्र में भी अद्भुत उन्नति हुई पाली तथा प्रा भाषाओं का स्थान संस्कृत ने ले लिया संस्कृत राज भाषा होने के कारण राष्ट्र बन गई दूसरे धर्म के विद्वानों ने भी अपने धार्मिक ग्रंथों की रचना संस्कृत में जैसे महायान धर्म के विद्वानों ने अपने ग्रंथ संस्कृत में लिखे संस्कृत साहित्य में अद् तथा विलक्षण कवि और लेखक हुये कालीदास, हरिसेन, वीरसेन, कृष्ण वि वसुबन्धु, शूद्रक, दण्डिन, अमरसिंह, वात्स्यायन, उद्योतकर इसी युग की अद्वि विभूतियां हैं और शकुन्तला, मेघदूत, कुमारसम्भव मृच्छकटि, मुद्राराक्षस, प तन्त्र जैसे ग्रन्थों ने इस युग की शोभा बढ़ाई।

शिला लेखों, मुद्राओं व्याख्यानों में संस्कृत का प्रयोग किया गया, दार्शनि कवियों, लेखकों राज्य कर्मचारियों तथा राज्य शासकों ने इसी भाषा को अपना और इसी कारण यह भाषा दिन प्रतिदिन उन्नत होती चली गई, बुद्धतथा जैन के दार्शनिकों और विद्वानों ने भी साहित्य की बड़ी सेवा की बुद्ध धर्म के दार्शनि वसुबन्धु, असंग, दिग्नाग तथा आर्य देव इसी समय के गौरव थे तथा जैन के दार्शनिक सिद्धसेन, दिवाकर, समन्त भद्र भी इसी समय की विभूतियां इस प्रकार इस काल में साहित्य भी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया था।

ललित कला तथा विज्ञान में भी इस काल में भारी प्रगति हुई वे अप अपनी उन्नति की चरम सीमाओं पर पहुँच चुकी थीं, अजन्ता की गुफाओं में जि कला का प्रदर्शन किया गया है वह असाधारण तथा अद्वितीय है विश्व में इस बड़ा ऊँचा स्थान है स्थापत्य कला, भास्कर कला, चित्रकला, संगीत कला के क्षे में जो भी कार्य हुआ वह सब उच्चकोटि का था और आज भी वह बेजोड़ देहली का मेहरौली का स्तम्भ धातु कला का एक शानदार नमूना है और आज भी आश्चर्यजनक बना हुआ है इस काल की प्रतिमायें सौंदर्य पूर्ण तथा भावना प्रदर्श उत्कृष्ट नमूने हैं इनमें विशुद्ध भारतीय कला की छाप है क्योंकि इस समय विदेशी कला का प्रभाव समाप्त हो चुका था और गान्धार शैली लगभग विलु हो चुकी थी इस युग की कला में यह विशेषता रही कि प्रथम तो इस आध्यात्मिकता की पूर्ण छाप रही, द्वितीय इसमें कलाकार ने अपनी विलक्षणता का वह उदाहरण प्रस्तुत किया है जो संसार में कहीं भी प्राप्त नहीं होता, इसी कारण कला के क्षेत्र में यह युग स्वर्णयुग कहलाता है।

कला के साथ साथ विज्ञान की उन्नति भी उच्चकोटि की रही—गणित, ज्योतिष, रसायनशास्त्र, वैद्यक, धातु विज्ञान इत्यादि में बड़ा महत्व कार्य हुआ। आर्यभट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, नागार्जुन इत्यादि ने इस समय की विज्ञान के क्षे

चमकने वाली विभूतियां हैं जिन्होंने अपने ज्ञान भण्डार से अपने युग तथा अपने देश का नाम ऊंचा किया, उस समय भारतवासी खुले मस्तिष्क से ज्ञान का निरीक्षण करते थे और इसी कारण से उस समय विज्ञान की उन्नति हुई पूर्ववर्ती भारतीयों तथा यूनानियों के दार्शनिक ग्रंथ पढ़कर भी आर्यभट्ट ने उनके प्रमाण नहीं माने उनका कथन है "ज्योतिष के सच्चे झूठे सिद्धांतों के समुद्र में मैंने गहरी डुबकी लगाई है अपनी बुद्धि की नौका से मैं सत्य ज्ञान के बहुमूल्य मोती निकाल लाया हूं।" इस समय की यही प्रवृति विज्ञान तथा कला की उन्नति का साधन बनी और युग का गौरव बढ़ाया। इस समय का शिक्षा क्षेत्र भी उन्नत था शिक्षा केन्द्र तक्षशिला से हटकर नालन्दा में स्थापित हो गया था। यह विश्व विद्यालय समस्त भारत के ही नहीं अपितु चीन जैसे देशों के विद्यार्थियों को भी आकर्षित करता था। इसके अतिरिक्त और भी अनेकों शिक्षा केन्द्र थे जो उच्चकोटि की शिक्षा प्रदान करते थे। इस प्रकार देश में शिक्षा की भी प्रगति हो रही थी और साथ ही साथ भारतीय संस्कृति अन्य देशों में भी प्रसारित हो रही थी इस काल में हमारे देश का अन्य देशों के साथ बड़ा ही आदान प्रदान हो रहा था।

धार्मिक क्षेत्र में सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह रही कि गुप्त सम्राट स्वयं हिन्दू थे परन्तु अन्य धर्मों का भी आदर करते थे और उनको आवश्यक सहायता प्रदान करते थे। इससे उनकी महत्ता और भी अधिक हो जाती है। इस व्यवहार के कारण समस्त देश में प्रेम की एक लहर दौड़ गई और प्रगति के लिये अनुकूल वातावरण बना रहा।

सबसे अधिक महत्वशाली बात इस युग की यह है कि इस देश का जितना सम्पर्क इस युग में बाहरी दुनिया से हुआ पहले कभी न हुआ था, इस सम्पर्क से अनेकों प्रभाव पड़े और भिन्न भिन्न क्षेत्रों में परिणाम निकले। गुजरात तथा सौराष्ट्र के गुप्त साम्राज्य में आ जाने के कारण भारत का यूरोपीय देशों से अधिक सम्पर्क बढ़ा रोम तथा अन्य पाश्चात्य देशों के सम्पर्क में निरन्तर रहने के कारण दूरदर्शी परिणाम होते रहे इन देशों के साथ कूट नीतिक संबंध तथा व्यापारिक संबंध बराबर बने रहे गुप्त सम्राटों के राजदूत इन देशों में महान् सम्मान प्राप्त करते थे इस निरन्तर सम्पर्क के कारण सांस्कृतिक विचारों का आदान प्रदान भी होता रहा और इस समन्वय से सांस्कृतिक उत्थान में भारी सहयोग प्राप्त हुआ—चीन, मध्य एशिया, जावा, सुमात्रा, कोचीन, बोर्नियो में भारतीय संस्कृति का प्रसार हुआ। यहां की संस्कृति ने इन प्रदेशों में पहुँचकर वहां के लोगों पर बड़ा प्रभाव डाला। ज्ञान की तथा धर्म ग्रन्थों की खोज में चीनी यात्री फाह्यान इस युग में यहां आया था और यहां के रहने वालों के आचार विचार ईमानदारी से बड़ा ही प्रभावित हुआ था। उसने उस समय के भारत के मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। इस युग में

फिर एक बार भारतवर्ष का गौरव फिर से स्थापित हुआ और बाहरी सम्ब... में इसने आदर प्राप्त किया इस युग में ही यह देश अपने उपनिवेश के ओ... भी प्रवेश करने लगा। चीन में हमारे यहां से एक नहीं सहस्रों की संख्या में ले जाये गये थे ग्रंथ बौद्ध धर्म के थे इनके साथ साथ यहां के अनेकों विद्वान उन अनुवाद करने के हेतु वहां पर गये जैसे कुमार जीव, गुण वर्मन, परमार्थ, धर्म महान् विद्वान चीन में गये और अपने ग्रन्थों का अनुवाद किया। जहां बौद्ध धर्म गया हमारी संस्कृति को वहीं विजय श्री फैलाई, अलबरूनी के अनु... ईरान, खुरासान, सीरिया, ईराक देशों में इस्लाम से पहले बुद्ध धर्म ही फै... हुआ था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस युग में कोई भी क्षेत्र ऐसा न रह गया जिसमें उन्नति अपनी चरम सीमा पर न पहुँच गई हो—साहित्य-कला, वि... धर्म, समाज व्यापार उद्योग-धन्धे, कृषि शासन व्यवस्था विदेशी सम्बन्ध सब ही इस युग में वह महान् प्रगति की जैसी किसी भी एक युग में न हो पाई थी इस युग में गुप्त सम्राटों ने अद्भुत कार्य किया उनका दृष्टिकोण बड़ा ही ... था। वह स्वयं भी संस्कृति के प्रेमी और विद्वान थे इसलिये विद्वानों का आदर ... ज्ञान के प्रसार को प्रोत्साहन देते थे। वह सच्ची भारतीयता की भावना से ... ओतप्रोत थे इसीलिये उन्होंने उस दीपक को जो नाग वंश ने जलाया वाकाटक वं... ने उसकी ज्योति को बढ़ाया उसी प्रकार जलने दिया और इसके प्रकाश को इत... प्रज्वलित कर दिया कि समस्त युग ही दैदीप्यमान हो गया विदेशी सत्ता का अन्त कर देश में एक छत्र शासन की स्थापना कर साम्राज्य को बढ़ाया देश में सुख समृद्धि अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गई इसीलिये यह युग स्वर्णयुग कहा गया और यह पूर्ण रूप से उपयुक्त भी है।

Q. How far did the civilization of western Countries influence the Indian civilizaton during the ancient period?

प्रश्न—प्राचीनकाल में पाश्चात्य देशों की सभ्यता ने भारतीय सभ्यता को किस सीमा तक प्रभावित किया?

उत्तर—प्राचीनकाल में भारत का सम्बन्ध किसी न किसी रूप में पाश्चात्य देशों के साथ निरन्तर बना रहा यह सम्पर्क कभी कम तो अवश्य हो जाता था आने जाने की सुविधायें तथा बाधायें इस सम्पर्क को प्रभावित करती रहती थीं ऐसा प्रतीत होता है कि इस सम्पर्क का कारण विशेष रूप से व्यापार था हालांकि राजनैतिक सम्बन्ध भी इस क्षेत्र में कम प्रभावशाली न थे।

सुदूर प्रतीत में भारत जल तथा थल दोनों प्रकार के मार्गों द्वारा पाश्चात्य देशों से सम्बन्धित था। थल मार्ग अफगानिस्तान से होता हुआ आमू (Osus) नदी के साथ साथ चलकर कैस्पियन सागर तक पहुँचता था वहां से व्यापारिक वस्तुयें परिवम के प्रदेशों में पहुँच जाती थी जलमार्ग फारिस की खाड़ी अरब देश समुद्र तट, लालसागर द्वारा स्वेज जाता था और फिर अन्य देशों में इस मार्ग द्वारा लाई गई वस्तुयें भेज जाती थीं आगे चलकर जब यह खोज हुई कि हिन्द महासागर में मानसून हवायें नियमित रूप से चलती हैं तो लाल सागर से सीधे चलकर सिन्ध नदी के मुहाने तक जलपोत आने लगे यह रास्ता लगभग चालीस दिन का था इन व्यापार मार्गों द्वारा ही भारतीय सम्पर्क मिश्र इत्यादि देशों से हुआ भारत के गजदन्त तथा चावल पाश्चात्य देशों में पूर्व अतीत में ही ख्याति प्राप्त कर चुके थे।

प्रागैतिहासिक युग में भारत का सम्पर्क असीरिया तथा बेबिलोनिया से था इन सभ्यताओं ने भारत के ऊपर अपना क्या प्रभाव डाला यह एक विवाद ग्रस्त प्रश्न है प्रोफैसर रालिन्सन (Raulinson) के मतनानुसार यह प्रभाव काफी अधिक था भारत की ब्राह्मीलिपि इसी प्रभाव का फल था नक्षत्र की धारणा, सप्ताह के सात दिवस तथा सूर्य, चन्द्र इत्यादि ग्रहों का नाम करण भी इसी प्रकार का फल था, स्तम्भ शीर्ष सिंहों का आकार इत्यादि भी फारिस द्वारा असीरिया की देन हैं परन्तु रालिन्सन का यह कथन पूर्ण रूप से सत्य मानने योग्य नहीं यह कथन पूर्ण रूप से पक्षपात रहित नहीं है।

आगे चलकर ईरान के साइरस (Cyrus) ने लगभग ५३८ वर्ष पूर्व ईरानी साम्राज्य की नींव डाली और सम्राट दारा (Darius) ने भारत पर आक्रमण कर पंजाब को जीत लिया यह उसके विशाल साम्राज्य का बीसवां प्रांत हो गया यहां से प्रतिवर्ष लगभग १० लाख पौंड ईरान के खजाने में जमा होते थे। दारा (Darius) का एक यूनानी सेनापति स्कायलेक्स (Skylux) प्रथम यूनानी था जिसने भारत में पदार्पण किया था इस काल में लगभग दो शताब्दियों तक भारत और ईरानियों का सम्पर्क बना रहा जो आगे चलकर भंग सा हो गया।

इस दीर्घकाल में इन दोनों सभ्यताओं में किस प्रकार आदान प्रदान हुआ यह देखने योग्य बात है।

कुछ विद्वानों का मत है कि खरोष्टी लिपि जो ईरानी शासकीय अभिलेखों पर प्रयोग में लाई जाती थी ईरानियों द्वारा ही भारत में आई जो ईसा की चौथी शताब्दी तक बनी रही यूनानियों के समय भी तक्षशिला में ईरानी प्रथायें इस बात का प्रमाण है कि तक्षशिला सम्भवतः ईरानियों की प्रांतीय राजधानी रहा था, मैगस्थनीज द्वारा बताया गया है आगे चलकर मौर्य सम्राट ईरानी सम्राटों को

तरह ही जीवन व्यतीत करते थे उनके शरीर की रक्षा के लिये अति विश्वास सैनिक रक्खे जाते थे और सम्राट विशेष अवसरों पर ही बाहर निकलते चन्द्रगुप्त मौर्य द्वारा अपनाई गई केश-धोवन प्रथा' ईरानियों से ही ली गई थी

कला के क्षेत्र में भी ईरानी प्रभाव पड़ा था। शिला लेखों द्वारा धर्म प्र की रीति सम्भवता ईरानियों से ही ली गई थी चूंकि शिला लेखों का रि ईरानियों में पहले ही फैला हुआ था। ईंटों के स्थान पर पाषाण का प्रयोग ईरानियों द्वारा ही भारत में आया, स्तम्भ कला उनके शीर्ष निर्माण की शै ईरान से ली गई प्रतीत होती है कुछ विद्वानों का मत है कि सारनाथ स्तम्भ वह आधार जिस पर सिंह खड़े हैं ईरानी कला का प्रभाव है परन्तु यह मत अधिक महत्व नहीं रखता मौर्य काल में जो विशाल मार्ग देश में फैले हुये थे उ प्रकार के मार्ग ईरान में भी फैले हुये थे। साम्राज्य की कल्पना भी ईरानियों भारत को दी परन्तु यह मत बिलकुल व्यर्थ तथा अर्थहीन है ऐसा मानने का को आधार ही प्रतीत नहीं होता।

दूसरे मत के विद्वान भी हैं जिनका मत है कि ईरानी सभ्यता का कोई भी प्रभाव भारतीय सभ्यता पर नहीं पड़ा और न इसके विपरीत ईरान की सभ्यता ही विशेष रूप से भारतीय सभ्यता से प्रभावित हुई। ऐसे विद्वानों में हैवेल (Havell) का नाम उल्लेखनीय है।

यूनानी प्रभाव

इसके पश्चात ईरानी साम्राज्य का पतन हो गया और सिकन्दर ने यूनान से चलकर ईरान में विजय प्राप्त की और ईरानी साम्राज्य की इति श्री हो गई। फिर सिकन्दर भारत की ओर बढ़ा और ३२६ वर्ष ई० पू० में पंजाब पर आक्रमण किया और अब भारत तथा यूनानी एक दूसरे के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आये।

अब से पूर्व यूनान के लोग भारत को या तो मिश्र के व्यापार द्वारा या ईरानियों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से ही जानते थे। प्रथम बार यूनानी इतिहास लेखक हेरोडोटस (Herodotus) ने जो ४८४ वर्ष ई० पू० में पैदा हुआ था। भारत के विषय में कुछ लिखा था। इसके पश्चात भारत के विषय में लिखने वाला दूसरा यूनानी टेशियस (Ktesias) था जो ईरानी राज्य दरबार में रहता था। भारत के विषय में अन्य जानकारी व्यापारिक काफलों द्वारा प्राप्त की गई थी। परन्तु सिकन्दर के आक्रमण ने दोनों देशों के निवासियों में प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध स्थापित कर दिये। सिकन्दर के पश्चात अनेकों निवासी भारत में ही बस गये परन्तु कुछ बेक्ट्रिया में उपनिवेश बना कर रहने लगे इन्होंने ही बाद में भारत के बाहर उत्तर में कई छोटे छोटे राज्य स्थापित कर लिये थे। जो आगे चलकर कुषाणों तथा

शकों द्वारा नष्ट कर दिये गये। इस लम्बे सम्पर्क का सान्स्कृतिक दृष्टि कोण से क्या महत्व रहा है। यह विषय अध्ययन के योग्य है।

इस प्रश्न को भी विवाद ग्रस्त बना दिया गया है। क्योंकि दोनों ओर के विद्वान आपस में बड़ा मत भेद रखते हैं। योरपीय विद्वानों ने इस बात पर बड़ा बल दिया है कि भारतीय सभ्यता अनेकों बातों के लिये यूनानी सभ्यता की ऋणि है। परन्तु यह मत कुछ उपयुक्त सा प्रतीत नहीं होता। इसके दूसरी ओर भारतीय विद्वानों ने दूसरा रुख अपनाया और उन्होंने सिकन्दर के आक्रमण को केवल साधारण सा आक्रमण कह कर टाल दिया। यह प्रभाव न्यून, दिखाऊ तथा बाहरी ही सिद्ध हुआ। इन दोनों मतों में किसी निश्चित मत पर पहुँचना बड़ा कठिन हो जाता है।

सिकन्दर के पश्चात अन्य यूनानी आक्रमण हुये परन्तु सब बेकार सिद्ध हुये और सभ्यता के दृष्टिकोण से उनका कोई महत्व नहीं रहा। मौर्य काल में आते आते यूनानियों से सम्बन्ध बढ़ते रहे। चन्द्रगुप्त मौर्य ने सैल्यूकस की लड़की से विवाह किया और मैगस्थनीज को अपने दरबार में रक्खा बिन्दुसार का भी यूनानियों से सम्पर्क रहा उसने एक बार सैल्यूकस के यूनानी शराब का नमूना मंगाया था। अशोक ने अपने धर्म प्रचारक यूनान, मिश्र, सीरिया इत्यादि देशों में भेजे थे। जहां पर उनको सब प्रकार की सुविधा मिली थी। अशोक ने एक यूनानी अधिकारी को सुराष्ट्र में विशाल झील बनवाने का कार्य सौंपा था। परन्तु इस समय तक भारतीय सभ्यता ने यूनानी सभ्यता से कोई प्रभाव ग्रहण नहीं किया।

इसके पश्चात जब भारत के उत्तर पश्चिम में यूनानियों ने छोटे छोटे राज्य स्थापित कर लिये तो दोनों जातियों की संस्कृतियां अधिक प्रकार से मिली और एक दूसरी से प्रभावित हुई।

धर्म

इस क्षेत्र में कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा परन्तु यूनानियों का भारत पर नहीं अपितु यूनानियों पर भारतीय धर्म का अनेकों यूनानियों ने अपना धर्म परिवर्तन कर हिन्दू धर्म को अपना लिया। हिन्दू रीति रिवाज अपना लिये और पूर्ण रूप से भारतीयों में घुल मिल गये। बेक्ट्रिया के अनेकों यूनानी हिन्दू बन गये। यूनानी राजा मिनेन्डर ने बुद्ध धर्म अपना लिया था। यूनानियों ने धर्म परिवर्तन कर यहां की संस्कृति अपनाई। इन्होंने यहां की धार्मिक संस्थाओं को समय समय पर दान भी दिये थे।

शिल्प कला

कला के क्षेत्र में अवश्य यूनानी कला ने भारतीय कला को प्रभावित किया भारत कला तथा यूनानी कला के समावेश से एक नवीन शैली का आविर्भाव

हुआ। यह गान्धार शैली के नाम से विख्यात हुई और लगभग ६०० वर्षों बनी रही। इस कला में बुद्ध जी की अनेकों मूर्तियां निर्मित की गईं। इस में बनी हुई कई प्रतिमायें यूनानी देवता अपोलो (Appollo) जैसी प्रतीत हैं। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह शैली भारत के उत्तर पश्चिम में सीमित रही और पूर्वी भारत में पहुँचते पहुँचते इसका लोप हो गया। आगे चल कुषाणों के पतन के बाद जब गुप्त साम्राज्य का अभ्युदय हुआ तो राष्ट्रीयता सबल आक्रमणों ने इस शैली का भी विनाश कर दिया। इस लिये कला के में भी यूनानी प्रभाव स्थाई सिद्ध न हुआ। जान मार्शल (John Marshall) मत है कि भारतीय शिल्प कला पर यूनानी प्रभाव वास्तविक तथा स्थाई प्र स्थापित न कर सका।

मुद्रा कला

मौर्य काल के सिक्के पूर्ण रूप से भारतीय ढंग के रहे। उन पर कं विदेशी प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता। पुराने बेडोल आकार के सिक्के अशोक का तक बने रहे परन्तु उसके पश्चात सिक्कों पर विदेशी प्रभाव दिखाई पड़ने लगा यह सिक्के जिनके एक ओर राजा की मूर्ति और उसकी उपाधियाँ तथा दूसरी ओर कोई और आकृति होती है। विदेशी प्रभाव का ही फल था। इन की आकृति सुन्दर होने लगी। यूनानी, शक, पार्थियन आदि राजाओं के सिक्कों का अनुकरण किया गया। कनिष्क के समय के सिक्के भी विदेशी प्रभाव को प्रगट करते हैं। इ में भारतीय, इरानी तथा भारतीय देवी देवताओं का अंकन किया गया है। इस यु में रोम के सिक्कों की भी नकल की गई। गुप्त काल के सिक्कों पर भी विदेशी प्रभाव रहा परन्तु बेक्ट्रिया के प्राचीन सिक्के उनसे कहीं अधिक रोचक प्रतीत होते है इस प्रकार यूनानी प्रभाव किसी रूप में सिक्कों पर अवश्य रहा।

दर्शन शास्त्र :—इस क्षेत्र में यूनानियों ने भारतीय दर्शन से बहुत कुछ सीखा यहां के अनेकों विचारों को उन्होंने अपनाया प्रोफैसर रालिन्सन (Prof. Raulinson) का मत है कि भारत के दर्शन ने यूनान के दर्शन को मिश्र द्वारा प्रभावित किया था। योग तपस्या तथा सन्यास की क्रियायें यूनानियों ने भारत से ही अपनाईं पुनर्जन्म तथा कर्म के प्रसिद्ध सिद्धांत यूनानियों को भारत से ही मिले इन सिद्धांतों का उल्लेख पिलेटो (Plato) ने अपनी महान् पुस्तक रिपब्लिक (Republic) किया है सुरा मान्स का निषेद भी यूनान में भारत से ही गया, पायथागोरियन (Pythagorion) मत वालों के अनेकों विचार भारत दर्शन से लिये गये प्रतीत होते हैं—भारत दर्शन यूनानी दर्शन से कहीं आगे थे, भारतीय दर्शन ने यूनान दर्शन को अनेकों नवीनतायें प्रदान कीं।

भाषा और लिपि

भाषा के क्षेत्र में यूनानी प्रभाव सर्वथा प्रभाव हीन था इस देश में जन
रण यूनानी भाषा नहीं समझते थे कुषाणों ने यूनानी लिपि अपनाई परन्तु
ा सुलानी ही रक्खी। इससे पता चलता है कि यूनानी भाषा भारत पर कोई
व न डाल सकी।

विज्ञान

चिकित्सा के क्षेत्र में 'चरकशास्त्र' पर कुछ यूनानी प्रभाव प्रतीत होता है
न्तु यह भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता भारतीय चिकित्सकों ने स्वतंत्र
। से ही अपना ज्ञान बढ़ाया होगा।

गणित पर अवश्य यूनानी प्रभाव रहा इसी प्रकार ज्योतिष पर भी यूनानी
ाव दृष्टिगोचर होता है। भारतीयों ने यूनानियों से ज्योतिष के अनेकों सिद्धांत
से गार्गी संहिता में लिखा है—'यद्यपि यवन बर्बर हैं तथापि ज्योतिष के मूल
र्माता होने के कारण वे देवताओं की भांति स्तुत्य हैं।' 'रोमक' तथा 'पोलिस
द्धांत' यूनानी प्रभाव का ही फल है। नक्षत्रों द्वारा भविष्य को जानने की क्रिया
भवता बाबुल से सीखी गई थी भारतीय ज्योतिष में यूनानी नामों का प्रयोग
। इस बात का प्रमाण है कि यूनानियों की ज्योतिष विद्या से हिन्दू बराबर लाभ
ा रहे थे।

काव्य तथा नाटक

यूनानी काव्य ने भारतीय काव्य पर अपना प्रभाव डाला यह विवाद ग्रस्त
रन है वेबर जैसे विद्वानों ने अपना ऐसा मत बनाया कि होमर (Honer) के
व्य से प्रभावित होकर रामायण तथा महाभारत की रचना हुई परन्तु ये मत
लकुल निर्मूल है ये दोनों ग्रन्थ तो (Honer) के समय से कहीं पूर्वकाल में लिखे
ा चुके थे। नाटक पर भी यूनानी प्रभाव को माना है परन्तु इस विषय में भी
ारी शक प्रतीत होता है नाटक भारत में अति प्राचीनकाल से लिखे जाते रहे हैं
द कला पहले से ही यहां विद्यमान रही है दोनों देशों के नाटकों में जो समता
खाई देती है वह केवल आकस्मिक तथा बाहरी है और इतनी कम है कि दोनों
पने क्षेत्र में स्वतंत्र हैं और एक दूसरे का ऋणी नहीं मालूम पड़ता।

इस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि प्लूटार्क तथा एलियन
सन्त क्रिसोस्टम के कथन कि यूनानी काव्य ने भारी प्रभाव डालकर रामायण
था महाभारत का निर्माण सम्भव किया था ऐसी धारणा बिल्कुल ही आधार रहित
। हां यह ठीक है कि यूनान के साहित्य पर भारतीय साहित्य का गहरा प्रभाव
ड़ा। हमारे 'पञ्च तन्त्र' से उन्होंने पशुओं की अनेकों कहानियां लीं।

इस प्रकार यह बात स्पष्ट रूप से प्रगट हो जाती है कि यूनानी सभ्यता का कोई भी प्रभावशाली असर भारतीय सभ्यता पर नहीं पड़ा यूनानी लोग अपने अस्तित्व को बनाये रखने में ही लगे रहते थे उनको अपनी संस्कृति का विकास तथा प्रसार करने का अवसर ही न मिल सका इसके अतिरिक्त भारतीय संस्कृति स्वयं इतनी विकसित थी कि वह सुगमता से किसी भी अन्य संस्कृति का प्रभाव ग्रहण न कर सकती थी इसी कारण से यूनानी सभ्यता ने ही भारतीय सभ्यता से अनेकों बातें ग्रहण की यूनानी सभ्यता का भारत की सभ्यता पर प्रभाव इस कथन से पूर्ण से प्रगट हो जाता है कि "यदि यूनानियों का अस्तित्व ही न रहा होता तो भी भारतीय सभ्यता बुद्ध की मूर्ति को छोड़ ही रही होती जैसी आज है उसमें कोई अन्तर न हुआ होता।"

इस सबसे यही निष्कर्ष निकलता है कि यूनानी सभ्यता का कोई भी प्रभाव स्थायी रूप से भारतीय सभ्यता पर नहीं पड़ा अपितु इसके विपरीत भारतीय सभ्यता ने ही यूनानी सभ्यता को प्रभावित किया।

रोम

ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में रोम का साम्राज्य स्थापित हो जाने के कारण भारत के पश्चिमी व्यापार में वृद्धि हुई रोम में भारतीय मलमल रत्न मोती इत्यादि बहुत जाने लगे। रोमन साम्राज्य से लगभग ५ लाख पौंड भारत को जाते थे जिस पर पलाइनी (Plany) ने दुख प्रगट किया था। कुषाणों के काल में तो रोम साम्राज्य की सीमा तो कुषाण साम्राज्य से केवल १०० मील रह गई थी। यह व्यापार और भी अधिक बढ़ गया था इसकी पुष्टि मद्रास में प्राप्त रोमन सिक्कों से होती है।

इस प्रकार दोनों देशों का सम्पर्क व्यापार द्वारा अधिक रहा और रोमन विद्वानों ने भारत के विषय में अनेकों ग्रंथ लिखे स्ट्रेबो ने दोनों देशों के व्यापार पर एक ग्रंथ लिखा पलाइनी ने 'प्राकृतिक इतिहास' में भारत की प्रशंसा की उसमें भारत के पशुओं जड़ी बूटियों तथा पौधों के नामों का उल्लेख किया टालमी (Ptolmy) ने भी भारत का सुन्दर वर्णन किया है इसके अन्य डायोकैशियस (Diocassius), केलिस्ट्रेटस (Callistratus) इत्यादि के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

व्यापारिक सम्पर्क द्वारा राजनैतिक सम्पर्क भी हुआ सम्राट आगस्टस (Augustas) के दरबार में भारत के कई राज्यों के राजदूत पहुंचे थे। इसके अतिरिक्त अन्य सम्राटों के दरबारों में भी भारतीय राजदूत पहुंचते रहे थे।

इस प्रकार के सम्पर्क का यह परिणाम हुआ कि रोम निवासी भारत आते रहे और भारत निवासी रोम साम्राज्य में गये बहुत से रोमन के कोनों

पश्चिमी भारत में अपना एक उपनिवेश भी बना लिया था भारतीय भी अनेकों की
संख्या में सिकन्दरिया में जाते रहते थे वह नगर उस समय पूरब तथा पश्चिमी
का संगम बना हुआ था इसका प्रमाण कि भारत निवासी मिश्र तक जाते थे उस
शिला लेख से प्राप्त होता है जो देदेसिया (Dedesiya) के मन्दिर में आज भी
सुरक्षित है भारत के कुछ ब्राह्मण भी सिकन्दरिया गये थे इसका भी प्रमाण मिला
है इससे पता चलता है कि भारत के लोगों ने जलयात्रा तथा जलमार्ग द्वारा
व्यापार में अधिक उन्नति कर ली थी।

परन्तु रोमन साम्राज्य के पतन के साथ साथ भारतीय सम्पर्क भी क्षीण
होने लगा और उसके अन्त होने पर भारत के सम्पर्क का भी अन्त हो गया देखना
यह है कि इस दीर्घकालीन सम्पर्क ने सभ्यता के क्षेत्र में क्या प्रभाव डाले ?

भारतीय धर्म तथा दर्शन ने पश्चिम को प्रभावित किया नीव प्लेटोनिज्म
(Neo-Platonism) में भारतीय दर्शन का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है
इस धर्म के मानने वाले मनन द्वारा आत्मा की शुद्धि कर ब्रह्म में विलीन होने का
प्रयत्न करते हैं मांस निषेध वैराग्य इत्यादि सिद्धांत भी भारतीय दर्शन से लिये गये
प्रतीत होते हैं इस धर्म का प्रसिद्ध अनुयायी प्लोटीनस (Plotinus) स्वयं दर्शन
शास्त्र के अध्ययन के लिये पूरब में आया था इसी प्रकार प्रसिद्ध लेखक नास्तिक
(Gnostic) भी पूरब की ओर आया था। आगे चलकर जब ईसाई धर्म का प्रसार
हुआ तो सिकन्दरिया तथा सीरिया में रहने वाले हिन्दू तथा बौद्धों ने भी इस
नवीन धर्म पर अपने प्रभाव डाले ईसा से पूर्व द्वितीय शताब्दी में दजला नदी
के ऊपरी भाग में वान नामक झील के समीप भारतीयों का एक उपनिवेश था
उन्होंने वहां दो मन्दिरों का निर्माण कराया था सन् ३०४ ई० में सेन्ट ग्रेगरी
(St. Gregorry) ने इन मन्दिरों पर आक्रमण किया और दो १२ तथा १२ फीट
ऊंची प्रतिमायें चूर चूर कर डालीं इस मूर्ति खण्डन का उल्लेख बड़े ही रोचक
ढंग से सीरियन लेखक जेनाब (Zenob) ने किया है इतने पर भी ईसाई लोग
इन भागों से हिन्दू तथा बौद्ध धर्मों को समूल नष्ट न कर पाये और अवश्य ही
ईसाई धर्म पर भारतीय धर्मों पर अपनी छाप लगाई, अब यह बात स्पष्ट हो गई
है कि ईसाई धर्म की अनेकों विचार धारायें हिन्दू धर्म के प्रभाव के कारण उत्पन्न
हुईं इस बात को यूरोपीय विद्वान भी मानते हैं स्मारक पूजा, स्वर्गलोक की कल्पना-
यें तथा वैराग्य की प्रवृति इत्यादि हिन्दू धर्म के प्रभाव के परिणाम हैं सिकन्दरिया
के प्रसिद्ध 'पाल' (Paul) तथा उनका शिष्य (Anthony) भारतीय सिद्धांत जो तप
तथा वैराग्य से सम्बन्धित थे उनसे विशेष प्रकार से प्रभावित हुये थे। बुद्ध धर्म ने
भी ईसाई धर्म पर अपनी छाप अवश्य लगाई थी प्रथम तो बौद्ध चैत्य तथा ईसाई
गिर्जा की बाह्यतरिक सभ्यता आश्चर्य जनक है इसके अतिरिक्त पादरियों का विकास

मन्त्र एक साथ भजन गान करना पादरियों का जीवन जो सांसारिक बन्धन पृथक रहते थे। व्रत उपवास सन्तों की पूजा इत्यादि प्रथायें बुद्ध धर्म के प्र का ही फल थे अनेकों ईसाई बुद्ध जी को भी उतना ही महत्व देते हैं जितना को ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भिक काल में ईसाई प्रचारक भारत में आये और यहां पर धर्म प्रचार किया ऐसे प्रचारकों ने यहां अनेकों समुदाय भी ब इन कार्यों का उल्लेख ५ वीं सदी में लिखी गई 'नेशन्स आफ इण्डिया (Natic of India) और ६ वीं सदी में लिखी गई' 'क्रिशचियन टोपोग्राफी (Christ topography) नामक पुस्तकों में किया गया है इस प्रकार यह निश्चय रू कहा जा सकता है कि भारतीय धर्मों ने ईसाई धर्म पर गहरा प्रभाव पड़ा।

ज्योतिष क्षेत्र में भारत बहुत कुछ पश्चिम से सीखा 'रामक' सिद्धा से ही यहां आया मुद्रा निर्माण तथा कला पर भी पश्चिमी देशों का प्रभाव साहित्य के क्षेत्र में भारत से पश्चिम को ज्ञान का प्रभाव रहा।

इस प्रकार अब स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि भारत का सम प्रागैतिहासिक काल से लेकर ईसा की छठी शताब्दी तक कम या अधिक म में पश्चिमी देशों से बना रहा व्यापारिक राजनैतिक तथा सांस्कृतिक आदान प्र होता रहा परन्तु पाश्चात्य सभ्यता ने जो प्रभाव भारतीय सभ्यता पर छोड़े चौथी शताब्दी तक आते आते विलुप्त हो चुके थे परन्तु भारतीय सभ्यता अवशिष्ट आज भी पश्चिम में विद्यमान हैं भारतीय दर्शन ने पश्चिमी दर्शन स्थायी रूप से प्रभावित किया था।

गुप्त युग में भारतीय संस्कृति अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई उसका विकास स्वतंत्र रूप से हुआ था यूनानी कला का जो प्रभाव गान्धार शै में दिखाई देता था वह नष्ट हो चुका था और अब कला ने विशुद्ध रूप धा कर लिया था यह सभ्यता पाश्चात्य सभ्यता से कहीं आगे थी फिर शताब्दि तक भारत के शान्तिपूर्ण वातावरण ने यहां की सभ्यता को विकसित होने के अवसर प्रदान किये और इस कारण बिना किसी बाधा के अविरल गति से भारत सभ्यता का प्रवाह आगे की ओर होता रहा परन्तु पश्चिम में अधिक संघर्षों के कारण संस्कृति के विकास में बाधायें आती रहीं और सामान्य रूप से इस स्थि में न आ सकी कि भारतीय सभ्यता को स्थायी रूप से प्रभावित कर सके इसलिये यह मानना ही पड़ता है कि पाश्चात्य से प्रभावित होने की अपेक्षा भारतीय सभ्य ने पाश्चात्य सभ्यता को ही अधिक प्रभावित किया है यह प्रभाव आज भी पाश्चात्य दर्शन में विद्यमान है।

Q.—Pointing out the importance of Indian civilisation give a tical account of the causes and means of its spread in foreign intries.

प्रश्न—भारतीय संस्कृति का महत्व बताते हुये विदेशों में इसके प्रसार कारणों तथा साधनों का विवेचनात्मक उल्लेख करो ।

उत्तर—भारतीय संस्कृति उन महान तथा प्राचीन संस्कृतियों में से है जिन द्वारा मानव वना और अपनी बर्बरता को छोड़ सभ्य जीवन में प्रविष्ट हुआ। सभ्यता का किस प्रकार उदय हुआ यह कहना तो बड़ा दुष्कर है परन्तु इतना श्य कहा जा सकता है कि यह सभ्यता आर्य तथा द्राविड़ सभ्यताओं का मिश्रण जिसमें प्रधान रूप से आर्य सभ्यता की छाप है। इसके पश्चात भारतीय ऋषि ने अपने विचारों का अन्वेषण तथा निगारन करते रहे और यह संस्कृति विकसित ती रही। शताब्दियों तक यह क्रम चलता रहा और इस दीर्घ काल में यह ःकृति एशिया के अधिकतर प्रदेशों के आध्यात्मिक जीवन को प्रभावित करती रही ा से १०० वर्ष पूर्व तथा १००० वर्ष पश्चात का वह दीर्घ काल है जिसमें रतीय संस्कृति अपना प्रकाश एशिया के अन्धकारमय प्रदेशों में फैला रही थी। ाों की बर्बरता दूर की। उनको सभ्य बना विश्व कल्याण में संलग्न थी। यह भ्यता आग तथा तलवार लेकर अन्य प्रदेशों में नहीं गई अपितु शान्ति तथा द्भावना का प्रचार ही इसका उद्देश्य रहा। विनाशकारी प्रवृत्तियां इससे दूर की ायें रहीं, सभ्यता का प्रचार तथा विश्व कल्याण ही इसका एक मात्र उद्देश्य रहा । यही इस सभ्यता का महत्व, गौरव तथा आदर्श है। विश्व कल्याण ही इस स्कृति की विलक्षणता है। जिस प्रदेश में भी यह संस्कृति पहुँची वहां के निवासियों ा शोषण न कर उनको अपना विकास करने में सहायता पहुँचाई। लंका, ब्रह्मा, याम, हिन्द चीन, मलाया, जावा, सुमात्रा इत्यादि प्रदेशों में यह सभ्यता फैली। ीन, जापान, कोरिया में भारतीय अपने आध्यात्मिक विचार लेकर गये। पाश्चात्य सार से भारत का गहन सम्बन्ध रहा। हमारी सभ्यता का निरन्तर आदान प्रदान ोता रहा। इन भिन्न भिन्न देशों में पहुंच कर इस सभ्यता ने उन जातियों में ्क प्रकार की नवीन शक्ति का जागरण किया जिसके द्वारा वहां भौतिक उन्नति ही ाहीं हुई अपितु उनके आध्यात्मिक जीवन में भी भारी विकास हुआ और फिर न जातियों ने अपनी स्वयं की प्रगति द्वारा विश्व सभ्यता की गंगा में अपनी नयी देन मिलाई।

बुद्ध धर्म के विचारों ने चीन, कोरिया, जापान इत्यादि प्रदेशों में पहुंच र वहां के आध्यात्मिक जीवन में क्रान्ति उत्पन्न की। जिसका सुखद फल यह हुआ कि इन देशों ने कला, साहित्य तथा धर्म में विलक्षण प्रगति कर डाली।

हिन्दू धर्म ने बौद्ध धर्म के बड़े मार्मिक सिद्धान्त उत्पन्न किये और में फैलाये जिनके लिये विश्व का प्रत्येक धर्म आज भी पूर्ण रूप से आभारी भारतीय ऋषि मुनि कभी कभी विदेशों में जाते और अपने आश्रमों का नि कर अपने ज्ञान द्वारा वहां के बर्बर लोगों को सभ्य बनाने का कार्य करते कौण्डिन्य तथा अगस्त्य ऋषि इसी प्रकार के उदाहरण हैं।

अब देखना यह है कि वह कौन से कारण थे जिन्होंने भारतीय सभ्यता विदेशों में प्रसार करने के शुभावसर प्रदान किये और इन कारणों के साथ साथ कौ साधनों द्वारा यह सभ्यता बाहर गई।

अब तक देखने में यह आया है कि सभ्यता विजय तथा व्यापार के साथ ही प्रसारित होती है। इसी प्रकार के अनेकों कारण भारतीयता के प्रसार सहायक हुये। उस समय भारतीय यह जानते थे कि पूर्वी द्वीप समूह स्वर्ण स्थान हैं। इस ओर के देशों में सोना भी बहुत अधिकता से मिलता है। इस भारतीय नाविक तथा व्यापारी समुद्रों में दूर जाते आते थे। उनमें घर बैठे र की ही आदत न थी। जैसा कि अब तक विद्वानों का मत था और जिसका खन वर्तमान की अनेकों खोजों तथा अन्वेषणों द्वारा हुआ है। अनेकों अवशेषों से य सिद्ध होता है कि प्राचीन भारतीय लोग पर्वत मालाओं तथा सघन जंगलों के समुद्रिक बाधाओं को पार करते थे और अपने व्यापार की वृद्धि करते तथा उपनिवेश स्थापित करते थे। वह दृढ़ विश्वासी और निडर लोग थे। इन लोगों द्वारा ही भारतीय संस्कृति प्रदेशों में गई। मसालों तथा सोने ने भारतियों को इस ओर बढ़ने को उत्साहित किया। यहां की असभ्य जातियां इन भारतीय व्यापारियों के संसर्ग में आईं और इनकी संस्कृति से प्रभावित हुईं।

इनके साथ साथ भारत इस समय के सभ्य संसार के बीच में स्थित होने के कारण भिन्न भिन्न देशों में फैली हुई सभ्यताओं के सम्पर्क में भी बराबर आता रहता था।

जावा, सुमात्रा, बाली, बोर्नियो, स्याम, हिन्द चीन, मलाया इस प्रकार ही भारतीय संस्कृति के सम्पर्क में आये और सभ्य हुये।

व्यापारियों के साथ साथ हिन्दू धर्म उपदेशक तथा बुद्ध धर्म के प्रचारक धार्मिक उत्साह लेकर इन बाहरी विदेशों में धर्म प्रचार के लिये जाते थे। इनकी महत्वाकांक्षा पूर्णतया धर्म प्रचारक तथा लोक कल्याण ही होती थी। यह लोग भारतीय विचारों तथा संस्कृति से सुसज्जित होने के अतिरिक्त और कोई शक्ति अपने पास न रखते थे। ये राजनैतिक सत्ता से वंचित रहने के बावजूद भीषण बाधाओं का मुकाबला करते और बर्बर जातियों में धर्म उपदेश देते थे। इस प्रकार इन निःस्वार्थ प्रचारकों के प्रयत्नों से भारतीय सभ्यता मध्य एशिया, चीन, कोरिया,

ापान देशों में पहुंची। छठी शताब्दी ई० पू० बुद्ध धर्म मध्य एशिया गया। वहां ो चीन, कोरिया तथा जापान तक फैला। इस धर्म के साथ साथ भारत का साहित्य कला तथा अन्य विचार धारायें भी इन देशों में प्रसारित हुई। बारहवीं शताब्दी तक हुंचते पहुंचते बुद्ध धर्म इन देशों में एक प्रबल शक्ति के रूप में विकसित हुआ। १२७ ई० में पदुम सम्भव ने तिब्बत में पहुँच कर बुद्ध धर्म की नींव डाली थी। सी प्रकार अनेकों विद्यार्थी विदेशों से भारत में आकर ज्ञानोपार्जन करते और भारतीय संस्कृति के रंग में रंग कर अपने देशों को लौटते थे। वहां पर यह अपने विचारों द्वारा भारतीयता का प्रचार तथा प्रसार करते थे। अनेकों भारतीय ग्रन्थों का इन देशों की भाषाओं में अनुवाद होता था। जैसे बुद्ध धर्म के प्रसिद्ध ग्रन्थों के अनुवाद तिब्बती भाषा में हुये उनमें 'तांजूर' तथा 'कांजूर' आज भी विद्यमान हैं।

सन् १०१८ में बंगाल से आचार्य दीपांकर तिब्बत धर्म प्रचार के लिये गये थे। सम्राट अशोक ने अनेकों प्रचारक लंका, ब्रह्मा, चीन इत्यादि देशों में भेजे। उसकी लड़की संघमित्रा तथा लड़का महेन्द्र स्वयं लंका गये और वहां के राजा को बुद्ध धर्म ग्रहण कराया था। चीन में बुद्ध धर्म के प्रचारक कश्यप मातंग तथा धर्मरत्न उल्लेखनीय हैं। वहां से फाहियान तथा ह्वानसांग प्रसिद्ध यात्री भारत में बुद्धजी की पवित्र भूमि के दर्शन करने अनेकों ग्रन्थों की खोज करने के लिये आये थे और यहां पर वर्षों रहकर भारत के रीति रिवाजों, आचार, विचारों का अध्ययन किया था और भारतीय विचार लेकर चीन लौटे थे। भारत से अनेकों विद्वान् बुद्ध ग्रन्थों का अनुवाद करने चीन गये थे।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संस्कृति के प्रसार में उपदेशकों, प्रचारकों, ऋषि मुनियों इत्यादि का बड़ा भारी हाथ रहा था।

भारतीय संस्कृति के प्रचार में उन साहसी तथा दृढ़ भारतवासियों ने बड़ा भारी योग दिया जिन्होंने विदेशी भूमियों पर जाकर स्थायी रूप से अपने उपनिवेश बसाये इन उपनिवेशों ने भारतीय सभ्यता के प्रसार के केन्द्रों का महान कार्य किया इनके सम्पर्क में आने वाले निवासियों ने इन भारतीयों की सभ्यता को अपना लिया। इन संस्थापकों के अतिरिक्त अनेक यात्री राजकुमार अपने भाग्य की खोज करने तथा राज्य स्थापित करने के हेतु इन विदेशों में जाते थे। इस प्रकार स्थापित किये गये अनेकों राज्य शताब्दियों तक अन्य देशों में स्थापित रहे।

वर्तमान खोतान के आस पास सहस्त्रों भारतीय जाकर बस गये थे वर्तमान गोबी रेगिस्तान उस समय समृद्धशाली भारतीय उपनिवेशों का केन्द्र बना हुआ था। फाहियान के मतानुसार ई० शताब्दी प्रथम में इस मरुभूमि में भारतीयों की बड़ी संख्या वहां रहती थी। सर औरेल इस्टेन (Sir Aurel stein) ने जो पुरातत्व सम्बन्धी अन्वेषण किये उनके अनुसार कई प्राचीन नगरों के भग्नावशेष

प्राप्त हुए हैं। जिनमें २००० वर्ष पूर्व भारतवासी बसते थे। इन स्थानों पर अनेक हिन्दु देवताओं, बुद्धजी इत्यादि की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। तीसरी शता. खोतान बुद्ध धर्म का केन्द्र बन चुका था। वहां पर प्राकृत राजभाषा थी। प्रदेश पूर्ण रूप से भारतीयता से ओत प्रोत थे। इन बस्तियों के कई राजा धर्मावलम्बी थे। जिनके नाम भी भारतीय जैसे हरिपुष्प तथा सुवर्ण पुष्प हु थे। ह्वानसांग ने भी भारत आते हुए तथा यहां से लौटते समय इन प्रदेश अनेकों बुद्धावलम्बी भारतीयों को देखा था।

फिलिपाइन द्वीप में भी दक्षिणी भारत वालों ने अपनी बस्तियां स्था कर ली थीं। उन्होंने वहां की शिल्पकला, मुद्राकला, साहित्य तथा अन्य रिवाजों को प्रभावित किया था। आज भी वहां की लिपि दक्षिण की लिपियों साम्यता रखती है। उसके आगे भी भारतीय उपनिवेश स्थित थे।

दक्षिणी पूर्वी द्वीप समूह में जो उस समय स्वर्ण भूमि कहलाती थी भारत राजकुमारों, व्यापारियों तथा अन्य पिंडर लोगों ने अपने उपनिवेश स्थापित कि थे। हिन्द चीन में कम्बोडिया या कुम्बज तथा अन्नाम में शताब्दियों ब्राह्मण वं ने राज्य किया था। मलाया, जावा, सुमात्रा, बाली, बोर्नियो में हिन्दू राजा रा करते थे। प्रधान रूप से ब्राह्मण धर्म ही इन राज्यों में फैला हुआ था। वहां आदि निवासियों के साथ भारतीयों के विवाहिक सम्बन्ध भी थे और आगे चल इन सब की मिश्रित जाति बनी। इस सम्पर्क से भारतीय प्रथायें तथा परम्परा भी बढ़ीं और इनमें भी मिश्रण हुआ। पुरातत्व अन्वेषणों ने इस बात को स्प कर दिया है कि इन द्वीपों की स्थित जातियां जंगली थीं और भारतीयों द्वारा ही इन प्रदेशों में सभ्यता का प्रचार हुआ था। स्याम का दक्षिणी प्रदेश सदियों तक कुम्बज राज्य के हिन्दू राजाओं के आधीन बना रहा था और धीरे धीरे समस्त स्या भारतीय हो गया था तथा आगे चल कर प्रथम या दूसरी शताब्दी में केन्द्रीय स्याम में द्वारावती नाम का प्रभावशाली हिन्दू राज्य स्थापित हुआ था। आज भी स्याम के नगरों, लोगों के नाम भारतीय प्रभाव प्रगट करते हैं। आज भी व अनेकों प्रथायें, रूढ़ियां, त्यौहार इस बात के सशक्त प्रमाण हैं कि वहां भारतीय पूर्ण रूप से प्रसारित हो चुकी थी।

हिन्द चीन में हिन्दुओं ने दो प्रतिभाशाली राज्य चम्पा तथा कु औपनिवेशिक राज्य स्थापित किये थे। चम्पा का राज्य १२० से १४७१ सन् तक समृद्धशाली रहा। इसकी राजधानी अमरावती थी। यह स्याम चीन तथा भारत के बीच सांस्कृतिक तथा व्यापारिक सम्बन्धों के लिये बहुत महत्वपूर्ण था। वहां के कई सम्राट हिन्दु संस्कृति के विद्वान् भी हुए थे। इस उपनिवेश में ब्राह्मण धर्म तथा ब्राह्मण संस्कृति ही प्रधान रूप में फैली। दूसरा औपनिवेशिक राज्य कुम्ब

का था। आठवीं शताब्दी तक आते आते इस राज्य की उन्नति अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई थी। यहां के राजा के राजदूत भारत तथा चीन गये थे। यहां के एक सम्राट यशोवर्मा ने भारतीय आश्रमों तथा तपोवन के प्रकार के आश्रम स्थापित किये थे। ग्यारहवीं सदी में यह राज्य बंगाल की खाड़ी से चीन सागर तक विस्तृत था। फिर इसका ह्रास हो गया और १६ वीं सदी में यह राज्य फ्रांस के आधिपत्य में चला गया। यहां पर संस्कृत के अनेकों अभिलेख प्राप्त हुए हैं।

मलाया द्वीप समूह में दो हिन्दू वंशों ने अपने राज्य स्थापित कर लिये थे। प्रथम राज्य आठवीं सदी में शैलेन्द्र राजकुल द्वारा स्थापित किया गया था। यह लोग सम्भवतः कलिंग से इन द्वीपों में आये थे जहां इन्होंने अपनी पूर्ण सत्ता स्थापित कर ली थी। इन्होंने सुमात्रा में श्री विजय नाम का नगर बसाया था। आगे चल कर चोलों ने इन पर आक्रमण कर इन पर विजय प्राप्त की। परन्तु एक सदी तक संघर्ष चलने के पश्चात् यह वंश फिर विजयी हुआ परन्तु १४ वीं सदी में एक जावा स्थित हिन्दू राज्य ने इस वंश का अन्त कर दिया। शैलेन्द्र बुद्ध धर्म के अनुयायी थे।

जावा में भी एक हिन्दू राज्य स्थापित था। इस राज्य के संस्थापक भी कलिङ्ग से आते हुए प्रतीत होते हैं दूसरी शताब्दी में यह राज्य स्थापित हो चुका था। चीनी यात्री फाहियान चीन वापिस जाते समय आठ मास जावा में ठहरा था। उसने बताया है कि उस समय जावा में बुद्ध धर्म का बड़ा प्रचार हो गया था। छटी शताब्दी तक हिन्दू सभ्यता यहां पूर्ण रूप से फैल चुकी थी। इसका प्रमाण वहां से प्राप्त हुए चार संस्कृत अभिलेखों से प्राप्त हुआ है। वहां की भाषा, साहित्य, कला, कानून सब पर भारतीयता की छाप दृष्टिगोचर होती है।

बाली द्वीप में भी एक हिन्दू उपनिवेशिक राज्य स्थापित हो गया था। छटी शताब्दी में एक क्षत्रिय राज्य था। दसवीं सदी में भी हिन्दू राजा राज्य कर रहे थे। आज भी हिन्दू धर्म वहां पर अच्छी प्रकार फैला हुआ है।

बोर्नियो में ईसा की प्रथम सदी में हिन्दू उपनिवेश स्थापित हो चुके थे। वहां पर शताब्दियों हिन्दू राजा राज्य करते रहे। आज भी यहाँ की समस्त संस्कृति पर भारतीय संस्कृति की छाप लगी हुई है।

इस प्रकार पुरातत्व अन्वेषणों द्वारा जो मन्दिर, विहार, शिला लेख, नगरों के खण्डर, प्राचीन ग्रन्थ, मूर्तियां तथा यात्राओं के वर्णन, मुद्रायें तथा जो अन्य वस्तुयें उपलब्ध हुई हैं उनसे यह बात स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गई है कि प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति ने पूर्ण रूप से अन्य प्रदेशों में विजय प्राप्त की थी। इसके अद्भुत प्रसार में अनेकों कारणों ने सहयोग दिया था। अनेकों साधनों के उपलब्ध होने से इस प्रसार में सहायता मिली थी। जन साधारण,

धर्म प्रचारक, ऋषि मुनि, व्यापारी लोग, राजकुमार तथा अपने भाग्य की त करने वाले, भारतीय सम्राटों द्वारा भेजे गये राजदूत, विदेशों से आये विद्यार्थी गण, इन भिन्न भिन्न प्रकार के लोगों ने भारतीय संस्कृति के महत्व प्रसार में योग दिया था। यह इस महान प्रसार के सफल साधन सिद्ध हुए थे इन्हीं के द्वारा भारतीय संस्कृति विदेशों में अपना गौरव बढ़ाने में सफल हुई थी।

इस प्रकार भारतीय सभ्यता के विदेशी प्रसार में अनेकों कारणों व साधनों ने योग प्रदान किया था। यह प्रसार शान्ति पूर्ण ढंगों से विश्व कल्याण हित के लिये ही था। इस प्रसार ने जंगलीपन को दूर किया और सभ्यताओं विकास किया। यही इसका महत्व रहा है।

Q. How did the Indian civilization spread in those countries which stand in the north and north east of India? Complete your answer with examples.

प्रश्न—भारतीय संस्कृति, उन प्रदेशों में जो भारत के उत्तर तथा उत्तर पूरब में स्थित है किस प्रकार फैली? उदाहरणों सहित अपने उत्तर की पूर्ति करो?

उत्तर—भारतीय संस्कृति ने धीरे धीरे विकसित होकर शक्ति सञ्चय कर ली थी जिसका प्रयोग उस समय हुआ जब इसका प्रसार विदेशों में हुआ। एशिया के अधिकांश देशों को सभ्यता प्रदान करने का श्रेय भारत को ही है। इस देश द्वारा मध्य एशिया, चीन, कोरिया, जापान, फिलीपाइन, अफगानिस्तान, नेपाल, तिब्बत इत्यादि में संस्कृति का प्रकाश पहुँचाया गया। इस प्रकाश को प्राप्त कर इन देशों ने अपनी आत्मा का विकास किया और संसार की सभ्यता को अपनी अलौकिक देन प्रदान की। यह देश भारतीय सभ्यता के कितने ऋणी हैं अब इसमें कोई सन्देह शेष नहीं रह गया है।

मध्य एशिया :—मध्य एशिया एक ऐसा विचित्र स्थान रहा है कि भिन्न भिन्न जातियों ने इसको अपना निवास स्थान बनाया और अपनी अपनी संस्कृतियों के अवशेष छोड़े। ऐसा अनुमान है कि आर्य तथा द्राविड जातियाँ भी किसी न किसी समय मध्य एशिया में रहती होंगी। इसलिये भारत में आने के पश्चात् भी इनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मध्य एशिया से सम्बन्ध बना रहा होगा परन्तु ईसा से एक या दो सदी पूर्व भारत का प्राचीन सम्बन्ध नवीन व्यापार तथा उपनिवेश स्थापित करने की लालसा से और भी अधिक तथा स्पष्ट हो गये थे।

पाली तथा संस्कृत भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया । इतना ही नहीं, म
अनेकों विद्वान इसलिये चीन बुलाये गये कि संस्कृत ग्रन्थों का चीनी भा
अनुवाद करें । बाद में उनमें से अनेकों चीन में ही बस गये । उन्होंने भ
रीति रिवाज, आचार विचार उस देश में फैलाये । वहां की कला पर गांधार
गुप्त कला का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रगट होता है । बंगाली कलाकार नन्द
बोस के मतानुसार 'कि-फौंग' के पगोडा पर अंकित मूर्तियां बंगाली हैं ।
प्रकार संगीत, विज्ञान, गणित, ज्योतिष इत्यादि क्षेत्रों में भारतीय संस्कृ
चीनी संस्कृति को प्रभावित किया । इस प्रकार हम देखते हैं कि चीन से भा
सम्बन्ध बहुत प्राचीन तथा गहन रहे हैं ।

कोरिया तथा जापान—ईसा की चौथी शताब्दी में बुद्ध धर्म चो
कोरिया में फैला और छठी सदी में समुद्र लांघ कर जापान भी पहुँचा इस ध
जापान की आध्यात्मिक उन्नति में विशेष भाग लिया और भारतीय सभ्य
जापान के भिन्न भिन्न क्षेत्रों में अपने प्रभाव डाले । मंगोल सम्राटों ने बुद्ध
स्वीकार कर इसका प्रसार सायबेरिया तक किया ।

फिलिपाइन :—इससे आगे पता चला है कि इस द्वीप समूह में हिन्दु
ने अपने उपनिवेश स्थापित किये थे और यहां के आदि निवासियों ने हिन्दू
अपना लिया था । गणेश की एक मूर्ति का वहां से प्राप्त होना इस बात का
ही सजीव उदाहरण है । वहां की भाषा लिपि भारतीय लिपि से साम्यता रख
है । पूजा पाठ तथा नामकरण इत्यादि की रीतियां भी भारतीय रीतियों से प्रभा
हुई प्रतीत होती हैं । इस प्रकार यह बात साफ है कि यह द्वीप समूह भी भारत
सभ्यता से पूर्ण रूप से प्रभावित हो चुके थे । इनके आस पास अन्य द्वीपों में
भारतीय प्रभाव पड़े ।

अफगानिस्तान :—अलबरूनी (Albruni) ने लिखा है कि इस्ला
धर्म के पूर्व इस देश में बुद्ध धर्म का प्रसार हो चुका था । जब फाहियान तथ
ह्वानसांग इस देश से होकर भारत आये थे तो इस देश में बुद्ध धर्म का ही प्रभा
था । काबुल घाटी के आस पास हिन्दू धर्म फैला हुआ था । प्राचीन समय में
अफगानिस्तान भारत का ही भाग रहता था । अशोक तथा कुषाण सम्राटों के
समय में यह देश साम्राज्य का एक भाग था । वर्तमान अन्वेषणों द्वारा यहां पर
अनेक स्तूप, विहार, मूर्तियां इत्यादि प्राप्त किये गये हैं । संस्कृत किसी समय
अफगानिस्तान की महत्व पूर्ण भाषा थी । अब भी वहां संस्कृत भाषा का बड़ा
आदर है ।

तिब्बतः—तिब्बत के राजा गम्पों ने अपनी पत्नियों के प्रभाव में बौद्ध
धर्म अंगिकार कर इसी को राजधर्म घोषित कर दिया उसकी यह पत्नियां

चीन तथा नैपाल की राजकुमारियां थीं। राजधर्म का स्थान प्राप्त कर यह धर्म बड़ी गति से फैल गया इसके साथ साथ भारतीय सभ्यता का भी अधिकाधिक प्रभाव फैलता रहा सातवीं सदी में यहां के कई विद्वान तिब्बत गये जिन्होंने वहां बुद्ध धर्म के अनेकों ग्रन्थों का अनुवाद किया तथा विहार बनवाने में योग प्राप्त किया सन् ७४७ में काश्मीर के आचार्य 'पद्म सम्भव' ने तिब्बत जाकर धर्म प्रचार किया था दूसरा उल्लेखनीय नाम आचार्य शांत रक्षित का है जो नालन्दा विश्व विद्यालय के आचार्य थे और तिब्बत आमन्त्रित किये गये थे तत्पश्चात अनेकों बुद्ध विद्यार्थी नालन्दा में शिक्षा ग्रहण करने आये और वहां से भारतीय रीति रिवाजों तथा आचार विचारों और प्रथाओं को अपने साथ लेकर गये इनके अतिरिक्त यहां के अनेकों भिक्षुक तिब्बत पहुंचे और धर्म के साथ साथ यहां की सभ्यता का भी प्रचार किया बुद्ध धर्म के अनेकों ग्रन्थों का अनुवाद तिब्बत भाषा में किया गया। कहते हैं कि बंगाल के पाल नरेशों ने तिब्बत में धर्म प्रचार के लिये सहायता दी थी और उनका सम्पर्क तिब्बत के राजाओं से था धर्म के अतिरिक्त भाषा, लिपि, कला, साहित्य इत्यादि सभी क्षेत्र भारतीय संस्कृति से पूर्ण रूप से प्रभावित हुये थे।

नैपाल:—ऐसा प्रतीत होता है कि सम्राट अशोक ने नैपाल अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया था और वह स्वयं भी नैपाल में गया था जहां पर उसने स्तूप तथा विहार निर्मित कराये थे सम्भवतः अशोक के आगमन पर ही बुद्ध धर्म नैपाल में आया। नैपाल सम्राट समुद्रगुप्त को भी कर देता था। सातवीं शताब्दी में नैपाल लच्छवी वंश के अधिकार में था। आगे चलकर जब मुसलमानों ने भारत पर आक्रमण किये तो अनेकों राजपूत और ब्राह्मण नैपाल भाग गये। इन्हीं राजपूतों की एक शाखा ने गोरखों के नाम से नैपाल पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। इसी वंश के साथ साथ वहां पर हिन्दू धर्म शक्तिशाली होता गया और बुद्ध धर्म का ह्रास शुरू हो गया। आज भी नैपाल में हिन्दू धर्म की ही प्रधानता है। वहां पर अनेकों मन्दिर तथा स्तूप और तीर्थ स्थान हैं। वहां के मन्दिरों में जिस कला का प्रयोग किया गया है वह भारतीय कला से सम्यता रखती है वहां लकड़ी के मन्दिर भी बने हुये हैं जिनकी छत तांबे की हैं यहां के अनेकों रीति रिवाज भारतीयों जैसे हैं यहां की सामाजिक व्यवस्था में जाति प्रथा के लक्षण दिखाई पड़ते हैं भारत के अतिरिक्त यहां की संस्कृति पर चीन और तिब्बत का भी काफी प्रभाव पड़ा है भारतीय कला भाषा साहित्य इत्यादि ने नैपाल में अपने अनेकों प्रभाव छोड़े थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय संस्कृतिक हिमालय पर्वत की शृंखलाओं को पार करती हुई तिब्बत, मध्य एशिया, चीन, कोरिया, जापान इत्यादि देशों में फैली इस प्रसार में भिन्न भिन्न साधनों ने योग दिया भारत ने इन प्रदेशों में बसने वाली असभ्य जातियों को सभ्यता प्रदान की

तथा भारतीय धर्मों ने इन जातियों की आत्मा को ज्ञान का प्रकाश दिखाया और
उनमें नवीन जीवन का सन्चार हुआ इन देशों में आज भी हिन्दू संस्कृति के अनेकों
प्रभाव विद्यमान हैं।

Q. How did the gradual spread of colonies and civiliza-
of India take place in south east Asia?

प्रश्न—भारतीय सभ्यता तथा उपनिवेशों का प्रसार दक्षिणी
एशिया में किस प्रकार हुआ?

उत्तर:—प्राचीनकाल के भारतीय निवासी उत्साही निर्भीक तथा स
यात्राओं में बड़े कुशल थे। उनको उत्साह तथा प्रगति करने की लालसा ने उ
देश के भीतर ही सीमित न रहने दिया। उनका दृष्टिकोण बड़ा ही विशाल
व्यापक था। उस समय दक्षिणी पूर्वी एशिया के प्रदेश तथा द्वीप बर्बर तथा अस
जातियों से बसे हुये थे। इनकी भूमि उपजाऊ तथा खनिज पदार्थों से भी प
थी। मसालों का व्यापार पूर्ण रूप से इन द्वीपों के द्वारा होता था। यह द्वीप म
धन के गृह समझे जाते थे इनके धन व्यापार तथा भूमि ने भारतीयों को आक
किया और भारतीय नाविक तथा व्यापारी इन प्रदेशों की ओर यात्रा करने
और शनैः शनैः इनसे व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये। यह समय इसकी पू
शताब्दी का था बुद्ध धर्म के ग्रंथों में भारतीयों की कष्टमय तथा भय पूर्ण समु
यात्राओं के अनेक वर्णन आये हैं 'जातक' तथा 'कथा सरित सागर' की कहानि
में भारतीयों की 'स्वर्ण-भूमि' में अनेकों यात्राओं का उल्लेख है, अनेकों जब प
रास्तों में ही नष्ट हो जाते थे परन्तु भाग्यशाली व्यापारी इन प्रदेशों से मालाम
होकर लौटते थे अनेकों क्षत्री राजकुमार जिनके राज्य छिन जाते थे वह अपने भा
की खोज करने के लिये इन प्रदेशों में पहुँचते और अपनी राज्य सत्ता स्थापित कर
थे। इस प्रकार निर्भीक नाविक साहसी व्यापारी तथा वीर राजकुमार इन प्रदेशों तथ
द्वीप समूह में पहुँचे और अपने उपनिवेश तथा राजनैतिक सत्ता स्थापित की। इसके
साथ साथ वहां अपनी सभ्यता का भी प्रसार किया इनमें भारतीय धर्म प्रथा,
रवायें आचार विचार प्रचलित थे तथा वहां हिन्दू राज्य स्थापित हो गये थे। इसलिये
यह कहना कठिन है कि भारतीय उपनिवेश इन प्रदेशों तथा द्वीपों में कब और
काल में स्थापित हो चुके थे दूसरी सदी से पांचवी सदी तक मलाया, काम्बोडिया,
चम्पा, जावा, सुमात्रा बाली तथा बोर्नियो में भारतीय औपनिवेशिकरण हो
रहा था। बर्मा में भी भारतीय उपनिवेश स्थापित किये थे। लंका में भी भारतीय

। में अनेकों आर्य तथा तामिल आ आ कर लंका में बस गये थे और भारतीय
ता वहां पर पूर्ण रूप से प्रसारित हो रही थी।

लंका:—लंका द्वीप से भारत का सम्बन्ध ईसा पूर्व से ही चला आ रहा
गारम्भ में किस प्रकार यह सम्बन्ध स्थापित हुये यह एक विवाद ग्रस्त प्रश्न है
तु एक बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि ईसा से पूर्व काल में ही
कों भारतीयों ने वहां जाकर अपने उपनिवेश स्थापित कर लिये थे और इनके
साथ भारतीय सभ्यता भी वहां फैलने लगी थी आगे चलकर अशोक के पुत्र
पुत्री ने वहां जाकर बुद्ध धर्म का प्रचार किया और उनके प्रभाव से लंका के
त ने भी बुद्ध धर्म को अपना लिया था। इसके पश्चात् बुद्ध धर्म बड़ी ही वेग
प्रगति से फैला और साथ साथ भारतीय संस्कृति का भी प्रसार होता रहा।
पर अनेकों स्तूपों का निर्माण हुआ। चट्टानों पर धार्मिक उपदेश लिखे गये।
पर पाली भाषा तथा ब्राह्मी लिपि फैली, कला की वृद्धि हुई, भिन्न भिन्न
तियों की प्रतिद्वन्द्विता दूर कर बुद्ध धर्म ने सबको एक सूत्र में बांधने का कार्य
या। इस प्रकार भारतीय संस्कृति ने ही लंका को अपनी विशेष देन द्वारा
य बनाया।

ब्रह्मा:—ईसा से पूर्व काल में ही भारत तथा ब्रह्मा में सम्बन्ध स्थापित
गये थे। कलिंग प्रदेश से अनेकों व्यापारी वहां जाते और व्यापार करते थे इनके
तिरिक्त अनेकों उपदेशक भी वहां जाते रहे थे। अशोक के धर्म प्रचारक भी ब्रह्मा
गये थे और बुद्ध धर्म का प्रचार किया था। सन् ४५० में आचार्य बुद्धघोष लंका
ब्रह्मा पहुँचा और उसने हिनयान सम्प्रदाय की स्थापना की थी। विष्णु की
र्तियां उपलब्ध होने से ऐसा अनुमान लगाते हैं कि इस प्रदेश में ब्राह्मण धर्म
भी प्रचार हुआ था। इस प्रकार ब्रह्मा का भारत के साथ दीर्घ सम्बन्ध रहने के
रण वहां की सभ्यता को भारतीय सभ्यता के गहरे प्रभाव में रहना पड़ा। ब्रह्मा
अनेकों प्रकार के स्तूप तथा अन्य स्मारक प्राप्त होने से यह स्पष्ट हो गया है
वहां की सभ्यता भारतीय सभ्यता से अनेकों प्रकार से प्रभावित हुई है।

स्याम:—वर्तमान थाईलैंड के केन्द्रीय प्रदेश में एक हिन्दू राज्य स्थापित
या गया था यह राज्य द्वारावती के नाम से प्रख्यात हुआ। कालोपरान्त में यह
यह समस्त प्रदेश भारतीय प्रभाव में आ गया। इसके समीप में कम्बोडिया
बुद्ध धर्म पहले ही फैल गया था। वहां से यह धर्म स्याम में प्रवेश कर गया।
प्रकार धर्म के तथा साथ संस्कृति का प्रवेश भी हुआ। भारतीय कला ने अपने
प प्रभाव डाले। वहां से गुप्तकालीन कला, अमरावती, शैली तथा पल्लव लिपि
अंकित बुद्ध सिद्धान्त प्राप्त हुये हैं जिनसे भारतीय संस्कृति का स्पष्ट प्रमाण मिल
ता है। हिन्दू रीति रिवाज प्रथायें आज भी स्याम में दिखाई पड़ती हैं। वहां

के राजाओं के नाम आज भी भारतीय प्रभाव को प्रदर्शित करते हैं। मौजवीं तक भारतीय भाव स्याम में बना रहा था।

हिन्द चीन:—इस प्रदेश में ईसा से पूर्व ही भारतवासी अनेकों लेकर चले गये थे। इन्हों हिन्दुओं ने अवसर आने पर श्री शक्तिशाली हिन्दू स्थापित कर लिये थे। चम्पा तथा कम्बोज दोनों सदियों तक चलते रहे।

चम्पा राज्य:—यह राज्य कम्बोडिया के पूर्व में स्थित था। इसमें तथा कोचीन के प्रदेश सम्मिलित थे। इसकी राजधानी अमरावती थी यह चीन तथा भारत के मध्य में एक कड़ी काम करता था इसी कारण से यह दोनों देशों की सभ्यता से प्रभावित हुआ था। इस राज्य के कई राजा बड़े ही थे। जिन्होंने अनेकों मन्दिरों का निर्माण कराया था एक राजा ने तो राज भारत की यात्रा भी की थी। इन्द्र वर्मा तृतीय षट दर्शन, बुद्ध दर्शन, व्याकरण इत्यादि का प्रकाण्ड पण्डित माना गया है इनमें अनेक राजा बड़े ही हुये जिन्होंने मंगोलों के भीषण आक्रमणों को शताब्दियों रोका परन्तु १६ तक आते आते मंगोलियों ने इस राज्य को नष्ट कर दिया।

इस राज्य में अनेकों सुन्दर तथा वैभवशाली नगर थे। जिनमें अनेकों तथा हिन्दू मन्दिरों का निर्माण किया गया था। जिनमें भारतीय कला का प्रयोग किया गया था यह लोग हिन्दू देवी देवताओं की उपासना करते थे। इनमें प्रधान था। बुद्ध जी की मूर्ति का यह लोग पूजन करते थे। इस प्रदेश शिल्प कला पर गुप्त कालीन की कला का अधिक प्रभाव पड़ा वहां पर संस्कृत का बड़ा प्रभाव हो चुका था।

कुम्बुज:—यह हिन्दुओं का दूसरा उपनिवेश था। यह राज्य बड़ा समृद्धशाली था। भारतीयों ने निरन्तर परिश्रम द्वारा इस प्रदेश की बड़ी उन्नति यहां संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में बड़ा ही विकास हुआ। इस राज्य में प्रभावशाली राजा हुये जिन्होंने भारत तथा चीन से बराबर राजनैतिक स्थापित रक्खे वहां से उपलब्ध किये हुये अभिलेखों से पता चलता है कि अनेकों अनुपम मन्दिरों का निर्माण किया गया था। यहां का एक शिव मन्दिर बड़ा ही आश्चर्यजनक है जो विश्व से सबसे बड़ा है इसका निर्माण १२ वीं सदी में सूर्य वर्मन द्वारा हुआ था। इसकी विशाल दीवारों पर पशु पक्षी तथा करती हुई बालायें अंकित की गई हैं। भारतीय कला के प्रभाव का यह मन्दिर अद्भुत नमूना है इस मन्दिर में अनेकों कहानियां पाषाणों में लिखि गई हैं। इस राज्य में शिव तथा विष्णु दोनों की पूजा होती थी। चिकित्सा भी भारतीय प्रभाव का फल भी आयुर्वेदीय प्रणाली अपनाई गई थी। यह प्रदेश उन्नीसवीं सदी में फ्रांस के आधिपत्य में आगया।

मलाया द्वीप समूह:—इस समूह में जावा, सुमात्रा, बाली तथा बोर्नियो
ाप हैं उस समय यह द्वीप समूह स्वर्ण द्वीप कहलाता था। यहां पर दो हिन्दू
स्थापित हुये थे। प्रथम शैलेन्द्र राजकुल द्वारा स्थापित हुआ था। इससे
समस्त द्वीप सम्मिलित थे। यह हिन्दू सम्राट बड़े ही प्रतिभाशाली थे। इनके
काल में भारतीय सभ्यता ने अपना बड़ा ही प्रभाव डाला। इनके समय में
ार की बड़ी उन्नति हुई, इन्होंने सुमात्रा में श्री विजय नगर स्थापित कर
ो अपनी राजधानी बनाया और इसी नाम से प्रसिद्ध हुये ११ वीं सदी तक
शांतिपूर्ण ढंग से राज्य चलाते रहे चोल राजाओं से उनका संघर्ष होना आरम्भ
या परन्तु कुछ समय को छोड़कर फिर इनकी सत्ता स्थापित हो गई थी। यह
चीन तथा भारत से राजनीतिक सम्बन्ध रखते थे दोनों देशों की सभ्यता ने
द्वीपों में अपने प्रभाव छोड़े। इस वंश के राजाओं ने आगे चलकर महायान
को अपनाया और तब से ही वहां बुद्ध धर्म की उन्नति हुई। कुमार घोष जो
धर्म का महान् भिक्षु था इन सम्राटों का गुरु था। बोरोबुदुर का प्रसिद्ध स्तूप
समय का प्रसिद्ध स्मारक है इसमें चित्र कला के अद्भुत उदाहरण हैं यहां
कला पर भारतीय कला का भारी प्रभाव पड़ा है। नालन्दा में भी इन सम्राटों
क सुन्दर विहार निर्मित किया था।

जावा—यहां पर आने वाले कलिंग हिन्दु प्रदेश से आये और बस गये। दूसरी
में यहां पर हिन्दू राज्य स्थापित हो गया था। छटी सदी में यहां पर हिन्दू
कृति पूर्ण रूप से फैल चुकी थी। चीनी यात्री फाह्यान चीन लौटते समय जावा
पाठ माह के लिये ठहरा था। उसने बताया है कि उस समय जावा में बुद्ध धर्म
रूप से फैल चुका था। ९ वीं शताब्दी के पश्चात् शैलेन्द्रों का आधिपत्य समाप्त
गया और जावा स्वतंत्र हो गया जहां शिव मतावलम्बी राजा राज्य करने लगे
ो प्रकार राज्य सत्ता बदलती रही। पन्द्रवीं सदी में एक हिन्दू राजा ने इस्लाम
ग्रहण कर लिया और तत्पश्चात् जावा इस्लाम धर्म का गढ़ बन गया। जावा
अनेकों मन्दिरों का निर्माण हुआ था जो इस्लाम के उत्कर्ष के समय नष्ट कर
वे। जावा में भारतीय संस्कृति का गहरा प्रभाव पड़ा था। वहां की भाषा 'साहित्य'
ा, आचार विचार पूर्ण रूप से भारतीय प्रभाव प्रगट करते हैं रामायण तथा
ाभारत दोनों लोकप्रिय ग्रंथ रहे थे।

बाली— इस द्वीप में हिन्दू राजा राज्य करते थे। यह समृद्धशाली द्वीप
ा है। छटी सदी में यहां बुद्ध धर्म भली प्रकार से फैला हुआ था। इस द्वीप के
जाओं का चीन से राजनैतिक सम्बन्ध रहा था। जावा के राजा भी मुसलमानों के
क्रमणों से तंग आकर बाली चले आये थे। इस द्वीप में आज भी हिन्दू धर्म
ामान है।

बोर्नियो—इस द्वीप में भी हिन्दू राज्य स्थापित था। यह उपनिवेश ई० की प्रथम शताब्दी में ही स्थापित हो चुका था। आगे चल कर यह द्वीप भी श[illegible] के आधिपत्य में आ गया था। यहां पर भी भारतीय सभ्यता का गहरा प्रभाव [illegible] था। वहां पर एक लकड़ी के बने हुये मन्दिर का पता चला है। वहां के राजा [illegible] यज्ञों में विश्वास करते थे। इस द्वीप की स्थापित्य तथा मूर्ति कला पर पूर्ण रूप [illegible] भारतीय कलाओं का प्रभाव पड़ा है। आज भी इस में भारतीय संस्कृति विद्य[illegible] है। इसमें लगभग तीस लाख व्यक्ति रहते हैं जो हिन्दू धर्म में ही विश्वास रखते [illegible]

इस प्रकार यह बात स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो जाती है कि प्राचीन का[illegible] में भारतीय निवासी दक्षिणी पूर्वी एशिया के प्रदेशों में गये। वहां इन्होंने अ[illegible] उपनिवेश स्थापित किये और वहां के आदिनिवासियों को सभ्यता प्रदान की। इन[illegible] धर्म फैलाया, उन प्रदेशों को उरवार भूमि से उत्पादन कर वहां की आर्थिक [illegible] को उन्नत किया। वहां पर इस प्राचीन सभ्यता के भग्नावशेष आज भी विद्यमा[illegible] और वहां के लोगों का जीवन आज भी भारतीय जीवन से साम्यता रखता है। [illegible] प्रदेश अनेकों प्रकार से भारत के ऋणी।

Q. The greatest contribution which India made to h[illegible] colonies was her conversation." Justify this statement.

प्रश्न—भारत की अपने उपनिवेशों को महान देन अपनी सभ्[illegible] ही थी इस कथन की पुष्टि करो।

उत्तर—ईसा से पूर्व के समय से ही भारतियों ने अपने उपनिवेश स्था[illegible] करना आरम्भ कर दिये थे। इनकी स्थापना में अनेकों प्रकार के व्यक्तियों ने [illegible] दिया था। स्वर्ण भूमि से धन प्राप्त करने की लालसा ने भारतीय व्यापारियों [illegible] उन द्वीपों की ओर भेजा जो मलाया द्वीप समूह के अन्तर्गत है। इन व्यापारि[illegible] का सम्पर्क इन द्वीपों के लिये बड़ा ही सुन्दर सिद्ध हुआ। इस नवीन लोगों [illegible] अपने आचार विचार, रहन सहन, भाषा, धर्म इत्यादि से उन द्वीपों के आ[illegible] निवासियों को अनेकों प्रकार से प्रभावित किया।

व्यापारियों के अतिरिक्त भारत से, विशेषकर कलिंग तथा दक्षिण से आ[illegible] हुये ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों ने अपने राज्य स्थापित किये और राजनैतिक व्यव[illegible] स्थापित की इस प्रकार उन प्रदेशों में कानून तथा शान्ति का साम्राज्य स्थापित [illegible] वहां उन्नति का वातावरण पैदा किया। वहां भारत से लेजाई गई शासन प्रण[illegible] चलाई। इन भारतीय राजाओं ने हिन्दू बुद्ध धर्म को अपना कर उन उपनिवेशों [illegible] इन धर्मों का प्रचार किया। अनेकों मन्दिर तथा स्तूपों का निर्माण करा [illegible] कलाओं को प्रोत्साहित किया।

धर्म प्रचारक तथा उपदेशक धर्म कार्य के लिये इन उपनिवेशों में पहुँचे और साथ साथ भारतीय संस्कृति का भी प्रचार किया। इन वर्गों के अतिरिक्त व्यक्ति भी जा जा कर उन उपनिवेशों में बस गये और वहां के आदि वासियों से व्यवहारिक सम्बन्ध कायम किये और इस प्रकार नवीन तथा सभ्य की नींव डाली। प्राचीन निवासियों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होने से तों का सम्मिश्रण हुआ। भारतीयता ने पूर्ण रूप से इन द्वीपों तथा प्रदेशों के क्षेत्र के भिन्न भिन्न पहलुओं को पूर्ण रूप से प्रभावित किया। भाषा, लिपि, य, कला, धर्म, राजनीति, समाज, प्रथायें इत्यादि सब पर भारतीय संस्कृति पर पड़ा।

भाषा तथा साहित्य—इन उपनिवेशों में भारतीय लिपि का पूर्ण रूप से होता था। संस्कृत भाषा का प्रचार था। अनेकों अभिलेखों पर संस्कृत में हुये वृतान्त प्राप्त हुये हैं जो इस बात की पुष्टि करते हैं। वहां पर संस्कृत के साथ साथ व्याकरण का अध्ययन भी होता था। कुम्बुज के प्रसिद्ध राजा वर्मा द्वारा लिखा गया एक व्याकरण भाष्य का वर्णन है। यह पातञ्जलि की व्याकरण पर लिखा गया भाष्य है। रामायण तथा महाभारत तथा अन्य गाथाओं की, जिनका आधार पुराण थे, रचनायें की गईं। वहां पर भारतीय ग्रन्थ लोक प्रिय थे। धार्मिक साहित्य के साथ साथ साधारण साहित्य का भी स हुआ। कम्बोडिया तथा अन्नाम में अनेकों लेख सौ सौ से लेकर तीन सौ पंक्तियों में लिखे हुये उपलब्ध हुये हैं जो संस्कृत के प्रचार का सजीव रण है।

कला—औपनिवेशिक कला भारतीय कला का प्रत्यक्ष प्रभाव प्रदर्शित करती कम्बोडिया का अंगकोरवत का विशाल मन्दिर बारहवीं सदी की कला का सर्व नमूना है यह विश्व में सबसे बड़ा मन्दिर है। इसकी दीवारों पर पशु पक्षियों ने हुये चित्र उस समय की चित्र कला के अनुपम नमूने हैं। मन्दिर की निर्माण भी बड़ी ही अलौकिक है। इसी प्रकार बोरोबुदुर का बुद्ध मन्दिर भी कला सुन्दर उदाहरण है। जावा में कला का भारतीय प्रभाव इस मन्दिर से प्रगट है। अनेकों भव्य भवन भारतीय कला का प्रभाव प्रगट करते हैं। भारत से गये कलाकारों ने उन प्रदेशों में पहुँच कर वहां की विचार धारा को अंगीकार किया भारत से पृथक एक नवीन औपनिवेशिक कला को जन्म दिया। यह नवीन ही उत्तम कला मानी गई है। आकृतियों का निर्माण बड़ा ही कौशल पूर्ण बड़ा ही सुन्दर है। कला के क्षेत्र में भारतीय प्रभाव बड़ा ही गहन प्रभाव रहा है।

राजनैतिक प्रभाव—इस क्षेत्र में भी भारतीय परम्पराओं का उपनिवेशों अमर पड़ा। हिन्दू राजाओं ने भारत की शासन प्रणाली को ही अपनाया।

शीलियों द्वारा इस बात की पुष्टि होती है कि यहां पर राजा का बड़ा ऊंचा स्थान था। उसकी यहाँ सेवा पूजा की जाती थी। इसके शरीर पर सुगन्धित वस्तु की मालिश की जाती थी। सफेद हाथी उसकी सवारी का काम करते थे। मुसलमान के मान यह धारण करता था। उसकी सेना बहुत अच्छी होती थी। उसके शरीर पर बहुमूल्य रत्न जगमगाते थे। उसकी सहायता के लिये आठ मन्त्री होते थे जो ब्राह्मणों में से ही चुने जाते थे। अनेकों प्राचीन राजाओं ने अपनी राज व्यवस्था को भारतीय ढंग में ढ़ाला था।

सामाजिक प्रभाव—भारत की वर्ण व्यवस्था इन उपनिवेशों में भी फैल गई थी। यहां के राजा अपने आप को क्षत्री कहते थे। उन्होंने 'वर्मन' नाम धारण किया था। भारतीय लोगों ने यहां के आदिवासियों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये और इस मेल जोल से नवीन समाज में वर्ण व्यवस्था सब प्रकार के लोगों में फैल गई। बाली द्वीप में तो आज भी नामकरण, विवाह इत्यादि हिन्दुओं की भांति ही किये जाते हैं पत्नी पति के घर जाती है विवाह के समय सुपारियों का प्रयोग किया जाता है। यह लोग लोहे के ढाल तथा कांस मजीरों का प्रयोग करते हैं। हिन्दुओं की तरह यह भी अपने मृतकों को जलाते हैं और उनकी भस्म को कब्रों में बन्द कर गाड़ देते हैं। इनके अनेकों समारोह हिन्दुओं के समारोहों से मिलते जुलते हैं। भारत की अनेकों प्रथायें उस समय विलोप हो गईं जब इस्लाम धर्म वहां पहुँचा।

धर्मः—इन उपनिवेशिक प्रदेशों में हिन्दू तथा बुद्ध दोनों धर्म प्रचलित हो चुके थे। शिव, विष्णु, लक्ष्मी तथा बुद्ध की अनेकों प्रतिमायें तथा अभिलेख जो उपलब्ध किये गये हैं इस बात के सजीव उदाहरण हैं। फाह्यान जब भारत से और लौटा तो उसने जावा में आठ माह रहकर बताया था कि उस समय जावा बुद्ध धर्म का गढ़ बना हुआ था ब्रह्मा, विष्णु, महेश देवताओं की उपासना होती थी तथा उनकी पूजा के हेतु मन्दिरों का निर्माण किया जाता था। कम्बोडिया का शिव मन्दिर आज भी विश्व विख्यात है। बाली में आज भी हिन्दू धर्म फैला हुआ है। वहां आज भी हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियां बनाई जाती हैं तथा हिन्दू रिवाजों के अनुसार उनकी पूजा होती है वहां पर रामायण तथा महाभारत की कथाओं का बड़ा प्रचलन था। आज भी इन प्रदेशों में बुद्ध तथा हिन्दू दोनों धर्म पाये जाते हैं।

इस प्रकार यह बात पूर्ण रूप से प्रमाणित हो जाती है कि भारतीय संस्कृति ने उपनिवेशिक प्रदेशों में बड़ा प्रभाव डाला १२०० वर्ष के सम्पर्क ने इस प्रभाव को स्थाई रूप देने का यत्न किया परन्तु हिन्दुओं के पतन के साथ साथ यह प्रभाव घट गया और आगे चलकर जब इस्लाम धर्म के भीषण आघात हुये तो भारत के

नेकों प्रभाव नष्ट हो गये। सैकड़ों मन्दिरों तथा स्तूपों को नष्ट कर दिया गया। परन्तु र भी विश्व का यह भाग कालान्तरों में भारत का बड़ा ही ऋणी रहेगा। क्योंकि रत के प्रभाव ने ही प्राचीन काल में इन द्वीपों की बर्बरता का अन्त कर सभ्यता । प्रकाश चमकाया था।

Q. Give an account of 'Tomil civilization' and also poinnt ut how it was affected by the aryoan civilization ?

प्रश्न— तामिल सभ्यता का वर्णन करो' और यह भी बताओ कि ार्य सभ्यता ने इसे कैसे प्रभावित किया ?

उत्तर— कृष्णा तथा तुंगभद्रा नदियों के दक्षिण ढाल से लेकर कुमारी न्तरीप तक का प्रदेश तामिल प्रदेश कहलाया है। यहां तामिल भाषा बोली जाती ै। इन लोगों ने स्वतंत्र रूप से ही अपनी सभ्यता का विकास किया था। इस भ्यता का मुख्य युग मौर्य काल के प्रारम्भ से लेकर आन्ध्रों के पतन तक विस्तृत सन् ३२१ ई० पू० से सन् २२५ तक यानी साढ़े पांच सौ वर्षों तक इस संस्कृति का र्वश्रेष्ठ युग रहा है। इस काल में तामिल संस्कृति बराबर विकसित होती रही और गे चलकर इसने आर्य सभ्यता से अनेकों प्रभाव ग्रहण किये। यह सभ्यता उच्च-ोटि की सभ्यता रही है और भारत को इसकी अनेकों अद्भुत देन प्रदान हुई हैं।

राजनैतिक दशा

इस प्रदेश में प्राचीन काल में तीन राज्य स्थापित थे। पाण्ड्या, चोल, र, पाण्ड्या की राजधानी मदुरा थी। इसका दूसरा प्रसिद्ध नगर तथा सभ्यता ा केन्द्र 'कोरकई' था। यह दक्षिणी भारत का प्रसिद्ध बन्दरगाह भी था। इस ाज्य की स्वतंत्रता का अन्त सन् १३१० में मलिक काफूर द्वारा हो गया। चोल ाज्य कारोमण्डल के समुद्र तट पर फैला हुआ था। इसकी राजधानी कान्जीवरम ें थी। पहले तो पल्लव राजाओं ने इस वंश की स्वतन्त्रता को भंग कर दिया रन्तु दोबारा फिर यह वंश स्वतंत्र हो गया और आगे चलकर सन् १३१० में मलिक काफूर ने इस राज्य का भी अन्त कर दिया। चेर राज्य वर्तमान ट्रावनकोर, कोचीन तथा मालाबार के कुछ जिलों में विस्तृत था इस वंश के राजा संघर्ष से बचते थे और इन्होंने दक्षिण के राजनैतिक मामलों में अधिक भाग न लेकर शांति की नीति को अपनाये रक्खा और यह बहुत समृद्धशाली बने रहे।

आगे चलकर दक्षिण में आन्ध्रों के पतन के पश्चात् पल्लवों ने अपनी शक्ति बढ़ा ली। इन्होंने तीन केन्द्रों से राज्य किया। पश्चिम में वातापि से पूर्व में वेंगी से तथा दक्षिण में काञ्चिवरम से इस वंश के राजा साहित्य तथा कला

के प्रेमी थे और इनके राज्य काल में कला की बड़ी उन्नति हुई। पल्लव कला का अपना अलग विशेष स्थान है। ९ वीं शताब्दी में आगे चलकर चोलों ने पल्लवों को पराजित कर दिया था।

शासन प्रणाली—तामिल प्रदेश में फैली हुई शासन प्रणाली सुव्यवस्थित थी राजा का निर्णय अन्तिम होता था। वह निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी नहीं होता था। उसकी सहायता के लिये पांच महा समितियां नियत की जाती थीं राजा प्रजा का हित अपना धर्म समझता था। न्याय का अच्छा प्रबन्ध था। दीवानी तथा फौजदारी दोनों प्रकार की अदालतें थीं। जिनकी अन्तिम अपील राजा सुनता था दण्ड विधान अति कठोर था।

इस प्रदेश के अधिकतर लोग ग्रामों में निवास करते थे। कई ग्राम मिलकर 'करम' कहलाते थे। कई 'करमों' से मिलकर 'नाडु' का निर्माण होता था वर्तमान जिले के समान था। कई 'नाडु' मिलकर 'कोट्टम' बनाते थे और 'कोट्टम' मिलकर प्रान्त या 'मण्डल' का निर्माण करते थे। मण्डलों का उच्च अधिकारी राजवंश का ही कोई सदस्य हुआ करता था। ग्रामों में स्थानीय शासन व्यवस्था थी। ग्राम की परिषद् मात्र 'कार्यकारिणी' का निर्वाचन करती थी। कार्य कारिणी के अतिरिक्त अन्य समितियां भी भिन्न भिन्न कार्यों के लिये निर्वाचित की जाती थीं। ग्राम परिषद् न्याय कार्य भी करती थी और उसी के नाम पर कर लगाये जाते थे। राज्य की आय का प्रधान साधन भूमि कर था। इस कर के अतिरिक्त अन्य कर भी लगाये जाते थे मार्गों तथा सिंचाई के साधनों को ठीक रखने के लिये राज व्यय करता था। इस प्रकार के शासन से लोग सन्तुष्ट थे और बराबर उन्नति करते थे। इन राजाओं की सेना का अच्छा प्रबन्ध प्रतीत होता है। राजेन्द्र चोल ने हिन्द चीन के शैलेन्द्रों को युद्ध में पराजित किया था। चोल नरेश समुद्री शक्ति भी रखते थे

सामाजिक दशा

तामिल समाज मोटे तौर से दो भागों में विभाजित था। एक वह भाग जो कृषि करता था तथा दूसरा वह जो अपने लिये दूसरों से कृषि कराता था। इस दूसरे वर्ग से ही राजवंशों का प्रादुर्भाव हुआ था। इस वर्ग के लोग अन्य जातियों की कन्याओं से विवाह कर सकते थे परन्तु अपनी कन्यायें उनको नहीं देते थे। कृषकों के नीचे का वर्ग, कृषि के श्रमजीवियों का था। ऐसा अनुमान है कि यह वर्ग ही आगे चलकर अछूत वर्ग बन गया। इस अछूत वर्ग के चार समुदाय थे। पाणन, तुडीयन, परयन तथा कडम्बन इनके साथ साथ बढ़ई, लुहार तथा जुलाहे भी थे। मछुवा वह जाति थी जो आखेट इत्यादि करती थी। नाग एक और जाति थी जो समाज में निम्न समझी जाती थी। यह लोग मछली पकड़ते थे, उत्तर भारत की वर्ण व्यवस्था या आश्रम दोनों ही तामिल संस्कृति में अज्ञात थे। कालान्तर

ो भारतसे ब्राह्मण आकर बस गये और अपने ज्ञान तथा त्याग के कारण माने जाने लगे और कालान्तर में यहां का समाज उत्तरी भारत के समाज की ढल गया भिन्न भिन्न जातियां अपना जीवन अलग अलग व्यतीत करती । प्रत्येक का अपना धन्धा भी अलग होता था । खान पान तथा विवाह की यें भी अलग होती थी । जातीय अन्तर जाति विवाह अधिकतर प्रचलित नहीं । आचार विचारों की कट्टरता का अभाव था । व्यक्ति को स्वतंत्रता थी । अधिकतर ता ग्रामों में निवास करती थी । उच्च वर्ग के लोगों के मकान शानदार होते थे । के द्वारा भावशाली बनाये जाते थे । तामिल लोग दुर्ग निर्माण की कला खूब वाकिफ थे । इस प्रदेश में अनेकों नगर भी थे । स्त्रियां समाज में स्वतंत्रता रहती थीं । परदे का रिवाज न था, बहु विवाह कम प्रचलित था । प्रेम विवाहों उदाहरण भी थे । नगरों में वेश्यायें तथा नृतिकायें भी रहती थीं । समाज दायों में विभाजित था हालांकि उसमें उस समय कट्टरपन न था जो आगे चलकर या । इन लोगों की वेश भूषा सादी थी पुरुष धोती तथा पगड़ी का प्रयोग करते । महिलायें, चूड़ियां सुन्दर आभूषण पहनती थीं । हार बाजूबन्द और कर्न्दोरे न आभूषण थे । इन लोगों के खाने में चावल और मांस का प्रयोग होता था । लोग शराब का प्रयोग भी करते थे । उच्च वर्ग के लोग यूनानी तथा रोम सी लोगों द्वारा लाई गई अच्छी सुरा का पान करते थे । इसके अतिरिक्त अन्य ीली वस्तुयें भी इस्तैमाल होती थीं ।

आर्थिक दशा

तामिल देश धन धान्य से परिपूर्ण था । वहां की दीर्घकालीन शांति का वहां के व्यापार की वृद्धि के रूप में हुई थी । व्यापार आन्तरिक तथा बाहरी ों देशों में बहुत उन्नत हो गया था । इसी कारण देश के आन्तरिक उद्योग ों की बड़ी उन्नति हुई । तामिल देश का प्रधान पेशा कृषि था । इसके अतिरिक्त य अनेकों पेशे किये जाते थे । पशु पालना, मछली पकड़ना व्यापार करना वस्त्र ना इत्यादि भिन्न भिन्न व्यवसाय किये जाते थे । वहां पर अधिकतर सूती वस्त्र ार होते थे और रेशमी तथा ऊनी वस्त्र भी बुने जाते थे । यहां वस्त्र इतने बारीक ते थे कि विदेशों से इनकी बहुत अधिक मांग रहती थी । ३६ भिन्न भिन्न ार के कपड़ों का उल्लेख आया है । मलमल विशेष रूप से सुन्दर बनाई जाती । कुछ वस्त्र ऐसे महीन होते थे कि उनका नाम ही वायु का ताना या दूध की र कहा जाता था । यह लोग अनेकों धातुओं का प्रयोग करते थे । स्वर्ण के भूषण बनाते थे । लोहे का भी इनको ज्ञान था । नमक बनाया जाता था । पी रेत से भिन्न भिन्न वस्तुयें बनाई जाती थीं । मछलियां पकड़ने का व्यवसाय

दक्षिण से उत्तरी भारत के व्यापारिक मार्ग बड़े सुरक्षित बने हुये थे। (पर साधारण रूप से व्यापारी गिरोह बना बनाकर चलते थे।

विदेशों में भी तामिल प्रदेश का भारी व्यापार होता था। पश्चिम रोम, ईराक तथा पूर्व में मलाया प्राय द्वीप और इस ओर के अन्य द्वीपों ही उन्नत व्यापार था। आगे चलकर रोम साम्राज्य से यह व्यापार और भी मात्रा में होने लगा था और विदेशों से अधिक मात्रा में धन आता था। देश विदेशी धन से मालामाल हो रहा था।

मिश्र—मिश्र से यह व्यापार ईसा से पूर्व की सदियों में खूब था। सम्राट यहां से मलमल, प्राबनूस तथा दालचीनी और अन्य वस्तु मंगाते थे व्यापार को सिद्ध करने के लिये एक मिश्री अभिलेख है।

फिलिस्तीन—फिलिस्तीन के राजा भी भारत से सन्दल, बनमानुष रुई, कपड़ा इत्यादि वस्तुयें मगांते थे। रोम साम्राज्य के उत्कर्ष के साथ साथ व्यापार दक्षिणी भारत से बहुत अधिक हो गया था। रोम के साथ होने लगभग आधा व्यापार भारतीयों के हाथ में था। रोम के स्वर्ण सिक्के बराबर में आते रहते थे। यह सिक्के मदुरा में प्राप्त हुये हैं। विदेशी जल पोत नदियों के मुहानों में खूब आते थे। तामिल देश के बन्दरगाहों में विदेशि बहुत सी बस्तियां बस गई थीं। मालाबार तट पर बाहुल्य अरबों तथा ई का था। उस समय के भारतीय समुद्री यात्राओं में बड़े ही निपुण थे। पूर्वी दक्षिणी एशिया में अनेकों उपनिवेश स्थापित किये थे। व्यापार में हाथी दांत की वस्तुयें, वस्त्र सूती, रेशमी ऊनी, मोती तथा रत्न लाख चन्द लकड़ी कृषि की उपज इत्यादि अनेकों वस्तुयें विदेशों को जाती थीं। जिनके में उन देशों से स्वर्ण के सिक्के बहुत अधिक मात्रा में आते थे। इस प्रकार देश तथा सम्पत्ति से भरा हुआ था। देश का आन्तरिक व्यापार अधिकतर वस्तु वि द्वारा होता था। परन्तु सिक्कों का प्रचलन भी प्रतीत होता है।

धार्मिक जीवन

आरम्भ काल में इस प्रदेश में अनेकों धार्मिक सम्प्रदाय थे। जो अपनी विधियों से अपने देवी देवताओं की उपासना करते थे। एक समुदाय मृतकों की समाधियों पर पाषाण खड़े करता था। तो दूसरा समुदाय उच्चतम सिद्धांतों को मानता था। इस प्रकार भिन्न भिन्न मतों का प्रचार था। देवताओं की पूजा होती थी। चार प्रमुख देवता था। प्रत्येक देवता के पूजन अच्छे पैमाने पर होता था। भारत उस समय व्यापार का केन्द्र बना हुआ दक्षिणी भारत से बहुत सा माल उत्तरी भारत में भेजा जाता था। गुप्तकाल

थि करता थी। प्राचीन काल के पांड्य तथा चोल राजाओं ने यज्ञ इत्यादि किये थे।

आगे चलकर उत्तरी भारत की संस्कृति के प्रभाव के साथ साथ ब्राह्मण तथा बुद्ध धर्म भी तामिल प्रदेश में प्रविष्ट हो गये थे। जब चन्द्रगुप्त मौर्य जैन धर्म अपनाया और वह जैन साधु भद्र बाहु के साथ दक्षिण गया तो जैन ने वहां भी प्रसारित होने लगा। ईसा की दूसरी शताब्दी आते आते तामिल देश में जैन धर्म जड़ें पकड़ चुका था। मदुरा जैन धर्म का केन्द्र बन चुका था। द्रविड़ नरेशों में से कई ने जैन धर्म मान लिया था। परन्तु आगे चलकर हां से जैन धर्म का ह्रास हो गया और वह धीरे धीरे विलुप्त हो गया।

सम्राट अशोक ने तामिल प्रदेश में बुद्ध धर्म के प्रसार के बहुत से प्रयत्न किये और इन प्रयत्नों के अतिरिक्त अन्य बुद्ध प्रचारकों ने भी इस धर्म का बड़ा प्रचार किया। ईसा की प्रथम सदियों में ही तामिल प्रदेश में बुद्ध धर्म के कई केन्द्र स्थापित हो चुके थे। जैसे नागपट्टिनम तथा कान्जीवरम, ह्वानसांग के मतानुसार कान्जीवरम में सौ मठ थे। जिनमें दस हजार बौद्ध भिक्षु निवास करते थे।

सातवीं शताब्दी के आते आते हिन्दू धर्म के कई सम्प्रदाय इस प्रदेश में स्थापित हो गये जिन्होंने हिन्दू धर्म का प्रचार किया। इनके निरन्तर कार्य से बुद्ध तथा जैन धर्म का ह्रास हो गया। हिन्दू धर्म के दो मुख्य सम्प्रदाय थे। एक शैव नयनमारों का था। दूसरा वैष्णु अलवारों का था इन दोनों सम्प्रदायों ने ही भक्ति मार्ग का जन्म दिया था। शैव मतानुसार ६३ नयन मार हुये थे सन्त थे। जिन्होंने अनेकों भाव पूर्ण भजनों की रचना की थी। इसी प्रकार वैष्णु अलवारों या सन्तों की संख्या बारह थी, इन्होंने विष्णु की उपासना में अनेकों गीतों की रचना की थी। यह गीत विष्णु के मन्दिरों में बड़े ही भाव पूर्ण तथा रोचक ढंग से गाये जाते थे। इस प्रकार हिन्दू धर्म के प्रचार के कारण जैन तथा बुद्ध धर्म का निरन्तर ह्रास होता चला गया और दक्षिणी भारत में भक्ती मार्ग का प्रचार होने लगा भक्ति मार्ग का प्रचार उत्तरी भारत की संस्कृति के प्रवेश से पूर्व ही दक्षिणी भारत में होने लगा था। इससे यह परिणाम निकलता है कि यह सिद्धांत आर्यों के पूर्व का सिद्धांत है। उनके पहले ही शिव तथा विष्णु के भक्तों ने भक्ति मत का अत्याधिक प्रसार किया था। शिव मत के नयन मारों की शक्ति असीम थी। उन्होंने अपने भाव पूर्ण भजनों द्वारा समस्त तामिल प्रदेश में एक नवीन जीवन का संचार कर दिया था। दोनों सम्प्रदायों के अलग अलग साहित्य निर्मित किये गये थे। शैव मत का 'तीवरम' तथा 'तिरुवाचकम' और विष्णु सम्प्रदाय का साहित्य 'प्रबन्धम' कहलाता है। इस समस्त साहित्य का निर्माण मन्दिर पूजा की पूर्ति के लिये हुआ था। जो समस्त तामिल प्रदेश में प्रचलित थी।

इस प्रकार दीर्घ काल तक तामिल प्रदेश में भिन्न भिन्न धार्मि
धारायें प्रवाह करती रहीं और धार्मिक संघर्ष चलता रहा परन्तु यह सं
ही शान्तिमय था। धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता तथा प्रेम भाव बराबर बने
शान्त वातावरण में धर्म की तरक्की होती रहती थी।

साहित्य तथा कला

तामिल भाषा का व्यवस्थित रूप ईसा पूर्व सातवीं सदी में ही
हो गया था। ईसा पूर्व तीसरी सदी में 'तोलकप्पियर' नामक व्याकरण का
हुआ था। इसी समय से संस्कृत ने तामिल भाषा को प्रभावित करना प्र
दिया था। सबसे प्राचीन पुस्तक जिस पर संस्कृत का प्रभाव न पड़ा था।
साहित्य में 'कुराल' है इस ग्रंथ की रचना तिरुवल्लुवर द्वारा की गई थी उ
की दूसरी सदी में हुआ था। इस ग्रन्थ में १३३ परिच्छेद हैं जिनमें धर्
राजनीति तथा अर्थ शास्त्र से सम्बन्धित हैं। तामिल साहित्य सदा काव
दृष्टि से बड़ा उच्च है। इसके पांच महाकाव्य बड़े और पांच छोटे आज भी वि
हैं 'सिलप्पाधिकारम्' और 'मणिमेकलम्' प्रसिद्ध काव्य माने गये हैं। इस स
के अधिकतर भाग की रचना जैन तथा बुद्ध विद्वानों द्वारा की गई थी। पल्ल
में भक्ति सम्प्रदायों द्वारा अनेकों मन्त्रों, भजनों, गीतों की रचना हुई जिनका
कर लिया गया। ईसा की बारहवीं सदी तामिल साहित्य का बहुत ही महत्व
युग माना गया है क्योंकि इस युग में सबसे बड़े कवि जयकोन्दन प्रसिद्ध भाष
'अदियारक्कुनल्लर' प्रसिद्ध सन्त तथा कवि 'सेक्किलर' 'काम्बर' 'पुगले
इत्यादि लोग हुए थे। ऐसे विद्वानों ने तामिल साहित्य की बड़ी सेवा की और
साहित्य का नाम विश्व साहित्यों में उच्च श्रेणी में रक्खा।

कला

ललित कलाओं में भी तामिल निवासियों ने अपनी निपुणता दिखा
संगीत में इन लोगों की बड़ी रुचि थी। ये भिन्न भिन्न वाद्य यन्त्रों का प्र
करते थे उनमें आठ छेद वाली एक बांसुरी भी होती थी। अभिनय कला से भी
लोग परिचित थे।

पल्लव तथा चोल नरेशों ने कला को बड़ा प्रोत्साहन दिया। स्थापत्य क
तथा चित्रकला का नमूना उस काल के बनाये हुए अनेकों मन्दिरों में दिखाई दे
है। उस काल में अनेकों मन्दिर तथा भव्य भवन निर्मित किये गये थे।
राजाओं के कला प्रेम का यह फल हुआ कि वस्तु कला के क्षेत्र में एक नवी
प्रणाली का आविर्भाव हुआ जो 'पल्लव-चोल कला शैली' के नाम से प्रसिद्ध हुई
चोलों द्वारा मूर्ति कला की भी उन्नति हुई। उस समय की कांसे की प्रतिमायें

तथा अन्य देवी देवताओं की मूर्तियां तथा अनेकों चित्र आज भी कला के सर्व श्रेष्ठ नमूने बने हुए हैं। वास्तु कला तथा तक्षण कला का इतिहास ही दक्षिणी भारत में पल्लव मन्दिरों से आरम्भ होता है। इन्होंने एक नई और विशेष शैली को उत्पन्न किया। इसको द्राविड़ शैली कहते हैं इस शैली में बने हुए अनेकों मन्दिर आज भी अपनी भव्यता तथा विशालता के लिये प्रसिद्ध हैं। गुफाएं इस शैली के अन्य नमूने हैं। मामल्ल पुरम की चट्टानों से कटी हुई मूर्ति कला का प्रसिद्ध नमूना मानी गई है। यह गंगावतरण का दृश्य है पल्लव कला का दूसरा नमूना कान्ची का कैलाश मन्दिर है, इस कला में शिखर के बनाने में विशेष रूप से चातुर्य दिखाया गया है। शिखर की विशेषतायें जावा, कम्बोडिया तथा अन्नाम के मन्दिरों में आज भी दिखाई पड़ती हैं।

चोलों ने शिल्प कला को और भी विकसित किया उन्होंने सिंचाई के लिये बड़ी ही विशाल योजनायें बनाईं। कावेरी जैसी नदियों के पाषाण द्वारा अनेकों बांध बनाये गये थे। चोल मन्दिर कला के अति श्रेष्ठ नमूने माने गये हैं। तन्जौर का विशाल शिव मन्दिर आश्चर्यजनक है। दीवारों पर अनेकों मूर्तियां अलंकृत की गई हैं।

इस कला की श्रेष्ठता १७ वीं सदी में अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई थी, मदुरा के विशाल हाल में जो स्तम्भ हैं उन पर अनेकों प्रकार की कृतियां बनाई गई हैं इन पर जो नक्काशी की गई है वह अनुपम है।

सुदूर दक्षिण की कला में दो प्रकार के मन्दिर दिखाई पड़ते हैं। एक तो ठोस पाषाण से काटे गये मन्दिर तथा दूसरे भव्य ऊंचे बने हुए पाषाण के मन्दिर। दोनों प्रकार के मन्दिर ही विलक्षण कला प्रदर्शित करते हैं।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि तामिल प्रदेश की कला बड़ी ही उच्च कोटि की कला रही है।

उपरोक्त वर्णन से साफ पता चल जाता है कि तामिल संस्कृति प्रत्येक दिशा में बड़ी उन्नत हो चुकी थी। इसने आर्य संस्कृति से पूर्व ही स्वतन्त्रता पूर्वक महान उन्नति कर ली थी इस संस्कृति ने भारतीय उपनिवेशों में अपने प्रभाव डाले थे जो आज भी वहां दिखाई पड़ते हैं। साहित्य, कला, धर्म, कानून, सामाजिक दशा, आर्थिक दशा इन भिन्न भिन्न क्षेत्रों में तामिल लोग अपनी प्रखर बुद्धि द्वारा ऐसी महान संस्कृति का विकास कर रहे थे जिसने आज भी भारतीय सभ्यता में अपने विशेष स्थान को बना रक्खा है।

आर्य संस्कृति का प्रभाव

उत्तर भारत की आर्य संस्कृति सदियों तक दक्षिण में प्रवेश न कर सकी

क्योंकि विन्ध्याचल पर्वत, नर्मदा, ताप्ती नदियाँ तथा विस्तृत सघन जंगल प्रदेश में बाधक बने रहे परन्तु आगे चल कर लगभग ८०० वर्ष पूर्व ईसा आर्यों का दक्षिण में प्रवेश हुआ। ईसा पूर्व सातवीं सदी में पाणिनी के ग्रंथ इस थोड़े सम्बन्ध का कुछ आभास होता है ईसा पूर्व ३०० वर्ष कात्यायन के ग्र में इस सम्पर्क का और भी अधिक पता चलता है परन्तु ईसा पूर्व दूसरी श स्वामी पातञ्जली के समय तो स्पष्टतया दक्षिण में आर्यों का होना सिद्ध होता सम्राट अशोक के समय तो उत्तरी तथा दक्षिणी भारत के सम्पर्क में और अधिकता आ गई थी। अशोक ने बुद्ध प्रचारक दक्षिण में भेजे थे जो अपने ध प्रचार के साथ साथ अपने रीति रिवाज, आचार विचार अपनी भाषा तथा सं भी ले गये थे। इसी समय अनेकों ब्राह्मण, बुद्ध तथा जैन मतावलम्बी दक्षि भारत में जाकर बस गये थे उन्होंने शान्ति पूर्वक रहकर वहां तामिल समाज प अपना प्रभाव डालना आरम्भ कर दिया था। इस समय तामिल समाज में ब्र ब्राह्मण अपने त्याग, ज्ञान तथा सरल जीवन के कारण अपना विशेष स्थान बना कर चुके थे। उनकी उस समाज में बड़ी आव भगत होने लगी थी।

तामिल भाषा के साहित्यिक ग्रन्थ 'संगम' में आर्य संस्कृति तथा संस्कृ भाषा के प्रभाव स्पष्ट रूप में प्रगट होते हैं।

पल्लव काल के आते आते तामिल प्रदेश का आर्यकरण बड़ी सीमा त पूर्ण हो चुका था छठी सदी के अन्त तक आर्य संस्कृति इन दूरस्थ प्रदेशों में अप जड़ें दृढ़ कर चुकी थी और तामिल समाज अधिकता से आर्य प्रभाव में आ गया। भारत के धर्म शास्त्र अपना अमर पूर्ण रूप से डाल रहे थे। अनेकों अभिलेखों में संस्कृत भाषा का प्रयोग होने लगा था। संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वानों की ख्याति तामिल प्रदेश में खूब फैल गई थी। आर्य वेदों को भी अनेकों लोग भली प्रका जानते थे इस प्रकार तामिल साहित्य धीरे धीरे आर्य संस्कृति तथा संस्कृत भाषा से प्रभावित होकर प्रगति कर रहा था। उस समय के साहित्यिक ग्रंथ इस प्रभाव को स्पष्ट रूप से आज भी प्रगट कर रहे हैं। कान्ची में संस्कृत के प्रसार के केन्द्र स्थापित किये गये थे और आगे चलकर कान्ची एक प्रसिद्ध विश्व विद्यालय बन गया जिसने भारतीय ज्ञान का प्रचार भारत के बाहर भारतीय उपनिवेशों में भी फैलाया। दक्षिणी भारत में इसका वही स्थान था जो उत्तरी भारत में नालन्दा का था। इस विद्यालय ने बौद्धाचार्य धर्मपाल, दिग्नाग, मयूर वर्मा जैसे विद्वानों को उत्पन्न किया था। न्याय शास्त्र का रचयिता वात्स्यायन पांचवी सदी में कांची का महान विद्वान् था। इससे प्रमाणित होता है कि पल्लवों का कान्ची वह स्थान था जहां से आर्य संस्कृति समस्त तामिल प्रदेश तथा दक्षिणी भारत में प्रसारित होती थी और इतना ही नहीं अपितु पूर्वी एशिया के प्रदेशों तक भी इसका प्रचार

रहा था। पल्लवों के शासन काल में भारतीय संस्कृति का प्रभाव निरन्तर रूप हिन्दू उपनिवेशों में हो रहा था।

इस प्रकार यह साफ है कि आर्य संस्कृति उत्तरी भारत से धीरे धीरे दक्षिण प्रवेश कर गई और वहां से भारतीय उपनिवेशों में पहुँची।

उत्तरी भारत से दक्षिणी भारत के आने के दो प्रसिद्ध जन मार्ग थे। एक पश्चिमी घाट पर तथा दूसरा पूर्वी घाट पर—इनमें अधिक प्रसिद्ध पश्चिमी घाट का मार्ग था। इन जन मार्गों का उल्लेख संस्कृत साहित्य में खूब आया है इन मार्गों को उत्तरी भारत की संस्कृति के प्रवेश मार्ग कहें तो उचित ही होगा।

इससे यह पता चलता है कि सदियों पृथक रहने के पश्चात् तामिल भूमि भारतीय संस्कृति से अच्छी तरह प्रभावित हुई और यह प्रभाव आज भी अनेकों अवशेषों द्वारा भली प्रकार प्रदर्शित होते हैं।

Q. What has been the contribution of South India's civilization towards the enriching of Indian civilization ?

प्रश्न—भारतीय संस्कृति को सुसम्पन्न करने में दक्षिण भारत की क्या सांस्कृतिक देन रही है ?

उत्तर—दक्षिणी भारत की कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जिन्होंने भारती सभ्यता पर अपने गहरे प्रभाव छोड़े हैं। इन विशेषताओं को बनाये रखने के भिन्न भिन्न कारण रहे हैं। शताब्दियों तक चोल, चेर, पाण्ड्या, तामिल संस्कृति के संरक्षक बने रहे और प्राचीन सभ्यता के प्रहरी का काम करते रहे। इस सभ्यता को राजवंशों का परिवर्तन भी प्रभावित न कर सका। इसी कारण से राजनैतिक तथा सांस्कृतिक परम्परायें आगे तक प्रवाहित होती रहीं, सामाजिक स्थिरता युगों के व्यतीत होने पर भी अपना अस्तित्व बनाये रही। इतना ही नहीं दक्षिणी भारत ने भारतीय संस्कृति को उन भारतीय उपनिवेशों में भी पहुँचाया जो कलिंग तथा दक्षिणी भारत से गये हुए प्रचारकों, उपदेशकों, राजकुमारों तथा जन साधारण ने भारत के बाहर जाकर स्थापित कर लिये थे। इस क्षेत्र में दक्षिण भारत की देन बड़ी ही अलौकिक सिद्ध हुई है। आज भी जावा, सुमात्रा, बाली, बोर्नियो, स्याम तथा कम्बोडिया में भारतीय संस्कृति विद्यमान है। कम्बोडिया का विश्व विख्यात मंदिर आज भी भारतीय कला के गहन प्रभाव को पूर्ण रूप से प्रदर्शित कर रहा है। दक्षिणी भारत की अनुपम देन धर्म तथा कला के क्षेत्र में बहुत ही अधिक रही है।

धर्म

भक्ति आन्दोलन का जन्म उस प्राचीन काल में ही हो चुका था उत्तर भारत की संस्कृति का किसी प्रकार का कोई प्रवेश दक्षिण में न हुआ इसलिये प्रमाणित रूप से यह कहा जा सकता है कि भक्ति मार्ग का सिद्धान्त रूप से दक्षिण भारत की देन है जिसने उत्तरी भारत की संस्कृति पर गहरी छाप लगाई है।

इस सिद्धान्त का जन्म शिव तथा विष्णु की पूजा से हुआ। शिव उपासना करने वाले सन्त नयनमार थे जिनकी संख्या ६३ बताई गई है। विष्णु उपासना करने वाले सन्त अलवारों की संख्या १२ बताई गई है।

इन सन्तों ने अपने अपने इष्ट देव की उपासना के हेतु अनेकों गीतों का निर्माण किया था जिनका संग्रह कर लिया गया था और जिन्होंने साहित्य की वृद्धि में बड़ा काम किया है।

अलवारों ने विष्णु की उपासना में काव्यों की रचना कर डाली थी।

पल्लव शासन में 'संगम' साहित्य की रचना हुई यह साहित्य भक्ति सिद्धान्त से ही सम्बन्धित है। शैव सम्प्रदाय का 'तीवरम' तथा विष्णु सम्प्रदाय 'तिरुवाचकम्' साहित्य पल्लव काल की ही प्रभावशाली देन है। भक्ति सिद्धान्त शैव तथा वैष्णव मत के रूप में उत्तरी भारत में प्रसारित हुआ। वैष्णव मत महाराष्ट्र में फैला फिर मथुरा तथा वृन्दावन के आस पास फैलता चला गया बारहवीं सदी से पन्द्रहवीं सदी तक के समय में इस मत का स्पष्ट रूप बन चुका था। अब राम तथा कृष्ण जो विष्णु के अवतार मान लिये गये थे। विष्णु के रूप पर विशेष श्रद्धा तथा उपासना के पात्र हो चुके थे। राम की ख्याति तुलसीदास द्वारा बहुत अधिक बढ़ी और इसी प्रकार कृष्ण भक्ति बंगाल में चैतन्य द्वारा तथा गुजरात में वल्लभाचार्य द्वारा फैली। इस प्रकार हम देखते हैं कि धार्मिक क्षेत्र में भक्ति सिद्धान्त ने उत्तरी भारत में बड़ा प्रभाव डाला। आज भी अनेकों हिन्दु किसी न किसी रूप में भक्ति के प्रसिद्ध सिद्धान्त से प्रभावित होते हैं।

जब दक्षिणी भारत में मन्दिरों में पूजा अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई तब उसकी प्रतिक्रिया आरम्भ हुई और इसके अनावश्यक प्रतिबन्धों के विरुद्ध सुधारवादी आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। यह आन्दोलनकारी सिद्ध कहलाये। इन्होंने स्पष्ट रूप से कहना आरम्भ किया कि ईश्वर की खोज मन्दिरों की मूर्तियों में करना व्यर्थ है ईश्वर हमारी आत्मा में ही विद्यमान है। इस नवीन आन्दोलन के अनेकों विद्वान् समर्थक हुए। इस विषय में तिरुमुलर का नाम उल्लेखनीय है। यह विद्रोह दक्षिणी भारत से आरम्भ हुआ परन्तु उत्तरी भारत में आकर इसे और भी नवीन शक्ति मिली। पूजा पाठ की व्यर्थ प्रणालियों का विरोध करते

तथा नानक द्वारा पूर्ण शक्ति से किया गया। कबीर तथा नानक द्वारा सुन्दर साहित्य उत्पन्न किया गया।

इस प्रकार यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भक्ति का सिद्धान्त दक्षिण से उत्पन्न हुआ और वहीं से उसका विरोध भी उत्पन्न हुआ। इन दोनों सिद्धान्तों ने उत्तरी भारत की संस्कृति को विशेष रूप से प्रभावित किया और यह दोनों सिद्धान्त आज भी भारतीय सभ्यता में विद्यमान हैं।

दक्षिण भारत में और भी धार्मिक सिद्धान्त हुए। तन्त्रवाद जो शक्ति सिद्धान्त का दूषित रूप है दक्षिण में फला फूला। इसमें शक्ति की देवी का किसी न किसी रूप में पूजन होता है। तन्त्रवाद का जन्म उन ब्राह्मणों द्वारा हुआ जो मुसलमानों के दमन चक्र से बच कर दक्षिण भारत में चले गये थे। इसके अतिरिक्त पाशुपत—कापालिक सम्प्रदायों का भी जन्म तथा विकास दक्षिण में ही हुआ। यह सम्प्रदाय शैव मत के कट्टर उपासक थे। वीरशैव मत या लिङ्गायत मत का उत्कर्ष भी दक्षिण में ही हुआ। इस प्रकार हम देखते हैं कि दक्षिणी भारत ने अनेकों धार्मिक सिद्धान्तों तथा सम्प्रदायों को जन्म दिया और भारतीय संस्कृति को मूल्यवान देन प्रदान की।

दूसरी प्रधान देन जो दक्षिण ने भारतीय सभ्यता को प्रदान की वह थी धार्मिक उदारता तथा सहिष्णुता। कट्टरपन का वहां अभाव था। प्रत्येक सम्प्रदाय वालों को अपने अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। राजा का धर्म प्रजा पर नहीं लादा जाता था किसी को धर्म के आधार पर कोई कष्ट नहीं दिया जाता था। कोई भी किसी सिद्धान्त को अपना कर उसकी विधियों पर चल सकता था। इसी कारण से उदारता की भावना समाज के प्रत्येक अंग में विद्यमान थी। राजाओं ने इसी उदार सिद्धान्त को शासन में भी लागू किया और जिसका परिणाम स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रूप में हुआ। ईसा से शताब्दियों पूर्व तामिल प्रदेश में स्थानीय संस्थायें सुचारु रूप से कार्य कर रही थीं। कृत्रिम रूप से धार्मिक एकता उत्पन्न करने के प्रयास नहीं किये गये। प्रत्येक सम्प्रदाय अपने ढंग से विकसित होता रहा। यह उदारता तथा सहिष्णुता ही दक्षिण भारत की अलौकिक देन सिद्ध हुई और भारतीय सभ्यता एक उदार तथा विशाल गंगा के समान प्रवाहित होती रही जिस में समय समय पर अन्य सभ्यतायें सरलता पूर्वक आ आकर मिलती रहीं।

दक्षिण के मन्दिर संस्थाओं के रूप में

मन्दिरों का स्थान भारतीय सभ्यता में महत्व पूर्ण रहा है। अनेकों अवसरों पर सभ्यता इन के चारों ओर केन्द्रित रही है। यह मन्दिर महत्व पूर्ण संस्थायें सिद्ध हुई हैं। दक्षिण के मन्दिर अपनी भव्यता तथा विशालता के स्वयं ही उदाहरण हैं

यह शिव तथा विष्णु की भक्ति के महान स्मारक हैं। धीरे धीरे यह सार्व
कामों में आने लगे। यहां पर आकर लोग पूजा पाठ करते, राजनैतिक तथा स
जिक वाद विवाद करते तथा मिल जुल कर त्यौहार और उत्सव मनाते थे। सम
में सम्मिलित होते थे। अपनी सभायें करते तथा नाटक इत्यादि किया करते
इन मन्दिरों से जुड़ी हुई पाठशालायें हुआ करती थीं जहां विद्यार्थियों को नि
शिक्षा प्रदान की जाती थी। इन पाठशालाओं में उच्च शिक्षा तक निःशुल्क दी ज
थी। इनके खर्चे के लिये इन मन्दिरों के नाम ग्राम कर दिये जाते थे। इन्ना
(Ennayiram) के मन्दिर से लगा हुआ विद्यालय ३४० विद्यार्थियों को नि
शिक्षा प्रदान करता था। यह मन्दिर अपनी समाज सेवा के कारण दक्षिणी भ
की विलक्षण देन सिद्ध हुये हैं। इन्होंने विशेषकर दक्षिणी भारत और साधारण
समस्त भारत की संस्कृति को पूर्ण रूप से प्रभावित किया है।

कला

सबसे महत्व पूर्ण देन जो दक्षिणी भारत ने भारतीय संस्कृति को प्रदान
है वह उसकी कला है। दक्षिणी भारत की कला का स्वर्ण काल यद पल्लव
को कहें तो अनुचित न होगा। वस्तु कला इस काल में बड़ी प्रगति से विक
हुई। दो प्रकार के मन्दिरों का निर्माण किया गया। एक तो वह जिनको
चट्टानों से काटा गया। दूसरे वह मन्दिर हैं जिन का निर्माण उनकी भव्यता
ध्यान में रखकर किया गया है। इन मन्दिरों में जिस शैली को काम में लाया ग
है वह पल्लव शैली के नाम से प्रख्यात है। यह शैली आगे चलकर अन्य सम
शैलियों का आधार बन गई।

महान पल्लव नरेश नरसिंह वर्मन द्वारा अनेकों सुन्दरतम मन्दिरों
निर्माण हुआ। इनमें सबसे अधिक वह समूह है जो पाण्डव और द्रौपदी के न
से प्रसिद्ध है। मन्दिर एक ही ठोस चट्टान से काट कर समुद्र तट पर बनाया गया
इस प्रकार कटे हुए मन्दिर कला के सचमुच अद्भुत नमूने हैं। मन्दिरों के अतिरि
पाषाणों में से सुन्दरतम मूर्तियां भी काटी जाती थीं। मामलनपुरम की चट्टान से क
कर बनाई गई एक विशाल मूर्ति ने अति उत्तमता तथा श्रेष्ठता का आदर्श पेश कि
है। यह एक ६८ फीट लम्बी तथा ४३ फीट चौड़ी चट्टान से काटी गई है।
मूर्ति के आस पास का वातावरण एक अद्भुत दृश्य प्रस्तुत करता है। भगीरथ अप
तपस्या में संलग्न है और आस पास के पशु-पक्षी भी उसी की तरह एक विशेष भा
प्रदर्शित कर रहे हैं। कला की दूसरी कृति काञ्ची का कैलाश मन्दिर है। इस
शिखर की बनावट पिरामिड के गुम्बद के समान है। इस शैली में पाषाण द्वारा
मन्दिर बनाने का रिवाज था। इनके शिखर बड़े ही सुन्दरता पूर्ण बनाये जाते थे।

इस कला ने सुदुर पूर्व की औपनिवेशिक कला को भी प्रभावित किया था। पल्लवों के स्थान पर जब चोल नरेश आये तो उन्होंने भी कला का महत्व पूर्ण विकास केया और कला को चरम सीमा तक पहुँचाया। चोलों के नगर विशाल तथा वेस्तृत थे। उनकी स्थापना एक योजना द्वारा की गई थी। नगर के बीचों बीच एक विशाल मन्दिर बनाया जाता था। चोल कला के सुन्दर तम नमूने तन्जौर तथा चेदाम्बरम के मन्दिर में दिखाई पड़ते हैं। तन्जौर का शिव मन्दिर जिसका निर्माण राजराजा ने सन् '०११ के आस पास कराया था। १६० फीट ऊंचा है जिसमें चौदह मन्जिल बनाई गई हैं। इसके ऊपर का गुम्बद १५ फीट ऊंचा है। इस मन्दिर में एक २०० फीट लम्बा व २५० फीट चौड़ा चौक है। मदिन्र को नीचे से ऊपर तक सुन्दर आकृतियों द्वारा सजाया गया है प्रवेश द्वार पर अनेकों मूर्तियां वेष्णु सम्प्रदाय की उत्कीर्ण की गई है शेष समस्त भागों में शिव सम्प्रदाय की मूर्तियों के दृश्य ही दृष्टिगोचर होते हैं। इस मन्दिर में विष्णु तथा शिव सम्प्रदायों की भावनाओं का समन्वय करने का सफल प्रयास किया गया है। श्री रंगपट्टन का शानदार मन्दिर भी दक्षिण की वास्तु कला का श्रेष्ट नमूना है। एक हजार खम्भों पर खड़ा हुआ विशाल मन्दिर बड़ा ही रोचक प्रतीत होता है। इसके प्रवेश द्वार पर बड़ी ही सुन्दर आकृतियां बनाई गई हैं। इनमें बेलों तथा पुष्पों के दृश्य बड़े ही अनुपम हैं। चोलों की नवीन राजधानी गंगई कोण्ड चोल पुरम में राजेन्द्र प्रथम ने एक कला पूर्ण मन्दिर का निर्माण कराया था। यह मन्दिर कला का प्रभाव शाली नमूना है। इसकी भव्यता, विशालता, और सुन्दर आलंकरण आश्चर्य जनक हैं। इनके अतिरिक्त और भी अनेकों मन्दिर जैसे मेगूति का शिव मन्दिर, होल का विष्णु मन्दिर इत्यादि दक्षिण की कला के अद्भुत सफलतायें हैं। कांसे की प्रतिमायें चोलों की कला की अन्य कृतियां हैं। इन मूर्तियों में हिन्दू देवी-देवताओं शिव, अन्य सन्तों की है।

चोल कला की विलक्षणता उसकी भव्यता में है। फर्गुसन का कथन है कि चोल कलाकार दानवों के समान कल्पना करते तथा जौहरियों के समान अन्त करते थे। उत्तर काल में आते आते चोल शैली में धीरे धीरे एक नवीन शैली का जन्म हो रहा था। इस नवीन शैली ने मन्दिरों के प्रवेश द्वार अथवा गो पुरम के निर्माण में बड़ा परिवर्तन किया। अब गो पुरम मन्दिर के समान ही ऊंचा तथा प्रभावशाली बनाया जाने लगा। इस पर उच्च कोटि का अलंकरण किया जाने लगा। कहीं कहीं यह प्रवेश द्वार इतना भव्य बनाया जाता था कि यह प्रमुख देवालय को ढक लेता था। कुम्भ कोणम का विशाल मन्दिर इसका प्रमुख उदाहरण है। इस मन्दिर का गोपुरम इतना ऊंचा तथा कला पूर्ण है कि देवालय बिल्कुल ढक सा गया है। इससे समस्त देवालय कुछ कम प्रभावशाली प्रतीत होता है। इस नवीन

प्रभाव के कारण अब मन्दिरों के बीच में तालाब बनाने का रिवाज लागू और मन्दिरों के चारों ओर विस्तृत प्रवेश द्वार बनाये जाने लगे।

समय के साथ साथ कला में भी प्रगति हो रही थी। और सत्रहवीं श में रामेश्वर तथा मदुरा में जिन मन्दिरों का निर्माण किया गया वह कला श्रेष्ठ तथा उत्कृष्ट नमूने हैं। रामेश्वर के मन्दिरों की विशेषता उनके चारों ओर हुये विस्तृत बरामदे हैं। कहीं कहीं इनको पाषाणों में से काट कर बनाया गया कोई कोई बरामदा ७०० फीट तक लम्बा है परन्तु मदुरा के मन्दिरों में की अधिकता है। यहां जिन स्तम्भों पर हाल का निर्माण किया गया है उन पर से ऊपर तक अनुपम चित्र कला का प्रदर्शन किया गया है। शिखर पर सिं हाथियों की आकृतियां बनाई गई हैं जो कला के अद्भुत नमूने हैं। मदुरा के मं में, शिव तथा मीनाक्षी का प्रसिद्ध मन्दिर कला का उत्कृष्ट उदाहरण है। इ चार प्रवेश द्वार हैं तथा इसके आंगन में एक विशाल तालाब है। यह तालाब फीट लम्बा तथा १२० फीट चौड़ा है। इन मन्दिरों में जगह जगह पर पशु देवी देवताओं तथा अन्य वस्तुओं की सजीव प्रतिमायें बनाई गई हैं जो कलाकार निपुणता का प्रदर्शन करती हैं। इन मन्दिरों के विशाल आंगन, भव्य घुमावदार रास्ते इत्यादि सब सुन्दरमय ढंग से निर्मित किये गये हैं।

राष्ट्रकूट चालुक्य कला

यह लोग सुदूर दक्षिण के उत्तरीय प्रदेश में सत्ता आरूढ़ थे इनकी राज बादामी में थी। ये नरेश कला के महान संरक्षक सिद्ध हुये और उन्होंने बड़े निर्माण कार्य किये। इस युग में अनेकों मन्दिरों का निर्माण किया गया। राष्ट्र ने भी अनेकों मन्दिरों का निर्माण कराया। इनमें सबसे प्रसिद्ध वह कैलाश मन्दि है जो राष्ट्रकूट नरेश प्रथम ने आठवीं सदी में एलौरा में बनवाया था। इसमें द्र शैली का प्रयोग किया गया है। यह विशाल मन्दिर एक पहाड़ी से काट कर बना गया है। इसका शिखर तथा नक्काशी द्राविड़ शैली का नमूना है। मुख्य मन्दि ठोस पत्थरों से काट कर बनाये गये हाथियों पर आधारित हैं। आस पास के में अनेकों गुफाओं में हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियां बनाई गई हैं। इसमें पौराणिक दृश्य अंकित किये गये हैं। नृसिंह अवतार का दृश्य, शिव पारवती विवाह इत्यादि अनुपम कृतियां हैं। वह दृश्य जिसमें रावण कैलाश को उठा रहा और पारवती घबराकर शिव के कन्धों पर हाथ रक्खे खड़ी है। उनकी सहेलियां आतुर होकर इधर उधर भाग रही हैं। परन्तु शिव अचल खड़े हैं। कला की सफलता प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त ऐलिफेन्टा द्वीप में चट्टान से काट कर बनाया गया दूसरा मन्दिर है। इसमें बनी हुई शिव की त्रिमूर्ति बड़ी ही पूर्ण है।

होयसल कला

चालुक्यों के पश्चात होयसलों ने कला को प्रोत्साहित किया। इन्होंने एक नवीन शैली का विकास किया। इस समय के बने हुये प्रसिद्ध मन्दिर सोमनाथपुर बेलुर, तथा द्वार समुद्र में हैं। यह वर्गाकार हैं और इनकी कुर्सियां नक्काशी द्वारा बड़ी ही आकर्षक हैं। सोमनाथ का मन्दिर जो १०४३ के आस पास निर्मित किया गया था बड़ा ही कला पूर्ण है। होयसल कला का दूसरा तथा सर्व उत्तम उदाहरण हलेबिद का प्रसिद्ध होयसलेश्वर का मन्दिर है यह कई मन्जिलों का है और नक्काशी से ढका पड़ा है। इस पर सिंहों तथा गजों इत्यादि की कृतियां बड़ी अनोखी हैं। मैकडानल (Macdonnel) का मत है कि इस मन्दिर के बाहरी ओर जो खुदाई की गई है उसका उदाहरण विश्व भर में न होगा। इससे सिद्ध होता है कि सचमुच होयसल कला एक महान कला रही है और इसने भारतीय कला को सम्पन्न बनाने में विशेष कार्य किया है।

आन्ध्र कला

दक्षिण भारत के अनेकों स्तूप आन्ध्रों के समय में ही निर्मित किये गये थे। इनमें अमरावती का प्रसिद्ध स्तूप जो आजकल भग्नावशेष सा रह गया है। अति शोभा शाली है। जब यह पूर्ण रूप में खड़ा हुआ होगा तो और भी अधिक शोभा शाली रहा होगा। इसमें बुद्ध जी के विषय के अनेकों दृश्य अंकित किये गये हैं। यह अलंकरण बड़ा ही कला पूर्ण है। इस स्तूप में बनी हुई मूर्तियां बड़ी पतली और आकर्षक हैं। इसके निर्माण को देख कर उस समय के जीवन, नगरों, राज प्रासादों, भवनों इत्यादि का भली भांति अनुमान हो जाता है। अमरावती के अतिरिक्त नागार्जुनीकोंडा में भी उस समय की कला के चिन्ह मिलते हैं। इनमें एक स्तूप, एक विहार, दो चैत्य उल्लेखनीय हैं। यह सब इस बात का उदाहरण हैं कि उस दूर अतीत में भी दक्षिण की कला ने महान उन्नति करली थी। और उसी के आधार पर दक्षिण भारत की कला ने महान उन्नति करली थी।

समय समय के इन भिन्न भिन्न प्रभावों ने दक्षिण की कला को उन्नति की महान पराकाष्ठा पर पहुंचाया था और कला के क्षेत्र में दक्षिण भारत की सभ्यता ने भारतीय सभ्यता को अपनी महान देन प्रदान की है।

यह कहना उचित ही है कि दक्षिण भारत की संस्कृति आर्यों के आगमन से पूर्व है। उन्नति की सीढ़ियां पार कर रही थी और इसमें अपनी विशेषतायें उत्पन्न हो रही थीं परन्तु जब आर्य दक्षिणी भारत में पहुंचे तो तामिल और आर्य संस्कृति का समन्वय हुआ और आज कल भी दक्षिण में इस समन्वय के चिन्ह साफ तौर से प्रगट हैं। प्राचीन ललित कला, वास्तु कला, साहित्य इत्यादि को

प्राचीन काल में दक्षिण में फैले हुये थे। उनके विशेष चिन्ह आज भी जैसे दक्षिण की ओर जाते हैं वर्तमान सभ्यता में फैले हुये हैं। तामिलियन एन्टी (Tamilian Antiquary) नामक ग्रन्थ में सुन्दरम पिल्लई ने स्पष्ट बताया है कि दक्षिण भारत में आज भी आर्यों के आने से पूर्व के चिन्ह विद्य हैं। वहां की भाषायें, सामाजिक संस्थायें इत्यादि आर्यों के पूर्व की ही हैं। से यह बात साफ हो जाती है कि दक्षिण भारत की अपनी विशेष संस्कृ भारतीय सभ्यता को भिन्न भिन्न क्षेत्रों में देन प्रदान की है। और इस स सभ्यता को सम्पन्न बनाया है। धर्म, कला, साहित्य, भाषा, संगीत तथा इत्यादि में यह देन आज भी विद्यमान है। शंकराचार्य जैसा विद्वान विष्णु व शिव मत, भक्ति के सिद्धान्त, कला, यह सब दक्षिण की देन के भिन्न भि उदाहरण हैं।

इसके अतिरिक्त दक्षिणी भारत ने मुसलमानों के आक्रमणों के समय स संस्कृति की विशुद्धता को बनाये रखने में महान योग दिया। इन भीषण आक्रम कारियों के भय से अनेकों ब्राह्मण अपने धर्म को बचाने के लिये और अपनी संस्कृ की सुरक्षा के हेतु दक्षिण भारत में भाग गये थे। जहां उनका आदर सत्कार हुआ इस प्रकार दक्षिण भारत ने आर्य संस्कृति को आश्रय दिया और उसको अक्ष बनाये रखने में योग दिया।

अब यह कहना बड़ा ही युक्ति पूर्ण है कि वर्तमान भारतीय सभ्यता को दक्षिणी भारत की जो देन प्रदान की गई है वह अति अनुपम तथा महत्वपूर्ण इस अलौकिक देन ने भारतीय सभ्यता को पूर्ण रूप से सम्पन्न होने में बड़ी सहायता पहुँचाई है।

Q. Give an account of social and economic condition of the people under the Vijaynagar Empire. And also point out what progress, was made by art and literature under this empire.

प्रश्न—विजय नगर साम्राज्य में लोगों की सामाजिक तथा आर्थि दशा का वर्णन करो और यह भी बताओ कि इस साम्राज्य में साहित्य कला ने क्या प्रगति की ?

उत्तर—अलाउद्दीन खिलजी के प्रसिद्ध सेनापति मलिक काफूर ने चौद सदी के आरम्भ में दक्षिणी भारत को रौंद डाला और इसका परिणाम यह हु कि समस्त दक्षिण में राजनैतिक अराजकता फैल गई और शासन व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई परन्तु इस अराजकता ने फिर से सुदृढ़ की भावना को जन्म

कया और १३३६ में हरिहर और बुक्का के नेतृत्व में विजय नगर के हिन्दू साम्राज्य ा उदय हुआ। इस प्रसिद्ध राज्य काल में दक्षिण में प्रत्येक प्रकार की उन्नति हुई ाथ ही साथ ३०० वर्ष तक विजय नगर साम्राज्य ने मुसलमानों के आक्रमणों के रुद्ध हिन्दू धर्म तथा संस्कृति को निरन्तर सुरक्षा प्रदान की इस युग को हिन्दू ंस्कृति पुनर्जागरण का युग भी कहा गया है क्योंकि विजय नगर के राजा साहित्य था कला के महान् प्रेमी तथा संरक्ष॰ और इसी कारण से साहित्य तथा कला इस युग में महान् वृद्धि हुई सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र में भी लोगों की च्छी दशा थी।

सामाजिक दशा—समाज वर्गों में विभाजित था। लोग भिन्न भिन्न पेशे रते थे परन्तु प्रधानतया लोगों का पेशा कृषि था। कृषकों की दशा उन्नत थी। ह समृद्धशाली थे और सुख का जीवन व्यतीत करते थे। जुलाहे, खान खोदने ाले, शिल्पी व्यापारी इत्यादि भिन्न समुदाय थे। ब्राह्मण समाज में सबसे उत्तम ्यों में समझे जाते थे। वह अपने त्याग तथा ज्ञान के कारण आदर की दृष्टि से खे जाते थे। वे साम्राज्य के राजनैतिक क्षेत्र में भी बड़ा प्रभाव रखते थे और राजा नका बड़ा आदर सत्कार करते थे। वह विश्वासनीय समझे जाते थे।

खान पान में कठोर नियम न थे। लोग मांस का प्रयोग भी करते थे परन्तु ाय बैल का मांस प्रयोग में न आता था। ये दोनों पशु आदर से देखे जाते थे। ल तथा सब्जी खूब खाये जाते थे। लोग आनन्द से खाते पीते और सुख का ीवन व्यतीत करते थे। स्त्री और पुरुष आभूषण पहनते थे। विजय नगर में ीरे जवाहरात की बड़ी शानदार दुकाने थीं। जो देखने वालों को चका चौंध कर ती थीं।

समाज में स्त्रियों का सम्मान था। कुछ कुल की स्त्रियां पर्दा नहीं करती ीं। इनको हर प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। कुश्ती लड़ना, ढाल तलवार लाना संगीत तथा नृत्य करना इत्यादि भिन्न भिन्न विषयों में स्त्रियों को उच्च े उच्च शिक्षा मिलती थी। अनेकों स्त्रियों के पहलवान होने के उदाहरण हैं। हुत सी स्त्रियां उचित साहित्यिक शिक्षा भी प्राप्त करती थीं। राजघराने की कई त्रियों को कवितायें करने के प्रमाण मिले हैं। राज परिवार के एक पृथक विभाग ें केवल स्त्रियां ही क्लर्क हो सकती थीं। इस से प्रतीत होता है कि बहुत सी ्त्रियां हिसाब किताब तथा शासन संचालन में भी दक्ष होती थीं। इससे प्रकट ोता है कि किसी भी क्षेत्र में चाहे वह राजनैतिक हो चाहे आर्थिक चाहे सामाजिक ाहे साहित्यिक इन सब में स्त्रियां सक्रिय भाग लेती थीं। बहुपत्नी विवाहों का रिवाज ा। बाल विवाह भी होते थे। सती प्रथा का रिवाज था, दहेज देने की प्रथा भी थी।

ऐसा प्रतीत होता है कि निम्न वर्गों में शिक्षा भी कम दी जाती थी। परन्तु
रूप से स्त्रियों का स्थान समाज में बहुत अच्छा था।

इससे पता चलता है कि इस साम्राज्य में समाज एक उन्नत समाज
उसमें अभी वह पतन आरम्भ नहीं हुआ था जो आगे चलकर हिन्दुओं के
का कारण बना इस प्रकार विजय नगर की सामाजिक दशा अच्छी थी
लोग अच्छा सुख तथा आनन्द का जीवन व्यतीत करते थे।

आर्थिक दशा – साम्राज्य में कृषि प्रधान पेशा था। राज्य की
सिचाई का उचित प्रबन्ध किया गया था। इसी कारण से कृषकों की दश
अच्छी थी और वे समृद्धशाली जीवन व्यतीत करते थे। कृषि के अतिरिक्त
बुनना, खाने खोदना तथा धातु की वस्तुयें बनाना, गहे तैयार करना तथा सुग
द्रव्य बनाना इत्यादि अन्य धन्धे थे। शिल्पी तथा वणिक अपने संघ बनाकर
थे। ये संघ आर्थिक जीवन में विशेष महत्व रखते थे। इनके अतिरिक्त
क्षेत्र में और भी छोटे छोटे धन्धे होते थे। इसलिये समस्त प्रदेश धन धा
परिपूर्ण था।

साम्राज्य के आर्थिक जीवन में व्यापार का बड़ा महत्व था। आन्त
तथा बाहरी दोनों प्रकार का व्यापार बड़ा ही उन्नत था। अब्दुर्रज्जाक के अ
नुसार साम्राज्य के ३०० बन्दरगाह थे। विजय नगर का विदेशी व्यापार
ही विस्तृत था। यह व्यापार मलाया, द्वीप समूह, ब्रह्मा, चीन, हिन्द महास
के अन्य द्वीप तथा अरब, फारस, अफ्रीका प्रदेशों में होता था। पुर्तगाल के आ
होने के कारण भारत का माल सुदूर यूरोप के देशों तक में जाने लगा था और
देशों का माल भी निरन्तर रूप से विजय नगर के अनेकों बन्दरगाहों द्वारा भा
में आता था। इस प्रकार समस्त साम्राज्य धन से परिपूर्ण था। हिन्दु राजा
सेना भी रखते थे तथा पोत निर्माण भी कराते थे। इस प्रकार यह बात स्पष्ट
जाती है कि विजय नगर साम्राज्य में लोगों की आर्थिक दशा अच्छी थी। राजा
समृद्धशाली थे। विजय नगर धन से भरा पड़ा था। अब्दुर्रज्जाक ने विजय नगर
के धन धान्य की जो प्रशंसा की है वह अपना स्वयं ही उदाहरण है।

साहित्य तथा कला—साहित्यिक तथा कला के क्षेत्र में जो महान् उन्नति
हुई उसी के आधार पर इस युग को 'हिन्दू संस्कृति का पुनर्जागरण' के युग
नाम दिया गया है। इस समय कई प्रादेशिक भाषाओं की उन्नति हुई राजा संग
तेलुगु, तामिल तथा कन्नड़ सभी भाषाओं को समान रूप से संरक्षण प्रदान करते
थे। इस उदार संरक्षण के कारण इन भाषाओं के उत्तम ग्रंथों की रचना हुई।
माधवाचार्य इसी समय में कार्य कर रहा था इसी प्रकार उसका भाई सायण
जिसने वेदों पर टीका लिखी इसी समय राजसत्ता पा रहा था। इन सम्राटों

कृष्ण देव राय के समय में साहित्य ने बड़ी वृद्धि की और इस क्षेत्र में नवीन कृति दिखाई पड़ी। यह सम्राट स्वयं एक अच्छा कवि, विद्वान् तथा संगीतज्ञ था। इसी कारण से इसका राज दरबार विद्वानों के लिये उचित तथा आकर्षित स्थान था। विद्वान् व्यक्ति, धर्माचार्य, दार्शनिक, कवि कलाकार कृष्ण देवराय को घेरे रहते थे और साहित्य की सेवा में संलग्न रहते थे। वह तेलुगु भाषा का अच्छा लेखक था। उसके दरबार में रहने वाले तेलुगु भाषा के आठ प्रसिद्ध कवि 'अष्ट दिग्गज' कहलाते थे। उसका राज कवि पेड्डना बड़ा ही श्रेष्ठ कवि था। आज भी उसकी गणना तेलुगु भाषा के अति उत्तम कवियों में होती है। विद्या का इतना अधिक प्रचार था कि राज महलों में रहने वाली रानियाँ तक कवितायें करती थीं। उनमें कई उच्च कोटि की कविता करती थीं। इनमें गंगा देवी तथा तिरुमलाम्बा देवी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। प्रथम ने 'मदुरा विजयम' तथा दूसरी ने 'वरदाम्बिका परिणयम' की रचना की थी। अरविदु राजकुल ने भी विद्वानों को आश्रय दिया। सम्राटों के अनेक सम्बन्धी भी अच्छे लेखक होते थे। इन सम्राटों तथा इनके मन्त्रियों द्वारा संगीत, नृत्य, दर्शन तर्क शास्त्र इत्यादि को महान् प्रोत्साहन प्राप्त हुआ और इस युग का गौरव प्राप्त हुआ।

कला – ललित कलाओं को भी इन सम्राटों ने महान् उदारता पूर्ण आश्रय प्रदान किया और इनके समय में कला की बड़ी उन्नति हुई। ये बड़े ही कला प्रेमी थे उन्होंने अनेकों मन्दिर निर्माण कराये। उन्होंने विशाल झीलों, तालाबों तथा नहरों का निर्माण कराया उन्होंने अपने भव्य प्रासादों का भी निर्माण कराया। सम्राटों के राज्य काल में वास्तुकला, चित्रकला ने बड़ी उन्नति की। इस क्षेत्र में एक नवीन शैली का उदय हुआ। कृष्णदेव राय के समय का हजारा मन्दिर आज भी कला का सर्वश्रेष्ठ नमूना है। इसी प्रकार विट्ठल स्वामी का मन्दिर भी कला का सुन्दर उदाहरण है। इस प्रकार ये स्पष्ट है कि विजय नगर के उत्कर्ष के दिनों में भिन्न भिन्न क्षेत्रों में उन्नति हुई। यह साम्राज्य हिन्दू संस्कृति की पवित्रता का रक्षक सिद्ध हुआ। इनके राज्य काल ने हिन्दुओं की राष्ट्रीय भावना को जागृत बनाये रक्खा और मुसलमानों के बढ़ते हुये वेग को बड़ी ही वीरता के साथ आगे बढ़ने से रोका। इन भिन्न भिन्न कारणों से ही विजय नगर युग भारतीय इतिहास में एक विशेष स्थान रखता है।

Q. Referring specifically to the accounts of Huein-Tsang, give an account of the civilization during the age of Harash.

प्रश्न—ह्वानसांग के वर्णन का विशिष्ट रूप से हवाला देते हुये हर्ष युगीन संस्कृति का उल्लेख करो।

उत्तर—गुप्त साम्राज्य का ह्रास छठी सदी की अराजकता तथा पृ का अग्रगामी सिद्ध हुआ उत्तरी भारत अनेकों छोटे छोटे राज्यों में बंट गया ने पंजाब मालवा तथा राजस्थान में अपनी सत्ता स्थापित करली। आगरा में मौखरियों का स्वतंत्र राज्य बन गया। बाकाटों ने भी अपनी सत्ता प्राप्त सतलज तथा यमुना के बीच के प्रदेश में वर्धन राज्य का अभ्युदय इसी वंश ने हर्षवर्धन को जन्म दिया। जिसके महान् कार्यों के कारण ही सदी हर्ष युग के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस महान् सम्राट ने साम्राज्यवादी धारा को पुनर्जीवित किया। चीन तथा भारत के सांस्कृतिक तथा धार्मिक को अविरल गति से बनाये रक्खा। संस्कृति को प्रोत्साहन दिया, महान् आदर्शों को स्थापित किया। नालन्दा विश्व विद्यालय को असीमित दान प्रदा उसकी विश्व विख्यात प्रसिद्धि को बनाये रक्खा। हर्ष युग भारतीय संस्कृ नवीन तथा महत्वपूर्ण युग सिद्ध हुआ। इस अल्पकाल में चारों ओर प्रगति हुई प्रगति के महत्वपूर्ण चीनी यात्री ह्वानसांग के वर्णन से सिद्ध होते हैं।

सामाजिक दशा—ह्वानसांग सन् ६३० में बुद्ध धर्म के ग्रन्थों की करने तथा बुद्ध की पवित्र जन्म भूमि के दर्शन करने भारत में आया और सन् तक यहां रहा उसने भारत के जीवन क्षेत्र के प्रत्येक पहलू का अच्छी प्रकार अ किया और आंखों देखे प्रमाण प्राप्त किये उसने हर्ष युग की मुक्त कण्ठ से प्र की है। वह कहता है कि हिन्दुओं में वर्ण व्यवस्था स्थापित थी। ब्राह्मण क्षत्रिय पवित्र जीवन व्यतीत करते थे। कसाई, मछुवे तथा मह्तर नगर से बा रहते थे और यदि नगर में आते, तो दबे पांव रास्ते के बांये ओर चुप चलते थे।

लोगों की वेश भूषा सादी थी। वह कमर से बगल तक का भाग एक व वस्त्र से ढकते थे और कन्धे खुले रखते थे। शरद ऋतु में तंग बन्डी का प्रयो करते थे। महिलायें एक लम्बा वस्त्र प्रयोग करती थीं जो कन्धों से नीचे तक हो लटका रहता था। आभूषण पहनने का नर तथा नारी दोनों ही को शौक था। हार अंगूठी इत्यादि पुरुष भी खूब पहनते थे। उनका जीवन स्वच्छ तथा पवित्र था, वे हाथ पैर धोकर खाना खाते थे। बासी खाना प्रयोग में नहीं लाया जाता था। दूध, मक्खन, चावल अधिकतर प्रयोग में लाया जाता था। मछली का मांस निषिद्ध समझा जाता था। प्याज तथा लहसन भी बुरा समझा जाता था और वा साधारणतया प्रयोग में नहीं लाया जाता था। मिट्टी तथा लकड़ी के बर्तन एक बार प्रयोग में लाने के बाद फेंक दिये जाते थे परन्तु सोने चांदी और पीतल के बर्तन शुद्ध कर लिये जाते थे। स्त्रियों की दशा अच्छी थी, उच्च कुलों की महिलायें शिक्ष पाती थीं। उनमें पर्दा भी नहीं था। बाल विवाह की प्रथा थी, सती प्रथा भी थी,

विधवा विवाह नहीं होता था। चीनी यात्री आचार विचार का वर्णन करता हुआ कहता है कि लोग सत्यवादी थे, विश्वासघात तथा धोखेबाजी से दूर रहते थे। उनका व्यवहार सरल तथा मधुरतापूर्ण होता था। अतिथि सम्मान उनकी आदत का एक अंग बन चुका था। लोगों में नैतिकता का स्तर बहुत ऊंचा था। वह ईमानदारी से जीवन व्यतीत करते थे। उनका स्वभाव सरल था, उस समय का भारतीय समाज बहुत ही सुन्दर था। यह आनन्द और सुख का जीवन व्यतीत करता था।

आर्थिक दशा—आर्थिक क्षेत्र में भी लोग समृद्धशाली थे। किसी वस्तु की कोई कमी नहीं थी। देश धन धान्य से परिपूर्ण था। देश में अनेकों प्रकार के उद्योग-धन्धे होते थे। सूती, ऊनी, रेशमी वस्त्र तैयार किये जाते थे। कृषि लोगों का प्रधान पेशा था, शिल्पी संघ आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण भाग लेते थे। धन सम्पन्नता के कारण उत्तरी भारत में अनेकों समृद्धशाली नगर थे। बनारस, प्रयाग, कन्नौज इत्यादि बड़े बड़े नगर थे। नालन्दा शिक्षा का केन्द्र था, जहां का विद्यालय संसार में प्रसिद्ध था, लोग बड़े धनी थे, राजा प्रजा की हर प्रकार की सहायता करता था।

धार्मिक दशा—धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता का वातावरण था फिर भी हिन्दू धर्म धीरे धीरे प्रगति कर रहा था और बुद्ध धर्म अपने पतन की ओर अग्रसर था। इस समय अनेकों योगियों तथा तपस्वियों ने अपने भिन्न भिन्न मत चालू कर रक्खे थे। अनेक दर्शन केन्द्र स्थापित हो गये थे। उस समय हिन्दू देवताओं में शिव तथा विष्णु प्रसिद्ध थे। उनके अनेकों मन्दिर स्थापित हो चुके थे जिनमें उन देवताओं की प्रतिमायें रक्खी गई थीं। अब हिन्दू धर्म में अनेकों शाखायें बन गई थीं। दार्शनिक सम्प्रदायों में कपिल तथा कणाद के अनुयायी, आस्तिक तथा लोकायत प्रमुख थे। यह भिन्न भिन्न मतावलम्बी अपने अपने ढंग से सत्य की खोज करते हुये थे। इनकी पूजा विधि भी भिन्न भिन्न प्रकार की थी। अब हिन्दू धर्म के उत्थान के कारण बुद्ध केन्द्रों का ह्रास हो गया था। जैन धर्म अधिक प्रचलित न था। हर्षवर्धन सभी धर्मों का आदर करता था। उसने कन्नौज में एक धार्मिक सभा की जिसमें अनेकों सम्प्रदायों के आचार्य एकत्रित हुये थे। वह प्रत्येक पांच वर्ष के बाद प्रयाग में जाता और हिन्दू तथा बुद्ध धर्मों की विधियों के अनुसार पूजा करता था। उसके बाद वह ब्राह्मणों, बुद्धों तथा गरीब लोगों में धन वितरण करता था। उसके साथ उसकी बहन राजश्री भी दान करती थी। हर्ष द्वारा सूर्य की उपासना भी की जाती थी। उसने बुद्ध स्तूप भी बनवाये। वह नालन्दा के विहार को बहुत धन देता था। उसमें धार्मिक सहिष्णुता बहुत अधिक मात्रा में थी।

साहित्य तथा शिक्षा की दशा—इस समय शिक्षा का अधिक प्रच
बुद्ध मठ धर्म केन्द्र के साथ साथ शिक्षा केन्द्र भी थे। जैसे महान् केन्द्र
गया, मुंगेर, मनिपुर इत्यादि में थे जहां प्रसिद्ध आचार्य शिक्षक का कार्य क
नालान्दा का विद्यालय विश्व प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था। उसकी इमा
मन्जिल की थी तथा बहुत विस्तृत थी। यहां पर अनेकों देशों के विद्यार्थी
प्राप्त करते थे। यहां पर केवल धार्मिक शिक्षा ही न दी जाती थी अपि
विद्या, दर्शन, चिकित्सा की शिक्षा भी दी जाती थी। वहां पर शिक्षा वाद
तथा तर्क वितर्क की प्रणाली द्वारा दी जाती थी। वहां पर बड़े प्रसिद्ध
शिक्षकों का कार्य करते थे। यहां पर शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थी उच्च
आचार विचार तथा नैतिक स्तर रखते थे। उज्जैन भी शिक्षा केन्द्र थ
पर गणित तथा ज्योतिष की शिक्षा का अधिक महत्व था। तक्षशिला चिकि
शिक्षा के लिये प्रसिद्ध था। इनके अतिरिक्त और भी अनेकों नगर शिक्षा के
हुये थे। इस प्रकार देश में शिक्षा की कमी न थी। हर्ष स्वयं भी साहित्
था। वह अच्छा नाटक कार कवि था उसने अनेकों प्रसिद्ध रचनायें कीं। उसके
प्रसिद्ध नाटक हैं। प्रिय दर्शिका, रत्नावली, नागानन्द बाण भट्ट ने 'हर्ष च
तथा 'कादम्बरी' की रचना की थी। आचार्य जयसेन भी उसी का आश्रय
करता था। 'सूर्यशतक' का प्रणेता मयूर भी उसी का राज दरबारी था। इस
हम देखते हैं कि हर्ष का दरबार कवियों, दार्शनिकों, विद्वानों, नाटक कार
कलाकारों का स्थान था। जहां पर साहित्य तथा ज्ञान अविरल गति से ब
रहा था। विद्वानों तथा शिक्षा केन्द्रों को दान देकर हर्ष ने साहित्य तथा शि
बड़ी सेवा की, संस्कृत साहित्य में उच्चकोटि के ग्रंथ लिखे गये। जिन्होंने हर्ष
को अलौकिक गौरव प्रदान किया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हर्ष का युग संस्कृति की वृद्धि के कारण
महत्व का युग बन गया है। इसी कारण से चीनी यात्री ह्वानसांग ने मुक्त
से हर्ष युग की प्रशंसा की है। इस युग की कई महत्वपूर्ण विशेषतायें हैं प्रथ
इसने उन साम्राज्यवादी विचार धाराओं को पुनर्जीवित करने का प्रयास किय
गुप्त सम्राटों के पतन से मर सी चुकी थीं। हर्ष ने राजनैतिक [illegible]
का प्रयत्न किया दूसरे अराजकता का समय होते हुये भी इस [illegible]
शिक्षा की वृद्धि निरन्तर होती रही और नालन्दा जैसे [illegible]
उन्नति की चरम सीमा पर पहुंच गया। हर्ष ने प्रजा पालन को [illegible]
कार्य रूप में परिणित करके दिखाया। इन कार्यों से ही हर्ष का युग भार
इतिहास में एक स्वर्ण पृष्ठ है।

1959

Q. Give a critical account of political and social con
ndia during the rajput age.

प्रश्न—राजपूत युग में भारत की राजनैतिक तथा सामाजिक स्थिति
विवेचनात्मक वर्णन करो।

उत्तर—छठी सदी में गुप्त साम्राज्य के पतन के साथ साथ उत्तरी
त में पृथक्करण की भावनायें जागृत हो चुकी थीं और एकता का सूत्र छिन्न
न हो चुका था परन्तु वह पृथक्करण सीमित ही था और साम्राज्यवादी भावना
रूप से विलीन न हुई थी। इसी कारण से सातवीं सदी में हर्ष ने एक बार फिर
ज्यवादी भावना को उन्नति दी और देश में एकता को स्थापित करने का प्रयत्न
। परन्तु उसकी मृत्यु के साथ साथ प्राचीन काल की भी मृत्यु हो गई
त का प्राचीन वैभवशाली युग जिसके महान् उत्कर्ष को लगभग २० शताब्दियों
खा था, विलीनता के अन्धकार में चला गया और अब अपनी अनेक
अताओं सहित मध्ययुग आरम्भ हुआ। विभिन्नता तथा पृथक्करण इस युग
विशेषता रहीं। सातवीं सदी के मध्यकाल से बारहवीं सदी के अन्त तक का वह
य है जब भारत में अनेकों छोटे छोटे राज्य स्थापित हुये जिनके शासक
पूत थे।

भारतीय इतिहास का यह वह समय रहा जबकि अरुचिकर तथा दुखद
नाओं का तांता बंधा रहा और संघर्ष के पश्चात् सघर्ष होते रहे। भाई की तलवार
भाई का ही गला काटा, इस दुखद नाटक का अन्त तब हुआ जबकि भारत की
तंत्रता का ही अन्त हो गया। राजपूतों के झूठे अभिमान तथा संकुचित दृष्टिकोण
। अधूरी देश भक्ति ने भारत के सुखद जीवन को दुखद बनाया और अंत में यवनों
प्रहारों ने भारत की आजादी का ही अन्त कर दिया। अभिमानी राजपूतों की
लों की भारत को बड़ी कीमत चुकानी पड़ी।

भारत का विभाजन इस प्रकार किया गया। कन्नौज में प्रतिहार तथा
रवार बुन्देलखण्ड में चन्देले, बघेलखण्ड में कलचुरी वंश, गुजरात में चालुक्य,
वे में परमार अजमेर और दिल्ली में चौहान, बंगाल में पाल तथा सेन-सिन्ध
राज कश्मीर में करकोटक तथा उत्पल वंश, कलिंग में केशरी, दक्षिण में
णी के चालुक्य, महाराष्ट्र में मान्यखेत राष्ट्रकूट तथा देव गिरि में यादव वंश
पित थे। इस प्रकार समस्त भारत राजपूत वंशों के आधिपत्य में आ गया था।
वंश अपनी शक्ति आपस में ही लड़ने भिड़ने में व्यर्थ करते रहते थे। इस
काल में विदेशी आक्रमणों का भय उत्पन्न न हुआ और इस कारण से यहां
राजनैतिक क्षेत्रों में से सतर्कता की भावना जाती रही और पांच शताब्दियों के

गये और शासन का आधार जनता का पूर्ण सहयोग न होकर गिने चुने सामन्तों व्यक्तिगत शक्ति रह गई इसलिये शासन शक्ति ठोस न रहकर खोखली हो गई र यवनों के आघातों को सहन करने की इसकी प्राचीन क्षमता जाती रही। राजा ईश्वरीय अंश प्रधान हो गया और राज्य का सम्पूर्ण ढांचा उसकी अपनी कुशलता शक्ति पर निर्भर रहने लगा यदि वह दुर्बल होता था तो सामन्तों के हाथ में के पहुंच जाती थी।

इस समय के अनेकों ग्रन्थों तथा धर्मशास्त्रों से पता चलता है कि राज्य में रशाही स्थापित थी। एक के ऊपर एक पदाधिकारी होता था। अधिकारी के ये कायस्थ का शब्द प्रयोग में लाया जाता था। उस समय के अभिलेखों में यस्थ' शब्द का प्रयोग किया गया है। इन पदाधिकारियों की भर्ती ब्राह्मणों शूद्रों की कुछ जातियों में से की जाती थी। इस प्रकार अधिकारी वर्गों की मुलहड़ों में अटक कर राजा और प्रजा का सम्बन्ध टूट गया था। केन्द्र से दूर ग्रामों में अब भी स्थानीय स्वायत्त शासन कार्य कर रहा था और वंश का वर्तन इस शासन को विशेष रूप से प्रभावित न कर सका। ग्रामों की पंचायतें वानी तथा फौजदारी दोनों प्रकार के झगड़ों का फैसला करती थीं। ग्राम का ख, कर एकत्रित करता रहता था। पटेल तथा पटवारी अपना कार्य करते थे।

अब समाज स्पष्ट रूप से दो वर्गों में विभाजित था प्रथम वर्ग शासकों का र्गत् राजा व सामन्तों का था जो उत्पादन कार्य से अलग था जिसका मुख्य र्य लड़ाई करना रह गया था। दूसरे वर्ग में शेष समाज था जो उच्च वर्ग के ये भोग विलास की सामग्री का उत्पादन करता था और उस समस्त व्यय का भार उठाता था जो सामन्त वर्ग के ऐश्वर्य तथा भोग विलास के लिये वश्यक था।

इस प्रकार सामन्त शाही पर आधारित शासन स्वयं ही अपनी दुर्बलता के चे दबा जा रहा था। जनता से शासन का सम्बन्ध पूर्ण रूप से टूट चुका था र प्राचीन हिन्दू शासन को जनमत की शक्ति का अब पूर्ण रूप से अभाव हो या था। राजा का दुर्बल होना शासन व्यवस्था के लिये एक भय का कारण था सलिये ऐसा शासन भीषण परिस्थिति में टिक नहीं सकता था।

यह आधार भूत कमजोरी ही राजपूत शासन की शत्रु सिद्ध हुई।

सामाजिक दशा—इस दीर्घ काल का समाज प्रधानतया दो वर्गों में वभाजित था। उच्च वर्ग यानी राजपूतों तथा ब्राह्मणों का वर्ग तथा जन साधारण ा वर्ग।

राजपूत स्वयं को विशुद्ध रक्त का मानते थे वह अपने वंशों की उत्पत्ति केसी देवी देवता या ऋषि से जोड़ते थे। सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी इत्यादि इनके वंश

थे। इन कुलीन तन्त्र वंशों के आधार पर राजपूतों ने अपने विशेष अधि कर लिये थे। वंश का अभिमान इनमें कूट कूट कर भरा हुआ था इन्होंने वीं भावना का वह आदर्श स्थापित किया कि आज तक किसी देश के इतिहास इसका उदाहरण नहीं मिलता। यह वर्ग अपना प्रतिज्ञा तथा वचन क आदर करता था। अपनी आन को कायम रखने के लिये ये सदैव तत्पर और अपनी आन बचाने के लिये अपना जीवन तक देने में संकोच नहीं का वह भीषण से भीषण स्थिति में भी अपने आदर्शों से नहीं गिरते थे। जे पराजित होकर उनकी शरण में आता वह भी उनकी क्षमा का भागी होत इस जाति का युद्ध विधान भी न्याय के उच्च नियमों पर आधारित था। भगे शत्रु, बाल तथा स्त्री पर ये वार नहीं करते थे। अपने शत्रुओं को दिये गये का भी यह लोग पूर्ण रूप से पालन करते थे। अपनी स्त्रियों का सम्मान अपनी जान से भी अधिक प्रिय था। राजपूत स्त्रियां भी पति भक्ति में ओत होतीं थीं अपने सतीत्व का पालन करना वह अपना परम धर्म समझती थीं देश भक्ति में अपने पुरुषों से पीछे न थीं। वह युद्ध कौशल में भी निपुण थीं। युद्ध क्षेत्र में वह सिंहनी के समान शत्रु का संहार करती थीं। वह अपने प्रेम को भी राजपूती शान पर न्यौछावर करने में संकोच नहीं करती थीं। रा नारियां शत्रु से अपमानित होने के बजाय आग में कूद कर भस्म होना कहीं अ श्रेयस्कर समझती थीं। अकबर ने चित्तौड़ को विजय करने के पश्चात् नगर को सुनसान पाया था। संकट के समय इन महिलाओं की विलक्षण आभा च उठती थी। ये पति के वियोग में उसके मृत शरीर के साथ सती हो जाती थं उस समय राजपूतों में बहु विवाह की प्रथा थी।

राजपूत अभिमानी थे वह छोटी छोटी घटनाओं के होने पर ही युद्ध उतारू हो जाते थे। जातीय अहंकार ऐसा करने के लिये उनको बराबर प्रेर देता था। कुछ भी हो ये वर्ग वीरता, सत्यपरायणता, वंश की आन को काय रखने का, वह आदर्श स्थापित कर चुका था जिसका उदाहरण विश्व इतिहास ढूंढने से भी नहीं मिलेगा।

इस समय तक आते आते जाति प्रथा कठोर तथा अपरिवर्तनशील हो गई थी। अब चार वर्ण अनेकों जातियों और उपजातियों में विभाजित हो गये। इस जाति विभाजन में जन्म, उद्योग धन्धे, निवास स्थान इत्यादि अनेक तत्व काम कर रहे थे। अब ब्राह्मण वर्ग और अन्य वर्गों में बंट गया जैसे कन्नौजी तथा गौड़ ब्राह्मण। इनके साथ साथ दूसरे वर्गों में भी उपजातियां बनी जैसे जुलाहे, तेली, धुने, धोबी, नाई इत्यादि—इन उपजातियों का आधार, धन्धे थे। अब एक जाति का व्यक्ति स्वतन्त्रता पूर्वक अपना जाति परिवर्तन नहीं कर सकता था इसलिये

प्रत्येक जाति का द्वार अन्य जाति वालों के लिये प्रायः बन्द कर दिया गया। इस कठोरता ने देश को बड़ी हानि पहुँचाई और हिन्दू समाज की प्राचीन पाचन शक्ति खो दी उसमें विदेशियों को अपने में विलीन करने की अथाह शक्ति जाती रही अब समाज की भावना संकुचित होकर सिमट गई और व्यापकता जो विकास के लिये अनिवार्य है जाती रही। अब इस समाज में नवीन तत्वों का मिलना निषिद्ध हो गया और समाज की वृद्धि रुक गई। इस प्रकार विकसित होने की जो प्रवृत्ति प्राचीन हिन्दू समाज में विद्यमान थी और जिसके कारण प्राचीन काल में आये हुए अनेकों विदेशी भारतीय समाज में विलीन हो गये और इस समाज को नवीनता प्रदान की उसका अब लोप हो गया।

परन्तु अभी तक उद्योग धन्धों को बदलने की स्वतन्त्रता अवश्य बनी हुई थी। जुलाहा यदि चाहे तो अन्य पेशा अपना सकता था। इन लोगों के अब भी समुदाय बने हुए थे हालांकि अब उनका अधिकार क्षेत्र उतना विस्तृत न रह गया था। फिर भी पेशों के क्षेत्र में अब भी प्रगति बनी हुई थी।

स्त्री समाज उतना उन्नत न रह गया था परन्तु स्त्रियों का समाज अब भी बहुत था। उच्च घरों में अब भी शिक्षा का रिवाज था। वह पर्दा नहीं करती थीं उस समय के लिखे हुए ग्रन्थ अब तक जो प्राप्त हुए हैं इस विषय में कुछ नहीं बताते। हो सकता है निम्न वर्गों में पर्दा होने लगा हो।

शिक्षित महिलायें कला तथा विज्ञान के क्षेत्र में भी पुरुषों से कम नहीं थीं। वह पुरुषों के साथ तर्क वितर्क में सम्मिलित होती थीं हर्ष की बहन राजश्री विद्वान महिला थी वह धार्मिक वाद विवादों में भाग लेती थी। मण्डन मिश्र की विद्वान स्त्री ने प्रसिद्ध शङ्कराचार्य को वाद विवाद में लाजवाब कर दिया था। प्रसिद्ध विद्वान राजशेखर की पत्नी अवन्ति सुन्दरी अपने पाण्डित्य के लिये प्रसिद्ध थी। इस युग में और भी अनेकों कवित्रियां हुईं जिनमें इन्दुलेखा, मोरिका, शीला, सुभद्रा, पद्मश्री, लक्ष्मी इत्यादि अधिक उल्लेखनीय हैं। उच्च घरों में स्त्रियों को संगीत तथा नृत्य की शिक्षा भी प्रदान की जाती थी। राजपूत महिलायें घुड़ सवारी, हथियार चलाने की शिक्षा भी प्राप्त करती थीं उनमें से अनेकों युद्ध कौशल में पुरुषों का मुकाबला करती थीं। शासन कार्य में भी बहुत सी स्त्रियां कुशल होती थीं। दक्षिण के सोलङ्की नरेश की बहन अक्कादेवी वीर ही नहीं अपितु शासन सञ्चालन में भी बड़ी दक्ष थी। उसने अनेकों अवसरों पर अपनी वीरता के उदाहरण प्रस्तुत किये थे।

बाल विवाह का रिवाज हो गया था। राजपूत बहु विवाह करते थे। विधवाओं का विवाह नहीं हो सकता था। उनका शेष जीवन आनन्द रहित तथा दुःखमय हो जाता था। अनेकों राजपूत कन्याओं को उत्पन्न होते ही मार देते थे।

राजपूत अपनी स्त्रियों को प्रेम करते थे और उनकी मान मर्यादा के लिये अपने जीवन तक की भी परवा न करते थे। राजपूतानियां भी पति के प्रति अगाध भक्ति भाव रखती थीं वह आदर्श जीवन व्यतीत करती थीं। वह स्वयं ही अपने पति को चुनती थीं। राजपूत वीरांगनाओं ने वीरता, पति प्रेम, देश प्रेम के जितने आदर्श प्रस्तुत किये हैं उनका उदाहरण विश्व इतिहास में ढूंढने से भी नहीं मिलते।

परन्तु साधारण तौर से इस समय स्त्रियां अपनी स्वतन्त्रता खो रही थीं समाज में उनका सम्मान घट रहा था उनको वेदाध्ययन से वञ्चित कर दिया गया था और धीरे धीरे स्त्री के अधिकार कम हो रहे थे। वह पति की सेवा के एक यन्त्र समझी जाने लगी थीं। इस प्रकार हिन्दू समाज पतन की ओर अग्रसर हो रहा था।

खान पान में मांस का प्रयोग नहीं होता था। मद्यपान का रिवाज अवश्य था। राजपूत अधिकतर अफीम का प्रयोग करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि भांग पान का प्रयोग भी करते थे।

अब का समाज कुण्ठित हो चुका था। प्राचीन काल की प्रगतिशीलता नवीनता तथा मौलिकता समाप्त हो चुकी थी अब अन्धविश्वासों का समय था। ज्ञान का प्रकाश अन्धकार में बदल गया था जाति प्रथा की अपरिवर्तनशीलता ने समाज को महान हानि पहुंचाई और व्यापक तथा विशाल दृष्टिकोण का स्थान संकीर्णता तथा निशालता ने ले लिया अब असहिष्णुता तथा अनुदारता का विषैला वातावरण फैल गया। रूढ़ीवादी शक्तियां विकसित हुईं और अन्धविश्वास की भीषण घटायें धीरे धीरे विस्तृत होने लगीं। अरब विद्वान् अलबरूनी का कथन है कि "हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि मूर्खता ऐसा रोग है जिसकी कोई औषधि नहीं है हिन्दुओं का विश्वास है कि उनके जैसा देश, उनके जैसे राजा, धर्म, ज्ञान, विज्ञान संसार में और कहीं नहीं है वह घमण्डी हैं और उनमें मूर्खतापूर्ण अहंकार बहुत है वह जो कुछ जानते हैं दूसरों को नहीं बताना चाहते दूसरी जाति वालों और विशेषकर विदेशियों से वह अपने ज्ञान को छिपाने का बहुत प्रयत्न करते हैं उनकी धारणा है कि संसार में ऐसी कोई भी जाति नहीं है जो ज्ञान विज्ञान में उनकी तुलना कर सके यदि उनसे कोई कहे कि खुरासान अथवा फारस में भी विद्वान हैं और उनके पास ज्ञान है तो वह उस व्यक्ति को झूठा अथवा अज्ञानी समझेंगे किन्तु यदि वे यात्रा करते हैं अथवा अन्य देश वासियों के सम्पर्क में आते हैं तो उनके विचारों में परिवर्तन हो जाता है उनके पूर्वज इतने संकीर्ण मस्तिष्क वाले नहीं थे, जितने कि इस पीढ़ी के लोग।"

अलबरूनी का यह कथन स्पष्ट कर देता है कि राजपूत युग का समाज

उदारता छोड़ संकीर्ण हो गया था। उनका विदेशों से सम्पर्क टूट जाने के कारण उनका दिल तथा दिमाग रोग ग्रस्त से हो गये थे। इस गतिहीनता के उदाहरण प्रत्येक क्षेत्र में दृष्टिगोचर होते हैं।

Q. "The Art and Literature of Rajput Age have enriched Indian civilisation"—Examine this statement critically.

प्रश्न - "राजपूत युग के साहित्य तथा कला ने भारतीय संस्कृति को सुसम्पन्न किया है" इस कथन की विवेचनात्मक जांच करो।

उत्तर—राजपूत नरेशों में अनेकों ने साहित्य तथा कला को बड़ा प्रोत्साहन दिया और इस प्रोत्साहन के कारण इन क्षेत्रों में अच्छी उन्नति हुई। कई नरेश तो स्वयं अच्छे विद्वान हुये हैं। राजा मुन्ज अच्छा कवि था। धार का राजा भोज बड़ा ही विद्वान राजा था। वह अनेकों क्षेत्रों में निपुण था। उसने धर्म, चिकित्सा, ज्योतिष तथा व्याकरण इत्यादि पर कई ग्रन्थों की रचना की। उसका राज दरबार विद्वानों का केन्द्र बना हुआ था। उसके उदार संरक्षण के कारण विद्याओं की बड़ी प्रगति हुई। उसके दरबार में हलायुध, धनञ्जय, अमितमति इत्यादि कई विद्वान दरबार की शोभा बढ़ाते थे। काव्य ग्रन्थों में माघ का लिखा हुआ 'शिशुपाल वध' तथा भट्टी द्वारा लिखा हुआ 'रावण वध' हर्ष द्वारा लिखा गया 'नैषधीय चरित्र' उस काल की अद्भुत देन हैं। भर्तृहरि के श्रृंगार, वैराग्य, मुक्तक काव्य के उत्तम उदाहरण हैं। महाकवि जयदेव ने 'गीत गोविन्द' की रचना कर अपनी अलौकिक प्रतिभा दिखाई। इस ग्रन्थ में उच्चतम विचारों की बाहुल्यता है। उस समय कई प्रसिद्ध नाटक भी लिखे गये इनमें 'राम चरित' 'महावीर चरित' तथा 'मालती माधव' प्रसिद्ध नाटक हैं जो कालीदास को छोड़ कर अन्य किसी भी नाटककार की रचना से बहुत ऊंचे हैं। अन्य नाटक कारों में भट्ट नारायण, मुरारी तथा राजशेखर के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें प्रथम ने 'वेणी संहार' दूसरे ने 'अनर्घ राघव' तथा तीसरे ने 'कपूर मंजरी' नामक ग्रन्थों की रचना की थी। संस्कृत के महान लेखक सुबन्धु ने 'वासवादत्त' तथा बाण ने 'कादम्बरी' और 'हर्ष चरित' की रचना की 'दश कुमार चरित्र' की रचना दण्डी द्वारा की गई थी। इस दीर्घ काल में भिन्न भिन्न क्षेत्रों में ग्रन्थ लिखे गये। चन्द्रबरदाई ने 'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज के वीरता पूर्ण कार्यों का वर्णन किया है। इस समय की प्रादेशिक भाषायें अपने उत्कर्ष पर पहुँची। कई ग्रन्थों पर टीकायें तथा भाष्य लिखे गये। विज्ञानेश्वर ने कानूनी ग्रन्थ मिताक्षरा लिखी जिस पर वर्तमान का हिन्दू कानून आधारित है। काम शास्त्र में काम सूत्र पर जिस का प्रणेता वात्स्यायन था प्रसिद्ध भाष्य लिखा गया

तथा कोक पण्डित ने कोक शास्त्र की रचना की। औषधियों के क्षेत्र में प्रसिद्ध वैद्य वाग भट्ट ने 'अष्टांग हृदय' की रचना की। 'सिद्धान्त शिरोमणी' की रचना भास्कराचार्य ने की। इसी युग में राजनीति का प्रभावशाली ग्रन्थ 'शुक्र नीति' का निर्माण किया गया। शंकराचार्य के वेद भाष्य आज भी प्रसिद्ध हैं। मौलिक स्मृतियों के भाष्य भी लिखे गये। संगीत में 'संगीत रत्नाकर' नामक ग्रन्थ लिखा गया। व्याकरण के कई ग्रन्थ बनाये गये जैसे शर्ववर्मा का 'कातन्त्र', हेमचन्द्र का 'सिद्धहेम'। जयदत्त तथा वामन के पाणिनी सूत्रों पर अपने अनुपम भाष्य बनाये। 'वाक्यप्रदीप' 'महाभाष्य दीपिका' तथा 'महाभाष्य त्रिपदि' की रचना भर्तृहरि द्वारा हुई।

काव्य के क्षेत्र में अलंकारों का अधिकाधिक प्रयोग होने लगा। अनेक विद्वानों जैसे अभिनव गुप्त, मम्मट, वामन इत्यादि ने काव्य शास्त्र को उन्नत किया। कथाओं के कई प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखे गये जैसे सोम देव ने 'कथा सरितसागर' क्षेमेन्द्र ने 'वृहतकथा मंजरी' का निर्माण किया। इतिहास के ऊपर भी कई पुस्तकें बनीं। 'राजतरंगनी' में काश्मीर का प्राचीन इतिहास लिखा गया है। इसका प्रसिद्ध लेखक कल्हण था। 'विक्रमांक चरित' में चालुक्य नरेश षष्टम त्रिक्रमादित्य का जीवन चरित्र दिया गया है। इस की रचना विल्हण द्वारा हुई। 'राम चरित' में पाल वंश का इतिहास दिया गया है इसकी रचना सान्ध्यकार नन्दित ने की। इतिहास के क्षेत्र में और भी प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखे गये। 'धनपाल चरित' और 'तिलक मंजरी' उत्कृष्ट श्रेणी की गद्य का दिग्दर्शन करती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि हालांकि सातवीं सदी से बारहवीं सदी तक का लम्बा समय सांस्कृतिक दृष्टि से कुछ अधिक सम्पन्न काल नहीं था फिर भी अनेकों अच्छे ग्रन्थों की रचना हुई जैसे कि प्राचीन समय की सांस्कृतिक स्फूर्ती अब भी प्रवाहित हो रही हो। मौलिक ग्रन्थों की रचना अवश्य कम हुई परन्तु जो टीका तथा भाष्य लिखे गये। वह अपने क्षेत्र में अनुपम तथा अद्भुत थे। विद्वानों ने भाष्यों में विद्वता का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है। इस दृष्टि से इस क्षेत्र में यह युग उतना बुरा नहीं रहा जितना कि कुछ लोग समझते हैं। काव्य, कथा, कानून, संगीत, राजनीति, इतिहास, पद्य तथा गद्य, वैद्यक, विज्ञान इत्यादि ज्ञान के क्षेत्रों में अच्छे ग्रन्थों की रचना की गई।

शिक्षा—इस युग में शिक्षा आचार्यों द्वारा उनके आश्रमों में दी जाती थी। इन आश्रमों के अतिरिक्त बौद्ध विहार शिक्षा के महान केन्द्र थे। नालन्दा विश्व विद्यालय अब भी शिक्षा का बड़ा प्रसार कर रहा था। विक्रमशील, विक्रमपुर, जगधल, ओदन्तपुरी शिक्षा के अन्य महत्व पूर्ण केन्द्र थे। इस प्रकार इस युग में इन केन्द्रों द्वारा समाज सेवा का कार्य चल रहा था।

कला—कला के क्षेत्र में इस युग को दो भागों में बांटा गया है। 'पूर्व राजपूत युग' तथा उत्तर राजपूत युग। प्रथम युग सन् ६०० से सन् ९०० तक था

तथा दूसरा सन् ६०० से १२०० तक का रहा। प्रथम युग में कला उन्नत दशा रही परन्तु दूसरे युग की कला में मौलिकता का अभाव रहा और अलंकारों की रमार रही। कला का मूल तत्व न रहकर कोरा दिखावा या गया। कला सौन्दर्य ा स्थान अलंकारों ने ले लिया। इतना ही नहीं कला में अश्लीलता भी दृष्टिगोचर ोने लगी। यही दशा चित्रकला में भी हुई। इसका भी प्राचीन रूप बदल या। कला में प्राचीन स्वाभाविकता तथा नूतनता का अभाव हो गया। इस प्रकार ला ने भी इस युग की अनेकों दुर्बलताओं का ही दिग्दर्शन किया है। इसमें भी पनी मौलिकता समाप्त हो चुकी थी। कलाकार भी अपने युग की तरह वृद्धता गट कर रहा था।

राजपूत नरेशों ने अनेकों निर्माण कार्य किये। उन्होंने अनेकों राज प्रासाद व्य भवन, तालाब, नहरें तथा मन्दिरों का निर्माण कराया। अनेकों दुर्गों का नेर्माण हुआ। दुर्ग निर्माण कला में इस युग में अच्छी उन्नति हुई। ग्वालियर, चत्तौड़, रणथम्भौर के विशाल और दृढ़ दुर्ग आज भी अपनी प्रतिभा प्रदर्शित रते हैं।

दुर्गों के अतिरिक्त अनेकों मन्दिरों का निर्माण किया गया। इनमें से अनेकों मुस्लिम आक्रमण कारियों के क्रूर हाथों द्वारा धराशाही कर दिये गये परन्तु अनेकों अब भी मौजूद हैं। उड़ीसा का भुवनेश्वर का 'लिङ्गराज' मन्दिर तथा बुन्देलखण्ड में खुजराहों का महादेव मन्दिर बड़े ही कलापूर्ण मन्दिरों के उदाहरण हैं। इनके नेर्माण में भारतीय आर्य शैली काम में लाई गई है। इस शैली में ऊपर का शिखर गुम्बदकार होता है। मूर्ति के चारों ओर चलने तथा परिक्रमा करने के लिये मार्ग बना रहता है तथा उसके सम्मुख चौड़ा वर्गाकार चबूतरा होता है। जहां पर उपासक जन एकत्रित होते हैं। दूसरी शैली चालुक्य प्रणाली है। इसके उदाहरण हालेबिद तथा बेलूर के मन्दिर हैं। इस शैली में निर्मित मन्दिर वर्गाकार न होकर ऊंची कुर्सियों पर टिके रहते हैं। ये कुर्सियां मूर्ति अलकरण के लिये बनाई जाती थीं। इनके शिखर पिरामिड के ऊपरी भाग के समान होते हैं।

तीसरी द्राविड़ शैली है जिसके उदाहरण मामल्लपुरम के रथ, तन्जोर का शिव मन्दिर तथा कृष्णा नदी पर स्थित गुफायें हैं इनको ठोस पाषाण से काटकर बनाया गया है। इनमें मूर्ति के सम्मुख खम्बों पर स्थित विशाल मण्डप का निर्माण किया जाता था। मन्दिर के चारों ओर घेरे में प्रवेश द्वार होते हैं।

इस शैली की मुख्य विशेषता इनके गोपुरम अथवा मुख्य प्रवेश द्वार हैं जो कहीं कहीं देवालय से भी अधिक प्रतिभाशाली बनाये गये हैं। इस शैली में ठोस चट्टानों से काट कर मन्दिर बनाये गये थे। मामल्लपुरम के सात रथ अथवा मन्दिर ठोस चट्टानों से काटे गये हैं और कला के अद्भुत नमूने हैं। एलौरा का

कैलाश मन्दिर भी पूर्ण चट्टान से काटा गया था। इनके अतिरिक्त तन्जौर, कन्
काञ्चि तथा ऐहोल में अनेक प्रसिद्ध मन्दिरों का निर्माण किया गया है। पल्ल
चालुक्य, कदम्ब, होयसल इत्यादि राजवंशों ने अपने अपने समय में बड़े ही क
पूर्ण मन्दिर बनवाये थे।

इन मन्दिरों के अतिरिक्त और भी प्रसिद्ध मन्दिरों का निर्माण क
गया था। सोमनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर, कोणार्क का सूर्य मन्दिर, पुरी में जग
का मन्दिर प्रसिद्ध है। कोणार्क का सूर्य मन्दिर रथ के आकार का है जि
सुन्दर घोड़े जोड़े गये हैं। इसमें अनेकों मूर्तियां निर्मित की गई हैं। राजपूता
आबू और गिरनार के जैन मन्दिर भी उस समय की कला के अच्छे उदाह
हैं आबू में बने हुए दो जैन मन्दिर पूर्णतया संगमरमर के बने हुए हैं दोनों
अलंकारों की भरमार है जो अति उत्तम श्रेणी की है।

इस प्रकार इस काल में उत्तरी तथा दक्षिणी भारत में अनेकों सुन्
मन्दिरों का निर्माण किया गया था।

मूर्ति कला—इस काल में मूर्ति कला का भी विकास हुआ अनेकों प्रति
मूर्तियां बनाई गईं पाल नरेशों के संरक्षण में दो प्रसिद्ध कलाकार धीमान त
वितपालो ने अपनी कला के सुन्दर नमूने प्रस्तुत किये अनेकों प्रतिमायें हिन्दू दे
देवताओं तथा बुद्धजी की बनाई गईं। इस काल की मूर्तियों की यह विशेषता
कि घटनाओं के विशाल दृश्य दिखाये गये हैं इस अलंकरण के लिये सौ फी
ऊंची विशाल चट्टानें तक चुनी जाती थीं जिन पर अनेकों पौराणिक दृश्य बना
जाते थे। मूर्तियों में शृङ्गार की प्रधानता दिखाई पड़ती है मन्दिरों में नाग कन्याओं
की मूर्तियां बड़ी ही सौन्दर्य पूर्ण हैं उनके मुख मण्डल की आभा बड़ी ही रोचक
और आकर्षक है। मूर्तियों के चुनाव करने में कलाकार ने अवश्य ही अपनी
मौलिकता का उदाहरण प्रस्तुत किया है। महान देवताओं के चित्रण से लेकर
साधारण दृश्य तक अंकित किये गये हैं। माता का प्रेम, पत्र लिखती हुई स्त्री
की भावपूर्ण आकृति भी मूर्तियों में दिखाई पड़ती है। राधा कृष्ण क्रीड़ा, रावण
द्वारा कैलाश पर्वत का उठाया जाना बड़े ही चातुर्य से दिखाई गई हैं।

कहीं कहीं मूर्तियों में अश्लीलता अवश्य आ गई है। इस युग का कलाकार
अपनी मौलिकता को छोड़ अलङ्कारों की भूल भुलैया में गुम होता हुआ
प्रतीत होता है। एक बात अवश्य रही कि इस समय की मूर्तियों में मुख मण्डल
की आभा तथा शरीर का गठन बड़ा ही आकर्षक बनाया गया है।

इस प्रकार इस युग की कला ने भी उस प्रगति का अभाव प्रगट किया जो
भारतीय कला का एक विशेष गुण रहता था। युग के साथ साथ कलाकार भी
अपनी मौलिकता तथा नवीनता और पवित्रता खो बैठा।

जैन धर्म—कभी भी अपने यौवन काल में भी जैन धर्म भारत में लोकप्रिय न हो पाया था परन्तु इस धर्म के लोग प्राचीन काल में स पूर्वक अपने धर्म का पालन करते थे। क्योंकि उस समय धार्मिक क्षेत्र में स का वातावरण रहता था। अब वातावरण विषैला तथा संकुचित होने के कार धर्म को अनुकूल वातावरण मिलना बन्द हो गया और इस कारण से प्रभाव भी कम हो गया था। कुछ दिन तक पश्चिमी चालुक्यों तथा दक्षिण के कूटों ने इसको आश्रय दिया परन्तु उनके पश्चात् इस धर्म को हानि उठानी अब यह धर्म केवल राजस्थान गुजरात तथा उत्तरी भारत के कुछ स्थ शेष रह गया है।

हिन्दू धर्म - ईसा से छठी शताब्दी पूर्व धार्मिक संघर्षों का युग हुआ था। हिन्दू धर्म के कठोर नियमों की घोर प्रतिक्रिया हुई और यह प्रति बढ़ती ही चली गई इस प्रतिरोध की भावना ने बुद्ध धर्म, जैन धर्म अन्य बहुत से समुदाय उत्पन्न किये जो कालोपरान्त नष्ट हो गये थे। बुद्ध तथा जैन धर्म मैदान में बने रहे परन्तु यह बौद्ध धर्म ही था जिसने समस्त भ तथा विदेशों में अपना उत्कर्ष किया और हिन्दू धर्म को पछाड़ा परन्तु गुप्तकाल घटना चक्र ने पलटा खाया उसका क्रम बदला और हिन्दू धर्म का फिर से उ हुआ। इसमें फिर से स्फूर्ति आई और बुद्ध धर्म का ह्रास होने लगा था। हि धर्माचार्यों ने हिन्दू धर्म को एक नवीन प्रगति प्रदान की और इसकी लोकप्रि फिर से सजग हो गई। उन लोकप्रिय सिद्धान्तों को हिन्दू धर्म में स्थान दि गया जिनके कारण बुद्ध धर्म ने उन्नति की थी।

अब अवतारवाद का सिद्धान्त जो गुप्तकाल में दृढ़ हो चुका था अधि व्यापक बन गया। छठी शताब्दी के आते आते बुद्धजी को भी विष्णु का अवता मान लिया गया और बुद्धजी के उपासकों को भी हिन्दू धर्म में आने के लिये खुल गया और हिन्दू धर्म के दर्शन शास्त्र की कठोरता सरलता में बदल गई इष्ट देव के प्रति अगाध भक्ति तथा श्रद्धा ने भक्ति सिद्धान्त को प्रेरणा दी और भक्ति मार्ग की उन्नति हुई।

वैष्णव धर्म—राजपूत युग में आते आते हिन्दुओं के दो ही प्रमुख देव रह गये यह थे विष्णु तथा शिव। विष्णु लोक कल्याण के देवता थे। वे संसा के दुःखों का निवारण करने वाले थे। अब ऐसा माना जाने लगा था कि विष्णु देवता सदा लोगों के कष्ट निवारण करने के हेतु अवतार धारण करते हैं राम ने राक्षस रावण का विनाश करने के लिये ही अवतार धारण किया था। इसी प्रकार विष्णु ने महाभारत काल में कृष्ण का अवतार धारण कर कौरवों का संहार किय था। इस युग में लोगों की ऐसी धारणा बन चुकी थी कि जब पृथ्वी पर पा

भिन्न बढ़ जाते हैं तो विष्णु अवतार धारण करते हैं। इस प्रकार विष्णु सम्प्रदाय अन्य छोटे छोटे वर्गों में विभाजित हुआ। विष्णु भक्त रामानुज ने बारहवीं सदी 'श्री सम्प्रदाय' की स्थापना की। तेरहवीं सदी में माधवाचार्य ने अपना अलग सम्प्रदाय चलाया। इस प्रकार विष्णुमत के लोग भी अन्य सम्प्रदायों में भाजित हो गये।

शैव धर्म—छठी सदी के अन्त तक शैव मत काफी विकसित तथा विस्तारित हो चुका था। अब समय के साथ साथ इसमें अनेकों सम्प्रदाय स्थापित हुए। अपूत युग की विशेषता विभाजन में ही है। फिर धार्मिक क्षेत्र इस पृथकरण की भावना से कैसे प्रभावित न होता। अब शिव पूजक अनेकों सम्प्रदायों में विभाजित हो गये जिनमें प्रमुख ये हैं—पाशुपत, कापालिक, कालमुख, शैव, वीरशैव या लिङ्गायत इन भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के सिद्धान्त भिन्न भिन्न हैं और यह शिव को भिन्न भिन्न रूप देते हैं।

पाशुपत सम्प्रदाय के लोग सिद्धि तथा ज्ञान प्राप्ति के लिये शरीर पर भस्म लगाते हैं और ऐसे कार्य करते हैं जिनका सांसारिक लोग बुरा तथा निन्दा पूर्ण समझते हैं इस प्रकार के साधु सिद्ध कहलाते हैं।

कापालिक तथा कालमुख—ये लोग बड़ी ही भयङ्कर क्रियायें करते हैं शिव के प्रति इनकी कल्पना बड़ी ही भयानक है ये शिव को खाल पहने हुए, गले में मनुष्यों की खोपड़ियों से बनी हुई माला धारण किये हुए तथा भूत प्रेतों से घिरे हुए, श्मशान भूमि में भ्रमण करते हुए देखते हैं। ये लोग चिताओं की राख अपने शरीर पर मलते हैं। मनुष्य की खोपड़ी लिये रहते हैं उसी में भोजन करते हैं अपने पास शिव की मूर्ति रखते हैं और उसकी उपासना करते हैं। ये समुदाय बड़ा ही उग्र है और इनको देखकर भय उत्पन्न होता है।

'शैव सम्प्रदाय' इस सम्प्रदाय के साधु विभिन्न होते हैं शिव की पूजा मन्त्रों प्राणायाम द्वारा करते हैं ये शिव को शिव लिङ्ग के रूप में पूजते हैं। इस धर्म के दार्शनिक भाव बड़े ही उच्च होते हैं। नवीं तथा दसवीं शताब्दियों में इस मत ने बड़ी उन्नति की तथा दक्षिण में भी इसका अच्छा प्रसार हुआ।

वीर शैव—इस सम्प्रदाय के अनेकों सिद्धान्त दो विशेष शब्दों में निहित हैं प्रथम शब्द है 'षट्वर्मन' इसका अर्थ है 'शाखवों परिस्थिति' दूसरा शब्द है 'पञ्चस्थल' इसका अर्थ है मुक्ति की छै अवस्थायें इस सम्प्रदाय के लोग न तो पुनर्जन्म को ही मानते हैं न वेदों की प्रमाणिकता को। ये लोग ब्राह्मणों से घृणा करते हैं ये बालविवाह का विरोध तथा विधवा विवाह का समर्थन करते हैं जाति प्रथा में भी इनका विश्वास नहीं है ये अपने मृतकों को दफनाते हैं। इनका विश्वास तप, तीर्थ यात्रा या श्राद्ध इत्यादि में बिल्कुल नहीं है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि शिव धर्म भी अनेकों सम्प्रदायों में बंटा हुआ था जिनके सिद्धान्त पूर्ण रूप से एक दूसरे से भिन्न थे। शिव देवता ही अवश्य सबका इष्टदेव था और भिन्नता ही भिन्नता थी।

शक्ति सम्प्रदाय—इस सम्प्रदाय के लोग शक्ति की भिन्न भिन्न उपासना करते हैं। दुर्गा, काली आदि इसके रूप हैं। शक्ति देवी को शिव मान लिया गया। आगे चलकर शक्ति को संहारक रूप दे दिया। इन लोगों को प्रसन्न करने के लिये पशु तथा नरबली भी आरम्भ कर दी। इनका वि कि मन्त्रों तथा योग द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार की अलौकिक शक्तियां प्र जा सकती हैं।

तन्त्रवाद्—राजपूत काल में तन्त्रवाद का भी प्रचार किया गया। त के अनुसार यह माना जाता है कि मानव शरीर में अनेकों अलौकिक शक्तियां रूप में विद्यमान रहती हैं जो मन्त्रों द्वारा जाग्रति की जा सकती है। इस तन का यह फल हुआ कि लोगों में जादू टोने तावीज टोटका इत्यादि का प्र हो गया।

इस युग में कई अलौकिक विद्वानों का जन्म हुआ जिन्होंने अपने प्र पाण्डित्य का देश भर में सिक्का बैठाया इनके द्वारा हिन्दू धर्म की धाक जि जमी और बुद्ध धर्म का पतन हुआ। इन धर्म आचार्यों ने नवीन हिन्दू धर्म स्थापना की और भारतवर्ष में एक बार फिर हिन्दू धर्म की विजय पताका फ लगी। फिर से जन साधारण के झुण्ड के झुण्ड जो प्राचीन काल के हिन्दू धर्म विमुख हो गये थे, आकर इस धर्म में सम्मिलित हो गये। हिन्दू धर्म के प्राचीन प्रसार में इस युग के धर्माचार्यों का बड़ा हाथ था। इनमें शंकराचा कुमारिल भट्ट का स्थान बड़ा ही ऊंचा है जिनके महान प्रयत्नों से हिन्दू धर्म रक्षा की और उसका प्रसार किया।

कुमारिल भट्ट—कुमारिल ने मीमांसा के सिद्धान्तों का प्रचार किया मीमांसा कर्मकाण्ड से सम्बन्ध रखता है यज्ञ आदि विधियों को ठीक प्रकार से स करना ही मीमांसा का विषय है। सातवीं तथा आठवीं शताब्दियों में मीमांसा का बड़ा प्रचार रहा। कुमारिल ने मीमांसा को बौद्धों के आक्षेपों से बचाया और इसके सिद्धान्तों को सरलता से समझा कर जन साधारण में फैलाया मीमांसा वैदिक धर्म का प्रतिरोध था। धीरे धीरे मीमांसा का इतना अधिक प्रचार हुआ कि वह कर्म काण्ड ही धर्म प्रतीत होने लगा तब इसकी प्रतिक्रिया हुई और इसके सीम सिद्धान्त को शंकराचार्य ने चुनौती दी शंकराचार्य के दार्शनिक सिद्धान्तों की फिर से स्थापना की।

शंकराचार्य—यह दक्षिणी भारत में जन्म लेने वाला महानाचार्य बड़ी ही तीव्र तथा अलौकिक बुद्धि का व्यक्ति था। उसने अद्वैतवाद का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार परमात्मा तथा आत्मा में कोई भेद नहीं। ब्रह्म ही सत्य है ब्रह्म के अतिरिक्त समस्त माया ही माया है। यह माया ब्रह्म की छाया मात्र है और उसका बाहरी रूप ही है ब्रह्म ही मूल तत्व है जो अमर है शेष सो सब नाशवान है और व्यर्थ है। ब्रह्म ही परम सत्य है और सब तो एक धोखा ही है यह धोखा सच्चे ज्ञान के प्रकाश के आते ही विनाश को प्राप्त होता है। सच्चा ज्ञान ही ब्रह्म तक पहुँचाने का एकमात्र उपाय है। उन्होंने सन्यास आश्रम को ही पवित्र माना है गृहस्थ आश्रम उनकी दृष्टि में व्यर्थ है। उन्होंने अपने सिद्धान्त द्वारा जीवन के प्रति उदासीनता का भाव उत्पन्न किया। हिन्दू वर्ण व्यवस्था का उनके द्वारा महान समर्थन किया गया।

शंकराचार्य केवल सिद्धान्तवादी ही न थे अपितु व्यावहारिक सुधारक भी थे। उन्होंने धर्म से उन तत्वों को दूर करने का प्रयत्न किया जो तन्त्रवाद तथा शक्तिवाद के कारण उत्पन्न हो गये थे। उन्होंने सब से अधिक महत्व पूर्ण कार्य उन मठों की स्थापना करके किया जिनके द्वारा धर्म प्रचार बड़ी प्रगति के साथ आगे बढ़ा। ये मठ चार थे जो समस्त भारत में स्थापित किये गये थे। उत्तरी भारत में बद्रीनारायण का मठ, पूरब में जगन्नाथ पुरी, पश्चिम में द्वारका तथा दक्षिण में शृंगेरी का मठ थे। इन मठों के धर्माध्यक्ष स्वयं शंकराचार्य थे। इन मठों के साथ साथ साधु संयासियों के संघ भी शंकराचार्य द्वारा स्थापित किये गये थे। ये मठ तथा साधुओं के संघ शंकराचार्य के सिद्धान्तों का प्रचार करते थे और हिन्दू धर्म का प्रभुत्व स्थापित किये रहते थे। मठों, साधुओं के संघ के अतिरिक्त मन्दिर महाविद्यालय भी शंकराचार्य के उपदेशों, सिद्धान्तों का प्रचार करते थे। इनमें बड़े पैमाने पर जो शिक्षा दी जाती थी उसका मुख्य भाग धर्म से सम्बन्धित था। अब बौद्ध दर्शन की शिक्षा को अलग कर दिया गया और उसका स्थान हिन्दू दर्शन ने ले लिया। इस प्रकार इस महान व्यक्ति के प्रयत्नों से हिन्दू धर्म फिर से ऊपर उठा और बौद्ध धर्म को पीछे छोड़ फिर से लोक प्रिय हो गया। इस विषय में के० एम० पणिक्कर (K. M. Pannikar) का कथन, कि शंकराचार्य के ये प्रयत्न हिन्दू सुधारवादी आन्दोलन (Hindu Reformation) थे। बड़ी सीमा तक उचित ही है। शंकराचार्य के निरन्तर प्रयास ने हिन्दू धर्म को सुदृढ़ बनाया। उसने देश का भ्रमण कर जगह जगह लोगों के दिलों में हिन्दू धर्म के लिये उत्साह भरा।

इस प्रकार हिन्दू धर्म में नवीन लोक प्रिय सिद्धान्त जोड़ दिये गये जैसे आत्मा, परमात्मा, अवतारवाद, माया, अहिंसा का सिद्धान्त, सब को एकत्रित कर दिया गया। लोक प्रिय क्रिया, विधियों को लागू किया गया। बुद्ध जी को विष्णु

जी का अवतार मान बौद्धों के लिये भी हिन्दू धर्म में आने के लिये द्वार खोल दिये गये। नवीन रूप से दर्शन को प्रस्तुत किया गया। अब समस्त भारत में हिन्दू धर्म विस्तारित हो गया। समस्त देश में हिन्दू देवी देवताओं की उपासना होने लगी। राम, कृष्ण की पूजा के साथ साथ उनकी कथा समस्त देश में जन साधारण में फैल गई। रामायण और महाभारत का बड़ा प्रचार हुआ। शिव मत के हिन्दू शिव की उपासना करने लगे। विष्णु और शिव के नाम पर उनके उपासकों द्वारा अनेक मन्दिरों का निर्माण हुआ और देश में मन्दिरों की भरमार हो गई। तीर्थ यात्रा का प्रचलन बढ़ा और लोगों के हृदयों में हिन्दू धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न हो गई। यही नवीन धर्म था जो आज तक चला आता है।

इस प्रकार इस युग में धार्मिक क्षेत्र में भी आपसी मत भेदों की अधिकता रही प्रत्येक साधु सन्यासी अपनी डफली अलग ही पीटने लगे। बौद्ध धर्म मत भेदों का केन्द्र होने के कारण अपकर्ष को प्राप्त हो गया। हिन्दू धर्म में अनेक सम्प्रदाय बने। एक शिव के उपासकों में ही कापालिक, घोर शैव, शैव इत्यादि समुदाय निर्मित हो गये। कुमारिल भट्ट ने मीमान्सा पर जोर दिया तो शंकराचार्य ने इसका विरोध किया। अर्थात यह कथन सत्य ही है कि राजपूत युग का धर्म भी युग की प्रथकरण की भावना से प्रभावित हुये बिना न रहा। इस क्षेत्र में भी युग की विशेषता का गहरा प्रभाव पड़ा और युग की अन्तरात्मा धर्म में भी प्रविष्ट हो गई। ये युग राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक प्रत्येक क्षेत्रों में ही विभिन्नता। प्रथकता का युग सिद्ध हुआ। ये विशेषतायें ही युग की दुर्बलता सिद्ध हुई और इस युग के समाप्त होते होते ही यह महान प्रदेश यवनों द्वारा पदद‌लित किया जाने लगा और इसकी स्वतन्त्रता का अन्त कर दिया गया।

Q. How did the Hindu and Muslim culture come in contact and influence each other in political and social spheres?

प्रश्न—भारत में मुस्लिम शासन स्थापित होने के पश्चात, हिन्दू तथा मुस्लिम संस्कृति ने एक दूसरे को राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्र में किस प्रकार प्रभावित किया ?

उत्तर—राजपूत युग में अपनी विभिन्नकरण तथा प्रथकरण की विशेष भावनाओं के कारण देश अपनी स्वतन्त्रता खो बैठा और भारत में विदेशी शासन का सूत्र पात हुआ। अब भारतीय राजनीति तथा समाज को ऐसे यवनों से टक्कर लेनी पड़ी जो अब तक आये हुये यवनों से भिन्न थे। इन नये आये हुये मुसलमानों की संस्कृति मूलतः ही एक विरोधी संस्कृति थी। अब भारतीय संस्कृति को इस निर्दिष्ट तथा विरोधी संस्कृति से संघर्ष तथा समन्वय करना था। प्राचीन काल

जब भी यवनों की धारायें यहां आईं वह धीरे धीरे भारतीय संस्कृति की विशाल गंगा में समावेश हो गई थी। परन्तु अब ऐसा न हो सका। मुस्लिम संस्कृति अपनी एक निर्दिष्टता रखती थी। वह उग्र थी, उसमें कठोरता थी, वह स्वागत पूर्वक भारतीयता में विलीन न हो सकी।

प्रथम बार मुस्लिम लोग सातवीं सदी के अन्त में मालाबार के समुद्र तट पर बसे थे। इसके पश्चात इन मुसलमानों का व्यापार वृद्धि करता गया और यह समृद्धशाली होते गये। वहां इन को अपने धर्म को स्वतन्त्रता पूर्वक पालन करने की आजादी थी। और वे उसका प्रसार भी कर सकते थे। नवीं शताब्दी के अन्त होने के पूर्व ही ये लोग पश्चिमी तट पर फैल गये और ये बराबर हिन्दुओं के सम्पर्क में आते रहे। दक्षिण के अनेकों राजाओं ने इन को प्रत्येक प्रकार की सुविधायें प्रदान कीं। वल्लभी राजाओं ने तो इनके लिये मस्जिदें तक बनवाईं और इनको सरकारी पद तक प्रदान किये। दसवीं सदी में मुसलमान भारत के उत्तरी तट पर भी फैल गये और वहां भी इनका व्यापार उन्नत हुआ और उनके नेता मन्त्री जल सेनाध्यक्ष राजदूत जैसे महत्वपूर्ण पदों पर रक्खे गये और जन साधारण कृषक बन गये। इन्होंने मस्जिदों का निर्माण कराया, मजार बनवाये और शान्ति के साथ अपने धर्म का प्रसार किया। इनके कब्रिस्तान धर्म प्रचारकों के केन्द्रों का काम देने लगे। परन्तु यह सब कार्य शान्ति पूर्ण ढंग से ही चला।

दूसरी ओर मुहम्मद बिन कासिम ने सन् ७१२ में सिन्ध तथा मुल्तान को जीत लिया परन्तु ये राजनैतिक विजय स्थाई सिद्ध न हो सकी और जल्दी ही मुसलमानों के हाथ से सत्ता निकल गई। राजनैतिक दृष्टिकोण से अरबों की यह विजय व्यर्थ थी परन्तु इसके कुछ सांस्कृतिक प्रभाव अवश्य हुये। अरबों ने भारत से दर्शन, ज्योतिष, गणित, चिकित्सा, विज्ञान, रसायन शास्त्र इत्यादि के अनेकों सिद्धान्त सीखे और फिर इन सिद्धान्तों को योरप को दिया। इनके द्वारा भारतीय ज्ञान योरोपीय प्रदेशों में गया। अब तक मुस्लिम तथा हिन्दू संस्कृति विशेषरूप से एक दूसरे के सम्पर्क में न आई थी। अब तक तो एक दूसरे की झांकी मात्र ही पड़ी थी। दोनों संस्कृतियों का असली सम्पर्क उस समय आरम्भ हुआ जब मुस्लिम विजेताओं ने भारत में अपना शासन स्थापित कर राजनैतिक सत्ता को हड़प कर लिया और अनेकों मुस्लिम शासकों ने इस्लाम धर्म के प्रसार में पूर्ण शक्ति से योग दिया। महमूद गजनवी ने भारत पर अनेकों आक्रमण किये परन्तु उसने भारत में कोई राज्य स्थापित नहीं किया फिर भी वह एक महत्वपूर्ण अग्रदूत सिद्ध हुआ जिसके द्वारा भारत की दुर्बलता नग्न हो गई और उसके पश्चात मुस्लिम आक्रमणों का तांता बंध गया और ११९२ ई० में तराइन के द्वितीय युद्ध में दिल्ली नरेश पृथ्वीराज को पराजित कर मुहम्मद गौरी ने भारत में अपना वाईसराय कुतुबुद्दीन को

नियुक्त कर दिया। इसी ने सन् १२०६ में गुलाम वंश की स्थापना कर भारत में प्रथम बार मुस्लिम राज्य का सूत्रपात किया इस प्रकार भारत की राजनैतिक सत्ता मुस्लिम शासकों के हाथ में चली गई और अब हिन्दू तथा मुस्लिम संस्कृतियों का प्रत्यक्ष रूप से सम्पर्क आरम्भ हुआ।

आरम्भ में दोनों संस्कृतियों में संघर्ष रहा परन्तु ऐसा संघर्ष स्थाई नहीं हो सकता था। दोनों में समन्वय होना आवश्यक था। यह समन्वय हुआ परन्तु इस समन्वय के विषय में विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। दोनों संस्कृतियों के परस्पर प्रभाव की समस्या एक विवाद का विषय है। कुछ विद्वान कहते हैं कि हिन्दू संस्कृति ने ही अपेक्षाकृत मुस्लिम संस्कृति को प्रभावित किया है और अपनी गहरी छाप मुस्लिम संस्कृति पर लगाई है। हैवेल (Havell) जैसे विद्वान ने कहा है कि अपनी राजनैतिक कमजोरी के होते हुये भी भारत की संस्कृति इतनी महान् थी कि उस पर विजय प्राप्त करना सरल काम न था। मुसलमानों ने भारत में हिन्दू राजाओं का मान मर्दन किया। उनकी राजधानियों को लूटा और नष्ट भ्रष्ट किया उन पर अपना आधिपत्य स्थापित कर मुस्लिम विजय की पताका फहराई पर यह राजनैतिक विजय थी और राजनैतिक ही रही, हिन्दुओं के मस्तिष्क तथा अन्तर आत्मा पर मुस्लिम सेनायें विजय प्राप्त न कर सकीं और हिन्दू संस्कृति अडिग बनी रही।

इस मत के विपरीत दूसरा मत यह है कि हिन्दू संस्कृति एक बड़ी सीमा तक मुस्लिम रीति रिवाज आचार विचार, प्रथाओं इत्यादि से प्रभावित हुई है। इस मत का प्रतिपादन डाक्टर ताराचन्द (Dr. Tara Chand) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Influence of Islamon Hindu culture' में किया है। उनका कहना है कि मुस्लिम प्रभाव के कारण हिन्दू धर्म कला साहित्य तथा विज्ञान में ही परिवर्तन नहीं आया अपितु हिन्दू संस्कृति की भावना तथा हिन्दु मस्तिष्क की सामग्री ही परिवर्तित हो गई। इस मत के अनुसार मुस्लिम प्रभाव ने हिन्दू संस्कृति को मूलतः बदल दिया। परन्तु इस मत में कुछ अधिक तत्व दिखाई नहीं देता और यह मत हालात से अधिक प्रमाणित नहीं होता।

जवाहरलाल नेहरू ने भी हिन्दू संस्कृति के महत्त्वपूर्ण प्रभाव को इस प्रकार प्रगट किया है कि मुसलमान विजेता भारतीयता में ही विलीन हो गये। उनके धार्मिक विचार भी पूर्णतया बदले और भारत को अपना देश मान शेष समस्त विश्व को विदेश मानने लगे। इस प्रकार मुस्लिम संस्कृति भारतीयता के अथाह सागर में मिल गई। परन्तु जदुनाथ सरकार (Jadunath Sarkar) का मत इसके विपरीत है उनका कहना है कि मुसलमान सदियों के दीर्घ समय के सम्पर्क के पश्चात् भी मक्के को अपना तीर्थस्थान मानते रहे। अपने स्वयं के रीति रिवाजों

त्था कानूनों और अपनी प्रथाओं में ही चिपटे रहे। भारत की भूमि उनको गैरों की भूमि ही लगती रही। हिन्दुओं के उदार व्यवहार के होते हुये भी मुसलमानों ने अपने धर्म में किसी प्रकार का परिवर्तन भी सहन न किया। उन्होंने हिन्दुओं की उन रुढ़ियों को नहीं अपनाया जिनके बिना हिन्दू धर्म प्रवेश असम्भव था। मुस्लिम समाज सर्वथा अपनी विशेषताओं के लिये हिन्दू समाज से पृथक ही बना रहा। अब तक आये हुये यवनों में मुसलमान ही ऐसे थे। जिन्होंने भारत में रहते हुये भी भारतीय धर्म के विरुद्ध जिहाद छेड़ा और यहां के दुर्बल व्यक्तियों को धर्म परिवर्तन करने के लिये बाध्य किया। मुसलमानों ने सदियों तक अपनी पृथक परम्पराओं को कायम रक्खा वह भारत में रहकर भी भारत के न हो सके।

इस प्रकार दोनों संस्कृतियों का समन्वय एक विवाद ग्रस्त समस्या रही है परन्तु इन भिन्न भिन्न मतों के अतिरिक्त एक बीच का मत भी है और वह मत ही अति प्रभावशाली तथा युक्ति पूर्ण प्रतीत होता है। इस मत के अनुसार दोनों संस्कृतियों ने ही एक दूसरी को अपनी अपनी विशेषताओं द्वारा प्रभावित किया है। एक धर्म का दूसरे पर प्रभाव पड़ा है। राजनीति, विज्ञान, चिकित्सा मनोविज्ञान ज्योतिष गणित इत्यादि अनेक क्षेत्रों में यह आपसी प्रभाव आज भी दृष्टिगोचर होता है।

राजनैतिक क्षेत्र

मुस्लिम विजेताओं ने भारत की आपसी फूट से लाभ उठा इस महान् देश की राजनैतिक सत्ता पर अधिकार कर लिया। स्वाभाविक ही था कि मुसलमान राजा यहां के प्रभावशाली हिन्दु तत्वों को अपना घोर शत्रु समझते हैं। इसी कारण इन लोगों का प्रत्येक रूप से दमन किया। जजिया जैसा धार्मिक कर लगाकर हिन्दुओं की धार्मिक भावना को ही चोट नहीं पहुँचाई अपितु उनकी आर्थिक स्थिति को भी दयनीय बनाने का प्रयास किया। उनको उच्च पदों से वंचित कर उनको शासन में भाग न लेने के लिये विवश किया गया। उनका घोर अपमान किया। उनको अविश्वास पात्र घोषित किया। जैसे बलबन ने तो स्पष्ट रूप से हिन्दुओं को अविश्वासनीय करार दिया। उसने समस्त उच्च पदों से हिन्दुओं को पृथक कर दिया। इसी प्रकार अलाउद्दीन खिलजी ने गंगा, यमुना के बीच में रहने वाले हिन्दुओं पर अतिरिक्त कर लगाये। उनकी स्थिति दासों जैसी बना दी। उनको घोड़े पर सवारी करने सुन्दर वस्त्र धारण करने, शस्त्र रखने इत्यादि की मनाई कर दी उन पर अनेकों प्रतिबन्ध लगाये और उनको यातनायें पहुंचाई। इन सबका यह प्रभाव हुआ कि हिन्दुओं में दुर्बल तत्व घबराकर मुस्लिम धर्म में परिवर्तित हो गये। हिन्दू धर्म की प्रतिभा प्रायः नष्ट होने लगी और राजनैतिक वातावरण पूर्ण रूप से उनके विपरीत हो गया।

यह सब कुछ होते हुये भी हिन्दुओं का राजनैतिक क्षेत्र में जो भी स्थान था समूलतया नष्ट न किया जा सका और जिस सीमा तक कट्टर शासक बढ़े इससे आगे बढ़ना उनके लिये सम्भव ही न था अन्यथा मुस्लिम उग्रता और आगे बढ़ने का प्रयत्न अवश्य करती। उच्च पदों पर तो मुसलमान राज अधिकारी रख दिये गये। परन्तु निम्न श्रेणियों के पद पर हिन्दू ही आरूढ़ रहे। पटवारी, व्यय लेखक इत्यादि छोटे पदों पर हिन्दू ही रहते रहे। प्रान्त पति, न्यायधीश उच्च पद मुसलमानों के लिये ही थे। परन्तु न्याय करते समय मुस्लिम न्याय के साथ हिन्दु पण्डित भी बैठते थे इसलिये नौकरशाही में हिन्दु प्रभाव बना रहा और राजनैतिक क्षेत्र में धीरे धीरे सहयोग की भावना दृष्टिगोचर होने लगी।

मुस्लिम शासन का प्रभाव ग्रामों के शासन में उतनी व्यापकता से नहीं जितना नगरों के शासन में। ग्रामो में अब भी पंचायतें पूर्व की तरह कार्य कर रहीं। इतना ही नहीं अपितु आवश्यकतानुसार हिन्दू कर्मचारियों की संख्या वृद्धि भी हुई। कभी कभी उच्च पदों पर भी हिन्दुओं को रख दिया जाता था। कम उग्र स्वभाव वाले मुस्लिम शासक हिन्दुओं का अधिक विश्वास करते थे। चन्देरी के मेदनीराय और उनके अन्य आदमी मालवे में उच्च पद पर नियुक्त किये गये थे। बंगाल के हुसैनशाह ने कई हिन्दुओं को उच्च पदाधिकारी बनाया था। बीजापुर तथा गोलकुण्डा के बादशाहों ने अनेकों हिन्दुओं को अपने यहां रखा और कुछ ऐसे विश्वास पात्र हिन्दु भी थे। जो उनके यहां उच्च पदों पर रहते थे। इस प्रकार धीरे धीरे राजनैतिक क्षेत्र में सद्भावना फैल रही थी और दोनों संस्कृतियों में समन्वय हो रहा था। दूसरी ओर राजपूत नरेश भी मुसलमानों के प्रति उदारता पूर्वक व्यवहार करने लगे थे। मेवाड़ के राणा संग्राम सिंह ने अपने हराये हुये शत्रु मालवा नरेश महमूद द्वितीय को उसका राज्य वापिस कर दिया था। राणा हमीर ने अलाउद्दीन के एक विद्रोही मुस्लिम सरदार को अपने यहां शरण दी थी। उसने सुल्तान की कोई भी परवाह न की। राणा सांगा के यहां अनेकों मुस्लिम सिपाही तथा सरदार थे। जिनका प्रयोग बाबर के विरुद्ध लड़ने में किया गया था। विजय नगर साम्राज्य जिसका उद्देश्य ही मुस्लिम संस्कृति के प्रसार तथा बढ़ते हुये प्रभाव को रोकना था। अपने यहां अनेकों मुसलमानों को शरण पूर्ण आश्रय देता था। बहमनी सुल्तानों ने अनेकों हिन्दु अपने यहां रखे थे। इस प्रकार यह साफ प्रगट है कि राजनैतिक क्षेत्र में सद्भावना बराबर बढ़ रही थी। शासन को चलाने में ग्रामों पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ा। उनमें स्थापित स्वशासन इकाइयों की त्यों बनी रहीं और प्राचीन हिन्दू काल की संस्थायें अपनी स्वतंत्रता बनाये रखने में सफल हुईं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि राजनैतिक क्षेत्र में पारस्परिक कटुता तथा संघर्ष धीरे धीरे कम हो रहा था और इसके

सद्भावना का वातावरण बनता चला जा रहा था। दोनों संस्कृतियाँ एक दूसरे के प्रति उदारता उत्पन्न करती जा रही थीं।

मुसलमान शासकों के सम्मुख कुछ और भी ऐसे कारण थे। जिन्होंने हिन्दुओं के प्रति उदार होने के लिये विवश कर दिया। उनके शासन की महान् कठिनता यह थी कि केन्द्रीय शासन यदि शक्तिशाली होता तो सुरक्षित रहता था परन्तु उसके दुर्बल होते ही शासन छिन्न हो जाता था और मुस्लिम सेनापति या शासक केन्द्र के विरुद्ध विद्रोह कर डालते थे। इनसे बचने के लिये भी अनेकों अवसरों पर हिन्दू सहायता की आवश्यकता होती थी। इसी कारण से उनको आवश्यकता अनुसार अपना कठोर व्यवहार बदलना पड़ता था। कुछ भी हो सांस्कृतिक क्षेत्र में दोनों संस्कृतियाँ एक दूसरे की ओर बढ़ रही थीं और वातावरण तैयार हो रहा था।

सामाजिक प्रभाव

इस क्षेत्र में भी दोनों धर्मों के लोग परस्पर विरोधी वातावरण में स्थायी रूप से नहीं रह सकते थे। प्रारम्भ में आपसी कटुता बनी रही और हिन्दुओं ने मुसलमानों को मलेच्छ समझा और मुसलमानों ने अपनी राजनैतिक विजय के आधार पर अपने आपको यहाँ के हिन्दू वर्ग से उच्च समझा इसलिये दोनों वर्गों का संघर्ष होना अनिवार्य था। वह संघर्ष हुआ भी परन्तु धीरे धीरे घटता गया और दोनों संस्कृतियों ने एक दूसरे पर अनेकों प्रकार से प्रभाव डाले।

हिन्दुओं में मुसलमानों के सम्पर्क के कारण अनेकों नवीन प्रथायें उत्पन्न हुईं और उनका जीवन क्षेत्र बदला हुआ सा प्रतीत होने लगा। हिन्दू स्त्रियों में पर्दे का विस्तृत रूप से प्रचलन हो गया। एक घर से दूसरे घर भी वह चारों ओर से ढकी हुई पालकियों में जाने लगीं वह एकान्तवास में रहने के लिये विवश हो गईं। उनको शिक्षा इत्यादि की सुविधायें भी अप्राप्त हो गईं और समाज में उनका स्तर नीचे ही गिरता चला गया। वह अपने पुरुषों के ऊपर आश्रित रहने के लिये विवश कर दी गईं। मुस्लिम स्त्रियाँ भी अपनी हिन्दू बहनों से इस दशा में अच्छी न थीं फीरोज तुगलक ने तो उन पर इतनी कड़ी पाबन्दी लगाई थी कि वह दरवेशों की कब्रों पर भी न जायें। हिन्दुओं में बाल विवाह का रिवाज जोर पकड़ गया क्योंकि अक्सर मुसलमान हिन्दू स्त्रियों का शक्तिपूर्ण ढंग से अपहरण कर लिया करते थे। स्त्रियों से यह आशा की जाती थी कि वह अपने सतीत्व को बचाये रक्खें। इसी कारण से सती प्रथा जोर पकड़ रही थी परन्तु ऐसा बताया जाता है कि सती होने के लिये देहली के सुलतान की अनुमति लेना आवश्यक थी। उसके अनुमति पत्र के बिना सती कराना राज्य की दृष्टि में एक प्रकार का दोष समझा जाता था। इन कारणों से कन्या का जन्म दुःखद समझा जाता था। अमीर खुसरु

म अपने यहाँ करना के उत्पन्न होने पर दुःख प्रगट किया था। समाज में स्त्री के मान कम करने में मुस्लिम प्रभाव ने बड़ा काम किया।

मुसलमानों के सम्पर्क के कारण दास प्रथा का बड़ा विकास हुआ। तथा मुसलमान सब समान रूप से दास रखने लगे। सुल्तानों के यहाँ तो दासों की संख्या इतनी अधिक हो गई कि इनका विभाग ही अलग बन गया अलाउद्दीन के पास पचास हजार दास थे और इनकी संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती ही गई। यहाँ तक कि फीरोज तुगलक के समय यह संख्या दो लाख हो गई थी। इन सुल्तानों द्वारा अनेकों दास चीन फारिस इत्यादि देशों से मंगाये जाते थे। दासों के निर्वाह के व्यय का पूरा बोझा राज्य आय के ऊपर होता था और खजाने पर बड़ा भार का व्यय था। अन्त में इस विभाग ने सुल्तानों के प्रभाव को कम करने में बड़ा भाग लिया। हालांकि समय समय पर दासों में कई प्रतिभाशाली दास भी निकले जैसे अलाउद्दीन का सेनापति मलिक काफूर या सम्राट बलबन, महान् शासक सिद्ध हुये। मुसलमानों को देखा देखी हिन्दू राजाओं तथा सामन्तों ने भी दास रखना आरम्भ कर दिया था। आज भी यह प्रथा उच्च घरानों में थी। मुसलमानों की वेश भूषा तथा आचार विचार का प्रभाव भी हिन्दुओं पर खूब पड़ा। जुआ खेलना तथा शराब पीना एक साधारण प्रथा बन गई। मुस्लिम दरबार की भाँति हिन्दू राजाओं तथा सामन्तों ने भी की उनके दरबारों में भी श्रेणियां बन गई और श्रेणियों के अनुसार ही सामन्त लोग बैठने लगे।

अब तक का हिन्दू समाज एक पूर्ण ठोस इकाई थी। बुद्ध धर्म ने भी समाज का विभाजन नहीं किया था और न जातियों में कठोरता ही थी। परन्तु मुसलमानों ने समाज का विभाजन कर दिया। एक ही देश में स्पष्ट रूप से दो समाज दिखाई पड़ने लगे। प्रत्येक स्तर पर यह दोनों समाज एक दूसरे से भिन्न बने रहे।

इस्लाम के धर्म प्रचार ने हिन्दुओं को सतर्क कर दिया और उन्होंने अपने धर्म रक्षा करने के लिये ऐसे नियम प्रतिपादित किये कि धर्म के साथ साथ जाति परिवर्तन भी कठोर होता गया। किसी भी जाति में न तो कोई सुगमता से प्रवेश ही कर सकता था और न उसको छोड़ ही सकता था। सारा वातावरण अनुदार होता चला गया। हिन्दू समाज को सुदृढ़ करने के विचार से सनातनी विद्वानों ने स्मृति ग्रंथों में अनेकों नवीन नियम जोड़ दिये। हिन्दुओं ने इस कठोरता का पूर्ण रूपेण पालन किया और इसका फल यह हुआ कि यदि एक ओर हिन्दू संस्कृति की रक्षा हुई तो दूसरी ओर हिन्दुओं के मस्तिष्क में संकुचित भावनाओं का आविर्भाव हुआ। हिन्दू धर्म में उस प्रवाह करने वाली भावना का अन्त हो गया जिसके कारण उसने मुसलमानों से पूर्व अनेकों जातियों का समावेश कर लिया था। इ

न्दू धर्म प्रगतिशील न रहकर सीमित बन गया और उसका द्वार भिन्न धर्म वालों लिये बन्द हो गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सामाजिक क्षेत्र में हिन्दू संस्कृति मुस्लिम कृति से प्रभावित हुये बिना न रह सकी और अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के तत्वों को उसने ग्रहण कर लिया।

हिन्दू संस्कृति ने भी मुस्लिम संस्कृति पर गहरे प्रभाव डाले। इसके अनेकों रण भी थे। प्रथम तो हिन्दू संस्कृति राजनैतिक क्षेत्र में परास्त होने के पश्चात् प्रभावशाली बनी रही और वह अनेकों प्रकार से मुस्लिम संस्कृति से उच्च रही। र्थिक क्षेत्र में विवश होकर मुसलमानों को हिन्दुओं की ओर ताकना पड़ा। उन्होंने नि तो अपने मुस्लिम सामान्तों को दे दी परन्तु कृषक तो हिन्दू ही बने रहे। सी प्रकार व्यापार भी हिन्दुओं के ही हाथ में रहा। इसलिये जो थोड़े बहुत सलमान कृषक तथा व्यापारी बने, वे बहु संख्यक हिन्दु कृषकों तथा व्यवपारियों र्थिक सम्पर्क के कारण प्रभावित हुये बिना न रह सके।

Q. How did the Islam and Hinduism influence each other nd what were the results of this influence ?

प्रश्न—इस्लाम तथा हिन्दू धर्म ने एक दूसरे को किस प्रकार प्रभावित किया और इस प्रभाव के क्या फल हुये ?

उत्तर - धार्मिक क्षेत्र में दोनों धर्मों में संघर्ष का होना आवश्यक ही था। नों धर्म अपनी अपनी विशेषतायें लिये हुये थे। और दोनों के मौलिक सिद्धान्त तने भिन्न थे कि दोनों में मतैक्य होना एक कठोर कार्य था। इसलिये दोनों धर्मों समन्वय तथा संपर्क सुगम न था। दोनों के मध्य में एक विशाल खाई थी और नों एक दूसरे के घोर शत्रु थे। दीर्घ काल तक यह शत्रुता बनी रही।

मुसलमानों ने भारत को युद्ध के मैदान में जीता था। राजनैतिक विजय नको मिली थी। इस कारण वह अपने आप को तथा अपने धर्म को उच्च समझते और उनमें बड़ी सीमा तक अहंकार घर कर गया था। उनमें धार्मिक उत्साह था था उनकी कट्टर भावना थी कि इस्लाम को फैलाना उनका परम कर्तव्य है। उनका र्म विश्व में फैलना ही चाहिये। अन्य कोई भी धर्म इन धर्मान्ध लोगों की दृष्टि महत्व ही न था। हिन्दू धर्म तो काफिरों का धर्म था। उसको समूल नष्ट करना मुसलमानों का धार्मिक कर्तव्य था। ऐसी ही मुसलमानों की धारणा थी। वह नके धर्म प्रचार में इतने उग्र तथा भीषणता से परिपूर्ण थे कि किसी प्रकार का न भी इनको सहन न होता था और धर्म प्रचार में उचित अथवा अनुचित का

...र नहीं करते थे। धार्मिक क्षेत्र में उदारता तथा सहिष्णुता इनको ...
गई थी। भारत के बाहर मुस्लिम धर्म प्रचार का इतिहास अति तथा ...
लगा हुआ था। मुसलमानों के आंधी और तूफान के समान दल राजनैतिक ...
के साथ साथ धर्म प्रचार में भी संलग्न रहते थे और अब तक उनको ...
सफलतायें प्राप्त हुई थी। देश के देश राजनैतिक पराजय के साथ साथ धार्मिक
में भी आत्म समर्पण करते जा रहे थे। परन्तु भारत में मुसलमानों का स्वप्न
हो गया। यहां पर उनका अनुभव प्राचीन अनुभवों से भिन्न प्रकार का हुआ।
महान देश में उनको एक ऐसे धर्म से टक्कर लेनी पड़ी जिसकी शक्ति प्रबल
प्रभावशाली थी। जिसके सम्मुख आकर मुस्लिम 'धर्म प्रचार' रुक सा गया
उसके अलौकिक प्रसार में रुकावट आई। अब मुसलमानों ने हिन्दुओं को
धर्म की ओर आकर्षित करने के लिये दूसरी नीतियां भी अपनाईं। राजकीय
धन की लालसा, आनन्द तथा ऐश्वर्य पूर्ण जीवन, भिन्न भिन्न प्रकार की
सुविधायें, सामाजिक समानता ये सब मिलकर भी हिन्दुओं को न हिला सकी
यह मुस्लिम धर्म के प्रलोभनों से विशेष रूप से प्रभावित न हुये। ...
प्रलोभन ही और न भोग्यता हो हिन्दू धर्म के अभेद्य दुर्ग में दरार कर सके
मुस्लिम धर्म खिन्न सा हो गया। आज भी यह देख कर विस्मय होता है कि ...
प्रदेश जिसमें मुस्लिम सुल्तान निरन्तर मौजूद रहे जो मुस्लिम सामन्तों
सरदारों का घर बना रहा जहां पर मुस्लिम धर्म की शक्ति बराबर बनी रही। ...
१४ प्रतिशत ही मुसलमान मौजूद हैं। आज यह अल्प संख्या शताब्दियों के प...
हो पाई है। इससे स्पष्ट रूप से प्रगट होता है कि मुसलमानों का धर्म प्रचार ...
में विशेष रूप से सफल नहीं रहा। एशिया तथा अफ्रीका के अन्य देशों में ...
विशाल पैमाने पर मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन कराये थे और वहां पर
सफलतायें उनको प्राप्त हुई थीं। वह सफलतायें उनको भारत में न मिली ...
इस्लाम धर्म अपने निर्दिष्ट नियम, कानून, प्रथायें, रीति रिवाज, आचार ...
जीवन प्रणाली, धार्मिक सिद्धान्त रखता था। इसलिये उनका किसी भी ...
सम्मुख आत्म समर्पण करना भी सम्भव न था। जिस प्रकार यूनानी, शक, ...
कुषाण, हूण, भारत में आये और आज इनमें से कोई भी जाति का ...
नहीं पड़ता। समय के साथ साथ यह सब जातियां हिन्दू धर्म में ही समा ...
गईं और हिन्दू समाज का ही एक अंग बन गईं। परन्तु मुसलमान अपनी ...
विभिन्नता को बनाये रहे और वह हिन्दुओं से प्राचीन जातियों के समान ...
सके। इन्होंने अपने धर्म परिवर्तन की बात न सोची।

दूसरी ओर हिन्दू धर्म था। राजनैतिक प्रहार को उसने हार न माना। ...
महानता विदेशियों को। उसके अन्य युगों की प्रतिक्रिया की हुई शान्ति थी। ...

हुआ इस्लाम धर्म उसको निगाह में भर ही कैसे सकता था। उसका अपना , अपना सम्मान तथा अपना विकास था जो उसमें शक्ति का संचार करता और उसको प्रेरणा देता था। वह राजनैतिक क्षेत्र में अपमानित हुआ था। क क्षेत्र में नहीं। उसकी अपनी संस्कृति पूर्णतया बनी रही। धार्मिक गौरव वैसे का वैसा ही बनाये रक्खा। मुस्लिम धर्म उस पर अपना कोई विशेष न डाल सका। ई० बी० हैवेल (E. B. Hawell) जैसे पाश्चात्य इतिहासज्ञ प्रोफेसर शर्मा ने इस मत का प्रतिपादन किया है। उसका मत है कि अपनी तिक दुर्बलता के होते हुये भी मध्यकालीन भारत की संस्कृति तथा धर्म में चैतन्यता थी कि वह उस वृक्ष के समान था जो उन शत्रुओं को भी छाया है जो उसकी कोमल शाखाओं को भी काट डालता है। इस्लाम ने भारतीय शों को पराधीन कर दिया। उनकी शक्ति को नष्ट किया। उनके सैनिक संगठन चूर चूर कर दिया। परन्तु हिन्दुओं की बौद्धिक साम्राज्य को नीचा न दिखा। उसकी धार्मिक उग्रता हिन्दू धर्म को भयभीत न कर सकी। हिन्दू धर्म की आत्मा प्राचीन काल के गौरव को लिये हुये ही देदीप्यमान रही।

हिन्दू धर्म की अन्तरात्मा इस दृढ़ता तथा कठोरता को प्राप्त कर चुकी थी को विचलित करना असम्भव होता है। वह उन अग्नि परीक्षाओं से गुजर चुकी जिनमें गुजर कर कोई भी धर्म आघातों के सहन करने की योग्यता प्राप्त कर है। हिन्दू धर्म का अपना विधान उच्च कोटि का था। जिसके कारण उस पर होना या पद-दलित करना कुछ सहज काम न था। मुस्लिम आघातों का ही प्रभाव पड़ा। जिस शक्ति से आघात किये जाते थे। हिन्दू धर्म उससे क शक्ति का प्रदर्शन करता था और वह अपने पाप को सुरक्षित करने के लिये न नवीन साधनों का सहारा लेता था। फल यह होता था कि संघर्ष की ज्वाला अधिक प्रचण्ड होती थी। हिन्दुओं में प्रतिरोध अधिक मात्रा में हो जाता था।

हिन्दू धर्म के सम्मुख एक समस्या थी कि अपने धर्म को कैसे सुरक्षित जाय। किस प्रकार मलेच्छों से अपनी प्रिय संस्कृति को बचाया जाय। किस र अपनी सुन्दर परम्पराओं तथा प्रथाओं को स्थापित रक्खा जाय। वह अपने धी की भावना को समझ गया था कि वह प्रत्येक जायज या नाजायज शस्त्र प्रयोग करके हिन्दू धर्म को समूल नष्ट करना चाहता है। इसलिये ब्राह्मण उठे। उन्होंने हिन्दू धर्म के विधान को वह कठोरता प्रदान की कि उसका लीलापन जाता रहा। उसका प्रवेश द्वार बन्द कर दिया गया। मुसलमानों के र तथा प्रसार को पूर्णतया रोकने के लिये यह एक प्रभावशाली शस्त्र सिद्ध । जातियों की कठोरता तथा अपरिवर्तनशीलता की वृद्धि कर दी गई यदि ई उन बन्धनों को तोड़ने का साहस करता या नियमों की अवहेलना करता वह

दण्ड का भागी होता था। इस प्रकार हिन्दू धर्म मुस्लिम कट्टरता के प्रति प्रतिक्रियावादी बन गया और उसकी भावना प्राचीनकाल की उदारता या विशालता को खो बैठी, वह सीमित हो गया। परन्तु यह सब हुआ इसलिये कि हिन्दू अपनी धार्मिक क्रियाओं, सिद्धान्तों, विशेषताओं को सुरक्षित रखना चाहते थे। इस नवीन वातावरण के कारण हिन्दू विद्वानों तथा ब्राह्मण आचार्यों ने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। इसी कारण से सन् १२०० से सन् १८०० तक के समय में हिन्दू स्मृतियों की अनेकों टीकायें लिखी गईं। इस प्रकार के अनेकों टीकाकार इस काल में उत्पन्न हुये। विज्ञानेश्वर, कुल्लूकभट्ट, चण्डेश्वर, विश्वेश्वर, इत्यादि अधिक प्रसिद्ध हैं।

मुसलमानों की धार्मिक कट्टरता का एक और भी परिणाम हुआ। मुस्लिम सुलतानों की देखा देखी हिन्दू राजाओं ने भी धार्मिक उत्साह का प्रदर्शन किया। उनमें हिन्दू धर्म को बचाने के लिये एक नवीन शक्ति का संचार हुआ। मेवाड़ के राणा अपने समस्त शस्त्रों को धारण कर पूर्ण रूप से कटिबद्ध हो मुसलमानों के धर्म आघातों को रोकने के लिये उठ खड़े हुये। उन्होंने मुस्लिम विजेताओं के विरुद्ध निरन्तर युद्ध छेड़ा। इसी प्रकार हिन्दुओं की ओर से दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य का एक मात्र उद्देश्य मुस्लिम धर्म के प्रचार तथा प्रसार को दक्षिण में आगे बढ़ने से रोकना था। विजयनगर की प्रतिमा इसी कारण से चमक उठी वह राजनैतिक प्रतीक न रहकर धार्मिक प्रतीक बन गया। दक्षिण भारत की हिन्दु जनता अपने धर्म रक्षा के लिये विजयनगर के सम्राटों की ओर निहारने लगी। इस प्रकार मुस्लिम धर्म की उग्रता के कारण हिन्दु राजाओं की ओर से ऐसी घोर प्रतिक्रिया हुई कि हिन्दु धर्म एक सुरक्षित दुर्ग बन गया। एक ओर ब्राह्मण विद्वान तथा आचार्य अपनी विलक्षण बुद्धि के द्वारा नये नये नियम बनाते थे। दूसरी ओर राजा महाराजाओं के चारों ओर हिन्दू जनता एकत्रित हो शस्त्र धारण करती थी। तीसरी ओर हिन्दु परमपरायें अपना गौरव लिये हुये थीं। इन तीनों शक्तियों में सहयोग होने के कारण हिन्दु धर्म ऐसा चक्रव्यूह बन गया जिसमें दराड करना इस्लाम के काबू की बात न थी। वह हताश हो गया। परन्तु जो भीषण इस्लाम की, प्रकृति बन चुकी थी वह उसे कैसे छोड़ता? इसलिये दीर्घ काल तक संघर्षात्मक वातावरण निरन्तर बना रहा।

अन्त में इस रोध तथा प्रतिरोध के निरन्तर रहने के कारण मुसलमान उकता गये। मुसलमान सुलतानों ने भलि भांति समझ लिया कि भारत में रहकर भारत के हिन्दुओं से बैरभाव अधिक दिनों तक नहीं चल सकता। इसलिये उनकी नीति में परिवर्तन हुआ। उनमें सरलता तथा सरसता उत्पन्न हुई। उनमें उदारता तथा सहनशीलता की प्रवृत्ति आई और हिन्दु धर्म केप्रति उनके दिलों में श्रद्धा

गों। इस के अनेकों उदाहरण हैं। काश्मीर का सुल्तान अमरनाथ और शारदा के मन्दिर के दर्शन करने जाता था और हिन्दु यात्रियों की सुविधा का ध्यान ा था। हिन्दु मन्दिरों को दान दिये जाते थे। मुहम्मदशाह ने बौद्ध गया की र महन्त को प्रदान की थी। इस प्रकार मुसलमानों में धार्मिक सहिष्णुता आई जन साधारण भी इस समन्वय की भावना से प्रभावित हुये। मुसलमानों ने हिन्दु सन्यासियों तथा सन्तों के प्रति सम्मान की भावना दिखाई। इस की ी प्रतिक्रिया हुई। मुहम्मद तुगलक जैसा सुल्तान अपनी उद्देश्य पूर्ति के लिये योगियों के पास जाता था। अलाउद्दीन जैसा सुल्तान भी हिन्दू धर्म के द वेत्ताओं का आदर करने लगा। उसने करनाटक से जैन आचार्य महासेन को धीत करने के उद्देश्य से बुलवाया था। दिल्ली के प्रसिद्ध जैन साधु रामचन्द्र पूर्ण चन्द्र पर सुल्तान की विशेष कृपा थी। नसीरुद्दीन भी धार्मिक पुरुषों का र करता था। फिरोज तुगलक ने राजशेखर को जो हिन्दु कवि था अच्छा सम्मान न दिया था। इस प्रकार वातावरण में धीरे धीरे सुधार हो रहा था। और दोनों उदारता बढ़ने लगी थी।

दोनों धर्म वालों ने एक दूसरे के सन्तों को आदर प्रदान करना आरम्भ कर ा। यदि एक ओर हिन्दु मुस्लिम सन्तों का आदर करते, उनके मजारों तथा कब्रों मिष्ठान चढ़ाते तो दूसरी ओर मुसलमान भी हिन्दु साधुओं के प्रति श्रद्धाभाव : करते थे। हिन्दुओं में अनेकों ने मुस्लिम सन्तों के नियमों का पालन आरम्भ दिया था। रावड़ पिण्डी के ब्राह्मण अब्दुल कादिर जिलानी के मुरीद बन गये मुईनुद्दीन चिश्ती के मुरीदों में अनेकों हिन्दु सम्मिलित थे। बहराइच में सैयद ार मसूद के मजार पर अनेकों हिन्दु एकत्रित हुआ करते थे। इस प्रकार ल्लम सन्तों ने हिन्दुओं को अपनी ओर आकर्षित करना आरम्भ कर दिया था। लमान भी हिन्दु धर्म से विशेष रूप से प्रभावित हुये। मूर्ति पूजा के कट्टर ोधी होते हुये भी बंगाल के मुसलमान काली देवी का पूजन करने लगे। शीतला भी उनकी श्रद्धा हो गई। दोनों धर्मों की बढ़ती हुई सद्भावना का फल यह ा कि जिन्दागाजी तथा सत्यपीर जैसे देवताओं का उदय हुआ। यह देवता हिन्दु मुस्लिम मिलन के प्रतीक थे। बंगाल में यह मिलन क्रिया सुविधा के साथ चली।

मुसलमानों में सूफी धर्म के सन्त विशेष रूप से हिन्दुओं के श्रद्धापात्र रहे ाजा मुईनुद्दीन चिश्ती, निजामुद्दीन औलिया, शेख सलीम चिश्ती ऐसे प्रसिद्ध ी सन्त थे जिनका हिन्दु भी उतना ही आदर करते थे जितना मुसलमान। दोनों ों में ऐसे समुदायों का प्रादुर्भाव होना आरम्भ हुआ जिनमें हिन्दु तथा मुसलमान मान रूप से प्रवेश कर सकते थे ' सत्यपीर, सत्तनामी, नारायणी ऐसे ही सम्प्रदाय जिनमें दोनों धर्म वालों के लिये स्थान था। मुसलमानों ने हिन्दू प्रभाव में आकर

सन्त पूजा की प्रथा अपनाली और विधि पूर्वक उसका पालन करने लगे। धर्मि सामन्जस्य तथा समन्वय की भावना धीरे धीरे विकसित होती जा रही थी। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ रही थी। बंगाल के हुसैन शाह काश्मीर के जईनुलअबीदीन जैसे शासकों ने दोनों धर्मों के सहयोग में महान कार्य किया। उन्होंने संस्कृत के धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद फारसी में कराने को को प्रोत्साहन दिया और इस सुविधा का लाभ उठा मुस्लिम विद्वानों ने दोनों उदारता पूर्ण वातावरण बनाने का महान कार्य किया। धार्मिक कट्टरता शिथिल गई इसका उदाहरण हमको उस समय के अन्तरजातीय विवाहों से प्रगट हो है। अलाउद्दीन ने अपने लड़के का विवाह देवगिरि की राजकुमारी से कर दिया

इस प्रकार बढ़ते हुये सम्मिलन, सामन्जस्य, समन्वय के बड़े ही प्रभाव फल हुये दोनों धर्मों में सहिष्णुता की भावना जागृत हुई। एक दूसरे के प्रति में सद्भावना जागी और विश्वास का वातावरण फैला। बलबन तथा अलाउ की अनुदार नीति में परिवर्तन आया और एक ओर हिन्दू राजाओं ने मुसलमानों महत्वशाली पदों पर रखने में संकोच नहीं किया और दूसरी ओर मुस्लिम सुल्ता ने हिन्दुओं को उच्च पद प्रदान किये। बीजापुर तथा गोलकुण्डा के राज्यों में अनेक हिन्दु उच्च पदाधिकारी थे। इसी प्रकार विजय नगर साम्राज्य में अनेकों मुस्लि राज्य सेवा कर रहे थे।

इस बढ़ती हुई सद्भावना ने अनेकों धार्मिक परिवर्तनों को उत्पन्न किया दोनों धर्मों में मेल जोल की प्रवृत्ति ने हिन्दू धर्म में तथा मुस्लिम धर्म में आन्दोल उत्पन्न किये। इन सुधारकों ने दोनों धर्मों के अच्छे अच्छे सिद्धांतों का सम्मिश्रण करने का प्रयास किया और बड़ी सीमा तक उनको सफलता भी मिली। भक्ति आन्दोलन तथा सूफी मत इसी प्रकार के सम्प्रदाय थे।

भक्ति सम्प्रदाय

भक्ति मार्ग दक्षिणी भारत से आरम्भ हुआ था शिव तथा विष्णु की पूजा से आरम्भ होकर यह मार्ग बराबर विकसित होता रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि यह हिन्दू आन्दोलन आरम्भ में ही अप्रत्यक्ष रूप से इस्लाम के कई सिद्धान्तों से प्रभावित हो चुका था चूंकि उत्तरी भारत में आने से पूर्व दक्षिण भारत के समुद्र तटों पर अरब से आये हुये मुसलमान बसा लिये गये थे और उनको अपना धर्म पालन तथा धर्म प्रचार की सुविधायें प्रदान की गई थीं। मुसलमानों ने शान्ति एवं प्रचार को ही जारी रक्खा और अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य ही हिन्दुओं के मस्तिष्क पर प्रभाव डाला होगा। इस मत का प्रतिपादन डाक्टर ताराचन्द (Dr Tara Chand) ने अपनी पुस्तक 'Influence of Islamon Indian culture' में किया है। उनका कहना है कि यह प्रभाव अप्रत्यक्ष रहा होगा परन्तु आज भी

प्रभाव वीर शैव सम्प्रदाय पर स्पष्टता से दिखाई देता है। इस सम्प्रदाय
लोग न तो जाति प्रथा में विश्वास रखते हैं न विधवा विवाह के विरुद्ध हैं।
में तलाक विधान है। वह अपने मृतकों को जलाने के बजाय गाड़ते हैं वह न तो
की प्रमाणिकता को मानते हैं न खानपान में भेद भाव को स्थान देते हैं।

भक्ति मार्ग में हिन्दू सुधारकों का वह प्रयास दृष्टिगोचर होता है जो उन्होंने
दू धर्म की कुरीतियों को नष्ट करने के लिए किया था। इस प्रयास को सफल
ने के लिये उन्होंने मुस्लिम सिद्धान्तों के अपनाने में भी संकोच नहीं किया।
ने इन समस्त मुस्लिम सिद्धान्तों को अपनाया जो मानव जाति को विकास की
ले जाते हैं जो किसी भी समाज को प्रगति के लिये अति आवश्यक हैं।
आन्दोलनकारियों ने हिन्दू धर्म की उस असहिष्णुता, अपरिवर्तनशीलता,
हात्ता तथा संकुचिकता को दूर करने का प्रयास किया जो धीरे धीरे हिन्दू धर्म
वेश कर गई थी। जिसने हिन्दू धर्म की उस पावन शक्ति का विनाश कर दिया
। जो प्राचीन काल में उसकी सहायक सिद्ध हुई थी जिसके कारण उसने अनेकों
तियों का विलीनिकरण किया था। इस आन्दोलन ने हिन्दू धर्म की रक्षा करनी
ही थी। हिन्दू धर्म में व्यापकता तथा विशालता लाने का प्रयत्न किया था।
प्राचीन हिन्दू धर्म के गुण थे। उत्तरी भारत में मुस्लिम धर्म के सिद्धान्तों ने
भक्ति आन्दोलन को नवीन शक्ति प्रदान की इस्लाम धर्म के सिद्धांत बड़े ही
दर सिद्ध हुये। विश्व बन्धुत्व, धर्म की सादगी, जाति प्रथा का खण्डन,
हरता का अभाव, मूर्ति पूजा का विरोध, अनेकों देवी देवताओं के स्थान पर
ईश्वर में विश्वास, व्यर्थ धार्मिक क्रियाओं तथा पाखण्डों का अभाव ऐसे सिद्धात
जिनका पालन करना अति सरल तथा रुचिकर था। इन सिद्धान्तों को हिन्दू
ारकों ने प्रत्यक्ष रूप से अपनाया और इन सिद्धान्तों को लेकर उठ खड़े हुये।
आन्दोलन कारियों ने सभी धर्मों की आधार भूत समानता का आदेश दिया।
रवाद का प्रचार किया जाति प्रथा को दोष पूर्ण बताया। उन्होंने व्यक्ति के
न को ऊंचा उठाया। ऊंच नीच के भेद भाव को निरर्थक कह कर उसकी उपेक्षा
। मूर्ति पूजा का खण्डन किया उन्होंने धार्मिक कर्म काण्ड तथा व्यर्थ आडम्बरों
विरोध किया। उन्होंने जन्म पर कर्म को प्रधानता दी। उन्होंने बताया कि
य धर्म पालन के लिये मुल्लाओं, पुरोहितों तथा पाखण्डी लोगों के चक्कर में
ने की आवश्यकता नहीं। पाखण्डों में पड़कर मनुष्य सच्चे धर्म से हट जाता है।
ार प्राप्ति का साधन तो केवल उसकी भक्ति ही है। इस मार्ग के समर्थकों
मुस्लिम प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है। प्राचीन काल में कुछ भी रहा हो।
न्तु अब भक्ति मार्ग हिन्दू तथा मुस्लिम धार्मिक कट्टरताओं को दूर करने का
क महान साधन था। भक्ति मार्ग एक ऐसा उपाय निकाला कि दोनों धर्म वालों

के लिये सम्मेलन का एक अवसर प्राप्त हो गया। इस प्रकार हिन्दू मुस्लिम धार्मिक एकता स्थापित करने के लिये समस्त भारत में अनेकों महात्मा उत्पन्न हुये और उन्होंने भक्ति मार्ग के अनेकों सुन्दरतम सिद्धान्त जनता के सामने प्रस्तुत किये। इनमें रामानुज माधव, रामानन्द, वल्लभाचार्य, चैतन्य, कबीर, नानक, दादु, रैदास, मीराबाई विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। महाराष्ट्र में कई प्रभावशाली सन्त हुये जिन्होंने मुस्लिम धर्म के अनेकों सुन्दर सिद्धांत अपनाये और उनका प्रचार किया। इनमें ज्ञानेश्वर, रामानन्द के समकालीन सन्त विसोबा खेचर, नाम देव, एकनाथ, रामोपन्त, तुकाराम, अति अधिक प्रसिद्ध हैं।

रामानुज—इनके सिद्धांतों पर भक्ति मार्ग की नींव पड़ी। इनका जन्म १२ वीं सदी में हुआ था। उनका मत था "समाज में पुरुष अथवा स्त्री किसी को भी दशा हो परमात्मा के समीप सभी समान हैं शर्त यह है कि वे सत्य धर्म का पालन करते हों" इस प्रकार उन्होंने भेद भाव की बुरी प्रथा पर कुठाराघात किया। उन्होंने एकेश्वरवाद के सिद्धांत का समर्थन किया। उनके अनेकों सिद्धांतों पर इस्लाम का प्रभाव पड़ा। ऐसा मालूम पड़ता है कि दक्षिण में बसे मुसलमानों के प्रचार का कुछ असर विद्वानों के विचारों पर पड़ा हो और रामानुज का एकेश्वरवाद का सिद्धांत मुस्लिम धर्म का ही असर हो।

रामानन्द—वह पन्द्रहवीं सदी में वैष्णव धर्मोपदेशक हुये। इन्होंने अ[illegible] प्रथा का घोर विरोध किया और बिना किसी भेदभाव के दोनों धर्मों के लोगों को अपनाया। नाई, मोची, मुसलमान जैसे मनुष्य इनके शिष्यों में थे। उन्होंने [illegible] की समानता का सिद्धांत प्रसारित किया। इन्होंने निम्न श्रेणी के लोगों में [illegible] ख्याति प्राप्त की वल्लभाचार्य ने भी एकेश्वरवाद का सिद्धान्त अपनाया और [illegible] का प्रचार किया।

चैतन्य—बंगाल का यह महान् सन्त, सुधारक तथा आन्दोलनकर्ता वल्लभाचार्य का समकालीन था। वह नदियां में पैदा हुआ था उसने जाति भेद भावों का कठोर खण्डन किया। कर्मकाण्ड की निस्सारता को प्रगट किया विश्व बन्धुत्व की घोषणा की। उसने सन्यास को ही सर्वोपरि बताया। ईश्वर में लीन होना ही मनुष्य का परम धर्म है यही उनकी शिक्षा थी।

कबीर—यह रामानन्द के प्रभावशाली शिष्य थे। उन्होंने हिन्दू मुस्लिम एकता उत्पन्न करने के महान् प्रयत्न किये। उनका धर्म प्रेम का धर्म था। यह इन्सान को इन्सान से प्रेम करना सिखाता था। उन्होंने हिन्दू तथा इस्लाम में बनी हुई खाई को पाटने का कार्य किया। दोनों धर्मों में सहयोग, समन्वय तथा मित्रता उत्पन्न करने का सफल प्रयास किया। उन्होंने दोनों धर्मों की मौलिक एकता का उपदेश दिया उन्होंने बताया कि हिन्दू मुसलमानों के भेद केवल बाहरी हैं। इं[illegible]

का आन्तरिक उद्देश्य एक ही है खुदा या ईश्वर एक ही हैं उसके ऊपर बाहरी आडम्बरों को लेकर लड़ना झगड़ना केवल व्यर्थ ही नहीं अपितु निरर्थक भी है। उन्होंने कर्मकाण्ड तथा मूर्ति पूजा और जाति प्रथा को व्यर्थ बताया। उन्होंने मनुष्य की समानता का प्रचार किया। उन्होंने बताया कि ईश्वर की दृष्टि में ऊंच नीच, हिन्दू मुस्लिम सब एक समान हैं। कबीर रहस्यवादी थे उनके विचारों पर सूफी मत का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। कबीर ने दोनों धर्मों में सामन्जस्य उत्पन्न करने का महान् कार्य किया।

नानक—यह सिक्ख धर्म के संस्थापक थे। इन्होंने एकेश्वरवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। उन्होंने कबीर की तरह जाति भेद भाव को व्यर्थ बताया। बहुदेव पूजा का खण्डन किया। हिन्दू तथा मुस्लिम धर्मों के कर्मकाण्ड की घोर निन्दा की उनका उद्देश्य दोनों धर्मों के संघर्ष का अन्त करना था। वह देश में एकता उत्पन्न करना चाहते थे। उनकी दृष्टि में हिन्दू मुसलमान सब समान थे। उनके शिष्य हिन्दू मुस्लिम दोनों धर्मों के लोग थे। इस पन्थ के अनुयायी आगे चलकर सिक्ख कहलाये।

दादू—भक्ति मार्ग के एक प्रभावशाली सन्त दादू थे। इन्होंने भी जाति भेद भाव मूर्ति पूजा, तीर्थ मत तथा अवतार वाद का घोर विरोध किया उन्होंने भिन्न भिन्न धर्मों में एकता लाने का कार्य किया उन्होंने इस एकता उत्पन्न करने के उद्देश्य को लेकर दादू पन्थ चलाया। उन्होंने मुस्लिम तथा हिन्दू एकता के अनेकों भजन बनाये और उनका प्रचार किया।

रैदास—ये काशी के चमार घराने में पैदा हुये थे। इन्होंने भी जाति भेद भाव का खण्डन किया और लोगों में विनम्रता की भावना जागृत की। उनके कथनानुसार सभी में हरि हैं और सब हरि में हैं यही उनका प्रभावशाली प्रचार था। वह धार्मिक आडम्बरों के विरोधी थे।

मीराबाई—वैष्णव सन्तों में मीराबाई का बहुत ऊंचा स्थान है राठौर वंश में उत्पन्न हुईं और सिसोदिया वंश में विवाही गईं परन्तु सन्तों की भक्ति मार्ग से प्रभावित हो संसार त्याग दिया और भक्तों के समान जीवन व्यतीत करने लगीं। इन्होंने भी संघर्ष के स्थान पर प्रेम और सद्भावना को बिठाया। ऊंच नीच की भावना का बहिष्कार किया। इन्होंने कृष्ण की लीला के गीत गाये। कृष्ण में ही ईश्वर को देखा। अन्य भारत की तरह महाराष्ट्र में भी मुस्लिम धर्म के सिद्धांतों ने अपना प्रभाव डाला वहां भी एकेश्वरवाद, बन्धुत्व मनुष्य की समानता इत्यादि सिद्धान्तों ने अपना असर डाला और इन नवीन सिद्धांतों के प्रचार के हेतु महाराष्ट्र में बहुत से साधु सन्त पैदा हो गये जिन्होंने इन नवीन सिद्धांतों को जनसाधारण को जानने तथा समझने का अवसर प्रदान किया। इन प्रदेश के सभी सन्तों ने एक

गुर में जाति प्रथा का खण्डन किया। एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया महाराष्ट्र प्रथम सन्त ज्ञानेश्वर हुये। जिन्होंने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। इन्होंने मनुष्य की निन्दा की और आध्यात्मिक जीवन सन्त का आरम्भ किया।

रामानन्द के समकालीन देवर ने मूर्ति पूजा का खण्डन किया। शिष्य नामदेव ने भी महाराष्ट्र में बढ़ती हुई संकीर्णता के विरुद्ध आवाज़ कर्मकाण्ड तथा जाति के भेद भाव को मिटाने का प्रचार हुआ इनका म कि मुक्ति प्राप्त करने के लिये ईश्वर की भक्ति तथा उसके प्रति प्रेम ही आव हैं इनके प्रचार विषय में अनेकों चमत्कार सुने जाते हैं जैसे विष्णु की मूर्ति का हाथ से दूध पीना तथा शिव मन्दिर का इनकी ओर मुड़ जाना इत्यादि। प्रचार ने भक्ति सिद्धांत को बड़ा प्रोत्साहन दिया और वह लोकप्रिय होता गया। प्रकार एकनाथ तथा दासी पन्थ भी प्रसिद्ध व्यक्ति हुये साथ ही साथ सन्त तुका भी अपने विचारों की महानता के कारण प्रसिद्ध हुये। इन्होंने प्रभावशाली ढंग अपने विचारों का प्रसार किया और महाराष्ट्र में इनकी तूती बोलने लगी। प्रकार सन्तों की गम्भीर कोशिशों से समस्त महाराष्ट्र में जाति प्रथा का विरो खड़ा हो गया और जनता में सन्तों के विचार भली भांति फैल गये। इन विचा में मुस्लिम धर्म का गहन प्रभाव साफ दृष्टिगोचर होता है।

सूफी मत

जिस प्रकार मुस्लिम धर्म का प्रभाव भक्ति आन्दोलन पर पड़ा और इ मत ने हिन्दू मुस्लिम एकता को स्थापित करने में भारी सहयोग दिया। उसी प्रका मुसलमानों में सूफी मत पर हिन्दुओं के धार्मिक सिद्धांतों का प्रभाव दृष्टिगोच होता है और इस मत की ओर अनेकों हिन्दू भी आकर्षित हुये और सूफी सन्तों ने अपने सरल जीवन को लेकर दोनों धर्मों के लोगों को समान रूप से प्रभावित किया।

इस मत का मूल स्रोत तो कुरान तथा मुहम्मद साहब का सरल जीवन है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दू तथा बुद्ध धर्म का प्रभाव भी इस मत पर अवश्य ही पड़ा था। प्राचीन काल जब हिन्दू यूनानी सम्पर्क हुआ था तो यूनानी दार्शनिक प्लेटो (Plato) ने हिन्दू दर्शन के अनेकों सिद्धांतों को अपने दर्शन में सम्मिलित कर लिया और मिश्रित दर्शन नीयो प्लेटोनिज्म (Neo Platonism) कहलाया। फिर नवीं शताब्दी में यूनानी ग्रंथों का अरबी में अनुवाद हुआ और नीयो प्लेटोनिज्म ने इस्लाम पर अपने प्रभाव डाले। मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात् अनेकों व्यक्ति ऐसे हुये जिन्होंने अपने त्याग पूर्ण जीवन से अन्य व्यक्तियों को बड़ा प्रभावित किया और इन्होंने रहस्यवाद की नींव स्थापित की। जब इस्लाम भारत में आया तो बुद्ध तथा हिन्दू धर्म के वेदांत ने अपना प्रभाव इस नवीन धर्म

ी अवश्य ही शासा और प्रभाव के कारण इस्लाम में सूफी मत स्थापित । यह नवीन मत दोनों धर्मों को मिलन की भावना का प्रतीक था।

धीरे धीरे इस धर्म में पीरों तथा दरवेशों के संगठन का उदय हुआ और धार्मिक प्रथाओं भी उत्पन्न हुईं। इस मत में हुसैन बिन मंसूर के सिद्धांत । विशेष महत्व रखते हैं उसने बताया कि आत्मा का ब्रह्म में विलीनिकरण ही जीवन का उत्तम उद्देश्य है यह प्रकाश की असली अवस्था है। १४ वीं में सहाबुद्दीन सुहरावर्दी और इब्नलअल्व अरबी द्वारा सूफी मत का विकास । प्रथम के मतानुसार सब धर्मों का उद्देश्य एक ही है सबका आधार एक ही है इसलिये सब में मेल होना आवश्यक है। उसके मतानुसार श्रद्धा प्रेम के आधार पर ही ईश्वर का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इनके पश्चात् अब्दुरीम अलजिलि ने बताया कि सभी धर्म एक ही सत्य की खोज करते हैं। पूर्ण ब्रह्म के किसी न किसी अंग की पूजा करते हैं इसलिये भिन्न भिन्न धर्मों धर्म का कोई कारण ही नहीं इन्होंने धार्मिक सहिष्णुता पर भारी जोर दिया। ने चार स्तर बताये जिनमें होता हुआ व्यक्ति पूर्ण ब्रह्म तक पहुँचता है और प्राप्त करता है। प्रथम तो तप उपवास करता है। पवित्रता से रहता है और ी इच्छाओं को परमात्मा को समर्पित कर देता है। द्वितीय परमात्मा का ज्ञान । करने के लिये उसकी अनन्त भक्ति में विलीन हो जाता है। एकांत में रहकर । करता और अपने मन पर काबू करने का प्रयास करता है। उसमें सांसारिक थों के प्रति विरक्ति की भावना नष्ट हो जाती है और अन्त में वह मोक्ष प्राप्ति धान पर पहुँचता है। इस मत में गुरु अथवा शेख या पीर की आवश्यकता पर दिया गया है जो पथ प्रदर्शक का कार्य करता है। सूफी मत श्रद्धा-भक्ति तथा पर आधारित है। त्याग, भजन आदि के द्वारा ईश्वर में विलीनिकरण ही इसका द उद्देश्य है। इस मत के अनेकों कवि हुये जिन्होंने अपनी कविताओं तथा तों द्वारा इस मत का प्रचार किया। सूफी मत के लिये सभी धर्म समान थे सभी धर्म वालों के लिये इसका द्वार खुला हुआ था चाहे हिन्दू हो चाहे हमान सबको एक समान उपदेश दिया जाता था। सब एक स्थान पर बिना ी संकोच के मिलते जुलते थे। इस मत के प्रसार करने वालों में ख्वाजामुईनुद्दीन ती, निजामुद्दीन औलिया, शेख सलीम चिश्ती मलिक मुहम्मद जायसी ऐसे नाम जनका आदर आज भी दोनों में पहले जैसा ही बना हुआ है। आज भी इनके तों पर हिन्दू मुसलमान उसी प्रेम और सम्मान से एकत्रित होते हैं जैसे आदि । में।

यदि ऊपर दिये हुए सिद्धान्तों को देखा जाय तो साफ पता चल जाता है सूफी मत पर हिन्दू वेदान्त, बौद्ध दर्शन का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से पड़ा था

और यह मिश्रित धर्म हिन्दु मुस्लिम संघर्ष का अन्त करने, उनमें एकता, उदार, सहिष्णुता उत्पन्न करने के उद्देश के कारण अधिक प्रिय हो गया था। यह मत उस समय के वातावरण के विष को नष्ट करने का एक महत्व पूर्ण साधन था और उद्देश की पूर्ति में इसको अच्छी सफलता प्राप्त हुई।

भक्ति मत तथा सूफी मत का अध्ययन करने से यह स्पष्ट रूप से हो जाता है कि दोनों मतों पर दोनों ही धर्मों के सुन्दरतम सिद्धान्तों का पड़ा था। दोनों ही सब धर्मों को समान दृष्टि से देखते थे दोनों का आधार तथा श्रद्धा और प्रेम था। दोनों जाति भेद भाव, व्यक्तियों की असमानता, कर्मकाण्ड के विरोधी थे। इन दोनों मतों में हिन्दू तथा मुस्लिम धर्म का स्पष्ट रूप से प्रगट होता है। इन दोनों ने ही धार्मिक संघर्ष को कम किया धार्मिक सहिष्णुता का वातावरण उत्पन्न करने में भारी योग दिया।

हिन्दु सन्तों ने अपने आन्दोलन द्वारा अलौकिक फल प्राप्त किये। उन जाति प्रथा पर आघात किये। बहुदेववाद के सिद्धान्त को निन्दित ठहराया, मू पूजा का खण्डन किया, पवित्र जीवन का प्रचार किया, ईश्वर में अनन्त भ तथा श्रद्धा का उपदेश दिया। धार्मिक कर्मकाण्ड को सहायक ही नहीं बताया मोक्ष प्राप्ति के हेतु इसको एक प्रकार की बाधा घोषित किया। उन्होंने व्यक्ति समानता का प्रचार किया। ऊंच नीच, ब्राह्मण, अछूत सब ही ईश्वर की दृष्टि समान हैं जो भी पवित्र जीवन व्यतीत करेगा मोक्ष प्राप्त कर सकेगा। इन सन्त में किसी ने राम को अपना इष्टदेव माना किसी ने कृष्ण को। उसी में अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा केन्द्रीभूत करदी।

इसके अतिरिक्त इन सन्तों ने हिन्दु मुस्लिम एकता लाने में योग दिया। इन सन्तों का आदर दोनों धर्मों में समान रूप से होता था। इन्होंने वातावरण हिन्दू मुस्लिम एकता के लिये अनुकूल बनाया। हिन्दु समाज की कुरीतियां दूर करने का सफल प्रयास किया। इन्होंने जन्म पर कर्म को प्रधानता दी और निम्न श्रेणियों को प्रकाश दिखाया। इन सन्तों ने राजनैतिक परिस्थितियों के प्रतिकूल होते हुए भी हिन्दु धर्म को सुरक्षा प्रदान की।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दु धर्म पर इस्लाम का प्रभाव विविध प्रकार से पड़ा। प्रथम तो हिन्दुओं के अनुदार तत्वों ने अपनी सुरक्षा करने के हेतु ऐसे कठोर नियम प्रतिपादित किये कि जाति प्रथा में और भी अधिक कठोरता तथा अपरिवर्तनशीलता आ गई। हिन्दु धर्म में विदेशी तत्वों का प्रवेश पूर्ण रूप से रोक दिया गया और एक प्रकार से हिन्दु धर्म की भावना को ही संकुचित कर दिया परन्तु दूसरी ओर उदार मत के लोगों ने मुस्लिम धर्म के लोकप्रिय सिद्धान्तों को अपनाने में तनिक भी संकोच न किया। नानक, कबीर, दादु जैसे सन्तों ने इस्लाम

ने जनप्रिय तथा लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों को अपनाया और देश व्यापी प्रचार किया। दोनों धर्मों के संसर्ग से आपसी सहयोग, सहिष्णुता तथा उदारता का वातावरण उत्पन्न हुआ और दोनों धर्मों में एकता आई। इस एकता की अभिव्यक्ति सूफी मत में हुई। इस प्रकार दोनों ही धर्मों ने एक दूसरे पर अपने अपने प्रभाव डाले और संघर्ष के जीवन का अन्त किया। दोनों धर्म धीरे धीरे एक दूसरे का दृष्टिकोण समझने लगे और इस प्रकार श्रद्धा और सहिष्णुता तथा उदारता का वातावरण तैयार हो गया।

Q. What do you know about the evolution of literature and the influence of Islam on it, in various parts of India after the setting up of Muslim rule here.

प्रश्न—भारत में मुस्लिम शासन स्थापित होने के पश्चात् भारत के भिन्न भिन्न भागों में साहित्यिक विकास तथा उस पर इस्लाम के प्रभाव के विषय में आप क्या जानते हैं?

उत्तर—हिन्दु मुस्लिम संसर्ग का प्रभाव भाषाओं तथा साहित्य के क्षेत्रों में भी पड़ा। मुस्लिम सुलतान साहित्य प्रेमी थे, उन्होंने प्रादेशिक भाषाओं को भी अच्छा प्रोत्साहन दिया और उनके समय में संस्कृत, हिन्दी तथा अन्य देशज भाषाओं में प्रभावशाली ग्रन्थों की रचना हुई और इन भाषाओं के काव्य का बड़ा उत्थान हुआ। हिन्दु तथा मुस्लिम सन्तों ने प्रेम पूर्ण साहित्य की रचना की। भक्ति मत और सूफी मत प्रचारकों ने अपने प्रचार को जन साधारण की भाषाओं में किया और अपनी रचनायें भी उन ही भाषाओं में करके उन भाषाओं के साहित्य को सम्पन्न किया। गुजराती, मरहठी, बंगाली, ब्रजभाषा, हिन्दी, संस्कृत, राजस्थानी आदि सब भाषाओं की उन्नति हुई। इनमें अच्छे अच्छे ग्रंथों का निर्माण किया गया। देहली के सुलतान तथा भिन्न भिन्न प्रदेशों के शासकों ने साहित्यिक के क्षेत्र में अभिरुचि दिखाई और विद्वानों को आश्रय देकर उनके कार्य को सरल बनाया। उस समय के साहित्यिक क्षेत्र में अनेकों नाम आज भी देदीप्यमान हैं। अमीर खुसरो, मीर हसन देहलवी, अहमद थानेसरी, काज़ी अब्दुल मुक्तदीर शनीही, मौलाना शेख जैसे विद्वान् देहली सुलतानों के काल की शोभा बढ़ाते थे। मुहम्मद तुगलक विद्वानों का आदर करता था। उसने दार्शनिकों, कवियों को अच्छा आश्रय दिया था। जौनपुर के शरकी सुलतान बड़े ही साहित्य प्रेमी सिद्ध हुए। उन्होंने विद्वानों को उदार आश्रय दिया। इनके समय में अनेकों ग्रंथों की रचना हुई। दार्शनिक और साहित्यिक क्षेत्र में अच्छी उन्नति हुई। फिरोज तुगलक ने दर्शन शास्त्र तथा

हम्मीर रासा की वीर गाथाओं का उल्लेख है और उस युद्ध का वर्णन है जो अलाउद्दीन तथा हम्मीर के बीच हुआ था। इस ग्रंथ की भाषा सुन्दरतम तथा बड़ी ही प्रभावशाली है। नरपतिसिंह ने 'विजयपाल रासो' नरपति नाल्ह ने 'बीसलदेव रासो' नामक ग्रंथों की रचना की थी। इस तरह हिन्दी साहित्य में बड़ी उन्नति हुई।

सन्तों के काल में भी अनेकों ग्रंथ लिखे गये तथा गति काव्यों की रचना हुई। हिन्दी साहित्य के विषय में कबीर, मीरा, नानक, गोरखनाथ तथा नाम देव के नाम अति प्रभावशाली हैं। इन संतों ने हिन्दी में अपने पदों की रचना की। अपने उपदेश जन साधारण तक हिन्दी द्वारा ही प्रसारित किये। कबीर ने २०,००० पदों की हिन्दी में रचना की। कबीर का रहस्यवाद हिन्दी साहित्य में एक विशेष स्थान रखता है। उनके पदों में कल्पना ने बड़ी ही ऊंची उड़ान भरी है कबीर के ग्रंथों में निर्गुण उपासना का गुण गान किया गया है।

गुरु नानक ने भी अपने पदों द्वारा हिन्दी साहित्य की सेवा की। राजस्थानी तथा ब्रजभाषा में अनुपम तथा भावपूर्ण पदों की रचना मीराबाई द्वारा की गई। मीरा के कई प्रसिद्ध ग्रंथ हैं—'नरसी जी का मायरा', 'गीता गोविन्द टीका' तथा 'राग गोविन्द' बड़ी ही ओजस्वी रचना है।

हिन्दु संतों के साथ साथ सूफी संतों ने भी हिन्दी साहित्य की प्रगति में अपना विशिष्ट योग प्रदान किया। मुल्ला दाऊद ने 'चन्दावत' लिखा। कुतबुन ने 'मृगावती' तथा मंझन ने 'मधुमालती' की रचना की। जायसी ने अपने ग्रंथ 'पद्मावत' में सूफी सिद्धान्तों का सुन्दर निरूपण किया है। यह ग्रंथ काव्य कला का उत्कृष्ट तथा अनुपम नमूना है। जायसी का हिन्दी के साहित्यिक क्षेत्र में अपना विशेष स्थान है। अमीर खुसरो भी हिन्दी का अच्छा लेखक था। वह खिलजी तथा तुगलक राज दरबारों का कवि था। उसने गजलें, इतिहास तथा पहेलियों की रचना की। उसके ग्रंथ आज भी आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं। उसने जन साधारण की खड़ी बोली को साहित्यिक रूप देकर एक चमत्कार पैदा कर दिया है। सरल तथा भावपूर्ण गजलों का निर्माण किया। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी का साहित्यिक विकास पूर्ण रूप से प्रगतिशील रहा। मुसलमानों ने इस विकास में अच्छा योग प्रदान किया।

मराठी साहित्य

मराठी साहित्य का जन्म तो पहले ही हो चुका था परन्तु ऐसा साहित्य जो जन साधारण को आकर्षित कर सके इस मुस्लिम काल में ही आरम्भ हुआ। ज्ञानेश्वर ने 'ज्ञानेश्वरी' नामक प्रसिद्ध काव्य लोक भाषा में लिखा। इनके पश्चात् सन्त एक नाथ ने भागवत का अनुवाद मराठी में कर डाला। इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ

'रुक्मिणि स्वयम्वर' तथा 'भावार्थ रामायण' हैं । दासोपन्त ने 'गीतार्णव' ता
'पदार्णव' की रचना की । इस साहित्य में तुकाराम के अभंग अधिक लोकप्रिय हैं।
इन संतो द्वारा मराठी साहित्य का विकास हुआ और चक्रधर; भास्कर भट्ट,
राज अन्य लेखक हुए जिन्होंने मराठी साहित्य के विकास में अपना योग दिया

बंगला साहित्य

इस भाषा के विकास में मुसलमान शासकों का बड़ा ही महत्वपूर्ण
रहा है । गौड़ के सुलतान नसरत शाह ने बंगला भाषा में महाभारत का अ
कराया था । गौड़ सुलतानों ने दूसरे विद्वान् कृत्तिवास को प्रोत्साहित किया
वह विद्वान् इन सुलतानों से प्रत्येक प्रकार की सहायता प्राप्त करता था।
संस्कृत रामायण का सरल बंगला में अनुवाद किया । इसी प्रकार गीता का अनु
भी बंगला में किया गया । इस भाषा के साहित्यिक विकास में प्रसिद्ध कवि विद्
तथा चण्डीदास का बड़ा हाथ रहा था । इन्होंने बड़े ही रोचक तथा भावपूर्ण
की रचना की थी । विद्यापति की पदावली बड़ी ही संगीतमय है । इनकी क
में भक्ति का भाव स्पष्ट रूप से झलकता है । इस प्रकार मुस्लिम सुलतानों
उन कवियों ने बंगला के साहित्य को सुसम्पन्न करने में बड़ा भाग लिया ।

गुजराती साहित्य

गुजराती साहित्य का विकास भी मराठी साहित्य की तरह से ही हुआ
इसके विकास को दो तत्वों ने अधिक योग दिया । प्रथम जैन साधू द्वितीय भ
मत के संत जैन साधुओं ने अनेकों रास निर्मित किये तथा काव्य ग्रंथ भी लिखे
जब मुसलमानों ने गुजरात की ओर विजय आरम्भ की तो जैन साधुओं ने गुजरा
भाषा की पवित्रता को कायम रक्खा । इन साधुओं ने ही लोकप्रिय साहित्य
नींव डाली । इन साधुओं ने अनेकों रुचिकर काव्य बनाये और इनके द्वारा
जन साधारण को अपने धर्म की ओर आकर्षित किया । इन साधुओं ने गुज
कहानियाँ, जीवन चरित्र तथा धार्मिक ग्रंथों की रचनायें की और इनके द्वा
गुजराती साहित्य विकसित होता गया ।

लाभ वाचक जैन साधु के कई काव्य ग्रंथ प्रसिद्ध हैं इनमें 'मायवत्त' तथा
'माद दोखा चौपाई' अधिक प्रसिद्ध हैं । इन साधुओं ने अनेकों सूत्रों का अनुवा
गुजराती भाषा में किया । श्रीमुनि सुन्दर सूरी ने 'शान्त रास' की रचना १११
लगभग की थी । ज्ञानचन्द्र सूरी, गुण रत्न सूरी, विजय भद्र, हर सेवक नामक जै
साधुओं के नाम अधिक उल्लेखनीय हैं । ज्ञानचन्द्र सूरी ने 'प्रेम प्रकाश' की रच
की, गुणरत्न सूरी ने 'भरत बाहुबलि रास' लिखा । विजय भद्र ने 'हंसराज,
वच्छराज' नामक ग्रंथ लिखा । इस प्रकार जैन साधुओं का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थ

ा है। इनके अतिरिक्त भाटों तथा चारणों ने राजपूत राजाओं की वीरता का वर्ण
न गान किया और उन्होंने साहित्य के विकास में सहायता पहुंचाई।

उत्तरी भारत में भक्ति मत के प्रचार के कारण अनेकों सन्तों ने गुजराती
षा को भी संपन्न बनाया। इनमें मीरा तथा नरसिंह मेहता के नाम विशेष रूप से
सिद्ध हैं। मीरा ने अनेकों पदों की रचना गुजराती में की आज भी घर घर में मीरा
पदों को बड़े चाव से गाया जाता है। गुजराती भाषा की साहित्यिक
न्नति में नृसिंह मेहता का बड़ा हाथ रहा उसके प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सुदामा चरित्र'
'सामलदास नो विवाह' 'गोविंदगमन' 'चातुरीआ' 'हार माला' हैं जो गुजराती
ाहित्य के प्रसिद्ध ग्रन्थ माने जाते हैं। उनके ग्रन्थों में शृंगार तथा भक्ति भाव कूट
ट कर भरा हुआ है। इनकी रचनाओं में आध्यात्मवाद भी विशेष स्थान रखता
। गुजराती भाषा के अन्य प्रसिद्ध रचना 'कादम्बरी' का गुजराती में अनुवाद किया
नके अतिरिक्त पद्म नाभ, बन्सा, वत्सराज तथा तुलसी अन्य विद्वान लेखक हुये
। तुलसी ने भक्त ध्रुव पर एक काव्य ग्रन्थ की रचना की थी। बन्सी के रचित ग्रन्थ
गु चरित्र', 'सुभद्रा हरण' तथा 'शुकदेव आख्यान' प्रसिद्ध हैं। पद्म नाभ ने
पने काव्य ग्रन्थ में राजपूतों की वार्ता पूर्ण कार्यों का प्रभावशाली भाषा में
र्णन किया है।

इस प्रकार अनेकों विद्वानों ने अपने सम्मिलित सहयोग द्वारा गुजराती
साहित्य को सुसम्पन्न बनाया और इसको अनेकों प्रकार से विकसित किया। यह समय
गुजराती साहित्य के लिये बड़ा ही सुन्दर काल सिद्ध हुआ।

तामिल, तेलुगू, कन्नड इत्यादि भाषाओं की भी इस काल में अच्छी
उन्नति हुई।

तेलुगु भाषा को विजय नगर के सम्राटों ने आश्रय प्रदान किया कृष्ण देवराय
स्वयं एक उच्चकोटि का लेखक था। उसने एक प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ की रचना की
थी। उसको तेलुगू में वही स्थान प्राप्त है जो संस्कृत में राजा भोज को, वह विद्वानों
का आदर करता था। उसका राज्य कवि अल्लासानी पद्दन था जो तेलुगु का जनक
कहा गया है उसका प्रसिद्ध काव्य 'मनुचरित्र' है। इस काल का अन्य कवि
तिम्मिम्मया हुआ जिसने 'पारिजात अपहरण' नामक ग्रंथ की रचना की अथवा
दाचित इस भाषा का उच्चकोटि का दार्शनिक माना गया है।

जैन लेखकों ने कन्नड तथा तामिल भाषाओं में अपने अनेक ग्रंथ लिखे और
उनके द्वारा इन भाषाओं की साहित्यिक उन्नति हुई।

मुसलमानों के आने का जो गहन प्रभाव इन भिन्न भिन्न भाषाओं के
क्षेत्रों में पड़ा वह था साहित्य के ऊपर विद्वानों की ठेकेदारी का अन्त और साहित्य
को लोकप्रिय बनाना। अब जो भी ग्रंथ रचे गये वह जनसाधारण के लिये थे।

उनकी भाषा सरल रुचिकर होती थी क्योंकि लिखने वाले सन्त तथा प्रचारक अपना संदेश जनसाधारण तक पहुँचाना चाहते थे। भक्ति आन्दोलन के समर्थकों का उद्देश्य जनता में अपने सिद्धांतों का प्रचार करना था। इसलिये जितने भी ग्रंथ इनके द्वारा लिखे गये यह सब साधारण लोगों के लिये थे। इस प्रकार इस काल में प्रचार लोक साहित्य का विकास हुआ।

संस्कृत की प्रगति

प्रादेशिक भाषाओं के साथ साथ संस्कृत भी अपना विकास करती रही उसमें भी साहित्यिक ग्रंथ लिखे जाते रहे। संस्कृत भाषा के ग्रंथ भिन्न भिन्न क्षेत्रों में लिखे गये। अनेकों नाटकों की रचना की गई इनमें कई नाटक प्रसिद्ध हैं जैसे 'हम्मीर मद, मर्दन' इसकी रचना जयसिंह द्वारा हुई। रवि वर्मन ने 'प्रद्युमन अभ्युदय' लिखा। विद्यानाथ ने 'प्रतापरुद्र' नामक नाटक लिखा। रूप गो गोस्वामी के प्रसिद्ध नाटक 'विदग्ध माधव' तथा 'ललित माधव' आज भी प्रसिद्ध हैं। वामन का 'पार्वती परिणय' बड़ा ही सुन्दर ग्रंथ है। नाटकों के अतिरिक्त अनेकों टीकाओं का निर्माण किया गया। न्याय के क्षेत्र में अनेकों ग्रंथों की रचना की गई। नीलकांत न्याय का प्रकाण्ड पण्डित हुआ जिससे प्रसिद्ध न्याय ग्रंथ व्यवहार 'मयूख' की रचना की इसके अनेकों सिद्धांत आज भी हिन्दू कानून के भाग बने हुये हैं। न्याय के कारण मिथिला बड़ी प्रसिद्ध हुई। वहां का एक भिन्न मत माना जाने लगा। मैथिल तथा संस्कृत का अति प्रसिद्ध विद्वान वाचस्पति मिश्र, मिथिला के अधिक प्रसिद्ध लेखकों में से है। बंगाल में संस्कृत के मुख्य-लेखक रघुनन्दन मिश्र तथा रघुनाथ शिरोमणि हुये बंगाल में न्याय, स्मृति के क्षेत्र में अच्छी उन्नति हुई। राजस्थान में विद्वानों को आश्रय देने वाला राणाकुम्भा अति प्रसिद्ध है उसकी राज सभा में अनेकों संस्कृत के विद्वान रहते थे। विजय नगर साम्राज्य में भी संस्कृत साहित्य की अच्छी प्रगति हुई। हिन्दू धर्म तथा संस्कृति की सुरक्षा का स्थान होने के कारण वहां पर संस्कृत को आश्रय मिलना आवश्यक ही था इस आश्रय के कारण 'विजय नगर' में संस्कृत पर अनेकों ग्रन्थों की रचना हुई। इनके आश्रय में माधव और सायण तथा विद्वान पण्डितों ने मिलकर वेदों पर आधारित ग्रन्थों तथा अनेकों भाष्यों की रचना की। माधवाचार्य ने अपना दर्शन ग्रन्थ निर्मित किया। सायण विजयनगर साम्राज्य का बड़ा ही प्रतिभाशाली विद्वान था उसने वेदों पर सुन्दर भाष्य लिखे जो आज भी प्रमाणित माने जाते हैं। इस प्रकार भारत के दूरस्थ स्थानों में भी संस्कृत निरन्तर फलती फूलती रही।

संस्कृत भाषा के इस समय के ग्रन्थ जीवन से अधिक संबंधित न थे उनके क्षेत्र सीमित होने का कारण स्पष्ट था। उस काल में साहित्य को विकसित करने वाले लोगों ने अपना विषय प्रादेशिक भाषाओं को बनाया अधिकतर ग्रन्थ इन

भाषाओं में ही लिखे गये। इसलिये संस्कृत विद्वानों तक ही सामित रह गई और इसका सम्पर्क जनसाधारण से कट गया। इसी कारण से इस समय की संस्कृत अधिक वैज्ञानिक और कृत्रिम रही।

इस प्राचीन भाषा ने एक कार्य अवश्य किया और वह था हिन्दुओं को एक सूत्र में बांधने का यह भाषा भिन्न भिन्न प्रांतों में एक कड़ी का काम करती रही और प्रादेशिक भाषाओं का उत्थान होने पर भी उनमें पृथकता की भावना न आई। यही इस काल की संस्कृत भाषा की सफलता सिद्ध हुई।

उर्दू

हिन्दू मुस्लिम सम्पर्क ने एक नवीन भाषा को जन्म दिया और समय के साथ साथ इसका विकास होता गया। यह भाषा उर्दू कहलाई, यह सम्मिश्रित भाषा है। संस्कृत तथा उससे निकली भाषाओं का सम्पर्क फारसी भाषा तथा तुर्की भाषाओं से हुआ और एक दूसरे के शब्द तथा विचार आपस में मिलने लगे इस प्रकार भिन्न भिन्न शब्दों के मिलने से उर्दू का निर्माण होता रहा। मुसलमानों के सैनिक पड़ावों तथा सुल्तानों के महलों के आस पास जो हिन्दी बोली जाती थी उसमें मुसलमानों द्वारा बोली जाने वाली फारसी तथा तुर्की के शब्दों का आना आवश्यक तथा अनिवार्य था। फिर जैसे जैसे दोनों धर्म वालों का सम्पर्क बढ़ता गया उर्दू विकसित होती रही। आगे चलकर सुलतानों के राज दरबारों के कवियों तथा लेखकों ने इस भाषा के रूप को साफ बनाया और इसको एक निश्चित रूप देना आरम्भ कर दिया। इस भाषा का प्रथम लेखक अमीर खुसरो हुआ।

ऐतिहासिक साहित्य

हिन्दुओं ने ऐतिहासिक ग्रंथ लिखने की ओर कम ध्यान दिया इसलिये वह इस क्षेत्र में निपुण साहित्य उत्पन्न न कर सके। भारत के हिन्दू ऐतिहासिक ग्रंथों की दौड़ में मुसलमानों से पीछे थे। मुसलमानों ने प्रथम बार हिन्दुओं की रुचि इस ओर उत्पन्न कराई। इस काल में अनेकों मुसलमान इतिहास लेखक हुये। मिनहाजुद्दीन सिराज ने 'तबकते नासिरी' में इस्लामी दुनिया का इतिहास लिखा। शम्से सिराज अफीफ ने 'तारीखे फीरोजशाही' की रचना की। जियाउद्दीन बरानी बड़ा ही निपुण इतिहासज्ञ था। फरिश्ता भी इसी काल का इतिहास लेखक था। अमीर खुसरो ने 'मसनवी' की रचना भी इसी काल में की। इस प्रकार मुसलमानों ने अपनी ऐतिहासिक देन देकर हिन्दुओं में इतिहास लेखन की रुचि उत्पन्न की इन इतिहासज्ञों ने वह सामग्री जुटाई जिस पर उस समय का बहुत कुछ इतिहास आधारित है। इनके द्वारा ऐतिहासिक साहित्य का बड़ा विकास हुआ।

इस प्रकार हिन्दु मुस्लिम सम्पर्क से साहित्यिक क्षेत्र में भी बड़े बड़े परिणाम निकले। प्रादेशिक भाषाओं की उन्नति हुई उर्दू का उदय हुआ और फिर इसका

विकास होता चला गया। ये युग साहित्यिक दृष्टि से सम्पन्न युग कहा जाता है चूंकि मुस्लिम शासकों की उदारता के कारण भिन्न भिन्न भाषाओं में ग्रन्थ लिखे गये। बहुत सी प्राचीन पुस्तकों के अनुवाद किये गये तथा अनेकों टीकायें रची गईं प्रत्येक दशा में साहित्यिक प्रगति हुई।

Q. Give a critical account of the condition of India during the time of Muslim Sultans.

प्रश्न—मुस्लिम सुल्तानों के समय में भारत की दशा का विवेचन वर्णन करो।

उत्तर—जिस प्रकार संस्कृति के अन्य क्षेत्रों में मुस्लिम लोग पृथक परम्परायें तथा विशेषतायें लाये थे ठीक उसी प्रकार कला में भी इनकी विशेषतायें थीं। कला जिस वातावरण में उत्पन्न होती है तथा विकसित होती है वैसी ही विशेषतायें उसमें आ जाती हैं। मुस्लिम कला भी इस सिद्धांत पर आधारित थी। अरब तथा अन्य शुष्क रेतीले, मीलों तक विस्तृत मैदान हरे भरे खेतों के अभाव वाले प्रदेशों में उत्पन्न हुई और फली फूली इस वातावरण का प्रभाव मुस्लिम कला की सादगी और सरलता से स्पष्टतया झलकता है। धार्मिक क्षेत्र में मुसलमानों के एक विशाल मैदान में सामूहिक रूप से एकत्र होकर नमाज पढ़ने का रिवाज था। इसलिये कला में विस्तार तथा सुरक्षा की भावना प्रदर्शित होना अनिवार्य ही था। इस प्रकार मुस्लिम कला में खुले और विस्तृत आंगन, ऊंची मीनार, गोल गुम्बद, विशाल भवन तथा अलंकरण रहित दीवारें दिखाई पड़ती हैं। इनमें असीमित सादगी और सरलता का होना मुस्लिम कला की विशेषता है। इसके विपरीत हिन्दू कला में अलंकरणों की बाहुलता है भारत ऐसा देश है जहां शानदार पर्वत, सरिता, लहलहाते हुये खेत हरे भरे मैदान, फूल पत्तों से भरे हुये बाग इत्यादि विविध प्रकार के दृश्यों की प्रधानता है। इसलिये हिन्दू कला में दृश्यों की भरमार होना अनिवार्य ही थी। यही कारण था कि हिन्दू कला में सजधज अधिक रही थी। विविधता तथा सम्पन्नता भारतीय कला की विशेषता थीं।

इस प्रकार कला के क्षेत्र में दो विभिन्न प्रकार की कलाओं का सम्मिश्रण होना था और यह सम्मिश्रण जिस प्रकार संस्कृति के अन्य क्षेत्रों में स्पष्ट हुआ ठीक उसी प्रकार कला के क्षेत्र में भी इन दोनों कलाओं का समन्वय स्पष्ट रूप से प्रगट होता है। इन दोनों के सम्मिश्रण और समन्वय से एक नवीन मिश्रित कला शैली का उदय हुआ और धीरे धीरे यह नवीन शैली विकसित हुई।

मुस्लिम कला में सादगी थी परन्तु हिन्दू कला में अलंकरण की अधिकता थी। मुस्लिम कला में गुम्बद, महराब तथा मीनारें बनाई जाती थीं परन्तु हिन्दू कला में स्तम्भों का रिवाज था। स्तम्भ प्रत्येक भवन तथा मन्दिरों में आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। मन्दिरों के ऊपर ऊंचे शिखर बनाये जाते थे परन्तु मस्जिदों में ऊपर का भाग गुम्बद कार होता था। हिन्दू कला कोसजी हुई प्रतिमायें बनाने का चाव था परन्तु मुस्लिम धर्म में मूर्ति खण्डन होने के कारण कला भी मूर्ति निर्माण नहीं कर सकती थी और वह सादगी पसन्द थी। इस प्रकार दोनों कलाओं में पूर्ण रूप से विभिन्नता थी दोनों की कल्पनायें, भावनायें तथा परम्परायें मूलतः एक दूसरे के विपरीत थीं परन्तु एक दूसरे के सन्निकट आने के कारण दोनों में सम्मिश्रण होना आवश्यक तथा अनिवार्य था और सम्मिश्रण कहीं कम कहीं अधिक समस्त देश में हुआ भी। किस कला ने किस कला को कितना और किस सीमा तक प्रभावित किया यह एक विवाद ग्रस्त प्रश्न रहा है। फर्ग्युसन का मत है कि भारत की कला पर मुस्लिम प्रभाव अधिक रहा है उसने इस कला का नाम 'इण्डो सारसैनिक' (Indo Sarscinik) रखने का साहस किया है वह इसे 'पठान' कला भी कहता है। परन्तु दूसरा यूरोपीय विद्वान हैवेल इस कला को पूर्ण रूप से भारतीय कहता है। सरजान मार्शल (Sirjohn Marshal) तथा मजूमदार (Majumdar) अपना और ही मत प्रगट करते हैं। वे इस कला को 'इण्डो इस्लामिक' कहते हैं और उनका मत है कि यह कला न तो मुस्लिम कला का स्थानीय रूप है और न हिन्दू कला का परिवर्तित रूप ही है वरन् यह तो दोनों कलाओं का स्पष्ट रूप से सम्मिश्रण ही है। हिन्दू बुद्ध तथा जैन शैलियों के ईरानी तथा मध्य एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका की उन शैलियों के साथ मिश्रित हुई जो मुसलमानों द्वारा भारत में लाई गई थीं। इस समन्वय में दो बातों ने विशेष रूप से योग दिया। प्रथम यह कि मुस्लिम विजेताओं ने अनेकों मन्दिरों को मस्जिदों में परिवर्तित किया दूसरे मन्दिरों की सामग्री से मस्जिदों का निर्माण कराया। मुस्लिम शासकों के भवन तथा मस्जिद निर्माण में अनेकों हिन्दू कारीगर भी काम करते थे इसलिये इन नवीन निर्मित इमारतों में हिन्दू कला का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था।

मुस्लिम कला ने अपनी विशेषतायें भारत की कला में मिलाईं, गोल गुम्बद, मीनारें तथा महराब को फैलाया। विविध प्रकार के रंगीन पाषाणों का प्रयोग करना आरम्भ किया। अलंकरण की जगह कुरान की आयतों ने ले ली। मन्दिरों के पर्व कलश का स्थान मस्जिदों के पाषाण कलश ने ले लिया। अब हिन्दू प्रभाव के कारण मस्जिदों की तथा भवनों की मीनारें भी अलंकृत दिखाई पड़ने लगीं।

मुस्लिम भवन निर्माण में हिन्दू कला का विशेष रूप से अनुकरण किया गया। सुदृढ़ता तथा मनोरमता हिन्दू कला की छाया प्रगट करती है। मुसलमानों ने इसमें कला का विस्तार तथा विशालता का प्रभाव हिन्दू कला पर डाला। इस तरह दोनों ही कलाओं ने एक दूसरी को अपनी अपनी देन प्रदान की और नवीन कला शैली को सुसम्पन्न किया।

प्रभाव की अधिकता तथा न्यूनता के दृष्टिकोण से दिल्ली तथा उसके आस पास की कला के नमूनों में इस्लामी तत्वों की प्रधानता दिखाई पड़ती है परन्तु बंगाल, दक्षिण गुजरात में हिन्दू कला की प्रधानता अधिक हो गई है। गुजरात में तो गुजराती कला का पूर्ण रूप से प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। काश्मीर में वहां के बने भवनों की ही नकल कर ली गई।

नवीन मिश्रित 'इण्डो इस्लामिक' वास्तु कला की एक महत्वशाली विशेषता यह थी कि खुला हुआ विस्तार पूर्ण आंगन चारों ओर बरामदों से घिरा होता था। मस्जिदों की रम्य मीनारें तथा भवनों के गुम्बद अपने स्थान पर बड़े ही अनुपम व अलौकिक प्रतीत होते थे। राजपूत काल में जिस कला का उदय हुआ था, कुछ परिवर्तनों सहित मुसलमानों ने इसी को अपना लिया था। इस प्रकार इस युग की वास्तु कला दोनों कलाओं का मिश्रण ही थी और इसी दशा में इसका प्रयोग भारत के भिन्न भिन्न भागों में होता रहा। कहीं मुस्लिम प्रभाव अधिक तो कहीं हिन्दू प्रभाव की प्रधानता रही। कहीं दोनों में सुन्दरतम समन्वय हुआ। इस प्रकार मिली जुली नवीन कला शैली दोनों वर्गों के मेल जोल को प्रमाणित करती रही है।

जिन कला कृतियों में मुस्लिम तत्व की प्रधानता रही वह विशेष रूप से दिल्ली में तथा उसके आस पास दिखाई पड़ती है कुतुब मीनार तथा कुव्वत मस्जिद ऐसे ही उदाहरण हैं इन दोनों में हिन्दू तत्व भी स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है। इन दोनों में हिन्दू भवनों की सामग्री काम में लाई गयी है और हिन्दू अलंकरण का प्रभाव दिखाई पड़ता है। अलाउद्दीन खिलजी के समय में मुस्लिम कला में एक प्रकार की नवीनता आई और फारसी कला की ओर अधिक झुकाव हुआ। जमात खां की मस्जिद इसी समय की कला कृति है। इसी सुल्तान ने सीरी में एक दुर्ग का निर्माण किया था। इस पर फारसी कला की प्रधानता दिखाई पड़ती है। अलाई दरवाजा, हौज अलाई, हौज खास कला के अच्छे नमूने हैं। इस काल की कला कृतियों में हिन्दू प्रभाव अपेक्षाकृत कम हो गया था।

तुगलकों के समय में कला में और भी परिवर्तन हुआ। खिलजियों के समय की दिखावट अब और भी कम हो गई और हिन्दू प्रभाव विशेष रूप से [illegible]

इस समय के भवनों में सादगी तथा ठोस पन विशेष रूप से दिखाई पड़ती है। फीरोज तुगलक ने अनेकों भवनों का निर्माण कराया। बाग लगवाये तथा मस्जिदें बनवाईं. इस समय कला के उदाहरण—तुगलकाबाद का दुर्ग तथा तुगलकशाह का मकबरा प्रसिद्ध हैं। तुगलकों के बाद कला में फिर परिवर्तन आया और सैयद वंश के समय में कला ने हिन्दू कला से फिर प्रेरणा ली और इस समय की निर्मित इमारतों में फिर हिन्दू कला की छाप पड़ी। यही दशा लोदी काल में भी रही। इस समय के मकबरे अधिक प्रसिद्ध हैं इनमें सिकन्दर लोदी का मकबरा उल्लेखनीय है। इसके अन्दर अलंकरण किया गया था जो हिन्दू अलंकरण का अच्छा नमूना है। इस प्रकार तुगलक तथा खिलजी काल की बनी हुई इमारतों में मुस्लिम तत्व अधिक रहा अरबी कला को आधार बनाकर भवनों तथा मस्जिदों का निर्माण किया गया था।

परन्तु जैसे जैसे दिल्ली से दूर हटते हैं हिन्दू कला की छाप गहरी होती चली जाती है और स्थानीय विशेषता अधिक प्रगट होने लगती है। जौनपुर में ऐसा ही हुआ यह प्रसिद्ध नगर उस समय संस्कृति का महत्वशाली केन्द्र था। शर्की सुल्तानों ने इसकी भारी उन्नति में महान् योग दिया था। यहां पर अनेकों सुन्दर तथा आकर्षक भवन तथा मस्जिदों का निर्माण किया गया था। यहां बने हुये बड़े दरवाजे में हिन्दू प्रभाव विशेष रूप से प्रगट होता है। जौनपुर की कला का यहां की अटाला मस्जिद भी एक अच्छा नमूना है।

बंगाल में भी दोनों कलाओं की मिश्रित शैली का अधिक प्रयोग किया गया। यहां पर ईंटों का प्रयोग अलंकरण की चमक दमक तथा मेहराबों के प्रयोग ने भवनों में एक आकर्षण उत्पन्न कर दिया है। इस समय के निर्मित भवन हिन्दू प्रभाव को स्पष्ट रूप से प्रगट करते हैं। गौड़ में जिन भवनों का निर्माण हुआ उन पर भी हिन्दू कला की गहरी छाप लगी है।

मालवा में फिर मुस्लिम कला की प्रधानता है। मांडू में जो मस्जिदें तथा भवन बनाये गये हैं। उनमें मुस्लिम तत्व ही अधिक है यहां पर स्थानीय विशेषताओं को छोड़कर मुस्लिम विचार धारा को ही महत्व दिया गया है। यहां पर दोनों कलाओं के सुन्दर समन्वय का अभाव साफ रूप से प्रगट होता है यहां पर बनी हुई कई कला कृतियां हैं जैसे बाजबहादुर और रूपमति के महल, हिंडोला महल तथा जहाज महल, जामी मस्जिद अधिक प्रसिद्ध हैं। इन सब में मुस्लिम तत्व ही प्रधान दीख पड़ता है।

गुजरात में आकर फिर कला ने पलटा खाया और यहां पर कला में हिन्दुत्व तथा स्थानीय विशेषता फिर उभर पड़ी। दोनों कलाओं का सुन्दरतम मिश्रण

जिन भवनों तथा मस्जिदों का निर्माण हुआ उनमें हिन्दू कला का गहन प्रभाव मुसलमानों के उदारता पूर्ण व्यवहार का पता देता है।

इस प्रकार हिन्दू तथा मुस्लिम समन्वय संस्कृति के सब क्षेत्रों में एक समान ही रहा और कला का क्षेत्र भी समान रूप से प्रभावित हुआ।

Q. What do you know about the social and econom condition of the people during the Mughal period?

प्रश्न—मुगल काल में लोगों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा विषय में आप क्या जानते हैं?

उत्तर—मुगल कालीन सामाजिक दशा को समझने के लिये यह आवश्य है कि समाज की रचना को समझ लिया जाय क्योंकि उस समय का समाज रह सहन के स्तर के दृष्टिकोण से श्रेणियों में विभाजित था। इस समय के समाज । आधार सामन्तवाद था। बादशाह से आरम्भ होकर उसके चारों ओर सामन्तों के क्रम से श्रेणियां बनी होती थीं। यह वर्ग शासन कार्य चलाता था। यह वर्ग देश भर में थोड़ा ही था। दूसरे तथा निम्न स्तर पर जीवन व्यतीत करने वाला वर्ग मध्यम श्रेणी का था। इसमें राज्य कर्मचारी तथा व्यापारी वर्ग सम्मिलित था। तीसरी श्रेणी में शिल्पी, श्रम जीवी, ग्रामीण तथा कृषक होते थे। इनका जीवन स्तर काफी निम्न था। इस प्रकार समाज की रचना पिरामिड के आकार की थी। जिसकी चोटी पर बादशाह का स्थान था।

उच्च वर्ग

मुगल कालीन उच्च वर्ग भोग विलास तथा ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करता था। बादशाह का दरबार संसार भर में शानदार दरबार था। सामन्त राज दरबार की शान से प्रभावित होकर स्वयं बहुत शान का जीवन व्यतीत करते थे। वह बड़े शानदार वस्त्र धारण करते और आभूषणों का प्रयोग करते थे। उनका जीवन विलासता से ओत प्रोत रहता था। धनी वर्ग का जीवन स्तर अन्य दोनों श्रेणियों के जीवन स्तर से बहुत ऊंचा था। मुगल अधिकारी आमोद प्रमोद का जीवन व्यतीत करते थे। सुख, आनन्द तथा ऐश्वर्य पूर्ण जीवन ही इस श्रेणी का एक मात्र उद्देश्य बन गया था। धन का बड़ी बेरहमी से व्यय होता था। सुन्दर वस्त्रों तथा कीमती आभूषणों की मुगल दरबारियों में होड़ लगी रहती थी। चूंकि मुगल सम्राट स्वयं शान का जीवन व्यतीत करते थे अतः उनके पास जीवन व्यतीत करने वाले पदाधिकारी अवश्य ही उनका अनुकरण करते। इतना ही नहीं यदि मुगल सम्राट

धानी को छोड़ कर बाहर निकलते थे तो भी उनके राजदरबार की शान उनके र रहती थी। भोग विलास की सब सामग्री उनके साथ साथ चलती थी। यदि ल सेना कहीं जाती थी तो ऐसा मालूम होता था मानों भोग विलास तथा ऐश्वर्य ओत प्रोत कोई नगर आगे बढ़ रहा है। सामन्तों को चका चौंद करने वाले अस्त्र व देखने वालों को आकृषित कर लेते थे।

इस धनी वर्ग की वेश भूषा, भोजन, आमोद प्रमोद के साधन, जीवन ाली सबमें विलासता टपकती थी। इनके वस्त्र कीमती मलमल, शानदार रेशम ज़री के बेल बूटे काढ़ कर तैयार किये जाते थे। इसी प्रकार यह वर्ग अपने खाने भी बड़ा व्यय करता था। भोजन बड़ा उत्तम तथा स्वादिष्ट और कीमती होता । इस समय धनी वर्गों में ईरानी अमीरों की देखा देखी बड़ी बड़ी दावतें देने शौक हो गया था। इन दावतों पर बड़ा व्यय किया जाता था। फल खूब प्रयोग लाये जाते थे। मांस भोजन का साधारण अंग था। ग्रीष्म काल में बर्फ का प्रयोग ी लोग करते थे। परन्तु उच्च वर्ग साल के बारह महीनों बर्फ प्रयोग में लाते । शराब भी खूब प्रयोग में लाई जाती थी। विदेशों से उत्तम प्रकार की शराब ई जाती थी।

सामन्त लोग अनेकों प्रकार के खेल तमाशों में अभिरुचि रखते थे। मुगल ाट खेल कूद तथा व्यायाम सम्बन्धी कार्यों में विशेष दिलचस्पी रखते थे। कार, पोलो, पशुयुद्ध जैसे तमाशों का बड़ा चाव था। अकबर ने पोलो खेलने के ने एक ऐसी चमकदार गेंद बनवाई थी जिसके द्वारा रात में भी इस खेल को ी रक्खा जा सके। अकबर को हाथियों के युद्ध का भी बड़ा चाव था। वह इस ई के लिये उच्चतम और दृढ़ हाथी पालता था। इन खेलों के अतिरिक्त शतरंज एक खेल भी खेले जाते थे। लोगों में तम्बाकू पीने का भी रिवाज था। मद्यपान अच्छा रिवाज था। औरंगज़ेब को छोड़ सभी मुगल सम्राट अधिकता से मद्यपान ते थे और हर प्रकार के खेलों में दिलचस्पी रखते थे। अकबर के दो पुत्रों का ान की अधिकता के कारण अल्प आयु में ही मृत्यु हो गई थी। जहांगीर शराब जीवन भर दास बना रहा। फिर सम्राटों का अनुसरण उच्च वर्ग करता ही था।

उच्च वर्ग के लोग वस्त्रों पर बड़ी अधिकता से व्यय करते थे। हिन्दू तथा मुसलमान सामन्त एक ही प्रकार के कीमती वस्त्र धारण करते थे। इनको रत्नों से े हुये आभूषण पहनने का बड़ा चाव था। अकबर द्वारा अनेकों वस्त्र उन व्यक्तियों बांट दिये जाते थे जिनका विशेष रूप से सम्मान किया जाता था। धोती भी योग में आती थी। परन्तु विशेष उत्सवों तथा समारोहों के अवसर पर पाजामे ा अचकन का प्रयोग किया जाता था। हिन्दू मुसलमानों की वेश भूषा में कोई ान्तर नहीं था।

सम्राट की देखा देखी सामन्त लोग भी अपने महलों में कई २ स्त्रियां दासियां तथा नर्तकियां रखते थे। अब्दुल फजल का कहना है कि अकबर के अन्तःपुर में ५००० स्त्रियां थी जिन पर भारी व्यय होता था। इस समय स्त्रियों का अधिक महत्व न था। वे लोग विलास की सामग्री मात्र समझी जाती थी। पर्दे का कड़ा रिवाज था। इस कारण स्त्रियों का नैतिक पतन होता जा रहा था। परन्तु इस काल में कई महत्व पूर्ण स्त्रियां भी हुई हैं जैसे शाहजहां की पुत्रियां जहान आरा बेगम, रोशन आरा और औरंगजेब की विद्वान लड़की जेबुन्निसा, चांदबीबी, शिवाजी की माता जीजा बाई और राजा राम की पत्नी तारा बाई थी। परन्तु जनसाधारण स्त्रियों की क्या दशा थी इसका ठीक ठीक पता नहीं चलता। हिन्दुओं में सती प्रथा प्रचलित थी। बाल विवाह का भी रिवाज था। इस काल में स्त्रियों ने अधिक उन्नति न की थी।

मध्यम वर्ग

इस वर्ग में राज कर्मचारी तथा व्यापारी लोग सम्मिलित थे। राज कर्मचारी अपने अपने कार्मो के अनुसार जीवन के स्तर को कायम रखते थे। इनको विलासिता का अधिक चाव न था। मोरलैण्ड (More Land) का कहना है कि इन लोगों का जीवन अपेक्षाकृत सुख का जीवन था। व्यापारी लोग सादा जीवन व्यतीत करते थे। यह बहुधा कम से कम व्यय करके जीवन की आवश्यकतायें पूरी करते थे। अपने धन को छिपा कर रखते थे क्योंकि उनको स्थानीय अधिकारी का भय रहता था कि कहीं वह उस धन का अपहरण न करले। इस वर्ग के लोग निम्न वर्ग के लोगों से अधिक ऊंचा जीवन स्तर रखते थे। इनका जीवन कठिनाई पूर्ण न था। इनका जीवन सुख तथा संतोष का जीवन था।

निम्न श्रेणी

इस श्रेणी में श्रमिक, कृषक, ग्रामीण तथा शिल्पी थे। इनका जीवन कष्टमय था। इनके मकान गन्दे तथा भद्दे होते थे। इनके पास कपड़ों का अभाव रहता था। इनको ऊनी वस्त्र तथा जूते नसीब न होते थे। यह लोग दीन दशा में रहते थे। इनके कष्टों की उस समय सीमा न रहती थी। जब अकाल पड़ जाता था इन लोगों को वेतन तो कम मिलता था इसलिये अपनी अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये बेईमानी का सहारा लेना पड़ता था। फ्रान्सिस्को पलसीर्ट (Fransisco Palscee) का कहना है कि इस वर्ग की तीन श्रेणी दासों से कुछ ही अधिक अच्छा जीवन व्यतीत करते थे। इनमें श्रम जीवी, चपरासी और सेवक थे। दुकानदारों के पास धन तो था परन्तु वह उसे छिपा कर रखते थे कि कहीं सरकारी कर्मचारी उसका अपहरण न करले। इनको सरकारी कर्मचारियों को निर्धारित मूल्य पर वस्तुयें देनी पड़ती थी। इन पर सरकार का पूरा अंकुश रहता था।

कृषक वर्ग सादा सादा जीवन बिताते थे। अकबर की तो कृषकों के प्रति बड़ी दया थी। इनका विशेष ध्यान रक्खा जाता था। सरकारी कर्मचारी कृषकों को तंग करने के कारण दंड पाते थे परन्तु शाहजहाँ के समय में कृषकों की दशा अधिक खराब हो गई थी और अब इनमें दरिद्रता का मूल विद्यमान था। फिर भी यह वर्ग सन्तोष से रहता था।

सामाजिक प्रथायें

इस युग में दासता की प्रथा प्रचलित थी और इस प्रथा ने मनुष्य का नैतिक पतन होने में बड़ा काम किया। अन्ध विश्वास की कुरीति हिन्दू तथा मुसलमान दोनों में समान रूप से फैली हुई थी। ज्योतिष द्वारा जानी हुई भविष्य वाणी में लोगों का अधिक विश्वास रहता था। हिन्दू मुसलमान तथा सिक्ख सब सन्तों, पीरों तथा गुरू को पूजते थे और उनके मज़ारों तथा कब्रों पर चढ़ावे चढ़ाते थे। अन्ध विश्वास ने स्त्रियों पर गहरा प्रभाव डाला था। बाल विवाह की प्रथा थी, हिन्दुओं में सती का रिवाज था, बहु पत्नि विवाह भी होते थे, दहेज का बड़ा रिवाज था। अकबर ने इन विवाह सम्बन्धी कुरीतियों को रोकना चाहा था परन्तु उसका प्रयत्न सफल न हो सका। जाटों में विधवा विवाह हो जाते थे और इस प्रकार के विवाह कुछ कमी के साथ महाराष्ट्र में भी सम्भवतः होते थे।

हिन्दू तथा मुसलमान अपने अपने त्यौहार बड़ी सज धज और शान शौकत से मनाते थे। सुन्दर वस्त्र धारण करते तथा आभूषण पहन कर निकलते थे। मन्दिरों में जाते तथा मेलों में घूमते थे। बालक भी आज की तरह मेलों में आनन्द लेते थे। हिन्दुओं के मुख्य त्यौहार, होली, दशहरा तथा रक्षाबन्धन थे। इसी प्रकार मुसलमानों में ईद, बकरा ईद और मुहर्रम के प्रधान त्यौहार थे। ईद के अवसर पर गोवध नहीं किया जाता था।

जाति प्रथा पहले की ही तरह विद्यमान थी। छुआ छूत भी चलती थी। मुसलमानों के शिया तथा सुन्नी वर्गों में द्वेष की भावना बनी हुई थी। वह एक दूसरे को काफिर कहकर पुकारते थे और एक दूसरे के धर्म सिद्धान्तों का मखौल उड़ाते थे। लोगों में अतिथि सत्कार की अधिक भावना थी। योरोपीय यात्री टैवरनियर ने हिन्दुओं की बड़ी प्रशंसा की है वह लिखता है कि नैतिकता में हिन्दू अच्छे हैं। विवाह करने पर वे कदाचित ही अपनी पत्नियों के प्रति अश्रद्धा तथा अविश्वास रखते हैं, उनमें व्यभिचार का अभाव है और उनके अस्वाभाविक अपराधों के विषय में तो कभी कोई सुनता ही नहीं। इस यात्री ने हिन्दुओं को संयमी बताया है।

हिन्दू मुसलमानों के सम्बन्ध आपस में अच्छे थे। एक दूसरे के प्रति उदारता का व्यवहार किया जाता था। अकबर के महान प्रयत्नों से हिन्दू मुस्लिम मेल से रहते थे दोनों के सामाजिक सम्बन्ध अति सुन्दर थे। दोनों एक से वस्त्र धारण

करने लगे। हिन्दू भी मुसलमानों की तरह निकाह में सेहरे तथा जामे का प्रयोग करने लगे। पायजामा तथा अचकन का साधारण प्रचलन हो गया था। हुक्का हिन्दू भी पीने लगे। दोनों वर्ग एक दूसरे के त्यौहारों में सम्मिलित होते थे। सैयद अब्दुल्ला हिन्दू के होली तथा अन्य त्यौहारों में बड़ा भाग लेता था। इसी प्रकार दौलतराव सिन्धिया भी अपने साथियों सहित हरे वस्त्र धारण कर मुहर्रम के त्यौहार को मनाता था। दोनों वर्गों की स्त्रियां एक समान आभूषण धारण करती थीं। दोनों में प्रेम की भावना फैली हुई थी।

सामाजिक पतन

शाहजहां के अन्तिम दिनों में समाज की अवस्था गिरने लगी थी क्योंकि नैतिक स्तर गिरने लगा था और सामाजिक दृष्टि से कुरीतियां तथा अन्धविश्वास का साधारण वातावरण बन गया था। यह दशा औरंगजेब के समय और गिरी और समाज पतित हो गया। सामन्त वर्ग की दशा तो शोचनीय थी। उनका अधिक समय मदिरा पीने तथा स्त्रियों में रंग रलियां करने में बीतता था। उनकी वीरता विलीन हो रही थी और वह दुर्बलता के शिकार हो रहे थे राज पदाधिकारी अपने कर्तव्य पालन की भावना खो चुके थे। निम्न श्रेणी के पदाधिकारी तो घूस लेने में तनिक भी संकोच न करते थे। राजसभा ऐसे व्यक्तियों से भरी हुई थी जिनका काम ही षड्यन्त्र करना और विलासता का जीवन व्यतीत करने का रह गया था जो प्रत्येक समय चापलूसों में लगे रहते थे। इन लोगों की नैतिकता पूर्ण रूप से पतन हो चुका था। मस्जिदें तक दुराचार का अड्डा बन गई थीं क्योंकि के जीवन की पवित्रता का लोप हो गया था। सच्चे और पवित्र धर्म का स्थान अन्धविश्वासों ने ले लिया था और कब्रों तथा फकीरों की पूजा होने लगी थी। जादू टोने में लोग विश्वास करने लगे थे। औषधियों का स्थान भी कभी कभी तावीज और गंडे ले लेते थे। ऐसे भी उदाहरण हैं कि साधना सिद्धि के लिये नर बलि तक से संकोच नहीं किया जाता था। इस प्रकार औरंगजेब के समय तक आते आते समाज ही नहीं प्रत्येक क्षेत्र में अवनति के आसार प्रगट हो गये थे और चारों ओर पतित वातावरण फैल गया था।

मुगल कालीन समाज का अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि भिन्न श्रेणियों से विभाजन के कारण यदि एक ओर धन दौलत सामन्तों तथा धनी वर्गों के पैर चूमती थी तो दूसरी ओर अनेकों अवसरों पर भुकमरि का सामना करना पड़ता था यदि एक ओर विलासिता का जीवन मौजें मारता था तो दूसरी ओर करों के भार से दबी हुई मानवता कराहती थी। निम्न वर्गों के खून और पसीने की कमाई उच्च वर्गों द्वारा हड़प ली जाती थी शोषण की मात्रा अधिक थी।

दासता के प्रचलन से मानव सम्मान पददलित हो रहा था। स्त्रियों की दशा अधिक उन्नत न थी और उनमें के पर्दे तथा अशिक्षा के रिवाज ने प्रगति को रोक दिया था। यदि राज दरबार और सामन्तों तथा उच्च वर्गों के जीवन को देखा जाये तो उस समय के समाज का रूप कुछ और ही दिखाई पड़ता है परन्तु अन्य वर्गों का जीवन कुछ अधिक प्रगतिशाली न था। देश में धन दौलत की कमी तो न थी परन्तु उसका वितरण ठीक न था, धार्मिक तथा अन्य क्षेत्रों में भी अन्त में आते आते ह्रास के लक्षण स्पष्टतया प्रगट हो रहे थे।

आर्थिक दशा

मुगल काल में भारत की आर्थिक दशा उन्नत थी। समृद्धि तथा खुशहालि फैली हुई थी, देश में विविध प्रकार के उद्योग धन्धों का प्रचलन था। कृषि अधिक तर लोगों का पेशा था। कृषकों की हालत सुधारने का शेरशाह तथा अकबर ने प्रयास किया और उनको सुविधायें दी थी परन्तु खेती की सिंचाई के अच्छे साधनों का अभाव था। कृषक की फसलें तथा यंत्र आज के प्रकार के ही होते थे। यहां की उपज अनाज, गन्ना, नील तथा रेशम और कपास थी। तम्बाकू की खेती भी प्रारम्भ हो गई थी। कृषक तीसरी श्रेणी में गिना जाता था परन्तु वह अन्य श्रम-जीवियों से अधिक समृद्धिशाली था, परन्तु स्थानीय अधिकारी कृषकों को बहुधा तंग करते थे। इसके अतिरिक्त निरन्तर युद्धों के समय भी खेती को हानि होती थी।

अकाल के समय जन साधारण की बुरी दशा हो जाती थी। फसलें नष्ट होने से भोजन पर्याप्त नहीं हो पाता था। मुगल सम्राटों ने अकाल के विरुद्ध कोई स्थाई व्यवस्था नहीं की थी ताकि अकाल का मुकाबला किया जा सके। फल यह होता था कि कुछ लोग तो अकाल से मरते थे और कुछ बाद में होने वाले रोगों के कारण हैजा उस समय की मुख्य बीमारी थी फिर भी कृषक ग्रामों में संतोष पूर्वक जीवन बिताते थे उनकी आवश्यकतायें न्यून थीं और उनकी आकांक्षायें कम। वह राज्य के विरुद्ध कोई कार्य नहीं करते थे।

कृषि के अतिरिक्त अन्य प्रकार के उद्योग धंधों से देश भरा पड़ा था। शिल्पी भिन्न भिन्न प्रकार की वस्तुयें तैयार करते थे। देश के मुख्य धंधे वस्त्र बनाना वस्त्रों की रंगाई कला, जलपोत बनाना तथा हस्तकला से वस्तुयें तैयार करना इत्यादि थे।

इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यवसाय सूती कपड़े का था, देशभर में यह व्यवसाय समृद्धिशाली था। सहस्त्रों व्यक्ति इस व्यवसाय में लगे हुए थे। देश के अनेकों केन्द्रों में यह धंधा विस्तृत था। पाटन बुरहानपुर वस्त्रों के लिये प्रसिद्ध नगर थे। जौनपुर, ढाका, पटना तथा बनारस में महीन मलमल बनाई जाती थी। रंगाई तथा छपाई का अच्छा काम होता था। मछलीपट्टम छपाई का प्रसिद्ध केंद्र

था, छपाई में पक्के रंगों का प्रयोग होता था। सूरत गोटा, किनारी तथा जरी के बेल बूटों के लिये प्रसिद्ध थे। ढाका सुन्दर मखमल तथा सूती कपड़ों का केंद्र था। लाहौर में अनुपम शाल बनाये जाते थे। फतहपुर सीकरी में दरियां बनती थी, मोटे कपड़ों पर अच्छा छपाई का काम होता था।

रेशम के कपड़े भी अधिक मात्रा में तैयार किये जाते थे। लाहौर, गुजरात तथा बंगाल में ये व्यवसाय अच्छी प्रकार समृद्ध था। ऊनी वस्त्र भी में बुने जाते थे काश्मीर के शाल उस समय भी प्रसिद्ध थे।

जलपोत बनाने का उद्योग भी अति प्रभावशाली था। ऐसा कहा कि पुर्तगालियों ने अपने मजबूत जलपोत भारत में ही तैयार कराये। इस व्यवसाय के लिये अति प्रसिद्ध थे। गन पावडर के बनाने के काम में शोरा भी भारत में अधिक मात्रा में तैयार किया जाता था। विदेशी लोग अपने देशों में ले जाते थे। बड़े उद्योगों के साथ साथ छोटे छोटे धंधे भी जैसे बेलदार टोपी बनाना, ट्रंक बनाना, पेटी बनाना, तश्तरियां तथा छोटी संदूकचियां बनाना इत्यादि।

जन साधारण के अतिरिक्त राज्य की ओर से अनेकों प्रकार के कारखाने खोले गये थे। जिनमें प्रचुर मात्रा में बहुमूल्य वस्तुयें बनाई जाती थी। आगरा, अहमदाबाद में इस प्रकार के अनेकों कारखाने काम करते थे। अधिकारी भी अपने अपने प्रान्तों में उद्योग को प्रोत्साहन देते थे। कारखानों की बहुमूल्य वस्तुएं सम्राट को भेंट के रूप में प्रस्तुत किया करते थे अपने प्रयोग के लिये भी प्रचुर मात्रा में वस्तुओं को खरीदते थे। इन कारखानों काम करने वाले शिल्पी बड़े ही कुशल होते थे और सुन्दर से सुन्दर वस्तु सकते थे। बर्नीयर ने इस प्रकार के कारखानों को देखा था। उसने यह भी है कि सुनारों तथा अन्य हस्तकला के शिल्पियों के साथ उचित व्यवहार जाता था और उनकी वस्तुएं कम दामों पर बेचने को कहा जाता था।

इन उद्योगों द्वारा जो वस्तुए तथा वस्त्र तैयार किये जाते थे वह देश की आन्तरिक आवश्यकताओं को तो पूरा करते ही थे इसके अतिरिक्त वह में एशिया तथा योरुप के देशों की मांग को भी पूरा करते थे।

व्यापार

व्यापार की दशा अच्छी थी। अकबर के समय शान्ति का वातावरण के कारण आन्तरिक व्यापार को भी बड़ी वृद्धि हुई थी। विदेशों के साथ भी पैमाने पर व्यापार होता था।

देश के आन्तरिक व्यापार की सुगमता के लिये अच्छी सड़कों का निर्माण हुआ था। उसके दोनों ओर छायेदार वृक्ष लगाये गये थे। थोड़ी थोड़ी दूर

हुए तथा सरायें थी। सड़कों पर जाने में सुरक्षा रहती थी। लूटमार, चोरी तथा डाकों का भय नहीं था। स्थानीय कर्मचारी इस सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान रखते थे। शेरशाह ने इस प्रकार की सड़कों की ओर विशेष ध्यान दिया था। उसकी चलाई हुई परम्परा को अकबर ने भी जारी रक्खा था। देश के प्रधान केन्द्र सड़कों द्वारा जोड़े गये थे। शेरशाह ने ग्रायड ट्रङ्क रोड को पूरा कराया था। एक प्रसिद्ध सड़क आगरे से अहमदाबाद और सूरत को जाती थी और फिर अन्य व्यापारिक केन्द्रों से मिलती थी। उत्तरी भारत को दक्षिण से जाने वाली सड़कों का विशेष ध्यान रखा जाता था। नदियों द्वारा भी अधिक व्यापार होता था, इलाहाबाद से गंगा में होकर बंगाल के साथ बहुत व्यापार होता था। देश में यह व्यापार इतना अधिक था कि जिन लोगों के हाथ में यह व्यापार था वह बड़ा धनी वर्ग था और आराम तथा ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करता था।

देश का व्यापार विदेशों के साथ भी बड़ी अच्छी दशा में था। भारत के जलपोत विदेशी व्यापार में बड़ी सहायता पहुंचाते थे। विदेशी व्यापारी स्वयं भारत में आते और बहुमूल्य वस्तुएं ले जाते थे जिन को विदेशों में बेचकर भारी लाभ उठाते थे। विदेशी व्यापार अधिकतर समुद्रों से होता था, भारत के समुद्री किनारे पर अनेकों बन्दरगाह थे। गुजरात में सूरत, भड़ौंच, खम्भात प्रसिद्ध थे। बम्बई में गोआ तथा बेन्डल, इसी प्रकार वेसीम, चोल, कालीकट तथा कोचीन अन्य बन्दरगाह थे। पूर्वी किनारे पर नीगा पट्टम, मछली पट्टम तथा बंगाल की ओर सीता गांव, चटगांव, श्रीपुर तथा सोनार गांव के अति प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। सूरत विदेशी व्यापार का मुख्य केन्द्र था जहां लगभग प्रत्येक विदेश से आने वाला व्यापारी मिलता था। इस प्रकार सूरत एक विश्व विख्यात नगर बन गया था।

देश में आने वाली वस्तुओं में सोने चांदी, रेशम, घोड़े, धातु, हाथीदांत, कस्तूरी, रत्न, मखमल, सुगन्धित द्रव, चीनी मिट्टी का सामान इत्यादि वस्तुएं थां। अफ्रीका के दास भी भारत में लाये जाते थे और हमारे देश से बाहर जाने वाली वस्तुओं में भिन्न भिन्न प्रकार के वस्त्र, नील, अफीम तथा खाद्य पदार्थ होते थे। देश में आने वाले माल पर चुंगी कम होने के कारण विदेशी व्यापारियों को बड़ा प्रोत्साहन मिलता था और यह व्यापार वृद्धि पूर्वक होता जा रहा था। अकबर के शासन में ही अंग्रेजों तथा डचों ने भारत में अनेकों स्थानों पर अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित कर लिये थे। देश में विदेशों से आया हुआ सामान अधिकतर उच्च वर्ग ही प्रयोग में लाता था निम्न वर्ग में इतनी सामर्थ्य ही न थी कि वह विदेशी सामान को खरीदता।

कभी कभी आन्तरिक युद्धों और राजनैतिक व्यवस्था भंग होने के कारण

व्यापार में कमी आ जाती थी और सुरक्षा की कमी के कारण व्यापारी वर्ग शिथिल हो जाता था अन्यथा यह व्यापार निरन्तर होता रहता था।

देश भर में वस्तुएं विशेष कर खाद्य पदार्थ बड़े सस्ते दामों में मिल जाते थे चावल, साग, सब्जी, मसाले, दूध के कम दाम होते थे, गुलबदन बेगम ने 'हुमायुं' नामे में कीमत के कम होने का उल्लेख किया है और यह बताया है कि अमरकोट में एक बकरा एक रुपये में मिल जाता है। दिल्ली के आम पास म दाम दस रुपये तक होते थे। मांस के दाम प्रति मन '६१ दाम' होते थे समय का एक मन आज के लगभग २७ सेर के बराबर होता था जिस कीमतें कम थीं वैसे ही वेतन भी कम थी। उच्चतम श्रमजीवी ३ आने प्रतिदि हिसाब से और साधारण श्रमजीवी एक आने तक में मिल जाता था। इससे स्पष्ट है कि सस्ती कीमतों के बावजूद जन साधारण उनसे लाभ नहीं उठा पा क्योंकि उनमें आर्थिक समता ही इतनी अधिक न हो पाती थी। इस प्रकार कहा जा सकता है कि धन का वितरण इतना खराब था कि कहीं तो दौल अम्बार लगे थे। कहीं यह ढूंढने पर भी प्राप्त न हो पाती थी और निम्न श्रेणि का आर्थिक ढांचा बिलकुल दुर्बल था।

मुगलों के समय सुन्दर प्रकार के सिक्के बनाये जाते थे। कई नगरों टकसाल बनाई गई थीं। दिल्ली, लाहौर, जौनपुर, अहमदाबाद, पटना तथा सू में टकसालें बनी हुई थी, जहां सुन्दर सुन्दर सिक्के ढाले जाते थे। सोने, चां तथा तांबे के सिक्कों का प्रचलन था। अकबर ने चांदी का वर्गाकार रुपया चला था। उसके समय में लगभग २६ विविध प्रकार के सिक्कों का प्रचलन था अधिकतर व्यापार सुवर्ण मुद्राओं तथा रुपयों के द्वारा होता था। मुगल काल सिक्के अपनी आकृति, वजन तथा धातु की विशुद्धता के लिये बड़े ही उच्च कोटि माने गये हैं। अकबर ने इस दिशा में विशेष रूप से ध्यान दिया था।

उद्योग धन्धों की वृद्धि तथा व्यापार की प्रगति के कारण देश में अनेक समृद्धशाली नगर स्थापित हो गये थे कोई किसी धन्धे के लिये प्रसिद्ध था कोई किसी के लिये। बुरहानपुर, अहमदाबाद, गुजरात, लाहौर, आगरा, सूरत, बनारस पटना, राजमहल, ढाका, हुगली, इलाहाबाद अधिक समृद्धशाली तथा धन सम्पन्न केन्द्र थे। इन सब को सुव्यवस्थित मार्गों द्वारा आपस में मिला दिया गया था। इनमें आगरा लाहौर तथा सूरत विश्व विख्यात नगर थे। आगरा राजधानी होने के कारण तथा सूरत व्यापार के कारण अधिक प्रसिद्ध थे। सूरत के बन्दरगाह में एक साथ १०० जलपोत लंगर डालकर खड़े रहते थे। यहां पर प्रत्येक देश का आदमी मिल जाता था। इन नगरों में समस्त देश का धन केन्द्रित हो गया था और ऐश्वर्य पूर्ण जीवन वहां मौजें मारता था। इन नगरों में आकर पता चलता

कि देश में प्रचुर दौलत भरी पड़ी थी परन्तु वह धनवानों के लिये ही थी जन साधारण उससे लाभ न उठा पाते थे।

आर्थिक पतन

औरंगजेब के शासन काल में मुगलों की नीति बदली सम्राट ने युद्धों का श्री गणेश किया हिन्दुओं के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष घोषित कर दिया गया। परिणाम यह हुआ कि शाही कोष धीरे धीरे खाली हो गया। युद्धों के होने, सेनाओं के निरन्तर रूप से देश के एक किनारे से दूसरे किनारे पर आने जाने से कृषि की अवनति हुई रास्तों के सुरक्षित न रहने के कारण व्यापार ठप होने लगा। राजनैतिक ढांचा हिल उठा, व्यवस्था डगमगा गई, शान्ति भंग हो गई। ऐसे वातावरण में व्यापार, उद्योग धंधे आदि सब पर बुरा प्रभाव पड़ा। हस्त कला भी ठीक दशा में न रह सकी। बर्नीयर ने इस व्यवस्था का उल्लेख किया है। जे. एन. सरकार का कथन है कि "इस प्रकार भारत की शक्तिहीनता और दरिद्रता का प्रारम्भ हुआ। राष्ट्र भण्डार में ही कमी नहीं हुई थी परन्तु यान्त्रिक दक्षता और सभ्यता के स्तर शीघ्र ही निम्न हो गये थे और देश के विस्तृत क्षेत्रों में कला और संस्कृति विलुप्त हो गई थी।"

औरंगजेब ने अपने जीवन के २५ वर्ष दक्षिण के युद्धों में काटे और राजकोष खाली कर दिया। इन निरन्तर युद्धों ने देश की आर्थिक स्थिति को बड़ी हानि पहुँचाई और व्यापार को ठप सा कर दिया। दक्षिण को जाने वाले रास्ते असुरक्षित हो गये और उत्तर से दक्षिण का व्यापार बुरी दशा में हो गया। इस प्रकार देश के आर्थिक ढांचे के दुर्बल होने से औरंगजेब के मरते ही मुगल साम्राज्य धड़ाम से पृथ्वी पर आ गिरा।

Q. 'As far as literature of different languages is concerned, it attained to the highest point during the Mughal period.' Comment on this statement.

प्रश्न—'जहां तक भिन्न भिन्न भाषाओं के साहित्य का सम्बन्ध है। मुगल युग में यह अपनी उन्नति के उच्चतम बिन्दु पर पहुंच गया था' इस कथन की विवेचना करो।

उत्तर—साहित्यिक दृष्टि से मुगल युग बड़ा ... तथा उन्नत युग रहा है। मुगल सम्राट तथा ... अभिरुचि रखती थीं। सम्राटों ने ... था। बाबर स्वयं अच्छा ... का सुन्दर

भाषा में चित्रण किया। बाबर की पुत्री गुलबदन बानू बेगम ने अपने भाई हुमायुं का जीवन चरित्र 'हुमायुं नामा' में लिखा। जहाँगीर ने 'तुज़क-जहाँगीरी' की रचना की। औरंगजेब की लड़की जेबुन्निसा फारसी नज़में लिखती थी। अकबर हालांकि स्वयं पढ़ा लिखा न था परन्तु वह साहित्य प्रेमी था और विद्वानों का आदर सम्मान करता था। उसका दरबार कवियों, विद्वानों, दार्शनिकों से भरा रहता था। उसके साहित्य प्रेम की ख्याति इतनी अधिक हो गई थी कि भारत के विविध भागों से ही नहीं अपितु एशिया के भिन्न भिन्न देशों के अनेकों कवि विद्वान् और अन्य व्यक्ति उस के दरबार में एकत्रित हो गये थे। अन्तःपुर में र वाली स्त्रियां साहित्य तथा कला की बड़ी शौकीन थीं।

ऐसे सम्राटों के युग में यदि साहित्यिक प्रगति ऐसी न होती जैसी हुई अवश्य ही आश्चर्यजनक घटना होती और विस्मय होता कि कौन से ऐसे विशि कारण थे कि मुगलों जैसे संरक्षण पाकर भी साहित्य की प्रगति न हुई।

स्वाभाविक ही था कि इस युग में साहित्य विशेष रूप से फला फूला दूसरी विशेषता इस काल की यह थी कि मुगल उदार स्वभाव वाले थे। उन हिन्दुओं के प्रति श्रद्धा और प्रेम था। औरंगजेब को छोड़ कर सब ने अकबर की उदारता पूर्ण नीति का अनुकरण किया। देश में शान्ति के वातावरण के कारण सांस्कृतिक क्षेत्रों में भारी प्रगति हुई भिन्न भिन्न भाषायें स्वतन्त्र रूप से विकसित हुई और उनका साहित्य भी निरन्तर रूप से विकसित होता गया।

हिन्दी साहित्य—मुगल काल में हिन्दी साहित्य की बड़ी प्रगति हुई एक प्रकार से हिन्दी साहित्य का यह स्वर्ण युग कहा जा सकता है। अकबर ने हिन्दुओं के साथ मेल की नीति अपनाई उसने बिना किसी भेद भाव के हिन्दू विद्वानों तथा कवियों को उदार आश्रय प्रदान किया और उसका फल यह हुआ कि हिन्दी साहित्य की प्रगति हुई। उसके राजदरबार में राजा बीरबल, राजा भगवानदास, राजा मानसिंह तथा राजा टोडरमल और पृथ्वीराज राठौर अच्छे कवि थे। पृथ्वीराज राठौर ने वेली कृष्ण राग की रचना की थी। टोडरमल ने भी कई हिन्दी कवितायें रचीं।

सबसे अधिक प्रतिभाशाली दरबार कवि अब्दुर रहीम खान-ए-खाना था। उसने 'रहीम सतसई' की रचना की। हिन्दी साहित्य में इसका ऊंचा स्थान है। इसके अतिरिक्त रहीम के अनेकों दोहे भी हैं। अकबर के दरबार में और भी प्रसिद्ध कवि थे जिनमें करण, हरीनाथ, नरहरी, अधिक प्रसिद्ध हैं। कवियों की इस संख्या से ही सहज में अनुमान लगाया जा सकता है कि अकबर हिन्दी साहित्य का कितना महान संरक्षक था। इस साहित्य में उसकी कितनी अधिक अभिरुचि थी। वह कितना उदार हृदय का सम्राट था। इसके साथ साथ अकबर का युग साहसी कार्यों का युग था और इन कारनामों ने कवियों की सर्वोत्कृष्ट शक्तियों को प्रेरित किया और

न्होंने अपनी कविताओं में कल्पना की विलक्षण दिव्यता प्रदर्शित की। इस तावरण ने ही इस युग को महान युग बना दिया।

इसी युग में ब्रज भूमि में रहने वाले आठ प्रसिद्ध कवि थे जो 'अष्ट छाप' हलाते हैं। वह इस प्रकार थे—सूरदास, नन्ददास, कृष्णदास, कुम्भनदास, तुर्भुजदास तथा परमानन्द दास, इन सब में सूरदास हिन्दी साहित्य के नभमंडल के देदीप्यमान सितारे हैं इनकी अलौकिक कविताओं के कारण हिन्दी साहित्य का सूर्य कहा गया है। इन्होंने ब्रजभाषा में कविता की, 'सूर सागर' नामक ग्रन्थ में कृष्ण जी की बाल्य अवस्था का चित्रण किया है। और राधा के सौन्दर्य की छवि दिखाई है। यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य की बड़ी ही मूल्यवान कृति है। रसखान भी इस युग का अच्छा कवि हुआ। इन लोगों ने कृष्ण जी को ही अपना कविताओं का विषय बनाया।

दूसरी ओर तुलसीदास ने अपना इष्ट देव राम को माना। इनका सबसे प्रसिद्ध प्रिय ग्रन्थ 'रामचरित मानस' है। इस ग्रन्थ की जितनी भी प्रशंसा की जाये कम है। यह कविता के कारण ही नहीं अपितु उन आदर्शों के कारण भी जिनका इसमें प्रतिपादन किया गया है। प्रत्येक हिन्दू घर में पढ़ा जाता है इसमें स्त्री, पति, पिता, भाई, माता, गुरु, सम्बन्धी, शत्रु, राजा, जनता सब के अपने अपने कर्तव्यों को बताया गया है भारत की आदर्श नारी सीता आज भी भारतीय नारियों का पथ प्रदर्शन करती है। राम आज भी भारत के मनुष्यों को प्रेरणा प्रदान करता है। इस ग्रन्थ में कविता भी उच्च कोटि की है और कवि ने कल्पना को बड़ी ही ऊँची उड़ान भरी है। रामायण हिन्दुओं का बड़ा ही प्रभावशाली ग्रन्थ है। इसके अतिरिक्त तुलसीदास ने रामगीतावली, कृष्णगीतावली, दोहावली, पार्वती मंगल, जानकी मंगल, वैराग्य सन्दीपनी, नामक प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की, हिन्दी साहित्य में इनका स्थान जांचते समय इनको हिन्दी साहित्य का शशि बताया है। इनके अतिरिक्त केशवदास, सेनापति तथा त्रिपाठी भाई ने हिन्दी काव्य की बड़ी सेवा की। केशवदास का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रामचन्द्रिका' है। भूषण, बिहारी, अन्य प्रसिद्ध कवि हैं जिन्होंने इस युग की शोभा बढ़ाई। बिहारी ने 'बिहारी सतसई' की रचना की। इसमें ७०० दोहे हैं। भूषण ने बड़ी ही प्रभावशाली कविता की। उसने शिवाजी तथा छत्रसाल की वह महान प्रशंसा की है जो बेजोड़ है। शिवाजी के विषय में 'शिव बावनी' तथा 'शिवा भूषण' नामक ग्रन्थों का निर्माण किया। यह ग्रन्थ बड़े ही रोचक तथा प्रतिभाशाली हैं। इसी प्रकार छत्रसाल के ऊपर 'छत्रसाल शतक' लिखा है। इन दोनों दरबारों में इस महान कवि को राज्य आश्रय मिला था। सम्राट शाहजहां ने इस कवि का सम्मान करने के लिये इसको 'महा कवि राय' की उपाधि से सुशोभित किया था। इस युग ने सूर, तुलसी, भूषण को उत्पन्न करके

सचमुच हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग प्रस्तुत किया है। वह इतने ऊंचे कवि है जिनका उदाहरण नहीं मिलता। तुलसी कवि होने के साथ साथ हिन्दू जगत के पथ प्रदर्शक भी थे। वह धर्म गुरु भी थे उन्होंने सांसारिक आदर्शों को इस प्रकार से प्रस्तुत किया है कि वह काम किसी दूसरे द्वारा सम्पन्न नहीं हो सकता था। उन का स्थान हिन्दी तथा हिन्दू जगत में अलग ही है। वह हिन्दी साहित्य का महान गौरव है।

संस्कृत साहित्य—इस युग में आते आते संस्कृत अपने अन्तिम जीवन प्रवेश कर रही थी। संस्कृत साहित्य की प्रतिभा घट रही थी। फिर इस भाषा कई अनुपम ग्रन्थों की रचना की गई थी। इस युग का सबसे अधिक प्रसिद्ध जगन्नाथ पण्डित हुआ उसकी रचना 'गंगा लहरी' अच्छा ग्रन्थ है। कविन्द्र प्रसिद्ध कवि था। रूपगोस्वामी ने 'विदग्ध माधव' नाटक की रचना की। गिरधर की गणना भी संस्कृत के अच्छे कवियों में होती है। कवियों के अतिरिक्त कवि भी हुई। वैजयन्ती ने 'आनन्दलतिका चम्प' की रचना में अपने पति कृष्ण नाथ सहायता की थी और वल्लभ देवी ने 'सुभाषितरलि' नामक ग्रन्थ की रचना की।

यह देख कर सरलता से अनुमान लगाया जा सकता है कि संस्कृत साहि की प्रगति न हो सकी और धीरे धीरे इस भाषा का ह्रास होता गया। औरंगजेब समय तो इस साहित्य का घातक ही सिद्ध हुआ और इस युग में कवियों का रूपेण ह्रास तथा अभाव हो गया।

बंगला भाषा —इस भाषा के साहित्य ने अच्छी उन्नति की। अनेकों काव्य का अनुवाद किया गया जैसे 'भागवत का, गीतों, भजनों, जीवन चरित्रों की रचना की गई। चैतन्य महा प्रभू के विषय में ग्रन्थ लिखे गये। मन्सा देवी और चण्डी देवी का गुण गान किया गया। काशी रामदास, मुकन्द राम तथा धनी राम प्रसिद्ध कवि हुये। इनके अतिरिक्त और भी कई अच्छे लेखक हुये। इस समय का बंगला साहित्य में प्रान्तीय जीवन का चित्रण भी किया गया है। लोगों ने सामन्जस्य की भावना बंगला साहित्य में पूर्ण रूप से झलकती है। उस समय का वातावरण उदारता पूर्ण था और इसी कारण से साहित्य में भी उसका प्रभाव होना स्वाभाविक ही था।

मराठी साहित्य – इस युग में मराठी साहित्य की अच्छी प्रगति हुई। इस भाषा के अनेकों विद्वान हुये जिन्होंने साहित्य की बड़ी सेवा की। इन कवियों के अधिकतर विषय रामायण; महाभारत, भागवत को कथाओं से लिये गये हैं मराठी साहित्य ने भी अपना विशेष पार्ट अदा किया है। राम भक्तों में अधिक प्रभावशाली मोरोपन्त हुये। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'केकावली' है इन्होंने महाभारत को आर्या छन्द में लिखा है इनकी ख्याती इस कारण से बहुत अधिक हुई और इनको आर्यापति

गया है। इनका काव्य क्षेत्र बहुत ही विस्तृत रहा है। सन्त तुका राम के ग आज भी बड़े प्रसिद्ध हैं। प्रारम्भ में श्रीधर स्वामी ने महाभारत, रामायण भागवत से अपने विषय चुने और 'हरि विजय', 'राम विजय', 'पांडव प्रताप' के प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की। मुक्तेश्वर दूसरा महान कवि हुआ। उसका द ग्रन्थ श्लोकबद्ध रामायण सबसे अधिक प्रख्यात है। रघुनाथ पंडित ने 'नल मनी स्वयंवराख्यान' रचकर ख्याति प्राप्त की। सन्त राम दास बड़े ही प्रतिभा-गी विद्वान तथा सन्त हुये। भारत के इस भाग में वह प्रथम सन्त था जिसने या कि गृहस्थ जीवन के साथ साथ भी परमार्थ जीवन बिताया जा सकता है। की प्रसिद्ध रचना 'दास बोध' नामक ग्रन्थ है। माधव स्वामी अच्छा काव्य लेखक ।। वामन पंडित कृष्ण भक्ति का महान विद्वान सिद्ध हुआ। इन्होंने श्लोकात्मक ता की रचना की। इन कवियों के अतिरिक्त एकनाथ, दासोपन्त, इत्यादि अन्य द कवि हुये। जिन्होंने मराठी साहित्य को सुसम्पन्न किया। इस समय का मराठी हत्य विशेषकर धार्मिक साहित्य रहा और भारत के प्राचीन काव्यों तथा ग्रन्थों सके प्रेरणा मिली। इस युग में इस साहित्य की अलौकिक प्रतिभा चमकी।

आगे चलकर औरंगज़ेब की मृत्यु ने मराठों के लिये विकसित क्षेत्र छोड़ा। मराठों की राजनैतिक शक्ति का अभ्य उदय हुआ। इस नवीन जीवन के साथ साहित्य के क्षेत्र में भी नवीन स्फूर्ती आई। इस समय अनेकों प्रभावशाली कवि जिनमें प्रसिद्ध रामजोशी, होना जी बाल, सगन, भाऊ, प्रभाकर, परशराम हैं। होंने 'पौवाड़े' के युग को जन्म दिया। इस काल की कवितायें वीर रस तथा गार रस से ओत प्रोत हैं। सैनिकों को प्रेरणा देने के लिये लावणी और पौवाड़े उत्कर्ष हुआ। पौवाड़े में वीर गाथायें हैं और इनमें वीर रस की भरमार है। णी का विषय शृंगार है। इस प्रकार इन कवियों की कृतियों ने सैना में उत्साह र वीरता का सागर उत्पन्न किया जिस के कारण मराठा वीर भारत के जिस कोने भी गया अजयई सिद्ध हुआ। यह उस समय के साहित्य की प्रेरणा थी।

गुजराती साहित्य—अन्य साहित्यों के समान गुजराती साहित्य भी सम्पन्न रहा। इस साहित्य के महान कवि सन्त अखा, प्रेमानन्द तथा सामल हैं प्रत्येक का अपना विशेष स्थान है। अखा अपने विलक्षण कार्य के लिये प्रवर्तक माना जाता है उसने संसार से वैराग्य ले लिया था और भक्ति की र झुक गया था। उसने अनेकों अनुपम ग्रंथों की रचना की जैसे 'ज्ञानपद', म पद प्राप्ति', 'पंचदशी तात्पर्य', 'केवल्यगीता' इत्यादि। उसने संसार को प्या ठहराया। उसने कृष्ण भक्ति का मार्ग छोड़ दर्शन तथा प्रेमानन्द का मार्ग पना कर कविताओं की रचना की और इसी कारण से वह युग प्रवर्तक कहलाया सकी भाषा बड़ी ही व्यंग पूर्ण है। वह गुजराती भाषा का बड़ा ही महान कवि

है। प्रेमानन्द अन्य प्रभावशाली कवि हुआ। उसने ११ प्रसिद्ध ग्रन्थों की रच
की उसकी भाषा अलंकारों तथा रसों से परिपूर्ण है। उसकी कवितायें इतनी के
प्रिय हुईं कि गुजराती घरों में आज भी लोग बड़ी रुचि के साथ इनको गाते है
इसी प्रकार सामल की रचनायें भी प्रतिभाशाली सिद्ध हुईं। इसने 'मदनमोह
की कहानी तथा 'सामल रत्नमाल' की रचना की और ख्याति प्राप्त की। इ
दोनों के अतिरिक्त अन्य प्रसिद्ध कवि वल्लभ, मुकुन्द, देवीदास, शिवदास, रत्ने
इत्यादि हुए। गुजराती में जैन कवियों ने भी अपनी रचनायें कीं इनमें आनन्द घ
अति प्रसिद्ध है। इनके बाद गुजराती साहित्य का विकास रुक सा गया और १८
सदी में अच्छे कवियों का अभाव हो गया।

उर्दू साहित्य--उर्दू नई भाषा थी। इसकी प्रगति धीरे धीरे चल रही
थी फिर भी मुगल युग में इसका विकास अच्छा हुआ। दिल्ली से भी अधि
गोलकुण्डा तथा बीजापुर में इसका अच्छा विकास हुआ। गोलकुण्डा में सुल
मुहम्मद कुली कुतुबशाह स्वयं एक अच्छा लेखक तथा कवि था उसने उर्
भारी दिलचस्पी दिखाई। इब्न निशाती तथा गव्वासी दूसरे प्रमुख कवि
बीजापुर ने भी उर्दू को अच्छा आश्रय प्रदान किया। यहां पर मुहम्मद अ
शाह ने 'गुलशने इश्क' तथा 'अलीनामा' नामक ग्रंथ लिखे। शाह हाशि
'यूसुफ व जुलेखां' नामक मसनवी लिखी। इसी समय जो उर्दू का बड़
प्रतिभाशाली कवि था वह औरंगाबाद का 'वली' था उसने 'देह मजलिस'
'रेख्ता का दीवान' नामक ग्रंथ लिखे। उसने गजल, रुबाई तथा मसनवी में ब
कमाल दिखाया। इसको उर्दू का जन्मदाता भी कहा गया है। वली की स
तथा मनोहर शैली का अनुकरण अन्य कई विद्वानों ने किया जिनमें प्र
हातिम आबरू, मजहर इत्यादि हैं—उन्होंने भी उर्दू साहित्य को अच्छी
सम्पन्न बनाया।

मुगलों ने उर्दू को उतना आश्रय नहीं दिया जितना उसको दक्षिण में मि
था। फिर भी देहली में कई कवि हुए। नूरी आजमपुरी, हजरत कमालउद्दीन मस
मुहम्मद अफजल अकबर के समय उर्दू के अच्छे कवि थे। नासिर अफजली
चन्द्रभान पण्डित शाहजहाँ के समय में उर्दू कवि हुए थे। उत्तरी भारत
औरंगजेब के पश्चात् कई प्रतिभाशाली कवि उर्दू के क्षेत्र में हुए। इनमें गालि
जौक, मोमिन इत्यादि अधिक प्रसिद्ध हैं गालिब तथा जौक ने उर्दू साहित्य
अपनी अनुपम देन प्रदान की है। उसकी गजलें तथा जौक के कसीदे बेजोड़
मुगल सम्राट बहादुरशाह स्वयं उर्दू का अच्छा लेखक था।

इस प्रकार उर्दू साहित्य भी अपनी सामर्थ्य के अनुसार अच्छी प्रगति
रहा था और उसको भी उर्दू लेखक तथा कवि सुसम्पन्न कर रहे थे।

फारसी साहित्य—अकबर स्वयं पढ़ा लिखा न था परन्तु उसकी अलौकिक बड़ी ही तीव्र थी वह उलझनदार बातों को भी बड़ी सुगमता से समझ था। उसको विद्या से बड़ा प्रेम था उसके दरबार में अनेकों कवि तथा लेखक य प्राप्त करते थे और अपनी अनुपम कृतियों द्वारा विद्या की सेवा करते इस समय फारसी साहित्य की महान वृद्धि हुई। मुल्ला दाऊद, अब्दुल ।, फैजी, बदायूनी इत्यादि अनेकों कवि रक्खे। जिन्होंने फारसी साहित्य म्पन्न किया।

अकबर के समय में अनेकों ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना हुई जिनसे उस के जीवन पर प्रकाश पड़ता है। अब्दुल फजल बड़ी तीव्र बुद्धि का विद्वान ह अच्छा विचारक भी था वह अकबर का बड़ा ही विश्वास पात्र था उसके पूर्ण ग्रन्थ 'आईन-ए-अकबरी' तथा 'अकबर नामा' प्रसिद्ध तथा उपयोगी सिक ग्रंथ हैं। उसका भाई फैजी भी बड़ा विद्वान लेखक था उस का विशेष अनुवाद क्षेत्र में है उसने कई हिन्दु ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद किया था। न में 'लीलावती' का अनुवाद फारसी में किया गया। मुल्ला दाऊद ने स-ए-अल्फी' की रचना की। बदाउनी ने 'मुन्तखब-उत-तवारीख' का निर्माण इसी प्रकार अब्दुल बाकी ने 'मासीर-ए-रहीमी' और निजामुद्दीन अहमद ने त-ऐ-अकबरी' तथा फैजी सरहिन्दी ने 'अकबर नामा' लिखे।

अनेकों हिन्दु ग्रन्थों का अनुवाद किया गया। बदाउनी ने रामायण का हाजी इब्राहीम ने अथर्वेद का अनुवाद किया। कुछ यूनानी तथा अरबी भाषा खे हुए ग्रन्थों का भी अनुवाद किया गया। उन ग्रन्थों के साथ साथ काव्य में लिखे गये अनेक अनुपम कवि हुए। गजलों तथा कसीदों की रचना हुई। विषय में गिजाला फैजी, मुहम्मद हुसैन नजीरी और सैयद जमालउद्दीन उर्फी क प्रसिद्ध हैं गिजाला ने 'इसरार-ए-मकतूब' 'नवश-ए-बदीद' नामक ग्रन्थों चना की थी। अब्दुर रहीम खान-ए-खाना' भी फारसी की अच्छी कविता ता था। अकबर का राज दरबार फारसी के विद्वानों से भरा हुआ था।

जहाँगीर भी विद्वानों का आदर सम्मान करता था उसके समय में नकीब खाँ स बेग, अब्दुल हक इत्यादि अच्छे कवि थे। स्वयं जहाँगीर ने अपनी जीवनी -ए जहाँगीरी में लिखी थी।

शाहजहाँ ने भी विद्वानों को प्रोत्साहन दिया और उसका बड़ा लड़का शिकोह फारसी का बड़ा श्रेष्ठ विद्वान था। उसने हिन्दु शास्त्रों का अध्ययन । और कई का अनुवाद भी किया। भगवद्गीता, उपनिषद् तथा योग वशिष्ट फारसी में अनुवाद किया उसने कई मौलिक ग्रन्थ भी लिखे। औरंगजेब स्वयं पी का ज्ञाता था उस समय में 'फतवा-ए-आलमगीरी' की रचना हुई। इसके

किये। हो सकता है यह ठीक है परन्तु उस समय की किसी इमारत में बैक्ट्रिया शैली का प्रभाव दिखाई नहीं देता।

हुमायूं का कष्ट पूर्ण जीवन कला कृतियों की ओर ध्यान न दे सका। उसने किसी भी अलौकिक भवन का निर्माण नहीं कराया। जो एक दो मस्जिद उसने बनाईं उस में ईरानी प्रभाव अधिक झलकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि जब हुमायूं को भारत छोड़ कर ईरान भागना पड़ा था तो वहाँ से वह विशिष्ट ईरानी प्रभाव अपने साथ लाया और अनेकों शिल्पी भी उस के साथ आये। इसी कारण से उसकी बनाई हुई मस्जिदों में ईरानी अलंकृता अधिक दिखाई पड़ता है।

हुमायूं के पश्चात भारतीय सत्ता अफगानों के हाथ में आई। शेरशाह एक महान निर्माता था। उस समय की कला शैली को प्रदर्शित करने के लिये दिल्ली का पुराना किला तथा उस समय के दिल्ली के दो अपूर्ण प्रवेश द्वार काफी हैं। पुराने किले की मस्जिद अपनी भव्यता के लिये प्रसिद्ध है। इसमें ईरानी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। सहसराम में बना हुआ शेरशाह का मकबरा देशी तथा विदेशी प्रभाव का सुन्दरतम नमूना है। शेरशाह बड़ा ही दूरदर्शी सम्राट था वह विशाल और व्यापक दृष्टिकोण रखता था उसने भारत की कला को काम में लाने से घृणा न दिखाई और दोनों कला शैलियों के समन्वय को स्वतन्त्रता पूर्वक चलने दिया। इस प्रकार उसके काल को भवन निर्माण शैली के क्षेत्र में युग प्रवर्तक कह सकते हैं। इस समन्वय की भावना को सम्राट अकबर ने और भी अधिक प्रेरणा दी और धीरे धीरे देशी तथा विदेशी तत्व सहज रूप से घुल मिल गये।

अकबर का काल प्रत्येक क्षेत्र में सम्मिश्रण तथा समन्वय का युग था। भवन निर्माण शैली पर भी इस भावना का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। उसके बनवाये हुये भवनों में ईरानी तथा भारतीय तत्व दिखाई पड़ते हैं परन्तु इसमें अधिकता भारतीय तत्व की ही रही है। उस पर यदि एक ओर अपनी ईरानी अम्मा का प्रभाव था तो दूसरी ओर उसकी उदार, विशाल तथा सरल मनोवृत्ति का प्रभाव था जो उसमें हिन्दुओं और उनकी संस्कृति के प्रति उत्पन्न हो चुकी थी। इसी कारण उसके निर्मित भवनों में हिन्दू तथा जैन मन्दिरों का अनुकरण स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

अकबर को भवन निर्माण कराने का कितना चाव था यह उस के बनवाये हुए भवनों की संख्या से स्पष्टतया प्रगट हो जाता है। फतहपुर सीकरी का निर्माण उसके मस्तिष्क की माया को प्रगट करता है। अबुलफज्ल ने इस विषय में लिखा है "जहाँपनाह भव्य भवनों की योजनायें बनाते हैं और अपने मस्तिष्क तथा हृदय की रचना को पत्थर तथा मिट्टी के वस्त्र पहनाते हैं।' फर्गुसन के अनुसार फतहपुर सीकरी अकबर के मस्तिष्क का दर्पण थी। अकबर ने कला के प्रत्येक क्षे

[प्र]तिभा और उदार दृष्टिकोण को अपना शिल्पियों की सहायता से भवन निर्माण [क]राये। उसकी बनवाई हुई अनगिनत इमारतें हैं। इनमें दुर्ग, राजप्रासाद, आमोद [प्र]मोद के भवन, मस्जिदें, महल, तालाब, स्तम्भ इत्यादि हैं। कला के श्रेष्ठतम [न]मूने से लेकर विशालतम दुर्ग अकबर की कल्पना के नमूने थे। फतहपुर सीकरी [के] भव्य भवन अकबर की मनोवृत्ति को स्पष्ट रूप से प्रगट करते हैं। इस सम्राट [द्व]ारा बनवाई गई फतहपुर सीकरी की इमारतें इस प्रकार हैं। जोधाबाई का महल [अ]न्य दो भवन, दीवान आम, दीवान खास, संगमरमर की बनी जामी मस्जिद, [पं]च महल तथा बुलन्द दरवाज़ा, बीरबल का महल, आमेर की राजकुमारी का स्वर्ण [म]हल तथा ख्वाबगाह अति प्रसिद्ध हैं। दीवान आम तथा खास हिन्दू ढंग प्रदर्शित [क]रते हैं। पञ्च महल को देखने से बौद्ध विहार का दृश्य सामने आ जाता है। यदि [अ]केले फतहपुर सीकरी की इमारतों को ही देखा जाये तो भी महान अकबर की गणना [सं]सार के निर्माता सम्राटों में करनी होगी। इस एक नगर में ही उसने इतनी इमारतें [ब]नवाईं कि इससे उसकी अभिरुचि स्पष्ट रूप से प्रगट हो जाती है।

फतहपुर सीकरी से हट कर अकबर की अन्य इमारतें, आगरे का लाल [प]त्थर से बना हुआ दुर्ग, आगरे के समीप बना हुआ सिकन्दरा में उसका अपना [म]कबरा और इलाहाबाद में बना हुआ राज महल, आगरे का किला बड़ा ही विशाल [है]। उसकी दीवारें ७० फीट ऊंची हैं और प्रवेश द्वार बड़े ही विशाल हैं। वह लाल [प]त्थर से बनाया गया है। इलाहाबाद के महल में बना हुआ बरामदा जिन [स्त]म्भों पर खड़ा है वह हिन्दू कला पर बनाया गया है। सिकन्दरा में अकबर का [म]कबरा जिसको स्वयं अकबर ने आरम्भ कराया था परन्तु जहांगीर ने सम्पूर्ण किया [था]। बड़ी ही दिव्य इमारत है। इसका निर्माण बौद्ध बिहारों के प्रकार का है। [य]दि अकबर और अधिक जीवित रहता और अपने मकबरे को स्वयं पूरा कराता तो [इ]स इमारत की प्रतिभा अवश्य ही कहीं और अधिक होती।

आगरे के किले में जहांगीरी महल, फतहपुर सीकरी के महल तथा लाहौर [क]ा किला हिन्दू कला के प्रभाव को स्पष्टतया प्रदर्शित करते हैं। पुरानी दिल्ली में [हु]मायूं का मकबरा ईरानी कला को प्रदर्शित करता है परन्तु कब्र के निर्माण में [भ]ारती कला ही प्रयोग में लाई गई। इस प्रकार अकबर के काल में भवन निर्माण [क]ला को विस्तृत क्षेत्र मिला और इसकी प्रभूत प्रगति हुई। अकबर का युग वास्तु [क]ला का गौरव पूर्ण युग सिद्ध हुआ। इसने कला के क्षेत्र में ऐसी परम्परायें स्थापित [क]ीं कि उनका अनुकरण कर जहांगीर तथा शाहजहां ने कला को उच्चतम शिखर [प]र पहुँचाया। जहांगीर की अभिरुचि वास्तु कला में अधिक न थी। वह चित्र कला [क]ा प्रेमी था। उसके समय में अधिक भवन निर्माण नहीं किये गये केवल दो [प्र]सिद्ध इमारतों पर काम हुआ। प्रथम तो अकबर के मकबरे को पूर्ण किया गया [औ]र दूसरी इमारत नूरजहां द्वारा उसके बाद ऐतमादउद्दौला का आगरे में बनवाया

दक्षिण की कला

बीजापुर तथा गोलकुण्डा के सुलतानों ने इसी काल में अनेकों भवन नि करा कर बीजापुर तथा गोलकुण्डा की रौनक को बढ़ाया। इन सुलतानों ने अ उद्यान, मकबरे, मस्जिदें बनवाईं। इन इमारतों से दक्षिण की धन सम्पन्नता वहां पर प्रसारित प्रेम तथा धार्मिक उदारता के वातावरण का पता चलता बीजापुर में अनेकों शानदार इमारतें बनवाई गईं। आदिल शाह तथा सुलताना के मकबरे, गगन महल, आसार महल, गोल गुम्बद इत्यादि प्रसि इमारतें हैं इनको देखकर बीजापुर मुगल नगर प्रतीत होता है। इसी प्र गोलकुण्डा में मस्जिदें तथा मकबरे बनवाये गये और नगर के नाम को चमका गया। दक्षिण की इन इमारतों में हिन्दु मुस्लिम कला के समन्वय का स्पष्ट चलता है। दोनों जगह के शिया सुलतान अधिक उदार थे। उन्होंने हिन्दुओं को अपने यहां रक्खा हुआ था।

हिन्दु वास्तु कला

इस समय की हिन्दु वास्तु कला न तो प्राचीन भारतीय कला ही मुगल कला ही। यह राजपूत तथा ईरानी कलाओं का सम्मिश्रण तथा सम हिन्दुओं ने जिन भवनों, मन्दिरों तथा महलों का निर्माण कराया उसमें भी इस ही मिश्रित शैली का प्रयोग किया गया है। उस समय की अनेकों आज भी मौजूद हैं इनमें अधिक प्रसिद्ध बीरसिंह बुन्देले का महल, उद झील महल तथा अन्य भवन, जोधपुर का दुर्ग, आमेर तथा अजमेर के म इनमें मिश्रित शैली का प्रयोग किया गया है। मुगल सम्राट हिन्दुओं के प्रति भावना रखते थे विशेष कर अकबर की नीति तो धार्मिक सहिष्णुता की पराकाष्ठा पर पहुँच गई थी। इसी उदार वातावरण के कारण एक बार हिन्दुओं ने मन्दिरों के निर्माण की ओर ध्यान दिया। मथुरा तथा बनारस में म मन्दिर बनवाये गये इनमें कई प्रसिद्ध मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

इस प्रकार भवन निर्माण कला का भारत व्यापी अध्ययन करने से रूप से सिद्ध हो जाता है कि मुगल काल में वास्तु कला की महान उन्नति कई अलौकिक कला शैलियों का प्रयोग किया गया। इन विविध शैलियों के ढंग अनेकों उतार चढ़ाव आये परन्तु अधिकतर हिन्दु मुस्लिम कला की सुन्दर प्रतिभा का प्रदर्शन होता रहा जिस उदारता और सहनशीलता का प्रादुर्भाव अक ने किया था उसका अनुकरण शाहजहाँ तथा जहाँगीर ने भी किया और इस क्षेत्र में इस उदार वातावरण का गहरा प्रभाव पड़ा अन्त में आकर औरंगजेब अपनी नीति को पूर्ण रूप से बदल दिया इसके काल में वास्तु कला का ही न अन्य कलाओं का भी जनाजा निकल गया। इसके समय में वास्तु कला शुष्क हो गई और इसकी वृद्धि रुक गई।

Q. Give a critical account of the development of art c
nting and music during the Mughal age.

प्रश्न—मुगल काल में चित्रकला तथा संगीत कला के विकास का
चेचनात्मक वर्णन करो ?

उत्तर—वास्तु कला की तरह इस महान युग में चित्रकला की भी महान
ई हुई। मुगल सम्राटों ने चित्रकला को महान प्रोत्साहन प्रदान किया। अकबर,
गीर, शाहजहाँ ने इस कला को विकसित ही नहीं किया अपितु विकास की
म सीमा पर भी पहुँचाया। मुगल काल की चित्रकला की शैली नवीन
त की शैली थी। इसमें चीनी, ईरानी तथा भारतीय सम्मिश्रण था। आरम्भ
ल में इस पर ईरानी प्रभाव अधिक रहा परन्तु धीरे धीरे विदेशी तत्व भारतीय
ों में घुल मिल गये और मुगलों की एक नवीन शैली निकली जो भारतीय
नी (Indo Persion) शैली के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस नवीन
ी में भारतीय तत्वों का आधिक्य हो गया। इसके प्रमाण पटना स्थित
ख़्दा लाइब्रेरी में 'खानदान-ए-तिमुरिया' तथा 'बाद शाहनामा' के अनेकों
त्रों से मिलते हैं।

मुगलों से पहले मुसलमान सुलतानों ने चित्रकला को कोई प्रोत्साहन नहीं
या था अपितु फीरोज तुगलक ने तो दीवारों पर चित्र बनाने तथा मनुष्यों के
त्र खींचने पर पाबन्दी लगा दी थी। वह शरियत के अनुसार कार्य करने वाला
र मुसलमान था इसलिये सल्तनत के समय में चित्रकला में जीवन की कमी
गई थी और उसको यह जीवन मुगलों द्वारा प्राप्त हुआ। मुगल सम्राट ने
त्रकला को प्रोत्साहन प्रदान कर उसको एक स्पष्ट तथा निर्दिष्ट पथ पर डाला
र कला का ऐसा वातावरण उत्पन्न किया कि इसका निरन्तर विकास होता चला
या जहाँगीर ने इसको चरम पराकाष्ठा पर पहुँचाया और इस प्रकार कला के
थ साथ युग की महानता भी बढ़ी।

बाबर स्वयं चित्रकला का महान प्रेमी था। हुमायुं का जीवन कठिनाइयों
परिपूर्ण रहा। कभी बंगाल, कभी गुजरात, कभी अमरकोट, कभी ईरान उसकी
रण में छिपे थे। वह इन कठिनाइयों से घिरा रहकर कलाओं की ओर अधिक
न न दे सका फिर भी जब वह ईरान से भारत लौटा तो अपने साथ दो प्रसिद्ध
त्रकार 'ख्वाजा अब्दुस्समद' तथा मीरा सैयद अली तबरिजि को साथ लाया था
कबर ने भी इन दोनों कलाकारों से अनेक बातें सीखीं।

अकबर के समय में एक नवीन कला शैली उत्पन्न हुई। यह ईरानी, चीनी
था भारतीय कला शैलियों का उत्तम समन्वय तथा सम्मिश्रण था। अकबर के
रबार में चित्रकला के अनेकों कलाकार थे जिनमें से सौ तो ऐसे थे कि अपना

मोह न रखते थे। इनमें अधिक संख्या भारतीय कलाकारों की ही थी।
तथा विदेशी कलाकारों में अब्दुस्समद, जमशेद विशेष रूप से प्रसिद्ध थे।
चित्रकारी में विशेष स्थान रखते थे। अकबर के दरबार में जो सब चौ
चित्रकार थे उनमें ११ स्थानों को भरने के लिये हिन्दु चित्रकार थे।
विशेष रूप से बसावन, दसवन्त, ताराचन्द, सांवलदास, हरिवंश आदि
उल्लेखनीय हैं।

जब अकबर फतहपुर सीकरी में रहता था तो चित्रकला की अनेकों इ
का निर्माण हुआ था। कला को प्रोत्साहन करने के लिये उसने अनेकों उ
अपनाये थे। चित्रकारों को भिन्न भिन्न पदों पर नियुक्त किया। सम्भवतः
उसने चित्रशालाओं को स्थापित किया। चित्रकला की साप्ताहिक प्रदर्शि
चित्रकला को लोकप्रिय बनाने का प्रयास किया।

उसने कुछ ऐसे चित्रकार नियुक्त किये जो रामायण, अकबरनामा
ग्रन्थों की तस्वीरों के चित्रित करने का कार्य करें। इस प्रकार जो साधन भी
हो सकते थे अकबर ने अपनाये और चित्रकला को इस समय व्यापक प्र
परन्तु अब भी कला दरबार तक ही सीमित रही। लोक चित्रण न हो सक
कला का प्रधान विषय सम्राटों, सामन्तों, राजसभाओं के चित्र बनाने त
सीमित रह गया। इसका क्षेत्र विस्तृत न हो सका।

जहाँगीर ने चित्रकला को जिस रूप में अपने पिता से पाया उसको
अधिक विकसित किया अकबर के समय में समन्वय हो चुका था जहांगीर का
तो चित्रकला की अभिव्यक्ति तथा प्रसार और विकास का युग था। इसके यु
अकबर का लगाया हुआ पौदा पूर्ण रूपेण पककर तैयार हो गया। जहांगीर
एक उच्च कोटि का कला मर्मज्ञ था। वह किसी प्रसिद्ध कलाकार के बनाये
चित्र को देखकर बता देता था कि किस चित्रकार की यह कृति है। इसके सम
आते आते कला पर भारतीयता का पूर्ण रूप से प्रभाव पड़ चुका था और
ईरानी प्रभाव कम हो गया था और इस समय की कला कृतियों में हि
परम्पराओं का अधिक तत्व दृष्टिगोचर होता है। वह कला का इतना शौकीन
कि विदेशी शैलियों के सर्वोत्कृष्ट नमूने अपने चित्रालय में निरन्तर रूप से रख
था। वह सौन्दर्य का उपासक था और उसके चित्रकार अपनी कृतियों में
सूक्ष्मता विलक्षणता तथा सरलता प्रदर्शित करते थे जो कला को पराकाष्ठा त
पहुँचाने के लिये आवश्यक होती है। पौदों, वृक्षों, पशु, पक्षियों तथा प्राकृति
दृश्यों का अधिक अनुपमता के साथ चित्रण किया जाता था व्यक्ति चित्र-युद्धों
चित्र इत्यादि इस समय की चित्रकला के प्रधान विषय थे। चित्रों को विविध तथा
मनोहर और रुचिकर रंगों से रंगा जाता था। इस समय के चित्रों में मनमोह

कर्षण रहा और इनमें सौन्दर्य की भावना अपनी अन्तिम सीमा पर पहुंच गई।
हांगीर का युग चित्रकला का स्वर्ण युग था उसके प्रसिद्ध चित्रकार कई थे। इनमें
स्ताद मन्सूर, आकारजा, मुहम्मद मुराद, फारुख बेग चित्रकला के बेजोड़
कि थे। हिन्दुओं में भी केशव मनोहर माधव तथा तुलसी जैसे चित्रकार
प्रमान थे।

जहांगीर के समय में वास्तु कला के अतिरिक्त चित्रकला का अधिक प्रसार
ा। जहांगीर इस कला का बड़ा ही अद्भुत और विलक्षण संरक्षक था और स्वयं
कोटि का कला मर्मज्ञ था। उसके बाद चित्रकला को वह प्रोत्साहन फिर प्राप्त
हो सका इसी कारण से पर्सी ब्राउन (Percy Brown) ने लिखा है कि 'उसके
हांगीर) देहावसान के साथ ही मुगल चित्रकला की आत्मा भी विलीन हो गई'
विद्वान का यह मत बड़ी सीमा तक सत्य पर आधारित है। इस सम्राट के
बाद चित्रकला धीरे धीरे अवनति की ओर अग्रसर होने लगी और शुष्क
रंगजेब के आते आते चित्रकला का स्रोत भी शुष्क हो गया।

अकबर के समान उसका पोता शाहजहां भी चित्रकला की अपेक्षा भवन
र्माण कला में अधिक रुचि रखता था और उसको इस ओर महान आकर्षण
उत्पन्न होता था। उसने अपनी अभिरुचि के अनुसार वास्तु कला को ही प्रोत्साहित
ा और धीरे धीरे संरक्षण के अभाव में इसके दरबार में चित्रकारों की संख्या
ती ही चली गई और इस समय की चित्रकला में मौलिकता का अभाव हो गया।

शाहजहां के दरबार में शिष्टाचार बहुत अधिक होने के कारण चित्रकार
सम्राट के आन्तरिक जीवन को चित्रण करने से रोक दिया गया। शाही हरम में
त्रकार के ब्रुश की पहुँच रोक दी गई। अब चित्रकला का विषय प्रधानतया
मीरों सामन्तों राज दरबार के दृश्यों तक ही सीमित रह गये। इस समय के
ों में एक विशेषता अवश्य रही और वह थी रंगों के प्रयोग की। इस समय
त्रण में जिन रंगों का प्रयोग किया गया वह जहांगीर के समय से अधिक
मकीले और उभरे हुए हैं उनमें स्वर्ण का भी अधिक प्रयोग है। कहीं कहीं तो
नके दिखाने में कलाकार ने अनोखे चातुर्य का प्रमाण दिया है। इस समय चित्रों
ी संख्या तो कम न थी परन्तु उनमें वह जीवन वह भावुकता वह सौन्दर्य का
भाव है जो जहांगीरी चित्रों में बाहुल्यता से दृष्टिगोचर होता है। इस समय के
ित्रों में विलक्षणता की कमी है और इनमें कला का स्तर निम्न होगया है।

इस समय व्यक्तियों के चित्र बनाये गये इन चित्रों के बनाने में चित्रकार ने
बड़ा कार्य किया रंगों का अनुपम प्रदर्शन किया परन्तु मुखमण्डल की सुन्दरता
के साथ वह चित्र में वह भाव उत्पन्न न कर सका जिनसे कला कमाल को पहुँच
जाती है। चित्र को देखकर चित्रित किये हुए व्यक्ति की आन्तरिक भावनाओं का

आभास नहीं होता। यही इस समय के चित्रों की महान दुर्बलता है। पशु पक्षि
के चित्र बनाये गये परन्तु उन चित्रों में स्वाभिकता उत्पन्न न की जा सकी। ग
चित्रों में कृत्रिमता आ गई कला की उड़ान बीच में ही रुक गई। चित्रका
मस्तिष्क का स्थान भी उसके हाथ और ब्रुश ने ही लेलिया। यही चित्रक
ह्रास के लक्षण थे।

राजकीय आश्रय का अभाव होने के कारण चित्रकारों को अपनी जीवि
की फिक्र पड़ी, अनेकों ने प्रान्तीय शासकों, सामन्तों, राजकुमारों के यहां नौकरि
ढूंढीं। अनेकों ने बाजार में चित्रगृह कायम किये और अपने चित्र जन साधारण
बेचने आरम्भ कर दिये। इस कारण अब चित्रकार-कला का पुजारी न रह
जीविका का उपासक हो गया। उसके चित्रों में कितनी कला है। यह
अब वह यह देखने लगा कि उसने अधिक से अधिक कितने चित्र उत्पन्न
इस प्रतिकूल वातावरण में कला की प्रगति हो ही नहीं सकती थी।

इतना ही नहीं शाही दरबार के कठिन शिष्टाचार के कारण चित्र
सीमित कर दिया गया। सम्राट सम्बन्धी या राज सम्बन्धी जो भी चि
जाता था। कलाकार को उस चित्र पर हाथ रोक कर काम करना होता था।
शिष्टाचार तथा दिव्यता और सम्राट की अभिरुचि का पूर्ण ध्यान रखना हो
इन भिन्न भिन्न कारणों से शाहजहां के समय चित्रकला का ह्रास होने लगा
शाहजहां के दरबार में प्रसिद्ध चित्रकार मीर हासिम तथा चित्र मणि और
चित्र ही रह गये थे।

सम्राट का बड़ा लड़का दारा शिकोह कला का अच्छा संरक्षक था पर
को वह सुअवसर प्राप्त न हो सका जबकि वह कला को प्रोत्साहन दे सकता।
औरंगज़ेब के क्रूर हाथों से इस उदार राजकुमार का अन्त हो गया और कला
महान संरक्षक खो बैठी।

औरंगज़ेब क्रूर हृदय का व्यक्ति था वह किसी भी प्रकार की चित्रका
धार्मिक सिद्धान्तों के विरुद्ध समझता था उसके कार्य ऐसा सिद्ध करते हैं कि
विनाशकारी प्रवृत्तियों का मालिक था। चारों ओर उसने भय तथा धर्मान्ध
वातावरण उत्पन्न कर दिया। ऐसा कहा जाता है कि बीजापुर के आसार महल
चित्रकारी को उसने नष्ट कर दिया था। और अकबर के मकबरे की चित्रकारी
सफेदी कराही थी। इतना विरोधी होने पर भी इसके समय के अनेकों चित्र
भी मिलते हैं। स्वयं औरंगज़ेब के अपने चित्रों की भी कमी नहीं रही। वह
पुत्र मुहम्मद सुल्तान के कारागृह के चित्रों को इसलिये देखा करता था कि उ
दशा को मालूम कर सके। मुहम्मद सुल्तान उसका विरोधी पुत्र था।

औरंगजेब की मृत्यु के उपरान्त चित्रकला दिल्ली तथा आगरे से प्रायः समाप्त गई और राज्याश्रय न पाकर चित्रकार भारत के विभिन्न भागों में चले गये। वहां इन्होंने चित्रकला की परम्पराओं को जारी रक्खा परन्तु कला का वह स्तर फिर न हो सका जो मुगल सम्राटों के आश्रय में कला ने प्राप्त कर लिया था।

मुगलकालीन चित्रकला की कई ऐसी विशेषतायें हैं जो इसको प्रधान रूप स्पष्ट कर देती है। इस समय की चित्रकला के विविध विषय रहे हैं। ऐतिहासिक तथिक घटनाओं का चित्रण किया गया है। दुर्गों, राज महलों, राज दरबारों के दृश्य चित्रित किये गये हैं। रामायण तथा महाभारत की गाथायें, पशु पक्षी, पे, पुष्प, वृक्ष इत्यादि अनेकों प्राकृतिक दृश्य चित्रित किये गये। परन्तु इन चित्रों उस धार्मिक भावना की झांकी प्राप्त न हो सकी जो भारतीयता की आत्मा थी। रतीय जीवन की कल्पनायें सुन्दरतम चित्रों के लिये दूर की वस्तुयें बनी रहीं। क जीवन की भावनायें मुगलों के चित्रों में प्रगट नहीं होतीं। कला सम्राट तथा की प्रशंसा तथा राजदरबार की वैभवता के चारों ओर घूमती रही और इस रेखि से हट कर जन साधारण के कठिन जीवन का चित्रण न कर सकी। इस मय के चित्रों से उस समय की जन साधारण के जीवन पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता।

दूसरी विशेषता इस काल की चित्र कला की यह है कि इसमें रंगों का योग और अलंकरण बहुत अधिक है। चमकदार और सुनहरी रंगों का प्रयोग मुख्यता से दिखाई देता है। आकृति के बनाने में अनुपम चातुर्य प्रदर्शित किया या है परन्तु इसमें सजीवता तथा भावुकता का वह स्तर प्राप्त न हो सका जिस कला उच्च तथा श्रेष्ठ बन जाती है। इसमें स्वाभाविकता का अभाव है जो आंखों खटकता है। शाहजहां के समय तक आते आते इस कला में कृत्रिमता की भावना विकसित हो गया है।

इस प्रकार अन्त में यह कहना आवश्यक हो जाता है कि मुगल काल में चित्रकला ने महान उतार चढ़ाव देखे। अपनी चरम सीमा भी इसने देखी तथा इसकी अवनति का भी दृश्य देखा।

हिन्दू चित्र कला

मुगल काल में हिन्दू शैली में मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में हिन्दू राजाओं दरबारों में फल फूल रही थी। राजस्थान में उन्नत होने के कारण इसको राज-स्थानी कहा गया है। इसका प्रसिद्ध केन्द्र जयपुर था। इसका उदय सोलहवीं शताब्दी के मध्य का माना जाता है और फिर दो शताब्दियों तक इसका बोल बाला रहा। ईरानी तथा मुगल शैलियों के सम्पर्क के कारण इसकी अधिक प्रगति हुई थी। दो सदियों में रहने के पश्चात इसका पतन हो गया और इसका स्थान पहाड़ी शैली ने ले लिया। यह नवीन शैली राजस्थानी शैली से अनेकों बातों में भिन्न थी।

राजस्थानी कला में अलंकरण की अधिकता है परन्तु पहाड़ी शैली में भावना माधुर्य पूर्ण चित्रण किया गया है। इसमें कृत्रिमता के स्थान पर अधिक स्वाभावि लाई गई है। पहाड़ी शैली के विषय अधिक विस्तृत हैं। कृष्ण से लेकर राम तथा महाभारत तक की गाथाओं तक का चित्रण किया गया है। इसमें लोक जी की झांकी पड़ती है। इसमें राग मालाओं का भी सुन्दर ढंग से चित्रण किया गया है। यह नवीन शैली पहाड़ी रियासतों में फली फूली और राजस्थानी शैली से क बढ़ गई। यही इसकी विशेषता रही है। पहाड़ी शैली की तरह से ही राजस्थान शैली मुगल शैली से विभिन्न प्रतीत होती है और अपनी विशेषतायें अलग रख है। सबसे महत्व पूर्ण बात यह है कि राजपूत कला में विषय बहुत ही विस्तृत खेत, पशु पक्षी, पनघट, कृषक, रामायण तथा महाभारत के चित्र सफलता पूर्वक चित्रण किया गया है। कृष्ण और उनकी लीलाओं का प्र है। कृष्ण पशु पक्षियों से घिरे हुए दिखाये गये हैं। शिव पार्वती का चित्रण किया गया है। इस प्रकार इस शैली में धार्मिक तत्वों की भी नहीं है। इस कला के चित्रकार ने मानव की श्रेष्ठ भावनाओं को सजीव की है। मानव प्रेम, करुणा इत्यादि के चित्रण का सफल प्रयास किया है। यह शैली बड़े ही विशाल, व्यापक तथा विस्तृत क्षेत्र में क्रीड़ा करती हुई होती है

परन्तु इसके विपरीत मुगल शैली सीमित है इसका क्षेत्र अधिक नहीं है। इसके विषय संकुचित क्षेत्र से ही लिये गये हैं। मुगल कला मुगलों की शान तथा वैभव से ही अठखेलियां की हैं। उसने मुगल दरबार निकलने का प्रयास ही नहीं किया। वह संकुचित होकर ही रह गई। परन्तु शैली लोक जीवन, धार्मिक जीवन, साधारण घटनायें और मानव भावना चित्रण करते करते बड़ी ही विशाल बन गई है। इस शैली ने व्यक्तियों के भी बनाये हैं और उनमें स्वाभाविक को प्रधान रूप से प्रदर्शित किया है। शैली में कृत्रिमता है तो राजपूत शैली में यथार्थता है। इस प्रकार दोनों शै में अपने अपने अलग गुण विद्यमान हैं।

. मुगल काल में चित्र कला के साथ साथ लेखन कला की भी प्रगति सुन्दर तथा स्वच्छ लिखने पर विशेष पारितोषिकों की व्यवस्था थी मस्जिदों दीवारों, प्रवेश द्वार पर कुरान की आयतों के लिखने का रिवाज था। अकबर के का अति प्रसिद्ध लेखक कलाकार कारमीरी मुहम्मद हुसैन था जो 'जरीं कलम' उपाधि से सुशोभित किया गया था।

1959 संगीत कला

संगीत कला को भी मुगलों ने अच्छा आश्रय प्रदान किया। औरंगजेब को छोड़ कर सभी सम्राटों की इस में अभिरुचि रही। बाबर संगीत प्रेमी था। इसी प्रकार हुमायूं भी गाने में आनन्द उठाता था। हफ्ते में सोमवार तथा बुद्धवार को संगीतज्ञों की सभा होती थी और सम्राट इन संगीतज्ञों के कला पूर्ण संगीत से आनन्द प्राप्त करता था। उसके पश्चात सूरी सम्राटों ने भी संगीत की उपेक्षा नहीं की इनमें इस्लाम शाह तथा आदिल शाह बड़े ही संगीत प्रेमी थे।

अकबर का शानदार दरबार संगीत कला का भी प्रसिद्ध केन्द्र था। उसने संगीतज्ञों को महान आश्रय प्रदान किया। उसके दरबार में ईरानी; काश्मीरी तथा हिन्दू संगीतज्ञ रहते थे। कई तो बहुत ही अधिक ऊंची कोटि के थे। ग्वालियर का तानसेन बेजोड़ गवैया था। उसकी प्रशन्सा करते हुये अब्दुल फजल लिखता है कि 'भारत में उसके समान गायक एक सहस्त्र वर्षों से नहीं हुआ है' दूसरा उच्च कोटि का गायक बाज बहादुर था वह भी अपनी कला का स्वयं ही उदाहरण था। अकबर के दरबार में ३६ उच्च कोटि के संगीतज्ञ थे। अकबर स्वयं संगीत को भलि प्रकार समझता था वह नक्कारा भी अच्छा बजाता था। उसके समय में संगीत के संस्कृत ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद हुआ और नवीन रागों का उदय हुआ। अकबर का अनुकरण कर अन्य दरबारी भी संगीत को प्रोत्साहन देते थे। ऐसे आश्रय दाताओं में मानसिंह तथा अब्दुल फजल विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इस समय ईरानी तथा भारतीय संगीत कला के सम्मिश्रण से एक नवीन शैली का उदय हुआ जो इन दोनों से ही अधिक रुचिकर थी। इसी समय कव्वाली, तराना, तथा ठुमरी इत्यादि रागों का भी विकास हुआ। अकबर को गानों का इतना चाव था कि उसके दरबारी संगीतज्ञ सात समुदायों में बँटे थे। प्रत्येक समुदाय प्रति दिन अपना गान करते थे। और राज दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

जहांगीर द्वारा भी उसके बाप की तरह ही संगीत कला को आश्रय मिलता रहा। उसको भी संगीत से प्रेम था। इसी प्रकार शाहजहां भी संगीत में अधिक अभिरुचि रखता था। वह हिन्दी पदों की रचना भी करता था। उसके दरबार में प्रसिद्ध संगीतज्ञ जनार्दन तथा जगन्नाथ थे। दोनों ही उच्चकोटि के कलाकार थे। इससे स्पष्ट है कि सम्राट हिन्दू कलाकारों का भी आश्रयदाता था। शाहजहां के बाद औरंगजेब के समय में अन्य कलाओं की तरह से संगीत को भी आश्रय प्राप्त न हुआ और कलाकार मुगलदरबार से हट कर अन्य स्थानों में चले गये और अन्य राजाओं तथा नवाबों के दरबारों की शोभा बढ़ाने लगे।

औरंगजेब के पश्चात गान विद्या को मुहम्मद शाह रंगीले ने फिर से जीवन प्रदान किया और एक बार फिर कलाकार को मुगलों का आश्रय मिला। शोरी

मियां इस समय का सुन्दर और प्रतिभाशाली गायक था। इसी समय संगीत की और भी नवीन शैलियां उत्पन्न हुईं और राग भी उत्पन्न किये गये। इसी समय में श्री निवास ने संगीत पर प्रसिद्ध ग्रन्थ 'राग तत्व नव बोध' की रचना की।

इसी समय दक्षिण में भी संगीत कला का अच्छा उत्कर्ष हुआ। गोलकुण्डा में ही बीस हजार संगीतज्ञ माने गये हैं। दक्षिण में गान विद्या को धार्मिकता का कृत्य माना गया था और हिन्दुओं में इसका आदर था परन्तु आगे चलकर उत्तरी भारत में इस कला की ओर इसलिये अरुचि उत्पन्न हो गई क्योंकि इस कला के क्षेत्र में कुख्यात नारियां अधिक भाग लेने लगीं और संगीत लोक प्रिय न रहकर राजाओं तथा सामन्तों के भोग विलास की वस्तु समझा जाने लगा।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि मुगल काल चित्रकला का स्वर्ण युग कहा जा सकता हैं इस काल में चित्रकला को महान आश्रय प्रदान किया गया। अकबर ने जिस कला को विकसित किया जहाँगीर ने उसको श्रेष्ठता की उच्चतम चोटी पर पहुंचाया और चित्रकार कल्पना की विजय पूर्ण उड़ान भर सका। शाहजहां ने कला के अलंकरण में प्रसिद्धि प्राप्त की।

इसी प्रकार संगीत के क्षेत्र में भी मुगल काल में अच्छी प्रगति हुई और इस युग को तानसैन जैसे कलाकार ने सुशोभित किया।

यही मुगल युग की विशेषता रही है।

Q — What various contributions have been made to India by the muslim and mugal rule?

प्रश्नः— मुस्लिम तथा मुगल शासन ने भारत को क्या क्या विशेष देन प्रदान की हैं ?

उत्तरः—मुस्लिम तथा मुगल जब भारत में आये तो उनकी अपनी विशेष-परिपक्व तथा सम्पूर्ण सभ्यता थी। उन्होंने संस्कृति के भिन्न २ क्षेत्रों में अपने ढंग की प्रगति करली थी इसलिये स्वाभाविक ही था कि वह अन्य जातियों के समान भारतीयता में अपना पूर्ण विलीनिकरण न होने देते और अपनी सभ्य संस्कृति की छाप भारत की प्राचीन संस्कृति पर लगा देते। ठीक ऐसा ही हुआ मुस्लिम सम्पर्क के कारण अनेकों परिणाम निकले। सभ्यता के भिन्न २ क्षेत्रों में दोनों संस्कृतियों के समन्वय से नवीन नवीन प्रणालियों का प्रस्फुटन हुआ नवीन प्रथायें प्रचलित हुईं नवीन शैलियां निकलीं।

यदि समस्त क्षेत्रों को देखा जाय तो मुस्लिम सम्पर्क की अलौकिक देन है। एक सूत्र केन्द्रित शासन, आन्तरिक शांति, विदेशों से पुनः सम्पर्क की स्थापना

ललित कलायें, नवीन वास्तु कला, भिन्न २ भाषाओं की साहित्यिक उन्नति, एकेश्वरवाद के सिद्धान्त का उदय इत्यादि मुस्लिम सम्पर्क की अलौकिक देन रही हैं।

प्रथम देन सुदृढ़ शासन स्थापित कर आन्तरिक शांति की स्थापना है। शताब्दियों तक भारत में अव्यवस्था रहने के कारण संस्कृति के क्षेत्र में ह्रास हो रहा था। उद्योग धंधे शिथिल पड़ गये थे। राजनैतिक पृथकता के कारण आये दिन युद्ध चलते थे। राजपूत काल में साधारण बातें भी तलवार की धार से तय की जाती थीं। जन मार्गों की सुरक्षा नष्ट होने के कारण व्यापार खराब हो गया था। इस प्रकार की स्थिति में देश की प्रगति को आघात पहुँच रहा था। मुस्लिम शासन के स्थापित होने के कारण देश में शांति तथा सुरक्षा का वातावरण उत्पन्न हुआ। मुगल काल तक आते आते यह सुरक्षा निरंतर दृढ़ता धारण करती चली गई और अकबर के काल में तो समस्त भारत ने चैन की सांस ली।

इन सुलतानों ने केन्द्रित शासन की नींव डाली और फिर उसको दृढ़ करने के उत्साहपूर्ण प्रयत्न किये। बलबन तथा अलाउद्दीन, शेरशाह तथा अकबर इस प्रकार के उज्ज्वल उदाहरण हैं। मुगलों के समय में सामन्तवादी प्रथा थी परन्तु उनकी केन्द्रीय व्यवस्था इतनी दृढ़ थी कि प्रांतीय शासन पूर्ण रूप से केन्द्र के मातहत था और उसकी आज्ञाओं का पालन करता था। प्रांत में तनिक सी उलझन हो जाने से मुगल सम्राट सतर्क होकर प्रांतीय शासन को ठीक करते थे। मुगल शासन प्रणाली ने जिन नवीन सिद्धान्तों को जन्म दिया उनको नवीन शासनों ने भी अपनाया है जैसे– सूबों का निर्माण, सूबों का सरकारों में विभाजन, भूमि कर पद्धति तथा करों का अन्न तथा सिक्कों के रूप में संग्रह इत्यादि।

मुगल काल में साम्राज्य के एक छोर से दूसरे छोर तक एक ही प्रकार का शासन काम करता था। सब जगह फारसी भाषा ही शासन की भाषा थी। सब जगह शासकों की उपाधियाँ एक सी ही थीं। एक प्रांत के उच्चाधिकारी दूसरे प्रांतों में बदल दिये जाते थे। इस प्रकार एक छत्र शासन स्थापित कर देश में एकता की नवीन भावना को उत्पन्न किया और इस प्रकार देश में ऐसा वातावरण आया कि आपसी संघर्ष समाप्त हो गये और चारों ओर सुरक्षा अनुभव की जाने लगी। साम्राज्यवाद के सिद्धान्त को विकसित करते २ मुगलों ने चरम सीमा तक पहुँचाया। मुगलों की यह देन बड़ी ही शानदार देन थी। इससे भारत को कोई हुई प्रगति को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ।

दूसरी प्रभावशाली देन जो सुलतानों तथा मुगलों ने भारत को प्रदान की वह थी विदेशों से फिर सम्बन्ध स्थापित करना। राजपूत युग में भारत

पांचवीं देन सांस्कृतिक क्षेत्र में रही मुस्लिम तथा मुगल कालीन रिवाजों, शिष्टाचार, वस्त्र आभूषण आज भी हमारे समाज में उसी तरह विद्यमान हैं जैसे उस काल में थे। पाजामे तथा अचकन का रिवाज उस समय से चलकर आज भी प्रचलित है। वमन, बोली, रहन सहन के ढंग इत्यादि आज वही हैं जो मुगलों के समय में थे। आज हमारी जो सामाजिक प्रथायें हैं उन मुगल कालीन प्रथाओं की गहरी छाप स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। इस काल में हिन्दु मुस्लिम संस्कृतियों का सुन्दर रूप से सम्मिश्रण तथा समन्वय हुआ और वह सम्मिश्रण निरन्तर रूप से आज भी विद्यमान है।

छठी देन भाषाओं के विकास तथा उनके साहित्यों में प्रभूत प्रगति के रूप में है। मुगल शासन बड़ा ही उदारता पूर्ण तथा विशाल और व्यापक भावना से ओत प्रोत था। उस शासन ने भारत के हिन्दुओं को सुरक्षा और स्वतन्त्रता का आश्वासन ही नहीं दिया अपितु इस प्रकार का वातावरण भी बनाया। इस उदार वातावरण में विद्वानों को अपने विचार स्पष्टतया प्रगट करने का सुअवसर प्राप्त हुआ और इन दबे हुए विचारों के एक दम प्रगट होने से साहित्यिक क्षेत्र में एक अनोखी चहल पहल और प्रगति दिखाई पड़ी। प्रत्येक भाषा के क्षेत्र में अलौकिक विद्वानों का जन्म हुआ। सूर और तुलसी ने उस युग की महानता को बढ़ाया। भूषण ने अपनी प्रतिभा से मराठों में एक नवीन जीवन का सञ्चार किया।

मुस्लिम तथा मुगल काल में भक्ति आन्दोलनों में नवीन धारा उत्पन्न हुई इन आन्दोलनों में भिन्न भिन्न सन्तों ने भिन्न भिन्न भाषाओं को अपने प्रचार का साधन बनाया और अपने भजन इत्यादि लिखे। इस प्रकार उस भाषा विशेष के साहित्य की प्रगति हुई। बंगला, मराठी, गुजराती, राजस्थानी देशज भाषाओं में अलौकिक उन्नति हुई।

इसके अतिरिक्त राजाश्रय प्राप्त होने पर शिक्षा की भी उन्नति हुई। बनारस संस्कृति का प्रसिद्ध केन्द्र बन गया। वहां के कई प्रसिद्ध आचार्य शाहजहां के मित्रों में से थे। इस प्रकार साहित्यिक प्रगति में भी मुगलों का गहरा हाथ रहा।

अन्य भाषाओं की तरह फारसी भाषा की महान उन्नति हुई। इसके साहित्य की भी चरम सीमा पहुंच गई थी। अमीर खुसरो, फैजी इत्यादि प्रसिद्ध लेखक हुए। इस समय फारसी के मौलिक ग्रंथ ही नहीं लिखे गये अपितु कई हिन्दु धार्मिक ग्रंथों का फारसी भाषा में अनुवाद किया गया। फैजी का ऐसे अनुवादकों में विशेष स्थान है उसने गणित में 'लीलावती' का अनुवाद फारसी में किया। अथर्ववेद का अनुवाद इब्राहीम सरहिन्दी द्वारा किया गया। अनेकों काव्य ग्रन्थों की रचना की गई अनेकों कवियों ने फारसी साहित्य को समृद्ध किया। मुगलों के बाद भी हिन्दुओं में फारसी के प्रति बड़ा उत्साह बना रहा था।

हिन्दुस्तानी भाषा का भी इसी काल में सृजन हुआ। इसमें उत्तम गद्य ग्रंथों का विकास हुआ। उर्दू भाषा के भाण्डार की समृद्धि में भिन्न भिन्न भाषाओं ने भाग लिया। इसमें फारसी, अरबी, हिन्दी कई भाषाओं के शब्द सम्मिलित कर लिये गये थे। यह नवीन भाषा बहुत फली फूली और मुस्लिम काल की अलौकिक देन सिद्ध हुई।

सातवीं महत्वपूर्ण देन ऐतिहासिक साहित्य की देन है प्राचीन काल के भारतीय विद्वानों ने ऐतिहासिक ग्रन्थों की ओर अधिक अभिरुचि न दिखाई परन्तु मुस्लिम तथा मुगल काल में अनेकों ऐतिहासिक ग्रन्थों का संग्रह किया गया। इस काल में अनेकों इतिहासज्ञ हुए।

बदाऊनी, मिन्हाजसिराज, फरिश्ता तथा अब्दुल फजल अधिक प्रसिद्ध हैं। इन लोगों के कारण भारतीय साहित्य में इतिहास, जीवन चरित्र, आत्म कथाओं का प्रचलन हो गया। यह एक नवीन देन थी जो मुसलमानों ने भारत को प्रदान की।

आठवीं देन युद्ध कला में मिली। हाथियों के स्थान पर घोड़ों का अधिक प्रयोग होने लगा। तोपखाने का रिवाज बढ़ा और बारूद भी अधिकता से प्रयोग में आने लगी। मुसलमानों के घोड़े तथा तोपखाना हिन्दुओं के हाथियों से अधिक श्रेष्ठ सिद्ध हुए घोड़ों के बल पर मुसलमानों ने समस्त भारत में विजय प्राप्त की और इसी कारण से हिन्दुओं ने अपनी युद्ध शैली के स्थान पर मुसलमानों की युद्ध कला को अपनाया। इन साधनों को अपनाने से युद्ध सवारों से फसलों की हानि अवश्य होने लगी परन्तु जहाँ तक युद्ध कौशल का सम्बन्ध है वह मुसलमानों के सम्पर्क से अधिक श्रेष्ठ हो गया।

नवीं देन धार्मिक आन्दोलन तथा सूफी मत की थी। मुस्लिम धार्मिक सिद्धान्तों ने भारतीय धार्मिक क्षेत्र को विशेष रूप से प्रभावित किया। इस्लाम धर्म के कुछ ऐसे सिद्धान्त थे जिन्होंने हिन्दुओं के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाला। विश्व बन्धुत्व की भावना, सामाजिक समानता, धार्मिक सरलता, एकेश्वरवाद का सिद्धान्त, बहुदेववाद की मुखालफत, जातिप्रथा का विरोध इत्यादि ऐसे सिद्धान्त थे जिन्होंने हिन्दु सन्तों को जन्म दिया जिन्होंने अपनी अलौकिक तीव्र बुद्धि के बल पर भक्ति आन्दोलन में नवीन आत्मा भर दी। इन आन्दोलनों के इस प्रकार तीव्र होने का कारण हिन्दु धर्म का इस्लाम धर्म से सम्पर्क ही था जाति प्रथा का खण्डन, धार्मिक क्रियाओं का घोर विरोध, मानव की समानता इत्यादि ऐसे सिद्धान्त थे जिनकी प्रेरणा मुस्लिम धर्म ही देता था यह भक्ति मार्ग के सन्त अपने उद्देश्यों में बड़ी सीमा तक सफल रहे। यह उस वातावरण का ही प्रभाव था जो मुसलमानों ने वहाँ उत्पन्न कर दिया था। रामानन्द, कबीर, नानक इत्यादि महात्माओं ने

सुधारवादी आन्दोलन को खड़ा कर उस समय हिन्दु धर्म की रक्षा की। उस पतन को रोका।

दूसरी ओर मुसलमानों में सूफी मत का प्रचार हुआ यह दोनों धर्मों समन्वय का ही प्रभाव था। इस मत में ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया जिनको दोनों धर्मों के लोग बिना संकोच के मान लें। सूफी मत के सन्तों का हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही समान आदर करते थे और यह सन्त भी दोनों ही धर्मों के लोगों को समान रूप से प्यार करते थे। सूफी मत दोनों धर्मों के सुन्दर सम्मिश्रण का ही फल था। हिन्दु वेदान्त के सिद्धान्तों के प्रभाव को सूफी मत स्पष्ट रूप से प्रगट करता है। अकबर तथा दारा शिकोह के उदारता पूर्ण संरक्षण में सूफी मत बहुत अधिक विकसित हुआ था। इस्लाम के कारण यहां पर पीरों, पैगम्बरों में श्रद्धा बढ़ गई थी। आज भी ग्रामों में पीरों पर चढ़ावे चढ़ाये जाते हैं और उनकी उपासना की जाती है। इस प्रकार इस्लाम के सम्पर्क ने भारत के धार्मिक क्षेत्र को अधिक प्रभावित किया और अपनी गहरी छाप भारत के सामाजिक जीवन पर भी लगाई जो आज भी विभिन्न रूपों में दृष्टिगोचर होती है।

उपरोक्त देनों के अतिरिक्त और भी ऐसे प्रभाव हैं जो मुस्लिम संस्कृति ने भारत की संस्कृति पर स्थाई रूप से डाले। ये भिन्न भिन्न क्षेत्रों में दिखाई देते हैं।

मुसलमानों द्वारा कागज का प्रयोग प्रारम्भ किया गया और ताड़ पत्रों का प्रयोग धीरे धीरे घटने लगा अब सुन्दर पुस्तकें कागज द्वारा बनाई जाने लगीं। पुस्तकों को चित्रों से अंकित किया जाने लगा। इस प्रकार की पुस्तकें मुगल काल की एक विशेष देन है। कागज द्वारा ग्रन्थों की नकल करने में सुविधा हुई और एक ग्रन्थ की अनेकों नकलों के प्राप्त होने के कारण ज्ञान का अधिक प्रसार हुआ।

यूनानी चिकित्सा पद्धति भी भारत में मुसलमानों द्वारा ही फैलाई गई। यहां के धनी वर्गों पर ऐश्वर्य पूर्ण जीवन व्यतीत करने का बड़ा कारण भी मुसलमानों के सम्पर्क में रहना ही था। खुशबूदार इत्र तथा तेल तथा अन्य वस्तुएं अधिकाधिक प्रयोग में आने लगीं और धनी वर्गों के घर इस प्रकार की विलासपूर्ण वस्तुओं से परिपूर्ण रहने लगे। मुगल दरबार के सामन्त वर्ग में विलास प्रिय तथा शानोशौकत का जीवन व्यतीत करने की प्रतिस्पर्धा रहती थी और साल भर में करोड़ों रुपया निरर्थक वस्तुओं पर खर्च होता था।

मुस्लिम सम्पर्क के कारण फारसी अर्बी तथा तुर्की भाषाओं के अनेकों शब्द भारत की भिन्न भिन्न भाषाओं में मिल गये और इतना ही नहीं बल्कि एक नवीन मिश्रित भाषा उर्दू का उदय हुआ। मुसलमानों ने भारत की राजनैतिक पृथकता का विनाश कर एकता का सूत्रपात किया। छोटे छोटे राज्यों का अन्त कर साम्राज्य की स्थापना की और साम्राज्यवादी सिद्धान्त जो सदियों तक विलुप्त

रहा था फिर से भारत में प्रसारित हुआ। विदेशों के साथ फिर से सम्पर्क स्थापित कर देश में नवीन स्फूर्ति आई और नवीन धाराओं का प्रवाह आरम्भ हुआ।

इससे यह कहना ही पड़ेगा कि मुस्लिम सम्पर्क से भारत को यदि कुछ हानियां हुई तो कुछ लाभ भी हुए। संस्कृति के भिन्न भिन्न क्षेत्रों में मुस्लिम प्रभाव आज भी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। कलाओं के क्षेत्र में मुगलों ने नवीन प्रणालियों को जन्म दिया और फिर उनका विकास कर उन्नति की चरम सीमा तक पहुँचाया। वास्तुकला, चित्रकला तथा संगीत कला के लिये भारत सदा ही मुगलों का ऋणी रहेगा।

Q.:— What contribution has been made to India by the English Rule?

प्रश्न:—अंग्रेजी शासन की भारत को क्या देन है?

उत्तर:—मुगल शासन के पतन के साथ २ भारतीय संस्कृति का भी पतन हो रहा था। भिन्न २ क्षेत्रों में यह संस्कृति अपने निम्न स्तर की ओर फिसल रही थी। चारों ओर एक प्रकार की ह्रासात्मक स्थिति दृष्टिगोचर हो रही थी। राजनैतिक क्षेत्र में निरन्तर संघर्ष के कारण देश अशांति का शिकार हो रहा था। भारतीय सभ्यता प्रभावहीन होकर मृत सी हो गई थी। साहित्यिक क्षेत्र उदासीनता की निद्रा में पड़ा हुआ था। किसी भी राष्ट्रीय अथवा देशज भाषा में प्रगति के चिन्ह नहीं दिखाई देते थे। धर्म में भी प्रत्येक प्रकार का विकास रुक गया था। इसी प्रकार की प्रभावहीनता तथा शिथिलता कला के क्षेत्र में भी फैली हुई थी। ललित कलाओं के अनेकों कीमती ग्रन्थ अब लुप्त हो गये थे। अब कलाकार अपनी जीविका कमाने तक में असमर्थ हो गया था। ऐसी दशा में जब पाश्चात्य सभ्यता ने जो अपने पूर्ण वेग के साथ भारत में आई इस दुर्बल ढाँचे पर आघात किया तो यह रोगी ढाँचा चकना चूर हो गया और भारत के अनेकों होनहार विद्वान भी पाश्चात्य प्रकाश से चका चौंध हो गये। यहां के रहने वालों को पश्चिम से आई हुई प्रत्येक वस्तु सुन्दर प्रतीत हुई और भारत की प्रत्येक वस्तु घृणित दिखाई पड़ी। यही भावना पतन का अन्तिम लक्षण था। भारत सहम गया मानों उसका अपना अस्तित्व कुछ था ही नहीं। कुछ काल तक यही क्रम चलता रहा। नौकरियों तक में भ्रष्टाचार, अयोग्यता, कार्य हीनता का बोल बाला था। देश का प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी हो गया था। अपनी गरज के सामने देश के हित का किसी को ध्यान ही न था।

ऐसे समय में अंग्रेजों ने भारत में अपने शासन की स्थापना की और लग-

भग दो सदियों तक भारत में जमे रहे। इस काल में ऐसा नहीं कहा जा सकता कि प्रत्येक दृष्टि से उन्हों ने भारत को हानि ही पहुँचाई हो। उन्होंने अनेकों प्रकार से भारत को अपनी देन भी प्रदान की हैं। यह देन भिन्न २ क्षेत्रों में दिखाई पड़ती हैं।

केन्द्रीय शासन तथा अन्य शासकीय यन्त्र, शांति की स्थापना, एकता का सूत्रपात, समस्त देश में एकान्विति, आधुनिक शिक्षा, आधुनिकरण, प्रगति की भावना की जागृति, कलाओं तथा साहित्य की उन्नति, विदेशों से सम्पर्क, भौतिक उन्नति, धार्मिक आन्दोलनों का उदय, नवाभ्युत्थान या पुनर्जागरण (Renaissance) का सूत्रपात और विकास इत्यादि—

प्रथम देन जो अंग्रेजों ने भारत को प्रदान की वह एक केन्द्रित शासन की स्थापना थी। राजनैतिक दृष्टि से भारत छिन्न भिन्न हो रहा था। मुगल सत्ता के नष्ट होने पर समस्त देश अराजकता का शिकार बन गया था। भिन्न-२ भागों में भिन्न २ शासक अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर जनता को कष्ट पहुँचा रहे थे। मराठे सरदार भारत में हिन्दू सत्ता को दृढ़ करने के प्रयत्न कर रहे थे। मुस्लिम नवाब अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने में प्रयत्नशील थे। आये दिन इन शासकों में तलवार खटकती रहती थी और शान्ति का ह्रास हो रहा था। प्रगति रुक गई थी अंग्रेजों ने केन्द्रित शासन को स्थापित कर इन आये दिन संघर्षों का अन्त कर दिया और इन देशी शक्तियों को दबा कर अराजकता को समाप्त कर दिया। अब देश के पास तथा दूरस्थ भाग एक ही प्रकार से शासित होने लगे और सब जगह शांति और सुरक्षा अनुभव की जाने लगी। सारा देश एक ही केन्द्र की ओर देखने लगा। अराजकता का स्थान सुदृढ़ शासन ने ले लिया। इतना ही नहीं शासन को प्रभावशाली बनाने के लिये नये नये यन्त्रों को चालू किया गया। भारतीय सिविल सर्विस (I. C. S.), भारतीय पुलिस सर्विस (I. P. S.), भारतीय मैडिकल सर्विस (I. M. S.) इत्यादि का संगठन कर शासन को सफल बनाने के उपाय निकाले गये। इन सर्विसों ने देश के शासन भार को इस योग्यता से सहन किया और चलाया कि समस्त देश में सुरक्षा फैल गई। समाज तथा शांति विरोधी शक्तियों को समूलतः नष्ट कर दिया। न्याय विभाग की व्यवस्था भी नवीन ढङ्ग से निर्माण किया गया। भारतीय दण्ड विधान को जन्म दिया गया और प्राचीन कानूनों के स्थान पर नवीन उपयुक्त कानूनों की व्यवस्था की गई। अब पक्षपात रहित रीति से न्याय प्रदान किया जाने लगा। और अमीर गरीब सब को एक ही रूप से न्याय मिलने लगा। इन नौकरियों में बड़े ही योग्य पुरुष लिये जाते थे। इन्होंने अपनी योग्यता के बल पर ही शासन की मशीन को ऐसे स्तर तक पहुँचा दिया कि भारत की उच्च सर्विस विश्व प्रसिद्ध

र्विसों में गिनी जाने लगी । इस प्रकार अंग्रेजों ने एक स्थाई, सुदृढ, संगठित और प्रभावशाली केन्द्रीय शासन की स्थापना की और उच्च कोटि की भारतीय सर्विस की नीव डाली और उसका पूर्ण रूप से विकास किया । अंग्रेजों का स्थापित किया हुआ ढाँचा आज भी बड़े ही सुन्दर ढङ्ग से सफलता पूर्वक कार्य कर रहा है। अब इन सर्विसों को भारतीय शासकीय सर्विस (Indian Administrative Service) कहते हैं।

अंग्रेजों ने जिस संघ की नींव १६३५ के एक्ट में डाली थी उस में कुछ परिवर्तनों के साथ ही अपना लिया गया है और जिस शासन प्रणाली की नींव अंग्रेजों ने डाली थी वही विकसित होते होते आज भारत में उसी प्रकार से कार्य कर रही है। भारत के प्राचीन सूबे हैं जो आज संघ की इकाईयां बना लिये गये हैं।

अंग्रेजों के शासन में ही प्रजातन्त्र के विचारों का उदय हुआ और धीरे २ ... का जन्म हुआ जो समय के साथ २ विकसित होती गई। ... में व्यवस्थापिका सभा की नीव डाली गयी। १६०६ के मिण्टो-मार्ले के अनुसार और फिर १६१६ के मण्टेगों चैम्सफोर्ड सुधारों के अनुसार व्यवस्थापिका सभाओं के अधिकारों को विकसित कर दिया गया। इन में ... के प्रत्यक्ष चुनाव की प्रणाली चलाकर जन मत को राजकीय कार्यों के प्रयोग में लाना प्रारम्भ कर दिया। वाइसराय रिपन ने स्वायत्त शासन की ... जो अब तक सफलता पूर्वक कार्य कर रही है। म्यूनिसिपल बोर्ड, ... बोर्ड शासन में बड़ी सहायता करते हैं।

दूसरी देन शान्ति व सुरक्षा है। देश के एक छोर से दूसरे छोर तक शांति व सुरक्षा की भावना को फैलाया। ठगी, लूट खसोट को प्रभावशाली ... द्वारा रोका गया। जन मार्गों को लुटेरों से साफ किया गया। विदेशी ... से देश को बचाया और सुरक्षा प्रदान की। मुगलों के पश्चात जो ... हो गई थी उसका अन्त कर दिया गया। अब ग्राम तथा नगर शांति से जीवन व्यतीत करने लगे। और धीरे २ प्रगति के लिये वातावरण ... गया।

तीसरी देश में एकता का सूत्रपात था। एकीकरण ने देश को समृद्ध तथा ... बनाया। अंग्रेजों की राजनैतिक आवश्यकताओं ने एकीकरण की भावना ... कार्यरूप में परिणित करने में बड़ा योग दिया। प्रभु-सत्ता के सिद्धान्त (... of Paramountcy) ने देशी राज्यों को भी एक ही वाइसराय ... अधीन कर प्रत्यक्ष रूप से उनकी स्वतन्त्रता का अन्त कर दिया और प्रसिद्ध ... दरबारों द्वारा भारतीय एकता पर छाप लगा दी गई। इङ्गलैंड के राजा ... को उपाधि दे दी गई और समस्त भारत एक इकाई बनकर उसके

अधीन हो गया। इस प्रकार राजनैतिक एकता ने अन्य प्रकार की एकताओं का सूत्रपात कर दिया गया। लोगों की विचार धाराओं में परिवर्तन हो गया। उन्होंने भारतीयता की भावना को अपनाया और इसी को विकसित किया। यातायात के साधनों ने देश की एकता की भावना को सुदृढ़ बनाने में महान योग पहुँचाया। एक प्रांत से दूसरे प्रांत में आने जाने, मिलने जुलने की सुविधाओं से प्रथकता की भावना को बड़ा आघात लगा और एकीकरण की क्रिया और भी वेग से बढ़ने लगी और देश एक दृढ़ सूत्र में बन्ध गया।

लोगों में एकान्विति की भावना उत्पन्न हुई। एक समान स्वरूप तथा देश व्यापी शान्ति ने इस भावना को और भी अधिक योग प्रदान किया। फल यह हुआ कि धीरे धीरे सामाजिक समानता तथा विचारों की एकता की भावना प्रबल हो उठीं और शक्तिशाली प्रवाह से बहने लगीं। इन प्रबल धाराओं ने राष्ट्रीयता की भावना को और भी शक्ति प्रदान की और देश में एक नवीन वातावरण की स्थापना हुई।

चौथी देन समाज की आधुनीकरण की दशा थी। समाज में अंग्रेज़ी सम्पर्क के कारण ऐसी भावनायें जागृत हुईं कि प्राचीन रूढ़ियों तथा बन्धनों से प्रथक हो कर प्रगति की जाये। समाज को पतित करने वाली प्रथाओं के खिलाफ एक विद्रोह जाग उठा। सती प्रथा का अन्त कर दिया। शिशु हत्या तथा बाल विवाह की प्रथाओं को समाप्त कर दिया गया। जाति प्रथा तथा छूत छात के खिलाफ आन्दोलन उठ खड़े हुये और इनके कारण जातियों की परिवर्तन शीलता भंग हो गई। पुरोहितों का प्रभाव घटने लगा। समाज के अंग नवीनता के रंग को अपना कर रूढ़िवादिता का अन्त करने लगे। इस प्रकार शिथिल समाज वेग के साथ प्रगतिशील हो गया। इसका आधुनिकरण कर दिया गया। सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में वेग पूर्ण आन्दोलनों का उदय हुआ जिन्होंने अनेकों कुरीतियों का अन्त कर दिया।

पांचवी देन शिक्षा के क्षेत्र में सिद्ध हुई १९वीं सदी में समय समय पर एक्ट बनाये गये और अंग्रेजी भाषा की शिक्षा का प्रचार बढ़ता रहा देश भर में और विशेषकर बंगाल तथा मद्रास में अनेकों अंग्रेजी पढ़े लिखे नौजवान हो गये। इस शिक्षा के प्रसार से भाषा की एकता और उसके साथ साथ सांस्कृतिक एकता की भावना का प्रादुर्भाव हुआ। इस भाषा के अध्ययन द्वारा भारत के अनेकों लोग योरप के स्वतन्त्रता के विचारों के सम्पर्क में आये। उनको भारत की हीन दशा का अनुभव होने लगा। पाश्चात्य शिक्षा द्वारा योरप में घटित क्रान्तियों से भारत में क्रान्तिकारी विचार फैले। इंगलैण्ड की रक्तहीन क्रान्ति, फ्रान्स की रक्तिम क्रान्ति, अमरीका का विद्रोह तथा इसकी आजादी की स्थापना से भारत ने प्रेरणा प्राप्त

और यहां भी निरन्तर रूप से आजादी का आन्दोलन आरम्भ कर दिया गया। अंग्रेजी भाषा द्वारा भारत के जन साधारण योरप के प्रभावशाली विद्वानों के ग्रन्थों को पढ़ने और उनसे प्रेरणा लेने लगे। इसी प्रकार के लोगों ने स्वतन्त्रता संग्राम का नेतृत्व किया और इस संग्राम को सफलता प्रदान की। अंग्रेजी भाषा द्वारा ही भारत में पाश्चात्य सभ्यता का अधिक प्रसार और प्रभाव फैला। अनेकों नौजवानों ने अंग्रेजी भाषा के साथ साथ अंग्रेजी वेश भूषा, अंग्रेजी रीति रिवाज अपनाने शुरू कर दिये और पाश्चात्य संस्कृति के रंग में रंगे जाने लगे।

छठी देन प्रगति शील विचार थे। पाश्चात्य शिक्षा तथा सभ्यता के प्रभाव के कारण अनेकों भारतीयों में बौद्धिक जागृति हुई। उनमें उन्नति करने की प्रबल इच्छा का प्रवाह आरम्भ हो गया। भारत की हीन तथा दीन दशा उनको अखरने लगी। इसको बदलने के लिये अनेकों नेता गण उठ खड़े हुये। उन्होंने पश्चिम की अच्छी अच्छी बातों को अपनाया और भारतीय संस्कृति के दोषों को छोड़ना आरम्भ कर दिया। ऐसे नेता गणों ने अकर्मण्यता तथा भाग्यवाद पर कुठारा घात किया और प्रगतिशील दृष्टिकोण का प्रचार और प्रसार किया। उन्होंने भूत काल से अपनी दृष्टि हटाई और भविष्य की ओर आशा पूर्ण दृष्टि से देखा। धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, भिन्न भिन्न क्षेत्रों में प्रगति के लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे। इस प्रकार अंग्रेजों के सम्पर्क से भारत में प्रगतिशील विचारों की उत्पत्ति हुई।

सातवीं देन ललित कलाओं का पुनर्जागरण था। फर्ग्युसन नामक विद्वान ने भारतीय वास्तु कला पर एक प्रसिद्ध तथा मौलिक ग्रन्थ लिखा जिसमें भारत के अनेकों भव्य स्मारकों का वर्णन किया और प्राचीन भारत की वास्तु कला की महानता पर गहरा प्रकाश डाला। १६वीं सदी के आरम्भ में भारत के लोग कला की ओर से उदासीन ही नहीं अपितु अनभिज्ञ से हो गये थे। इलोरा तथा अजन्ता की कला महत्वहीन वस्तुयें बन चुकी थीं विश्व प्रसिद्ध भित्ति चित्र स्वयं भारतवासियों के लिये अर्थ हीन वस्तुयें थी। परन्तु योरोपीय विद्वानों ने भारत की प्राचीन कला की महानता को दरशाया और उसकी प्रशस्ता करना आरम्भ किया। 'हिन्दू हैवेल' प्रथम योरोपीयन था जिस ने मुक्त कण्ठ से भारत की वास्तु कला की प्रशंसा की। धीरे धीरे योरोपीयन कला मर्मज्ञों ने अपनी खोजों के आधार पर भारत की कला की विशेषताओं को समझा और उसके अध्ययन में अभिरुचि दिखाई। इनके प्रयत्नों से भारत के लोगों ने भी अपने अतीत की ओर देखना आरम्भ किया और कला के युग में एक नवीन स्फूर्ति दिखाई दी। इस नवीन स्फूर्ति का श्रेय हैवेल, मार्शल फर्ग्युसन जैसे योरोपीयन विद्वानों को ही जाता है जिन्होंने इस बात का प्रदर्शन किया कि प्राचीन भारतीय कला किस महान उन्नति तक पहुँच चुकी थी। वास्तु कला, चित्र कला, संगीत कला इन सब क्षेत्रों में योरोपीयन कला

मर्मज्ञों ने भारी अध्ययन किये और नई नई खोज की और भारतवासियों को
अतीत को पहचानने में सहायता पहुंचाई।

आधुनिक ढङ्ग पर संस्कृत भाषा का अध्ययन आरम्भ किया गया
श्रेय भी अंग्रेजों को ही दिया जाता है। उन्होंने ऐसे विद्वानों को आश्रय दिया जि
संस्कृत भाषा का अध्ययन किया और वेद, उपनिषद् तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों
योरप की भिन्न भिन्न भाषाओं में अनुवाद किया और भारत के ज्ञान की मह
को विश्व के सामने प्रस्तुत किया। इन भाषाओं में लिखे गये ग्रन्थ जन साधा
तक पहुंचे और लोक प्रिय हुये। इनके द्वारा भारत की प्राचीन संस्कृति
फिर प्रकाश में आई और भारत की भावना में आत्म गौरव का फिर से अनु
किया गया। इस नवीन जागरण का श्रेय अंग्रेजों तथा उनके द्वारा
विद्वानों को ही दिया जाता है।

भारत के पुरातत्व विभाग के सर्व प्रथम डायरेक्टर अलेक्जेण्डर कनिंघम
नियुक्ति ने इस विभाग में बड़े ही मूल्यवान कार्य किये। दूसरी नियुक्ति
हुल्ट्श (Dr. Hultzsch) की थी। उनको शिला लेखों सम्बन्धी विषयों के लि
नियुक्त किया गया था। उन्होंने अपने विभाग में अच्छा कार्य किया और
शिला लेखों का पता ही नहीं लगाया अपितु उनका अध्ययन भी कराया।
द्वारा भारत की प्राचीन महानता प्रकाश में आई। मौर्य, गुप्त तथा कनिष्क युगों
सफलतायें फिर से जाग्रत हो उठीं और उन्होंने उदासीन भारतीयों में फिर से
की भावना का सूत्र पात किया। फिर से उनमें अपने प्राचीन गौरव को
एक प्रभावशाली प्रेरणा का उदय हुआ। अब उनको इस बात का अनुभव हुआ
उनका भाग्य केवल इसी में सीमित न था कि वह विदेशी आक्रमणों के शिकार
अपितु वह ऐसे देश के निवासी हैं जिन्होंने अतीत में अन्य देशों को सभ्यता
प्रदान की है तथा अन्य देशों की सभ्यता को और अधिक गुणसम्पन्न बनाया है।
बुद्ध जैसे पावन पुरुष ने भारत में ही जन्म लिया और बुद्ध धर्म की स्थापना की
अशोक जैसे सम्राट ने भारत का नाम ऊंचा किया। इस नवीन ज्ञान ने भारतवासियों
को इस प्रकार प्रेरणा दी और इस प्रकार की प्रेरणा प्राप्त कर लोगों के
में बौद्धिक विकास हुआ और एक नवीन आत्म उन्नति की भावना का
हुआ। इस प्रकार भारतीय इतिहास की सबसे अधिक महत्व पूर्ण घटना
घटना सांस्कृतिक अथवा पुनर्जागरण (Renaissance) थी। इसने
अनेक क्षेत्र पर गहन प्रभाव डाला।

इन सब प्रयत्नों के लिये स्पष्ट रूप से श्रेय अंग्रेजों का है।
सम्पर्क में आने के कारण भारत बड़ी ही वेग पूर्ण प्रगति के साथ
पहुंच सका और गौरव के शिखरों को सफलता पूर्वक ग्रहण कर सका।

Q. Give a vivid account of the Indian Renaissance that has taken place in the last hundred years.

B. A. Third (a) paper 1952.

प्रश्न—भारत में पिछले सौ वर्षों में हुये नवाभ्युत्थान का पूर्ण रूपेण वर्णन करो।

उत्तर—अठारहवीं सदी में प्रत्येक दृष्टि से भारत पतन के गहरे गड्ढे में पहुँच चुका था। मुगल साम्राज्य के छिन्न भिन्न होने पर केन्द्रीय सत्ता नष्ट हो चुकी थी और राजनैतिक क्षेत्र में अराजकता फैल गई थी। राजनैतिक ह्रास के कारण अन्य क्षेत्रों में भी प्रगति रुक गई। व्यापार एक दम निम्न स्तर पर पहुँच गया। देश में नैतिकता का अभाव हो गया। देश व्यापी लाभ से दृष्टि हट कर खुदगरजी की तुच्छ भावना में परिवर्तित हो गई। जिसे देखो वह अपना उल्लू सीधा करने में लगा हुआ है। इसी कारण से अंग्रेजी सत्ता सरलता से भारत में अपने पैर जमाने में सफल हो गई। अंग्रेजों की सत्तारूढ़ होने के कारण दूरगामी प्रभाव पड़े। इनके द्वारा भारत योरप के अधिक सम्पर्क में आ गया। योरप में प्रवाहित सशक्त विचार धाराओं ने भारत के ऊपर अपने प्रभाव डाले। और पुनर्जागरण के लिये रास्ता प्रशस्त किया। सार्वभौमिकता तथा आर्थिक सत्ता के साथ साथ पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति का भी बीजारोपण किया गया और इस नवीन संस्कृति ने भारत की प्राचीनता को आघात पहुँचाया। इस नवीन सभ्यता के प्रवाह में आकर प्राचीन विचार धारायें रूढ़ियां। धीरे धीरे एक के बाद दूसरी धराशायी होने लगी और इनका स्थान नवीन विचार धाराओं ने लेना आरम्भ कर दिया। इतना ही नहीं अपितु अंग्रेजों ने राजनैतिक एकता तथा शासकीय सभ्यता स्थापित कर देश में प्रगति के लिये शान्ति उत्पन्न की। इस शासन ने विद्वानों को आश्रय दिया। प्राचीन ग्रन्थों के अनुवाद कराये और संस्कृत का प्रसार कराया और इन साधनों को जुटा कर पुनर्जागरण की नींव डाली। इस पुनर्जागरण ने सुधारवादी आन्दोलनों को जन्म दिया और देश में स्फूर्ती के नवीन लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे। अंग्रेजों के प्रयत्नों से देश में उस मनोवृत्ति का अन्त हुआ जो देश की प्रगति में बाधक बन रही थी। इस प्रकार की संकुचित मनोवृत्ति के अन्त का नाम ही 'पुनर्जागरण' है। योरप के पुनर्जागरण के विपरीत भारत का पुनर्जागरण तो अपनी प्राचीन गौरवपूर्ण संस्कृति को आधार बना कर खड़ा हुआ है। यह तो भारतीय संस्कृति को ही नवीन रूप देकर स्वस्थ अवस्था में खड़ा किया गया है। प्राचीन सिद्धान्तों को श्रेष्ठ रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस जागरण के रूप में भारत की अन्तरात्मा एक बार फिर जाग्रत हुई और राष्ट्र की मांग को पूरा किया। साथ साथ धार्मिक सामाजिक परिवर्तन भी कर डाले। एक नवीन भावना को

प्रवाहित कर दिया। इस पुनर्जागरण ने देश की आत्मा को उसकी गहराई त
झकझोरा और जीवन के प्रत्येक विषय पर अपनी छाप लगाई। इस नवीन भा
की जाग्रति को पुनर्जागरण का नाम दिया गया है। इसके द्वारा ही देश अप
ह्रास और पतन के खिलाफ युद्ध आरम्भ किया गया था और नवीन आन्दोल
को शक्ति प्राप्त हुई। हैवेल के कथन से इसकी पुष्टि होती है वह कहता है
'बिना पुनर्जागरण के कोई भी सुधार सम्भव नहीं है' इस प्रकार पुनर्जागरण
द्वारा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति होने लगी। १९ वीं सदी में नवीन नवी
आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ और नेतागण समाज को चैतन्य करने लगे। उन
इन प्रयासों को ही पुनर्जागरण का नाम दिया गया है।

धर्म, साहित्य, कला, समाज, राजनीति इत्यादि सभी क्षेत्रों में नवीनत
नियमों का विकास हुआ और उनमें वेगपूर्ण प्रगति दृष्टिगोचर हुई।

यह पुनर्जागरण आरम्भ में बौद्धिक था और इसका प्रभाव शिक्षा, साहित्य,
कला इत्यादि के ऊपर पड़ा। फिर यह एक नैतिक शक्ति के रूप में प्रगट हुआ
और तब इसने समाज तथा धर्म को प्रभावित किया। तत्पश्चात् इसने भारत की
अर्थ व्यवस्था को सुधारने के प्रयत्न किये और देश का आधुनीकरण के लिये सतत
प्रयास किये। इसी पुनर्जागरण की भावना ने भारत के स्वतन्त्रता संग्राम को जन्म
दिया। उसको पाला पोसा और अन्त में सफल बनाया। इस प्रकार इस नवीन
धारा ने देश के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी गहरी छाप लगाई।

पुनर्जागरण भिन्न भिन्न क्षेत्रों में विविध रूपों में प्रगट हुआ और इसके
बड़े ही दूरगामी परिणाम निकले।

आरम्भ में भारतीय तत्वों के विरुद्ध ऐसी प्रतिक्रिया हुई कि भारतवासियों
को प्रत्येक वह वस्तु जो योरोपियन थी सुन्दर प्रतीत हुई। उसी को यह लोग
बिना सोचे समझे अपनाने लगे। जीवन के आदर्श भी योरुप के ही अपनाये जाने
लगे। मार्क्स के सिद्धान्तों की नकल की जाने लगी भारतीय परिस्थिति का ध्यान
खो दिया गया। इस प्रकार विचार करने वाले लोगों को 'प्रगतिशील समुदाय' का
नाम दिया गया परन्तु जल्दी ही इस दुःख के खिलाफ प्रतिक्रिया हुई और
भारतीयता ने फिर उभारा लिया और भारतीय संस्कृति को फिर से स्वागत की
दृष्टि से देखा जाने लगा। यह नवीन समुदाय 'पुनर्जीवन वादियों' का समुदाय
कहलाया। इन दोनों के मध्य में एक और विचार धारा प्रवाहित हुई जिसका
सूत्रपात करने वाले 'राजा राम मोहन राय' थे। इस विचार धारा में पूरब तथा
पश्चिम के सुन्दरतम तत्वों का सम्मिश्रण तथा समन्वय करना था। इस प्रकार के
विचारक न तो भारतीय तत्वों का परित्याग करते थे और न योरोपीय तत्वों का

इ दोनों संस्कृतियों में से अच्छे अच्छे तत्व ग्रहण कर एक सम्मिश्रण बनाना चाहते थे।

साथ ही साथ श्री अरविन्द घोष ने इस नवीन भावना को भारत की आन्तरिक और प्राचीन भावना का नवीन रूप बताया। उनके आन्दोलन ने आध्यात्मिकवाद पर ही अधिक बल दिया मस्तिष्क की दुनिया में ही उन्होंने नवजागरण की शक्ति का विकास होता हुआ अनुभव किया।

जिस प्रकार अन्य क्षेत्रों में हुआ उसी प्रकार धर्म के क्षेत्र में भी हुआ। आरम्भ में धर्म के वह तत्व जो प्राचीन काल से चले आते थे त्याग दिये जाने लगे। प्राचीन क्रिया-विधियाँ निरर्थक और अर्थहीन दिखाई देने लगीं और हिन्दु कहलाने में नवीन युवक शर्म महसूस करने लगे। ईसाईमत की बू दिमागों को र करने लगी। ईसाई धर्म के सिद्धान्त अधिक प्रिय प्रतीत होने लगे। नवयुवकों ने हिन्दु धर्म में सब घृणात्मक दिखाई देने लगा और उनको ऐसा लगा कि हिन्दु धर्म में अब सुधार करने से भी अधिक लाभ नहीं होगा। और निराश होकर अनेकों शिक्षित लोग ईसाई हो गये। इनमें कृष्णमोहन बनर्जी, लाल बिहारी डे तथा गोविन्द दत्त अधिक प्रसिद्ध हैं परन्तु सौभाग्य से इस प्रवृत्ति का जल्दी ही अन्त कर दिया गया। नवीन धार्मिक आन्दोलनों ने हिन्दु धर्म की एक बार फिर रक्षा की। ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन, प्रार्थना समाज इत्यादि सुधार-वादियों ने हिन्दु धर्म में नवीन प्राण फूंक दिये और ईसाई धर्म से प्रभावित होने वाले लोगों को बता दिया कि हिन्दु धर्म ही उच्च कोटि का धर्म है उसमें सचाई है और उसके सिद्धान्त स्वर्ण सिद्धान्त हैं। अब हिन्दु धर्म को अपनी महान शक्ति प्रगट करने का फिर अवसर मिला उसने विरोधी धर्मों पर फिर आघात करने आरम्भ कर दिये। इस धर्म में फिर से सुधारक, साधु, सन्त तथा विद्वान् उत्पन्न हुए और उन्होंने हिन्दु धर्म में घुसे हुए अनावश्यक तथा घृणाप्रद तत्वों को निकालना आरम्भ कर दिया और प्राचीन सत्य जो इस धर्म के मूल आधार थे अपनी अलौकिक शक्ति द्वारा सिद्ध कर फिर से प्रमाणित कर दिये गये। इस प्रकार हिन्दु धर्म को एक नवीन रूप दे दिया गया और इसको दृढ़ बना कर से लोकप्रिय बना दिया गया। जिन क्रिया, विधियों, कर्मकाण्ड, जातिबन्धनों ने मौलिक सिद्धान्तों को दबा रक्खा था उनको सिद्धान्तों से पृथक कर हिन्दु दर्शन को विशुद्ध कर दिया गया। अतीत काल से प्रमाणित सत्यों को शक्तिशाली तर्कों द्वारा फिर एक बार अकाट्य ठहराया गया। दयानन्द सरस्वती की महान प्रतिभा के सामने ईसाई पादरी मूक रह गये और उनका प्रचार मिथ्या होकर रह गया।

हमारे धार्मिक नेता नवीन हिन्दु धर्म का सन्देश विदेशों में भी ले गये

आज भी विवेकानन्द और रामतीर्थ के वेदान्तिक भाषण विदेशों के वातावरण में गूंज रहे हैं। इन धार्मिक नेताओं के प्रयासों ने हिन्दु धर्म को अपार शक्ति प्रदान की है और फिर हिन्दु धर्म सजीव हो गया है।

सामाजिक क्षेत्र में अनेकों सुधार हुए। धार्मिक आन्दोलनों ने समाज की कुरीतियों पर आघात किये। ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन इत्यादि जैसे धार्मिक आन्दोलन गांधीजी जैसे नेताओं के निरन्तर प्रयास के कारण समाज की काया पलट हुई। उसकी अनेकों कुरीतियां भंग कर दी गईं। सती प्रथा, शिशु हत्या का अन्त कर दिया गया। बाल विवाह को गैर कानूनी करार दे दिया गया। स्त्रियों को पुरुषों की भांति शिक्षा दी जाने लगी वह प्राचीन वैदिक काल के समान पुरुषों के साथ मिलकर स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने लगीं। अनेकों नारियां साहस कर परदे से बाहर निकल आईं उन्होंने पुरुषों के समान विविध धन्धों को करना आरम्भ कर दिया इस प्रकार स्त्री तथा पुरुष की सामाजिक समानता के सिद्धान्त को मान लिया गया। बहु विवाह के दुर्गुण को दूर किया गया। विदेशी यात्रा एक असाधारण सी बात हो गई। अन्तरजातीय खान-पान तथा विवाह आदि पर अब कोई पाबन्दी न रह गई थी। जाति प्रथा की कठोरता नष्ट कर दी गई अब उसमें वह अपरिवर्तनशीलता न रह गई थी जो मुसलमानों के समय में आ गई थी। साथ ही साथ छूत छात की भावना पर भी आघात किया गया गांधी जी ने विशेष रूप से इस दिशा में कार्य किया उन्होंने अस्पृश्यता को भयानक रोग बताया और इसको हिन्दु समाज का घोर शत्रु करार दिया। इस के लिये उनको घोर कार्य करना पड़ा अन्त में विजय उन्हीं को मिली। इस प्रकार पुनर्जागरण की भावना ने सामाजिक बुराईयों को नष्ट करने में महान कार्य किया और समाज में नवीन स्फूर्ति का उदय तथा विकास हुआ।

इस जागरण ने भारतीय इतिहास के प्राचीन गौरव को फिर से प्रकाश में लाने का महान कार्य किया। इतिहासज्ञों ने प्राचीन ग्रन्थों की खोज की। उनका गूढ़ अध्ययन किया फिर प्राचीन इतिहास की टूटी हुई कड़ियों को जोड़ा। इस प्रकार इतिहास को नवीन रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार के इतिहासज्ञों में यदुनाथ सरकार, महादेव गोविन्द रानाडे, सरदेसाई, स्मिथ, डा॰ हेमचन्द्र रायचौधरी, मैकडानल्ड आदि अधिक प्रसिद्ध हैं। कला मर्मज्ञों ने भारत की प्राचीन कलाओं के विविध रूपों का अध्ययन किया उनके इतिहास की खोज की और उनके गुणों को प्रकाश में लाने के और प्रयत्न किये। पुरातत्ववेत्ताओं तथा विचारशील विदेशियों ने भारत के प्राचीन गौरवपूर्ण इतिहास पर अपनी खोज की और जो इतिहास अब तक अंधकार में पड़ा हुआ था उस पर प्रकाश डाला। इन व्यक्तियों में अनेकों नाम उल्लेखनीय हैं। कनिंघम, डा॰ ...

हैवेल पर्सी ब्राउन, मार्शल, आनन्दकुमार, और भी अधिक प्रशंसनीय हैं। इनके
नेक तुले प्रयत्नों ने ऐसी घटनाओं तथा विभक्तियों पर प्रकाश डाला जो अब तक
अन्धकार में डूबे हुये थे। अशोक के शिला लेखों के सुन्दर रूप से वर्गीकरण
किया गया और उसके साम्राज्य की समस्त लड़ियों को जोड़ा गया। उस समय
की सामाजिक तथा धार्मिक दशा का पता लगाया गया। आर्थिक सम्पन्नता की
खोज की गई। वह महान युग सहिष्णुता पूर्ण भावना से परिपूर्ण था। ऐसे
निष्कर्ष निकाले गये। बौद्ध धर्म ने किस प्रकार विश्व विजय आरम्भ की और
समाप्त की। इस रोचक कथा को पूर्णरूपेण भारत वासियों के सम्मुख प्रस्तुत
किया गया। भारत ने बाहर जाकर किस प्रकार सांस्कृतिक साम्राज्य स्थापित किये,
किस प्रकार असभ्य देशों को सभ्यता सिखाई तथा सभ्य देशों को अधिक सभ्य
बनाया, यह सब इतिहास हमको पढ़ने को मिला और इस गौरव पूर्ण अतीत ने
हमारी रगों में आत्म गौरव का रक्त फिर से प्रवाहित कर दिया। हमने फिर
याद किया कि हम तो उन पूर्वजों की सन्तान हैं जिन्होंने सांस्कृतिक क्षेत्रों में
अनेकों अलौकिक खोज की और भारत को ही नहीं अपितु विश्व को अपनी विलक्षण
देन प्रदान की।

इस भावना के उत्पन्न होने से जातीय सम्मान बढ़ा और भारत ने अपने
अतीत को देख कर भविष्य के निर्माण के साधन जुटाने आरम्भ किये। यही
पुनर्जागरण का महत्व है।

इस नवीन प्रवृत्ति के द्वारा हमारे प्राचीन साहित्य पर प्रकाश पड़ा और अब
तक अन्धकार में रहने वाले ग्रन्थ जन साधारण के हाथ में आये। योरोपीय विद्वानों
ने संस्कृत का गहन अध्ययन किया और भारतीय ग्रन्थों का अनुवाद किया। विल्किंस
ने गीता का अनुवाद कर डाला, जोन्स ने शकुन्तला नाटक तथा अन्य ग्रन्थों का
संकलन किया, कोल ब्रुक ने पाणिनि का व्याकरण तथा हितोपदेश का सङ्कलन
किया, जर्मनी के महान विद्वान श्लासेनहैप ने संस्कृत के अनेकों ग्रन्थों पर भाष्य
लिखे, मैक्समूलर जैसे विद्वान ने अनेकों धर्म शास्त्रों का अनुवाद कराया। इस
प्रकार योरोपीय विद्वानों ने भारत के प्राचीन ग्रंथों पर अनेक सुन्दर ग्रंथों की
रचना की और भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य विश्व के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया।
इस प्रकार भारत की महानता योरुप के ऊपर अपना प्रभाव डालने लगी।

अंग्रेजों ने एक और सुन्दर कार्य किया। उन्होंने भारत के अनेकों प्रसिद्ध
ग्रंथ अन्य देशों से प्राप्त किये। प्राचीन वैदिक तथा बौद्ध साहित्य की अनेकों
पुस्तकें जो भारत से प्रायः लुप्त हो गई थीं फिर से प्राप्त की गईं। बौद्ध साहित्य
नेपाल, मध्य एशिया, चीन, जापान इत्यादि देशों से प्राप्त किया गया। इस प्रकार
प्राप्त की गई हस्त लिखित पुस्तकें योरुप भेजी गईं जहाँ पर इनकी अनेकों

प्रतिलिपियाँ तैयार की गईं और इनको फिर से भारत में फैलाया गया। इस प्रकार हमारा खोया हुआ साहित्य पुनः हमको प्राप्त हो गया। इस प्रकार पुनर्जागरण ने साहित्यिक क्षेत्र में अपना विलक्षण कार्य कर दिखाया।

पुनर्जागरण ने बङ्गाल में बड़ा ही चमत्कार किया। अनेकों विभूतियाँ उत्पन्न की जिन्होंने अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा बङ्गाल साहित्य को सुसम्पन्न बनाया और डा० टैगोर के लिये भूमि तैयार कर डाली। इन लेखकों में राम मोहन राय ईश्वर चन्द्र विद्या सागर, अक्षय कुमार दत्त, द्विजेन्द्र लाल राय, राज नारायण बोस तथा बङ्किम चन्द्र इत्यादि अधिक प्रसिद्ध थे। इनके साथ २ कलाओं के अन्य क्षेत्रों में बड़े ही निपुण व्यक्तियों ने जन्म लिया और बङ्गाल में अधिक जागृति होती प्रतीत हुई मानों ज्ञान का एक समुन्द्र उमड़ने लगा। डा० टैगोर ने संस्कृति के विविध अङ्गों को प्रभावित किया है। गद्य, पद्य, गल्प, निबन्ध, उपन्यास, सङ्गीत, चित्र कला, नृत्य सभी में अपनी विलक्षणता का महान प्रमाण दिया है। डा० टैगोर भारत के उन गिने चुने रत्नों में से हैं जिन्हों ने भारत का गौरव भारत के बाहर विदेशों में फैलाया। इन के अतिरिक्त हिन्दी का महान लेखक प्रेम चन्द अपनी प्रकार का एक अलौकिक व्यक्ति था। जिन उपन्यासों की उसने रचना की है वह अपने उदाहरण स्वयं ही हैं। इनमें जिन विचार धाराओं को दरशाया गया है वह अनुपम तथा परिस्थिति के अनुकूल ही हैं। प्रेम चन्द उपन्यास का सम्राट कहा जाता है। उर्दू तथा फारसी का महान विद्वान डा० इकबाल तथा बङ्गला का शरद चन्द्र चटर्जी हुए हैं। इन विद्वानों ने अपनी नवीन शैलियों में नवीन विचार धाराओं को प्रवाहित किया है। इनकी लेखन शैली बड़ी ही प्रभावशाली सिद्ध हुई। इनके विचारों में राष्ट्रीयता कूट २ कर भर दी गई है। पुनर्जागरण के परिणाम स्वरूप भाषाओं के क्षेत्रों में अनेकों प्रभावशाली व्यक्तियों का उत्कर्ष हुआ। प्रथम वह लोग थे जिन्होंने योरुप के ज्ञान भण्डार से ज्ञान की प्राप्ति की। योरप के साहित्य, दर्शन, इतिहास इत्यादि का अध्ययन किया फिर इन किताबों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद कर अपने जन साधारण देश वासियों को प्रस्तुत किये। इन विद्वानों ने अपनी कोई नवीन शैली नहीं चलाई और न विचारों के क्षेत्र में ही कोई क्रांति उत्पन्न की अपितु भारतीय लोगों तक योरोपीय विचारों को ही पहुँचाया। इनमें ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, राजेन्द्र लालमित्र, हिन्दी के लल्लू लाल जी इत्यादि अधिक प्रसिद्ध हैं।

दूसरा क्रम उन लोगों का आया जिन्होंने आगे बढ़ कर योरप की साहित्यिक परम्पराओं को अपना लिया। इन्हों ने नवीन जागृति को साहित्य की भाषा में प्रगट करने का सफल प्रयास किया। इन नवीन विद्वानों ने विदेशी तत्वों को अपनाया परन्तु साथ २ अपने प्राचीन श्रेष्ठ तत्वों को भी अङ्गीकार किया। इस

विद्वानों में बङ्गाल के मदसूदन दत्त, बङ्किम चन्द्र चटर्जी तथा हिन्दी के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और महावीर प्रसाद द्विवेदी अधिक प्रसिद्ध हैं।

इनके परचात ऐसे विद्वान हुए जिन्हों ने अपने अनेक मौलिक ग्रन्थों की रचना की और साहित्य की बड़ी सेवा की।

पुनर्जागरण के पूर्व देशी भाषाओं का विकास पूर्ण न हो पाया था। उनके विषय सीमित थे। वीरों की कथायें तथा पौराणिक गाथायें ही उन भाषाओं के प्रिय विषय बने हुये थे। उनमें नवीन विचार धाराओं को स्थान प्राप्त न हो पाया था। अभी तक विचारों की अभिव्यक्ति केवल गीतों, भजनों तथा कविताओं द्वारा ही हो पाती थी। सुन्दर विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम केवल कविता को ही मान लिया गया था। परन्तु पुनर्जागरण ने इस स्थिति को बदल दिया। अब भाषा के शब्द भण्डार में वृद्धि हुई। भाषा के विषय विविध प्रकार के होने लगे। भाषा सरल और कठिन दोनों प्रकार की हो गई। भाषा में प्राचीन पाण्डित्य जो अर्थहीन था धीरे २ नष्ट होने लगा और प्राकृतिक शैली ने उसका स्थान ले लिया। जब ईसाइयों ने बाईबिल का अनुवाद इन भाषाओं में किया तो एक नवीन गद्य शैली का प्रादुर्भाव हुआ। ग्रन्थालयों की स्थापना, मासिक, साप्ताहिक, तथा दैनिक समाचार पत्रों के जारी होने से नवीन गद्य शैली का उदय हुआ। इस शैली को विद्वानों ने और भी अधिक विकसित किया। इस प्रकार पुनर्जागरण ने इन देशी भाषाओं को बड़ा लाभ पहुँचाया।

देशी भाषाओं के साहित्य पर योरुप का अधिक और अच्छा प्रभाव पड़ा। नाटक में तो पूर्णरूपेण पाश्चात्य नाटक की नकल की गई। विचार शैली, विषय शैली योरुप की ही अपनाई गई। इसी प्रकार उपन्यास का ढङ्ग भी पाश्चात्य हो गया। देशी साहित्य में समालोचना की सुन्दर कला भी योरुप से ली गई। गद्य साहित्य पर भी योरुप का गहरा प्रभाव पड़ा। अब तक इन भाषाओं के विषय अधिकतर धार्मिक ही होते थे परन्तु अब ये विषय जीवन के विविध अङ्गों से लिये जाने लगे। अब साहित्य धार्मिक न रह कर अधार्मिक हो गया और इस में जीवन की वास्तविकता की झलक दृष्टिगोचर होने लगी।

इन भाषाओं के साहित्य में दो प्रकार की प्रवृत्तियां विशेष रूप से दिखाई देने लगी। एक तो देश भक्ति की भावना तथा दूसरी अपने अतीत के प्रति प्रेम और श्रद्धा। राष्ट्रीयता की भावना से साहित्य ओत प्रोत हो गया। बङ्गला में बङ्किम चन्द्र ने अपने उपन्यासों के विषय भारतीय इतिहास से लिये तो दूसरी ओर इकबाल ने राष्ट्रीयता का गीत गाया। भारती व टैगोर के गीतों में देश प्रेम कूट २ कर भरा गया। बङ्गला के क्षेत्र में भारी व्यापकता उत्पन्न हुई। उसका क्षेत्र विशाल हो गया और उसने विश्व प्रसिद्धि की विभूतियां पैदा कीं। तेलुगु,

तामिल, मलयालम, हिन्दी, गुजराती, मराठी इत्यादि सभी भाषाओं में विकास और वृद्धि हुई। अब पुनर्जागरण के प्रभाव से हमारा साहित्य इतना श्रेष्ठ तथा सुसम्पन्न हुआ कि हमारी सुन्दरतम कृतियाँ विश्व भर में प्रख्यात हो गईं। डा० टैगोर ने विश्व में अपना नाम पैदा किया और विश्व में ऐसा साहित्य दिया जो अपना उदाहरण स्वयं ही है। इस प्रकार देशी भाषाओं को योरोपीय विचार धाराओं से भारी प्रेरणा प्राप्त हुई। उनका कोष भण्डार सुसम्पन्न हुआ। उनके विषय विस्तृत हो गये तथा उनकी विचार धारायें आधुनिक ढङ्ग की हो गईं।

विज्ञान—विज्ञान के क्षेत्र में बड़ी प्रगति हुई। योरपीय सम्पर्क ने इस दिशा में भारत के लोगों का ध्यान आकृषित किया और विज्ञान के भिन्न भिन्न क्षेत्रों में भारत के अति प्रख्यात वियक्ति हुये। भौतिक विज्ञान में सर सी० वी० रमण तथा मेघनाद शाह के नाम उल्लेखनीय हैं। इन्होंने अपनी मौलिक खोज की। प्रसिद्ध सिद्धान्त (Theory of relativity) के विषय में एक भारतीय का नाम भी जुड़ा हुआ है। रसायन शास्त्र में पी० सी० राय, एस० एस० भटनागर ने प्रभावशाली खोजें की और विश्व प्रसिद्धि प्राप्त की। ज्योतिष विज्ञान में एस० चन्द्रशेखर का नाम प्रसिद्ध है। डायनैमिक्स (Dynamics) में उसने कई नवीन सिद्धान्त निकाले यह विश्व ख्याति का वैज्ञानिक है। गणित के क्षेत्र में रामानुज का नाम लिया जाता है। सर जे० सी० बोस महान वैज्ञानिक हुये जिन्होंने विश्व में भारत का गौरव बढ़ाया। दर्शन शास्त्र के महान पण्डित राधाकृष्णन ने अपने ग्रन्थों तथा व्याख्यानों द्वारा संसार का भारत की ओर ध्यान आकृषित कराया और लोगों की अभिरुचि दर्शन शास्त्र की ओर जाग्रत कराई। इन्होंने धार्मिक तथा सांस्कृतिक विचारों का विलक्षण ढंग से प्रतिपादन किया।

पुरातत्व विभाग के पथ प्रदर्शन में मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा में अन्वेषण कार्य किया गया। वहां पर जो खन्डर प्राप्त किये गये उनसे पांच हजार पुरानी सभ्यता की खोज हुई यहां से प्राप्त सामग्री अजायब घरों में रक्खी गई है।

अर्थ यह है कि पुनर्जागरण की भावना ने भारत में विज्ञान के अध्ययन के प्रति अधिक उत्साह उत्पन्न कर दिया और देश में अनेकों वैज्ञानिकों को जन्म दिया।

आर्थिक क्षेत्र—नवीन भावना ने इस क्षेत्र में बड़े ही दूरगामी प्रभाव उत्पन्न किये। देश की दरिद्रता अधिकाधिक बढ़ती गई और लोगों ने औद्योगिकरण की ओर ध्यान दिया। औद्योगिकरण के साथ साथ नवीन दृष्टिकोण का उदय हुआ। श्रमिकों तथा मालिकों में संघर्ष की भावना उत्पन्न हुई और इसके निवारण के हेतु भिन्न भिन्न सिद्धान्त फैलने लगे। इनमें समाजवादी तथा साम्यवादी विचार धाराओं को विस्तृत क्षेत्र प्राप्त हुआ और यह नवीन विचार धारायें भारत में पूर्ण रूप से विकसित होकर प्रसारित होने लगी। आज भी यह संघर्ष अपनी पूरी शक्ति से अपना प्रभाव डाल रहे हैं।

कलाओं का क्षेत्र

इस नवीनकरण की सशक्त धारा ने कलाओं की ओर भी ध्यान आकर्षित कराया। वास्तु कला, चित्र कला, संगीत तथा नृत्य कला में फिर से अभिरुचि उत्पन्न हुई और इनमें फिर एक बार जागरण हो गया। प्राचीन कला जिसकी ओर से लोग अनभिज्ञ से हो गये थे। एक बार फिर अपनी दिव्यता को लेकर आगे बढ़ी और उसमें नवीन चेतना का प्रादुर्भाव हुआ।

चित्र कला इस कला को नवीन रूप देने और सृजनात्मक बनाने में हैवेल तथा अवनीन्द्रनाथ टैगोर का गहरा हाथ रहा है। हैवेल ने प्राचीन तथा मध्यकालीन कला का गहन अध्ययन किया और अलौकिक खोजें की। उसने कला में एक नवीन आत्मा का विकास किया। अवीन्द्रनाथ ने The Indian Society of Oriental arts की स्थापना कर कला के क्षेत्र में एक नवीन आन्दोलन का श्रीगणेश किया। इसने चित्र कला के क्षेत्र में एक नवीन क्रान्ति उत्पन्न कर डाली। अवीन्द्रनाथ ने अपने शिष्यों, सुरेन्द्र, गंगोली, असित कुमार, हलधर तथा नन्दलाल बोस के साथ मिलकर चित्रकला की नवीन भावना को बड़ा ही सुसम्पन्न बनाया। डा० टैगोर ने अपने शान्ति निकेतन को कलाओं का केन्द्र बना दिया। उन्होंने कलाकारों के समुदायों को भारी प्रेरणा प्रदान की। भिन्न भिन्न क्षेत्रों में टैगोर ने अपनी प्रभाव एवं छाप लगाई। इनके अतिरिक्त बम्बई, कलकत्ता तथा लखनऊ के कला मन्दिर अनेकों कलाकारों को उत्पन्न कर रहे हैं। ये कलाकार अपने प्रयत्नों द्वारा आज ऐसा वातावरण उत्पन्न करने में सफल हो गये हैं कि हमारी प्राचीन कला नवीनता धारण करके दिन प्रतिदिन विकास की ओर बढ़ रही है।

वास्तु कला—इस कला में भी पुनर्जागरण ने प्रभाव डाला है। वास्तु कला पर योरोपीय प्रभाव विशुद्ध रूप से दिखाई पड़ता है। दिल्ली में पार्लियामैन्ट भवन इस नवीन कला का सुन्दर नमूना है। लखनऊ का कौन्सिल चेम्बर भी अच्छे ढंग से बनाया गया है। इनके अतिरिक्त अन्य इमारतें जो यहां के मिस्त्रियों द्वारा निर्मित की गई हैं। उनमें भी नवीनता स्पष्ट रूप से प्रगट होती है।

संगीत तथा नृत्य—इन क्षेत्रों में भी नवीन भावना का प्रादुर्भाव हुआ है। संगीत में महान उन्नति हुई। कलकत्ते के संगीत समाज तथा बम्बई ग्रामोफोनक कम्पनी ने इस क्षेत्र में बड़ा ही परिश्रम किया। पण्डित भातखण्डे ने संगीत में नवीन विचार धारा का विकास किया। उसने ग्वालियर में एक संगीतशाला का निर्माण किया फिर बड़ौदा में संगीत अधिवेशन की आयोजना की। इस कलाकार के परिश्रम से संगीत में एक नवीन जान आई। दूसरा प्रभावशाली विद्वान विष्णु दिगम्बर हुआ। उसके कुशल शिष्य भारत भर में फैल गये। डा० टैगोर ने अनेकों शैलियों का निर्माण कर संगीत में नवीन जीवन सञ्चार किया। धीरे धीरे संगीत

शालायें स्थापित की गई। इस प्रकार की संगीत शालायें बम्बई, लखनऊ, कलकत्ता, पूना, बड़ौदा इत्यादि नगरों में सराहनीय कार्य कर रही हैं।

नृत्य के क्षेत्र में भी स्फूर्ति दिखाई पड़ी। उदय शङ्कर ने नवीन विचार धारा को प्राचीन परम्पराओं के साथ मिश्रित कर विलक्षण कार्य कर दिखाया। उन्होंने विदेशों में जाकर अपने नृत्य का प्रदर्शन कर विश्व की प्रशन्सा प्राप्त की। उन्होंने नृत्य की कला को बहुत ऊंचा उठाया और उसको लोक प्रिय बनाया। नृत्य कला के अन्य प्रसिद्ध कलाकार रामगोपाल, रुकमणी देवी, कुमारी दमयन्ती जोशी हैं। आज इस कला को प्रोत्साहन देने के लिये अनेकों सन्स्थायें कार्य कर रही हैं। नृत्य कला अब धीरे धीरे लोक प्रिय होती जा रही है।

नवीन माध्यम वर्ग—जागरण की नवीन प्रभावशाली भावना ने प्रगतिशील मध्यम वर्ग को सुदृढ़ बनाया है। अंग्रेजों ने ऐसे व्यक्तियों को उत्पन्न किया जो साम्राज्य के गुणगाण करते रहे। सरकार ने आकर्षक उपाधियां प्रचलित की। राय बहादुर, खान बहादुर की उपाधियों से सरकार भक्त लोगों को सुशोभित किया गया। राजा, नवाब, राजकुमारों को ऐसी दशा में डाल दिया गया कि वह अपना भाग्य सरकार से जोड़े रक्खें। धीरे धीरे अनुदार कुलीन वन्शी लोग अंग्रेजी सरकार के पिछलगु हो गये और वह ऐसी सरकार को ईश्वरीय देन समझने लगे।

अब प्राचीन ठाठ के लोगों की सत्ता नष्ट हो गई और वह लोग प्रभावशाली होने लगे जो अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करते थे इनमें वकील, डाक्टर, शिक्षक इत्यादि लोग थे। देश की बागडोर धीरे धीरे इन ही लोगों के हाथ में आने लगी। सुरेन्द्र बी० बैनर्जी, फिरोज शाह महता, गोपाल कृष्ण गोखले, रानाडे, तिलक जैसे विद्वान देश में चमक उठे। जिन्होंने पुनर्जागरण की भावना की अभिव्यक्ति की। इस प्रकार के शिक्षित लोग जन साधारण के पथ प्रदर्शन का कार्य करने लगे। इन्होंने नवीन विचारों का प्रसार करना आरम्भ कर दिया। इन्होंने पुनर्जागरण की भावना को जन साधारण तक पहुंचाया। देश के सोते हुये लोगों को जगाया। इन महान व्यक्तियों ने उस संघर्ष की नीव डाली जिसने आगे चलकर गांधी जी के सफल नेतृत्व में अंग्रेजी शासन की इति श्री कर डाली। जिस मध्यम वर्ग का विकास नवीन विचार धारा के कारण हुआ। उसी ने भारत में उन आन्दोलनों को चलाया जिन्होंने भारत के पतित वातावरण का अन्त किया और प्रगति शील दशा का उत्थान हुआ।

संक्षेप में पुनर्जागरण ने भारत की काया पलट करदी। भारत जो गहरी निद्रा में सोया हुआ था सजग हो गया। उसकी निद्रा भंग हो गई और एक बार फिर उसकी यौवन अवस्था लौट आई। प्रत्येक क्षेत्र में पुनरुत्थान की भावना व्याप्त

ो गई। राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, बौद्धिक क्षेत्रों में स्फूर्ती दृष्टि
ोचर होने लगी।

राजनैतिक क्षेत्र में नवीन संघर्ष पनपने लगा। अंग्रेजी दासता का अन्त
रने के लिये हिन्सक तथा अहिन्सक तत्व कार्य करने लगे। बम विस्फोट होने
गे। कांग्रेस का आधार शिला रख दी गई। दादा भाई नौरोजी, फिरोजशाह महता
ोखले, तिलक, गांधी, मालवीयजी, सुभाष बोष सरदार पटेल, जवाहर लाल
रु इत्यादि महान नेताओं के प्रयास के द्वारा राष्ट्री आन्दोलन आगे बढ़ता गया
ौर इसकी शक्ति दिनोदिन वृद्धि करती चली गई। जब इस आन्दोलन की बाग
ोर गांधी जी ने संभाली तो यह आन्दोलन और भी लोक प्रिय हो गया और
न्त में अंग्रेजी सरकार के पैर उखाड़ दिये गये। और भारत दासता की बेड़ियां
ोड़ कर स्वतन्त्र हो गया।

सामाजिक क्षेत्र में भी दूरगामी परिणाम निकले। अंग्रेजी सत्ता के यहाँ
र स्थापित होने के समय समाज कुरीतीयों का शिकार हो रहा था। परदे का
रिवाज, सती प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह, अशिक्षा, छूत छात इत्यादि ने
समाज को शक्तिहीन बना कर जर जर कर दिया था। उसकी प्रगति की भावना
क्षीण हो गई थी। अन्धविश्वास ने जनता का मस्तिष्क कुण्ठित कर दिया था परन्तु
पाश्चात्य सभ्यता से सम्पर्क होने के कारण इन समस्त कुरीतियों का विनाश कर
दिया गया और समाज में पुनर्जागरण के कारण फिर से प्रगति की भावना जग
गा उठी। अन्धविश्वास के स्थान पर तर्क वितर्क की भावना काम
करने लगी।

धार्मिक क्षेत्र में भी रूढ़िवादिता के विरुद्ध एक आन्दोलनकारी संघर्ष
आरम्भ किया गया। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन ने आगे बढ़ कर
धार्मिक कर्म काण्ड और व्यर्थ क्रिया-विधियों पर आक्रमण किये। अर्थहीन
सिद्धान्तों को बहिष्कृत कर दिया गया। इन प्रभावहीन सिद्धान्तों के स्थान पर
सरल और प्रभावशाली सिद्धान्त उत्पादित किये गये। फिर से नवीन हिन्दू धर्म
की आभा भारत वासियों के मस्तिष्क को गौरव और शांति प्रदान करने लगी।
और अब तक का निर्जीव हिन्दू धर्म स्वस्थ फिर अपनी छटा फैलाने लगा।

साहित्यिक क्षेत्र में भी अलौकिक उन्नति हुई। योरोपीय विद्वानों ने
संस्कृत भाषा का गहन अध्ययन किया और प्राचीन भारत की अलौकिक आभा
की खोज निकाला। वैदिक साहित्य की खोज की और प्राचीन हस्त लिखित ग्रन्थों
को प्रकाशित किया गया। भारतीयों ने सजग हो कर अपने अतीत को पहिचाना
और अपनी मूल्यवान संस्कृति का आवाहन किया। देश की भिन्न २ भाषाओं
के साहित्य में प्रगति हुई और प्रत्येक क्षेत्र में महान विद्वानों का जन्म हुआ।

ललित कलाओं की भी पुनर्जागरण के कारण अच्छी उन्नति हुई। स्थापत्य कला, चित्र कला, संगीत कला, नृत्य कला में फिर से अभिरुचि उत्पन्न हुई। भारत की कलाओं की प्राचीन परम्परायें फिर से सम्मुख आ गईं और भारतीय प्रतिभा एक बार फिर निद्रा को छोड़ चमकने लगी। विज्ञान में भी प्रगति हुई। अनेकों लोगों का ध्यान विज्ञान की ओर गया। भौतिक तथा रसायन विज्ञान में भी कई प्रमुख विभूतियाँ पैदा हुईं। पी० सी० राय, सी० वी० रमन, जे० सी० बोस इत्यादि विश्व विख्यात विभूतियाँ सिद्ध हुईं। भारतीय विज्ञान ने विश्व को अपनी देन से सुसम्पन्न बनाने का महान कार्य किया है।

विज्ञान के आविष्कारों द्वारा प्रोत्साहन पाकर देश में औद्योगिक क्रान्ति की भावना जागृत हुई और अनेकों उद्योगपतियों द्वारा देश का आर्थिक ढाँचा बदल गया। डालमियाँ, बिड़ला तथा टाटा जैसे लोगों ने देश का बड़ा उपकार किया परन्तु औद्योगीकरण के साथ साथ वह सब प्रवृत्तियाँ भी आईं जिन का सामना योरप कर रहा था और आज भी कर रहा है। भारत भी पूँजीवाद, साम्यवाद, समाजवाद, आदर्शवाद इत्यादि विरोधी विचार धाराओं का केन्द्र बन गया और यहाँ के जीवन का सामान्य अङ्ग बन कर इन विरोधी विचार धाराओं ने अपना २ प्रभुत्व जमा रक्खा है।

यह सब विविध प्रभाव पुनर्जागरणने उत्पन्न किये हैं। इन प्रभावोंने भारतीय जीवन में नवीन रक्त का संचार किया है और मध्य कालीन दशा में परिवर्तन कर दिया है। इस पुनर्जागरण के उत्पन्न करने में कई कारणों ने अपना २ योग प्रदान किया है। अंग्रेजी सत्ता की स्थापना इङ्गलैंड के अतिरिक्त अन्य पाश्चात्य प्रदेशों से सम्पर्क, अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार और प्रसार, ईसाई धर्म प्रचारकों का कार्य, भारत में दैनिक, साप्ताहिक तथा मासिक पत्र-पत्रिकाओं का निकलना, इत्यादि, इन सब कारणों ने मिलकर भारत में पुनर्जागरण को जन्म दिया और पुनर्जागरण ने अपने दूर गामी प्रभाव डालकर भारत में नवीन और सशक्त धाराओं को प्रवाहित किया। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक नवीन प्रभावशाली और अलौकिक स्फूर्ति आई और विविध क्षेत्रों में प्रतिभा शाली व्यक्तियों का जन्म हुआ, जिन्हों ने अपना अलौकिक और तीव्र बुद्धि के बल पर नवीन विचारों को अपनी भारतीय परम्पराओं से मिश्रित कर विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किया और स्वयं पश्चिम वालों को आश्चर्य में डाल दिया। आज भी विवेकानन्द तथा राम तीर्थ के प्रभावशाली तथा वेदान्तपूर्ण भाषण पश्चिम के प्रदेशों में गूंज रहे हैं। आज भी टैगोर पश्चिम की प्रशंसा प्राप्त कर रहा है। यह सब विभूतियां भारतीय पुनर्जागरण का फल ही थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत में पुनर्जागरण ने अपनी महान देन प्रदान की हैं और भारत की निद्रा को भङ्ग कर दिया है।

X Q. Give an account of the education system which provided ancient India.

प्रश्न—प्राचीन भारत की शिक्षा प्रणाली का वर्णन करो ?

उत्तर—व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र की प्रगति उसकी शिक्षा पर आधारित ती है किसी भी देश की उन्नति का माप दण्ड उसमें प्रसारित शिक्षा ही होती प्राचीन भारत इस सत्य को भली भांति समझता था और उसके सुदूर अतीत जब कि योरुप के अनेकों प्रदेश अन्धकार मय वातावरण में जीवन के दिन काट थे, एक उच्च कोटि की शिक्षा प्रणाली कार्य कर रही थी और इसका प्रसार देश विविध भागों में पूर्ण रूप से हो रहा था। दर्शन, गणित, ज्योतिष इत्यादि के विषय पढ़ाये जाते थे। भारत में शिक्षा प्रचार के कारण समय समय पर ऐसे शास्त्री, विद्वान तथा विचारक होते रहें जिनके ज्ञान ने भारत का ही नहीं र के अन्य देशों का भी पथ प्रदर्शन किया। आज भी इन महान विभूतियों के ष भारत जितना भी गर्व करे कम है।

वैदिक युग में शिक्षा का अच्छा प्रचार था। इसके प्रमाण वेदों तथा उप-दों से भली भांति प्राप्त होते हैं। अथर्ववेद में शिक्षा अध्ययन पर गहरा प्रभाव ला गया है। ब्रह्मचर्य जीवन की महिमा का गुणगान किया गया है। इसी प ऋग्वेद में बालकों के एक साथ पढ़ने की उपमा दी गई है जिससे स्पष्ट होता के इस युग में गुरु कई कई विद्यार्थियों को शिक्षा देते थे। छान्दोग्य तथा दारण्यक उपनिषदों में इस बात का उल्लेख किया गया है कि ब्राह्मण गुरु ने बालकों को घर पर ही शिक्षा देते थे और अन्य विद्यार्थी गुरुओं से विद्या त करने के लिये उनके घर जाया करते थे। उपनयन संस्कार का आर्यों में ी ही महत्व था इसके होने पर बालक अपनी शिक्षा प्रारम्भ करता था और ने गुरु के संरक्षण में आ जाता था यह संस्कार बड़ा ही पवित्र माना जाता था। इस संस्कार को न मानने वाला आर्यसमाज से बहिष्कृत कर दिया जाता था से यह बात भली भांति स्पष्ट हो जाती है कि इस अति प्राचीन भारत में वतः शत प्रतिशत आर्य पढ़े हुए होते थे। स्त्रीशिक्षा का भी अवश्य ही प्रचार अन्यथा वैदिक युग का समाज इतना उन्नत नहीं हो सकता था जितना वह। छान्दोग्य दर्शन में विश्वपति कैकेय का यह कहना कि उनके साम्राज्य में ई भी अशिक्षित व्यक्ति नहीं है सम्पूर्ण सत्य पर आधारित है। यह वह समय जब कि विश्व के अन्य देश भारत के ज्ञान प्रकाश से अधिक प्रभावित होते थे देशों में शिक्षा की कोई व्यवस्था ही नहीं थी।

बुद्ध युग में भी शिक्षा व्यवस्था निरन्तर रूप से बनी ही नहीं रही अपितु का और भी अधिक प्रचार और प्रसार हुआ। प्राचीन काल के आश्रम तथा

गुरुकुल भी बने ही रहे साथ साथ विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों का उत्थान
हो गया। विहार शिक्षा केन्द्र बनते चले गये। अब ब्राह्मणों के घर गुरु शि
तथा जैन साधुओं के स्थान शिक्षा केन्द्रों का काम करने लगे इस समय भारत
शिक्षा प्रणाली कितनी उच्च तथा शिक्षा का स्तर कितना ऊंचा था। इस बात
सुगमता पूर्वक समझ में आ सकता है कि जापान, चीन आदि देशों के विद्
विस्तार रूप से भारत में शिक्षा प्राप्ति के लिये आते थे। चीनी यात्री ह्वेनसांग
नालन्दा विश्व विद्यालय की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है।

शिक्षा का प्रारम्भ

आर्य बालक की शिक्षा उपनयन संस्कार के द्वारा प्रारम्भ की जाती थी
इस समय बालक की आयु ७ या ८ वर्ष की होती थी। इस संस्कार के द्वा
बालक गुरु का शिष्य बन जाता था इस संस्कार का मनाया जाना प्रत्येक आ
के लिये अनिवार्य समझा जाता था क्योंकि 'मनुस्मृति' के अनुसार इस संस्कार को
न करने वाला मनुष्य समाज से बहिष्कृत समझा जाता था। साधारणतया आठ
वर्ष की आयु में उच्च शिक्षा प्रारम्भ हो जाती थी और २४ या २५ वर्ष में शिक्षा
समाप्त हो जाती थी इस शिक्षा समाप्ति के समय एक समारोह मनाया जाता था
जिसमें गुरु अपने शिष्यों को एकत्रित करके उपदेश देता था। जीवन के इस संस्कार
को 'समावर्तन' संस्कार कहते थे इस संस्कार के साथ साथ ब्रह्मचारी जीवन की
समाप्ति समझी जाती थी।

आर्यों ने जीवन के प्रथम २५ वर्षों के समय को ब्रह्मचर्य आश्रम का नाम
दिया था। इस ब्रह्मचर्य आश्रम में रहकर विद्यार्थी अपने गुरु के पास रहकर शिक्षा
प्राप्त करता था। अपनी शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति में
संलग्न रहता था। उसको सांसारिक बातों से कोई वास्ता न रहता था। गुरुकुल
या आश्रम में रहकर विद्यार्थी का जीवन बड़ा सरल, सादा तथा समय से बंधा हुआ
था। आमोद, प्रमोद, ऐश्वर्य का भोग विलास के जीवन से वह पूर्ण रूप से अनभिज्ञ
रहता था। उसका भोजन सादा होता था। उसमें स्वादिष्ट पदार्थों का अभाव रहता
था मांस, मदिरा इत्यादि का ब्रह्मचारी के लिये निषिद्ध था। उसकी वेश भूषा सादी
होती थी। प्राचीन काल में ब्रह्मचारी भिक्षा द्वारा अपना भोजन लाते थे। इससे
विद्यार्थी में नम्रता का भाव उत्पन्न होता था और दूसरा यह उद्देश्य था कि
विद्यार्थी भली भांति यह समझ ले कि वह शिक्षा प्राप्ति के लिये सम्पूर्ण समाज पर
आधारित है इस प्रकार उसमें सामाजिक हित की भावना जाग्रत हो जाए।

भिक्षा विधि से एक और भी लाभ था वह यह कि धनी तथा निर्धन सभी
शिक्षा प्राप्त कर सकते थे परन्तु धीरे धीरे भिक्षा का अन्त हो गया और अब
विद्यार्थियों का भोजन समाज द्वारा दिये गये दान से चलाये हुए भण्डारों द्वारा

ाता। नालन्दा तथा तक्षशिला के विश्व विद्यालयों में भोजन की व्यवस्था
प्रकार के बड़े बड़े भण्डारों द्वारा ही की जाती थी। उस समय समाज का
क व्यक्ति शिक्षा के प्रति अपने कर्तव्य को भली भांति समझता था और यथा
क शिक्षण संस्थाओं के लिये उदारता पूर्वक दान देता था। इसी कारण से
तथा गरीब दोनों प्रकार के बालक शिक्षा प्राप्त कर पाते थे और समाज में
नता का भाव कायम रहता था।

विद्यार्थी दो प्रकार के होते थे एक तो वह जो 'अन्तेवासी' कहलाते थे यह
रूप से गुरु के पास रहते थे इनकी प्रत्येक देखभाल गुरु ही करता था।
की विद्या समाप्ति पर ब्रह्मचारी जब घर लौटता था तो 'समावर्तन' नामक
कार होता था।

दूसरे वह विद्यार्थी होते थे जो दिन में गुरु के पास जाते और विद्या प्राप्त
के शाम को घर लौट जाते थे। साधारणतया यह प्रौढ़ विद्यार्थी होते थे जो
व ज्ञान प्राप्ति के लिये ही गुरु के पास जाया करते थे।

गुरु तथा शिष्य के सम्बन्ध बड़े ही मधुरता पूर्ण होते थे यदि विद्यार्थी
ने गुरु को पिता के समान मानता था और उसकी सेवा सेवक की भांति करता
तो गुरु भी शिष्य को अपना पुत्र समझता था और वह गुरु परिवार का एक
ग के प्रकार रहता था। गुरु का कार्य शिक्षा देने के अतिरिक्त अपने शिष्य के
न पोषण का भी उचित प्रबन्ध करना था और दुःख की अवस्था में उसकी
माल भी करता था। इस प्रकार दोनों के सम्बन्ध उच्च कोटि के हुआ करते थे।
ग्यवश आज की दशा तो पूर्णतया भिन्न ही है।

शिक्षा निःशुल्क थी परन्तु जो विद्यार्थी चाहता था वह धन के रूप में अपनी
ज्ञता प्रगट कर सकता था। वह शुल्क शिक्षा आरम्भ करते समय या समाप्ति
समय दी जाती थी। गरीब विद्यार्थी गुरु को धन न देकर उसकी सेवा में तत्पर
ता था। वह अपने गुरु के प्रति अगाध प्रेम तथा श्रद्धा रखता था। जो विद्यार्थी
त में अपने अन्य घरेलू धन्धों में लगे रहते थे उनकी शिक्षा के लिये गुरु रात में
क्षा देते थे। गरीबी के आधार पर कोई भी शिक्षा से वञ्चित नहीं रहने पाता
। जो विद्यार्थी गुरु के पास ही रहते थे उनके खाने तथा वस्त्रों की व्यवस्था
माज द्वारा दिये गये दान द्वारा की जाती थी। इस प्रकार शिक्षा प्रणाली
ही सस्ती थी।

नालन्दा तथा तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों में भोजन के बड़े बड़े भण्डार
जहाँ विद्यार्थियों को मुफ्त खाना दिया जाता था। इस प्रकार शिक्षा का प्रचार
त ही अधिक था क्योंकि गरीबी शिक्षा प्राप्ति में बिलकुल बाधक नहीं थी।

अनेकों ब्राह्मण कुलों को भी शिक्षा देने का कार्य करते थे राज्यों की ओर से स्थायी रूप से मिले ग्राम उनके जीवन निर्वाह के हेतु दे दिये जाते थे। ग्रामों में ब्राह्मण लोग शिक्षा देने का कार्य करते थे। धीरे धीरे इस प्रकार के ग्राम शिक्षा केन्द्र बन जाते थे और ये शिक्षा केन्द्र अग्रहार कहलाते थे। राष्ट्र काहिपुर ऐसा ही अग्रहार था।

इस प्रकार यदि बौद्ध विहारों में बौद्ध धर्म सम्बन्धी शिक्षा दी जाती थी तो हिन्दु मन्दिरों में हिन्दु संस्कृति की शिक्षा दी जाती थी।

इन विविध संस्थाओं द्वारा शिक्षा का इतना अधिक प्रचार हो रहा था कि देश के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्ति का सुअवसर प्राप्त रहता था और देश में शिक्षा का बहुत अधिक प्रचार था इसी कारण से यहां का उस समय का समाज बड़ा ही उन्नत समाज था।

अध्ययन के विषय

अध्ययन के दृष्टिकोण से विद्या के दो भाग किये गये थे परा विद्या तथा अपरा विद्या। परा विद्या में आत्मा तथा परमात्मा का ज्ञान कराया जाता था और अपरा विद्या में अन्य लौकिक विषय होते थे। गुरुकुलों में दोनों प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। अपरा विद्या आवश्यकता अनुसार दी जाती थी प्राचीन हिन्दु समाज श्रम विभाजन पर अवलम्बित था। इसी विभाजन के अनुसार शिक्षा दी जाती थी ब्राह्मणों को धर्म कर्म करने पड़ते थे इसीलिये उनको धार्मिक शिक्षा की अधिक आवश्यकता रहती थी वही शिक्षा उनको दी जाती थी। क्षत्रियों को युद्ध विद्या, अस्त्र-शस्त्र विद्या दी जाने की व्यवस्था की गई थी। वैश्यों को कृषि तथा वाणिज्य-व्यापार की शिक्षा दी जाती थी। शूद्रों को अनेक कलाओं तथा हाथ के कार्यों का अच्छा ज्ञान कराया जाता था। इस प्रकार शिक्षा का यह उद्देश्य माना जाता था कि उसके द्वारा भावी जीवन में व्यक्ति सफल सिद्ध हो सके। चरित्र निर्माण की शिक्षा समान रूप से सबको दी जाती थी। इस प्रकार एक सुव्यवस्थित ढंग की शिक्षा का प्रसार हो रहा था और इसका फल एक सुन्दर समाज का निर्माण था वैदिक युग में शिक्षा के मुख्य विषय वेद, पुराण, दर्शन, कला तथा व्याकरण थे।

बौद्ध काल में वेदों की महत्ता कम होने के कारण उनके अध्ययन का रिवाज कुछ कम हो गया था परन्तु व्याकरण, पुराण, न्याय, दर्शन, वैद्यक, काव्य, साहित्य, कोष, ज्योतिष तथा गणित का खूब अध्ययन किया जाता था। जहां तक ग्रंथों से पता चलता है कि तीनों वेदों तथा १८ शिल्पों की शिक्षा का रिवाज था। शिल्पों में कृषि, पशुपालन, वाणिज्य, धनुर्विद्या, जादू, सर्पविद्या, गणित आदि सम्मिलित थे। इस युग में मूर्ति-भवन तथा पोत निर्माण की विद्याओं की भी बड़ी

ाति हुई थी। चित्रकला की ओर भी अधिक ध्यान दिया जाने लगा था। अजन्ता
भित्ति चित्र उस समय की उत्कृष्ट कला का सजीव उदाहरण है। अध्ययन के
विषय विविध प्रकार के थे और समाज के प्रत्येक व्यक्ति के दृष्टिकोण को ध्यान में
रखकर शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। यही कारण था कि उस समय का समाज
च कोटि के वेदान्ती, शासक, व्यवसायी तथा आचार्य और कलाकार तथा योद्धा
त्पन्न कर सका। उस समय के समाज का नैतिक स्तर भी बड़ा ही ऊंचा था
सका कारण यदि उस समय की शिक्षा नहीं तो और क्या था।

पाठ्य प्रणाली

वैदिक युग में अधिकतर शिक्षा मौखिक होती थी क्योंकि अधिकतर वैदिक
ाहित्य लिखित रूप में नहीं था। पाठ कण्ठस्थ कराने पर बल दिया जाता था।
रों तथा छात्रों के द्वारा पाठ याद कराये जाते थे परन्तु आगे चलकर बहुतसे
थ हस्तलिखित रूप में बना लिये गये। रटने तथा कण्ठस्थ करने का रिवाज था
न्तु इस क्रिया को करने के लिये समझ से काम लेने के लिये कहा जाता था।

उस समय विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाता था। गुरु
येक विद्यार्थी का पाठ अलग सुनता तथा उसकी अशुद्धियां ठीक करता था। यह
रीका अति उत्तम था गुरु और शिष्य में गहरा सम्पर्क हो जाता था और दोनों
दियों में एक दूसरे के प्रति प्रेम उत्पन्न होता था परन्तु इस रीति का एक दोष
ी था वह यह कि गुरु एक समय में अधिक विद्यार्थियों को शिक्षा नहीं दे पाता
ा। नालन्दा तथा तक्षशिला में एक गुरु के पास केवल १५ या २० विद्यार्थी ही
िक्षा प्राप्त कर पाते थे। इन संस्थाओं में शिक्षक प्रकाण्ड पण्डित होते थे जो
ार्थी के मस्तिष्क की योग्यता के अनुसार ही उसको शिक्षा देते थे। कुशल तथा
न्द बुद्धि वाले विद्यार्थियों की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। उस
मय की शिक्षा प्रणाली का वर्णन करते हुए चीनी यात्री ह्वानसांग उसकी बड़ी
शंसा करता है

शिक्षा, वार्तालाप द्वारा भी दी जाती थी। गुरु अपने विद्यार्थियों से वाद
िवाद करते थे और इस प्रकार उनके ज्ञान में अधिक प्रगति होती थी। गुरु अपने
्यार्थियों को शास्त्रार्थों में भी सम्मिलित कराते थे। इस प्रकार के शास्त्रार्थ में
ग लेने से विद्यार्थियों की बुद्धि अधिक तीव्र हो जाती थी।

परीक्षायें आदि

वर्तमान काल की परीक्षा प्रणाली का उस समय रिवाज न था। न कोई
रीक्षा होती थी न कोई उपाधि दी जाती थी और न कोई प्रमाण पत्र ही दिया
ाता था। प्रतिदिन नया पाठ आरम्भ करने से पूर्व गुरु पिछले पाठ पर गुरु प्रश्न

करके यह ज्ञात लेता था कि नया पाठ आरम्भ कराये या नहीं—यही परीक्षा थी शिक्षा समाप्ति पर गुरु अपने शिष्य अथवा शिष्यों को सार्वजनिक शास्त्रार्थों में सम्मिलित करता था विद्वानों की परिषदों में ले जाता था या राजसभाओं में विद्वानों के सामने प्रस्तुत करता था वहीं पर ही विद्यार्थी की उत्तम परीक्षा हो जाती थी। यह शास्त्रार्थ इस बात को पूर्ण रूप से स्पष्ट कर देते थे कि विद्यार्थी का स्तर कैसा है। प्रथम बार विक्रमशीला विश्वविद्यालय में उपाधियाँ देने का रिवाज आरम्भ हुआ था। फिर तो यह प्रथा चलती ही रही।

अन्वेषण कार्य

विद्वान आचार्य तथा पण्डित अपने खाली समय में अन्वेषण कार्य करते थे। ज्ञान की वृद्धि में संलग्न हो जाते थे। अनेकों अनुसन्धान शालायें स्थापित की गई थीं। इस अमूल्य कार्य का यह फल हुआ कि ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में महान वृद्धि हुई। वेदान्त, वैद्यक, नाटक, धर्मशास्त्र, ज्योतिष, गणित इत्यादि क्षेत्रों में महान प्रगति की गई।

स्त्री शिक्षा

कोई भी समाज उस समय तक उन्नति की चरम सीमा पर नहीं पहुँच सकता जब तक उसका पुरुष तथा स्त्री समाज दोनों ही शिक्षित न हो जायें। प्राचीन भारत इस सुन्दर सत्य को भली भांति समझता था। वैदिक युग में स्त्रियों को सभी प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। अनेकों स्त्रियां इतनी विद्वान होती थीं कि वह वेद मन्त्रों की रचना तक करती थीं और उच्च स्तर के शास्त्रार्थों तक में भाग लेती थीं। इस प्रकार की विदुषी स्त्रियां समाज की शोभा थीं।

बालकों तथा बालिकाओं की शिक्षा के उद्देश्यों में अन्तर था बालकों को व्यवहारिक जीवन में निपुण बनाना था तो बालिकाओं को उत्तम गृहणी तथा उत्तम माता बनाना समाज का धर्म समझा जाता था। दोनों की शिक्षा संस्थायें भिन्न होती थीं। यह शिक्षा का प्रचलन न था। कन्याओं के गुरुकुल पृथक होते थे। भवभूति ने अपने नाटक रामचरित्र में कन्या गुरुकुल का उल्लेख किया है। कन्याओं को विविध प्रकार की ललित कलाओं में भी शिक्षा दी जाती थी। उनमें अनेकों उत्तम कलाकार होती थीं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्राचीन भारत अपनी स्त्रियों को शिक्षित बनाने की ओर से उदासीन न था और उसके उन्नत होने का यह भी एक महत्व पूर्ण कारण था।

'उस युग की शिक्षा के उपदेश'

प्रत्येक युग में शिक्षा के अपने विशेष उद्देश्य होते हैं। इसी प्रकार प्राचीन भारत में शिक्षा के चार महत्वपूर्ण उद्देश्य थे। प्रथम चरित्र निर्माण. द्वितीय

मनुष्य के व्यक्तित्व की बहुमुखी उन्नति, तृतीय विद्यार्थी में उत्तरदायित्व तथा कर्तव्य की भावना जागृत करना, चौथा उद्देश्य प्राचीन साहित्य और संस्कृति का संरक्षण था। इन चारों उद्देश्यों की पूर्ति ही उस समय की शिक्षा के महत्वपूर्ण उद्देश थे और उस समय की शिक्षा पद्धति पूर्ण सफलता के साथ समाज की सेवा कर रही थी।

भारत के नर और नारियों का चरित्र उनके ब्रह्मचर्य काल में इतना सुन्दर तथा उच्च कोटि का बन जाता था कि समस्त जीवन भर वह उसी प्रकार से चमकता रहता था। भारतीय समाज के चरित्र की प्रशंसा उन विदेशी यात्रियों ने मुक्त कण्ठ से की है जो उस समय भारत में आये थे। मेगस्थनीज, ह्वानत्सांग, मार्को-पोलो ने भारत के नर और नारियों के उच्च चरित्र की भूरि भूरि प्रशंसा की है।

दूसरे उद्देश्य की पूर्ति उन विद्वानों, प्रकाण्ड पण्डितों तथा आचार्यों द्वारा आश्रमों, गुरुकुलों तथा विद्यालयों में होती थी जो अपने ज्ञान में स्वयं ही उदाहरण रूप करते थे। उनके गहन सम्पर्क में रह कर ब्रह्मचारी अपनी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रगति करता था। उस की विविध शक्तियों का विकास होता था और वह पूर्ण रूप से अपने भविष्य के लिये तैयारी कर लेता था। ब्रह्मचारी अपने २० या २१ वर्ष के समय तक अपना प्रत्येक प्रकार का पूर्ण विकास कर लेता था।

तीसरा उद्देश्य स्नातक को उसके सामाजिक तथा राजनैतिक अधिकारों तथा कर्तव्यों का पूर्ण रूप से ज्ञान कराना था। वह लौकिक व्यवहार में निपुण हो जाता था। स्वार्थ त्याग, समाज सेवा, गृहस्थी के कर्तव्य इन सब की जानकारी उसको होजाती थी। इसी कारण से भारत का सामाजिक तथा राजनैतिक ढाँचा निरन्तर रूप से सफलता पूर्वक बना रहा।

चौथा उद्देश्य साहित्य तथा ज्ञान की सुरक्षा तथा वृद्धि थी। प्राचीन वैदिक ज्ञान तथा अन्य ज्ञान गुरुकुलों, तपोवन आश्रमों, विद्यालयों तथा महा विद्यालयों और विश्व विद्यालयों में प्रकाण्ड पण्डितों और आचार्यों द्वारा सुरक्षित ही नहीं रहा अपितु उसमें निरन्तर रूप से वृद्धि होती चली गई। प्रत्येक समय भारतीय साहित्य और ज्ञान में वह ग्रन्थ रचे गये जिनका विश्व भर में आज तक उदाहरण नहीं मिलता।

इस प्रकार शिक्षण प्रणाली महान सफलता के साथ भारतीय जन कल्याण में लगी हुई थी और हमारा प्राचीन समाज दिन प्रति दिन उन्नत होता जाता था।

भारतीय शिक्षण प्रणाली की अनेकों विशेषताएं थीं। गुरुकुल तथा तपो-वन आश्रम निःशुल्क शिक्षा, ब्रह्मचारी का गुरु के पास रहना और गुरु का उसको

अपने पुत्र के समान समझना दोनों का प्रेम पूर्ण व्यवहार, उपनयन संस्कार द्वारा शिक्षा का आरम्भ तथा 'समावर्तन' संस्कार द्वारा शिक्षा की समाप्ति, समानता के सिद्धान्त, ब्रह्मचारियों द्वारा भिक्षा का प्रचलन इत्यादि ऐसी विशेषतायें थीं जो समय के साथ शताब्दियों तक बनी रहीं। परन्तु मध्य युगीन भारत में इन का पतन आरम्भ हो गया और धीरे धीरे नवीन युग में यह विशेषतायें स्वप्न मात्र हो गईं।

जब से हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति का ह्रास हुआ तब से ही हमारा नैतिक पतन भी आरम्भ हो गया और आधुनिक युग में पदार्पण करते समय भारतीय समाज एक पतित समाज बन चुका था। शिक्षा ही किसी समाज को उन्नत अथवा अवनत करती है। भारतीय समाज का इतिहास इस सिद्धान्त को पूर्ण रूप से स्पष्ट करता है।

'प्राचीन भारत के विश्व-विद्यालय'

प्राचीन भारत में शिक्षा संस्थायें गुरुकुल या आश्रम ही थे। बौद्ध काल में विहारों का प्रादुर्भाव हुआ। ये विहार उन्नत होते रहे। ज्ञान की वृद्धि तथा उसका विस्तार होता गया। ये विहार विद्यालय बने, महा विद्यालय बने और इनकी संख्या बढ़ती ही चली गई। फिर धीरे धीरे कई मुख्य विश्व-विद्यालय निर्मित हो गए। इन में तक्षशिला, नालन्दा, कान्ची, विक्रमशिला महान विद्यालय थीं। इन में विदेशों से विद्यार्थी ज्ञान प्राप्ति के लिये आते थे। ये विश्व-विद्यालय प्राचीन भारत के गौरव थे।

तक्षशिला—

'तक्षशिला' रावलपिंडी से १२ मील दूर पर स्थित था। ऐसा कहा जाता है कि राम के भाई भरत के लड़के 'तक्ष' ने इस नगर की स्थापना की थी। वह ही इस का प्रथम राजा था। धीरे धीरे यह नगर सभ्यता तथा संस्कृति का प्रसिद्ध केन्द्र बन गया और शिक्षा के क्षेत्र में ईसा के पूर्व ५०० वर्ष से लेकर ५वीं सदी ईस्वी तक निरन्तर रूप से कार्य करता रहा और भारत में तथा भारत के बाहर ज्ञान का प्रकाश फैलाता रहा।

ईसा के पश्चात की सदियों में तक्षशिला की ख्याति बहुत अधिक फैल चुकी थी और यहाँ के विश्व-विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने के लिये भारत के दूरस्थ स्थानों जैसे बनारस, मिथिला तथा राजगृह से बराबर विद्यार्थी आते थे। भारत से ही नहीं अपितु विदेशों से भी विद्यार्थी आया करते थे। इस विश्व-विद्यालय ने अनेकों विभूतियाँ उत्पन्न कीं। कौटिल्य जो अर्थशास्त्र तथा राजनीति में अपना जोड़ न रखता था, जिसने राजाओं को शतरंज के मोहरों की तरह

रहता और बिगाड़ा था। नन्द वन्श का विनाशक और मौर्य वश का संस्थापक होने का जिन को मान प्राप्त था। इसी विश्व-विद्यालय के स्नातक तथा आचार्य होने का सम्मान प्राप्त था। व्याकरण का महान पण्डित पाणिनि, मृत्य कुमार जीव, प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक इसी शिक्षा केन्द्र की उत्पन्न की हुई विभूतियां थी।

आज की प्रकार तक्षशिला में कोई विश्वविद्यालय या विद्यापीठ न था और न उन पर कार्य करने वाले शिक्षकों की व्यवस्था ही थी। न शिक्षा समाप्ति का ही कोई समय था और न कोई पाठ्यक्रम, और न तो यहाँ परीक्षायें ही होती थीं और न किसी प्रमाण पत्र या उपाधियाँ देने का ही रिवाज था। यह नगर तो शिक्षा का केन्द्र बन गया था क्योंकि यहाँ पर भिन्न भिन्न विषयों के महान आचार्य रहते थे। इन विद्वानों के घरों पर दूर दूर से विद्यार्थी आते थे और परिवार के सदस्यों की भांति रहकर गुरू के घर ज्ञान प्राप्त करते थे। जातक ग्रन्थों में एक आचार्य के पास ५०० तक विद्यार्थी पढ़ने का उल्लेख आया है।

गरीब विद्यार्थी दिन में काम करते थे और रात को शिक्षा प्राप्त करते थे। शुल्क देने के अलग अलग तरीके थे। कोई कोई विद्यार्थी शिक्षा समाप्ति पर शुल्क देता था। शुल्क देने वाले छात्र गुरू के परिवार में ही रहते थे।

यहाँ पर उच्च शिक्षा आरम्भ करने की आयु लगभग १६ वर्ष थी। आचार्य प्रत्येक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देता था। वह सादे सरल तथा पवित्र जीवन पर ध्यान रखता था। स्नातक के चरित्र निर्माण का कार्य उसका पूर्ण उत्तरदायित्व था। यहाँ पर धार्मिक तथा लौकिक दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। व्याकरण, साहित्य, धनुर्विद्या, शल्यविद्या, हस्तविद्या इत्यादि तथा वेदों का अध्ययन भी कराया जाता था। आचार्य आवश्यकतानुसार शिक्षा काल तथा कोर्स नियत करने के लिये स्वतन्त्र था। शिक्षा समाप्ति पर स्नातक क्रियात्मक ज्ञान के हेतु और भ्रमण करते थे तथा पर्यटन भी करते थे ताकि विदेशों के रीति रिवाजों से जानकारी प्राप्त कर सकें। इस प्रकार तक्षशिला में पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त करके ही स्नातक निकलते थे।

नालन्दा

नालन्दा विश्व विद्यालय पटना से दक्षिण पश्चिम में ४० मील दूर बड़गांव के निकट था। गुप्त सम्राट कुमार गुप्त प्रथम ने एक विहार स्थापित करके इस प्रसिद्ध विश्वविद्यालय की नींव डाली। इसके पश्चात गुप्त सम्राट अपने उदार दानों द्वारा इसकी उन्नति में सहयोग देते रहे और इस विहार के चारों ओर विशाल तथा भव्य भवन निर्माण होते गये। चारों ओर बौद्ध आचार्यों तथा प्रचारकों के चार चार

गगनचुम्बी ऊँचे भवन बनाये गये थे। अनेकों भव्य तथा विशाल पुस्तकालय थे। बड़े विद्यालय थे। इस प्रकार कुल मिला कर १०० छोटे छोटे कमरे तथा बड़े हाल थे। इनमें व्याख्यान हुआ करते थे। विश्वविद्यालय में तीन विशाल भव थे। रत्नोदधि भी अत्यन्त ऊंचा था जिसमें धार्मिक ग्रन्थ रखे रहते थे। इस अतिरिक्त रत्न सागर तथा रत्न रंजक दूसरे भव्य भवन थे। भिक्षुओं के लिये भव कमरे बने हुये थे। प्रत्येक में चारपाई, दीपक तथा पुस्तकों का स्थान होता था।

ह्वानसांग ने विश्वविद्यालय के भवनों की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है उस भवनों की ऊंचाई का उल्लेख करते हुये लिखा है कि वह इतने ऊंचे थे कि उनकी छत पर बैठकर बादलों की गति विधि देखी जा सकती थी। अनेकों मनोहर तालाब थे जिनमें आकर्षक कंवल के फूल शोभायमान थे।

इसकी ख्याति इतनी अधिक थी कि विदेशों से विद्यार्थी आते थे। मध्य एशिया, चीन, कोरिया, तिब्बत आदि देशों के विद्यार्थी यहाँ शिक्षा ग्रहण करते थे। इसमें आने वाले विद्यार्थियों को किसी प्रकार की शुल्क देनी नहीं पड़ती थी। वस्त्र, भोजन, निवास-स्थान, चिकित्सा सभी निःशुल्क प्राप्त होते थे। प्रवेश होने के लिये द्वार पण्डित बड़े कठिन प्रश्न करता था जिनका उत्तर कम विद्यार्थी दे पाते थे। प्रत्येक १० में से दो या तीन ही सफल हो पाते थे। इसके विद्यार्थियों की संख्या १०,००० तक पहुंच गई थी।

इस विश्व विद्यालय में धार्मिक शिक्षा के अतिरिक्त ज्योतिष, गणित, व्याकरण, चिकित्सा दर्शन, तर्क शास्त्र इत्यादि विषयों की भी शिक्षा दी जाती थी। यहां पर एक वैध शाला भी थी जिस में ग्रहों की गति विधि का निरीक्षण किया जाता था। नालन्दा के पुस्तकालय उस की एक विशेषता थे। शिक्षा वाद विवाद तथा व्याख्यानों द्वारा दी जाती थी।

इस विश्व विद्यालय से जुड़े हुये ऐसे नाम हैं जो ज्ञान के क्षेत्र में अलौकिक थे। शील भद्र बड़े ही ऊंचे स्तर का विद्वान था उसके कुलपति समय में नालन्दा का नाम विश्व भर में फैल चुका था। उसके महान ज्ञान के कारण राजे महाराजे भी उसका आदर सम्मान करते थे। शान्ति रक्षित दूसरा कुलपति था जिसने नालन्दा के यश गौरव को बहुत बढ़ाया था। धर्म पाल अपने समय का अद्वितीय विद्वान था। चन्द्रपाल, गुणमति, प्रभाकर मित्र, जिनमित्र, भद्रसेन, जिनचन्द्र ऐसे नाम हैं जो विद्वता में अपने स्वयं ही उदाहरण हैं वह किसी भी युग को गौरव देने के लिये महान थे।

नालन्दा भारत को ही नहीं अपितु विश्व भर को ज्ञान का प्रकाश देता था। वह विश्व का पथ प्रदर्शन करता था। इस की ख्याति विश्व भर में फैल गई थी।

११वीं सदी में जब पाल राजाओं ने विक्रमशील विश्व विद्यालय की स्थापना की तो नालन्दा पर कुप्रभाव पड़ा और जब तुर्कों के बर्बरता पूर्ण आघात हुए तो सभ्यता तथा संस्कृति का यह महान केन्द्र नष्ट भ्रष्ट हो गया।

सौराष्ट्र में स्थित सातवीं सदी में 'वल्लभी' का विश्व विद्यालय भी नालन्दा के समान ही प्रसिद्ध था। वहाँ पर बड़े २ विद्वान आचार्य रहते थे। कई बार समस्त देश के पण्डित तथा आचार्य अनेकों विवाद ग्रस्त सिद्धान्तों का निर्णय करने के लिये इस विश्व विद्यालय में जमा हुए थे। यहाँ पर निवास करने वाले विद्वानों से ज्ञान प्राप्त करने के लिये भारत के विविध भागों से छात्र यहां पर जमा रहते थे और उच्च कोटि का ज्ञान प्राप्त करते थे। अनेकों राजाओं द्वारा इस विश्व विद्यालय को उदार संरक्षण प्राप्त हुआ था। इसने विशेषकर पश्चिमी भारत में ज्ञान के प्रकाश को फैलाया था।

विक्रमशिला

आठवीं सदी में वर्तमान भागलपुर से २४ मील दूर पथर घाटा स्थान पर पाल वंशीय राजाओं द्वारा इस प्रसिद्ध विश्व विद्यालय की स्थापना की गई थी। चार सदियों तक निरन्तर यह विश्व विद्यालय शिक्षा का कार्य करता रहा। इस की व्यवस्था बड़े ही सुन्दर ढङ्ग से की गई थी इसके चार प्रवेश द्वार थे जिन पर नालन्दा की तरह द्वार पण्डित होते थे जो विद्यार्थी के प्रवेश के समय उस की परीक्षा करते थे। इस विश्व विद्यालय में विदेशों से आये हुए विद्यार्थी भी अध्ययन करते थे। इस विश्व विद्यालय का तिब्बत से अधिक सम्बन्ध हो गया था। फलस्वरूप वहाँ के अधिक विद्यार्थी आते थे और उन के लिये एक पृथक धर्मशाला का प्रबन्ध किया गया था। यहाँ के भी कई आचार्य तिब्बत गये थे जहाँ पर कई बौद्ध ग्रंथों का तिब्बत की भाषा में अनुवाद किया था। शिक्षा निःशुल्क थी। वस्त्र, भोजन, निवास स्थान भी मुफ्त दिये जाते थे। यहाँ पर धर्म, व्याकरण, तर्क, दर्शन, न्याय इत्यादि की शिक्षा दी जाती थी। इस में एक महान पुस्तकालय था। इसके मध्य में बोधीसत्व की एक विशाल प्रतिमा स्थापित की गई थी। भारत में प्रथम बार इस विश्व विद्यालय ने शिक्षा समाप्ति पर पदवियां तथा उपाधियां देने की प्रथा चलाई थी। इस विश्वविद्यालय में अनेकों महान तथा प्रसिद्ध आचार्य थे। दीपंकर श्रीज्ञान ने २०० पुस्तकें लिखीं या अनुवाद की थी अन्य प्रसिद्ध आचार्य बोधिभद्र, कमलरक्षित, ज्ञानवज्र, तथागत रक्षित, रत्नवज्र हुए हैं। इनकी ख्याति सुन सुनकर ही देश तथा विदेशों से विद्यार्थी आते थे और ज्ञान प्राप्त करते थे। १२०२ में मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी ने इस विश्व विद्यालय को नष्ट कर दिया और इस प्रकार इसके क्रूर हाथों द्वारा ज्ञान का

प्रकाश फैलाने वाला विक्रमशीला का दीपक बुझा दिया गया और ज्ञान के महान केन्द्र की इतिश्री कर दी गई।

'काशमीर'

अलबरूनी ने काश्मीर को महत्वपूर्ण शिक्षा केन्द्र बताया है। यहाँ साहित्य तथा वेदान्त की शिक्षा विशेष रूप से दी जाती थी। वहाँ पर सुव्यवस्थित विश्वविद्यालय न था अपितु विद्वान् आचार्य अपने अपने घरों शिक्षण कार्य करते थे और उनकी ख्याति दूर दूर तक फैली हुई थी।

इस प्रकार प्राचीन काल में भारत शिक्षण संस्थाओं का केन्द्र बना हुआ था। उच्च कोटि की शिक्षा देने के लिये गुरुकुल, आश्रम, विद्यालय तथा विश्व विद्यालय तक खोले गये थे। शिक्षा का प्रचार बहुत अधिक था और समाज के प्रत्येक वर्ग को शिक्षा दी जाती थी निम्न से लेकर ऊंची श्रेणी तक की शिक्षा निःशुल्क होने के कारण गरीबी ज्ञान प्राप्ति में बाधक न बनने दी जाती थी। समाज में सहिष्णुता का वातावरण उत्पन्न किया जाता था शिक्षा इस प्रकार की थी कि चरित्र निर्माण सुन्दरता के साथ होता चला जाता था। विदेशी यात्रियों ने उस समय भारत में आये भारत के नर नारियों की नैतिकता की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। ह्वानसांग भारत में शिक्षा प्रचार को देखकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ था। उस समय का भारत अपनी शिक्षण संस्थाओं द्वारा अपना ही कल्याण न करता था अपितु संसार को भी लाभ पहुँचाता था। विदेशों से विद्यार्थी आ आकर अपनी ज्ञान पिपासा बुझाते थे।

जब तक हमारी शिक्षण संस्थायें स्वस्थ दशा में रहीं और पवित्र भाव के साथ समाज सेवा करती रहीं तब तक हमारा समाज उन्नत रहा परन्तु इनकी स्वस्थ शिक्षण प्रणाली के खराब होने से हमारा समाज भी अवनत होता चला गया ज्ञान का स्थान अन्ध विश्वासों ने ले लिया और मध्य युग के समाप्त होने से पूर्व ही भारत अपने समस्त ज्ञान को खो बैठा।

Q. Give an account of the development of education during the English rule in India,

प्रश्न—भारत में अंग्रेजी शासन के अन्तर्गत शिक्षा की जो उन्नति हुई उसका वर्णन करो।

उत्तर—मुगल साम्राज्य के समाप्त होने पर जिस प्रकार जीवन के अन्य क्षेत्रों में ह्रास हुआ और पतन की गहन घटाओं ने भारत को घेर लिया उसी प्रकार शिक्षा क्षेत्र में भी वृद्धि रुक गई। जब राजनैतिक सत्ता अंग्रेजी कम्पनी के हाथ में

ई तो इसने भारतवासियों की शिक्षा के प्रति महान उदासीनता दिखाई और
क्षा के प्रति अपना कोई कर्तव्य ही न समझा। इस कम्पनी ने प्रत्येक कार्य में
पना दृष्टिकोण व्यापारिक ही रक्खा और लाभ को ही अपने सन्मुख रक्खा। इस
दासीनता का एक और भी कारण था वह यह कि कहीं भारतवासी अधिक धार्मिक
ने के कारण शिक्षा में हस्तक्षेप अपने धर्म में हस्तक्षेप न समझें और विद्रोह
कर दें। परन्तु आगे चल कर जब इंगलैण्ड की पार्लियामेंट को अवसर प्राप्त
आ तो इसने कम्पनी को स्पष्ट रूप से भारत में शिक्षा की वृद्धि के लिये आदेश
या और भारत में शिक्षा वृद्धि उस का एक आवश्यक कर्तव्य बताया। तब से
म्पनी ने शिक्षा की ओर ध्यान देना आरम्भ किया।

इससे पूर्व ही शिक्षा क्षेत्र में यों तो काफी काम हो चुका था। यह काम उन
दरियों द्वारा किया गया था जो धर्म प्रचार के इच्छुक थे। या उन भारतियों द्वारा
जो अपने देश की दीन दशा से प्रभावित होकर परोपकार की दृष्टि से शिक्षा फैलाना
चाहते थे। अतः १७२५ में मुसलमान बालकों के लिये ११ पाठशालायें खोली
गईं। १८०४ में लन्दन की 'मिशनरी सोसायटी' ने दक्षिणी भारत तथा बंगाल में
अंग्रेजी पाठशालायें खोलीं। इनमें निःशुल्क शिक्षा दी जाती थी। इनमें शिक्षा प्राप्त
करके बालक कम्पनी की नौकरी में लग जाते थे। इन धर्म प्रचारकों में शिक्षा
प्रचार का बड़ा उत्साह था। इनके प्रयत्नों से १८२० में कलकत्ते का बिशप कालिज
खोला गया। १७८१ में वारेन हेस्टिंग्ज ने कलकत्ते में एक मदरसा मुसलमान विद्या-
र्थियों के लिये स्थापित किया। १७९१ में बनारस में वहां के रेजीडेण्ट ने संस्कृत
कालिज की स्थापना की। इसमें धर्म और कानून की शिक्षा दी जाती थी। १८१६
में राजा राम मोहन राय, डेविड तथा सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश ने मिलकर
हिन्दू कालिज की स्थापना कर डाली यही कालिज आगे चलकर प्रेजीडेन्सी कालिज
बन गया। १८१७ में राम मोहन राय ने एक अन्य पाठशाला स्थापित की जहां
निःशुल्क शिक्षा का आयोजन किया गया। इस प्रकार शिक्षा क्षेत्र में धीरे धीरे कार्य
चल रहा था।

१८१३—१८३५

१८१३ में अंग्रेजी पार्लियामेंट ने एक प्रस्ताव पास किया और कम्पनी को
आदेश दिया गया कि भारतियों की शिक्षा का प्रबन्ध उसका एक कर्तव्य है शिक्षा
पर प्रति वर्ष एक लाख रुपया व्यय करना अनिवार्य करार दे दिया गया। १८२३ में
एक 'Committee of Public instruction' बनाई गई जिसका कार्य भिन्न
भिन्न शिक्षा संस्थाओं को धन का वितरण करना था। इस धन में से अनुदान
(grants) दी जाने लगी। 'कलकत्ता स्कूल सोसायटी' तथा 'कलकत्ता स्कूल बुक
सोसायटी' को अनुदान मिलने लगे। कम्पनी ने १८२४ में कलकत्ते में और १८२६

में दिल्ली में संस्कृत कालिज खोल दिये। १८१६ में मद्रास में एक विद्यालय और कुछ पाठशालायें खोली गईं। १८३४ तक आते आते तीन प्रकार की शिक्षा संस्थाएं कार्य कर रही थी। प्रथम पादरियों द्वारा स्थापित पाठशालायें जिनमें अंग्रेजी शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। दूसरी वह पाठशालायें थी जो कम्पनी ने बनाई थी इनमें शिक्षा का माध्यम उर्दू और हिन्दी थी। तीसरी वर्नाक्यूलर पाठशालायें थी। अब सरकार ने शिक्षा क्षेत्र में अधिक अभिरुचि दिखाना आरम्भ करदी थी। अब एक नवीन विचार ने जन्म लिया। अनेकों भारतियों का यह मत बन गया कि उच्च शिक्षा के लिये अंग्रेजी भाषा को ही शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिये। कम्पनी भी इसी विचार से सहमत थी। राम मोहन राय तथा योरोपीय धर्म प्रचारक भी अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार ही चाहते थे। धीरे धीरे अंग्रेजी माध्यम द्वारा शिक्षा दी जाने का मत शक्ति प्राप्त करता जा रहा था और वातावरण इसके लिये अनुकूल बन रहा था।

१८३५—१८५४

भारतीयों का एक ऐसा समुदाय था जो अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाने का विरोधी था। यह चाहता था कि शिक्षा संस्कृत और अरबी द्वारा ही दी जानी चाहिये। विलसन इस मत का ही पक्षपाती था। दूसरी ओर राम मोहन राय जैसे प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। जब यह विवाद चल रहा था तो गवर्नर जनरल की कौन्सिल के कानूनी सदस्य लार्ड मैकाले को 'Committee of Public Instruction' का सभापति बनाया गया। वह अंग्रेजी को माध्यम बनाने का पक्षपाती था। वह कहता था कि संस्कृत तथा अरबी की अपेक्षा अंग्रेजी सीखना अधिक लाभ है। वह एक कूटनीतिज्ञ की हैसियत से भी अंग्रेजी का अधिकाधिक प्रचार चाहता था। उसने स्पष्ट रूप से कहा था "हमें अपनी समस्त शक्ति लगा कर ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि हम भारत वासियों की ऐसी श्रेणी बना सकें जिसके व्यक्ति जाति और रंग में तो भारतीय ही रहें परन्तु रुचि, विचार और भाषा में पूर्ण अंग्रेज हों। मैकाले शासन की आवश्यकताओं के दृष्टिकोण से भी अंग्रेजी का महान समर्थक था। अतः २ फरवरी १८३५ को कमैटी में उस ने अंग्रेजी को माध्यम बनाने का समर्थन किया और ७ मार्च १८३५ को गवर्नर जनरल की कौन्सिल में इसी प्रकार का एक प्रस्ताव स्वीकृत कर दिया गया। इसके अनुसार शिक्षा अंग्रेजी द्वारा दी जाने लगी। राज्य का धन अंग्रेजी प्रचार में व्यय होने लगा और उन संस्थाओं को ही धन दिया जाने लगा जो अंग्रेजी में ही शिक्षा देती थी। सूबों की सरकारों ने भी इसी नीति को अपना लिया।

नई योजना के अनुसार १८३९ में १२ पाठशालायें खोली गईं और १८४१ तक इनकी संख्या २१ कर दी गई। कई ग्रामों को मिला कर एक मण्डल बनाया गया और इस के लिये एक पाठशाला खोली गई जिस के व्यय के लिये सरकार ने

छात्रों को एक नियत कर देना पड़ता था। इस प्रकार शिक्षा का प्रचार बढ़ने लगा। १८३५ में कलकत्ते में एक मेडीकल कालिज खोला गया तथा रुड़की में इन्जीनियरिंग कालिज की स्थापना कर दी गई। इसी समय हाई स्कूलों का उत्कर्ष हुआ। अंग्रेजी शिक्षा की मांग दिन प्रतिदिन अधिकाधिक बढ़ती गई।

भारत में पाश्चात्य सभ्यता का प्रचार और प्रभाव बढ़ने लगा। भारतीय नवयुवकों ने अपनी संस्कृति के प्रति घृणा प्रदर्शित करनी आरम्भ कर दी। उन्होंने योरोपीय वेश भूषा, विचार नीति, रिवाज अपनाने आरम्भ कर दिये और मानसिक दासता के शिकार होने लगे। इस प्रकार भारतीय मौलिकता और स्वतन्त्रता का अन्त होने लगा और मैकाले की भविष्य वाणी पूरी उतरने लगी। इस प्रकार अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार और प्रसार से अनेकों दोष उत्पन्न हुये परन्तु साथ ही साथ कुछ लाभ भी हुये। भारत में थोड़े ही समय पश्चात पुनर्जागरण की एक नवीन भावना का उदय हुआ और भिन्न भिन्न क्षेत्रों में प्रगति के लक्षण विद्यमान होने लगे। पाश्चात्य विचार धारायें भारत के आधुनिकरण करने में अपना योग प्रदान करने लगीं। देश में राष्ट्रीय विचार शक्ति प्राप्त करने लगे और लोगों के दिलों में विदेशी दासता से छुटकारा पाने की तीव्र इच्छा होने लगी।

१८५४—१८८२

समय के साथ साथ अंग्रेजों का ध्यान भारत में शिक्षा के प्रसार की ओर [illegible] गया। १८५४ में बोर्ड आफ कन्ट्रोल के सभापति चार्ल्स वुड ने एक नवीन शिक्षा योजना बनाई और डाइरेक्टरों को इस योजना के अनुसार कार्य करने को [illegible]। इसका उद्देश्य अंग्रेजी तथा देशी भाषाओं की उन्नति करना था। इतनी [illegible] पूर्ण योजना अब तक प्रस्तुत न की गई थी। शिक्षा क्षेत्र में यह युग [illegible] [illegible] गई है। इसके अनुसार इस प्रकार कार्य करना था। १—देश के प्रमुख स्थानों [illegible] लिए विद्यालयों की स्थापना की जाये। २—अध्यापकों की Training [illegible] व्यवस्था की जाये। ३—प्रत्येक प्रान्त में एक शिक्षा विभाग बनाया जाये और [illegible] [illegible] एक डायरेक्टर द्वारा हुआ करे। ४—सरकारी कालिज तथा [illegible] [illegible]। ५—नवीन मिडिल स्कूलों की वृद्धि की जाये। [illegible] [illegible] विद्यार्थियों को छात्र वृत्ति [illegible]।

के अन्य विभागों की तरह कार्य करने लगा। धीरे धीरे शिक्षा क्षेत्र भी पूर्ण रूप सरकारी संरक्षण में आ गया और इसका महत्व भी अन्य विभागों की तरह बढ़ने लगा

इस समय शिक्षा का विभाजन तीन श्रेणियों में हो गया था। प्रथम श्रे में प्राथमिक शालायें थी। इनमें दो प्रकार की परीक्षा थीं निम्न प्राथमिक परी तथा उच्च प्राथमिक परीक्षा। प्रथम में लिखना, पढ़ना सिखाया जाता था। दि में भूगोल, इतिहास का ज्ञान कराया जाता था।

इसके ऊपर वर्नाक्यूलर विद्यालय थे। इनमें शिक्षा का माध्यम हिन्दी उर्दू था। इनमें विश्व विद्यालयों के लिये विद्यार्थी तैयार किये जाते थे। इनमे ऊप इन्टर कालिजों की व्यवस्था की गई थी। सब से ऊपर विश्व विद्यालयों की स्थापना गई थी। आरम्भ में यह केवल परीक्षा लेने का ही कार्य करती थी। इनसे कालि का सम्बन्ध कर दिया गया था। लन्दन विश्व विद्यालय के ढंग पर १८८७ में बम्ब मद्रास, कलकत्ता में विश्व विद्यालय स्थापित किये गये। १८८२ में पंजाब विश विद्यालय तथा १८८७ में इलाहाबाद विश्व विद्यालय की स्थापना कर दी गई। इ का उच्च अधिकारी उपचान्सलर तथा चान्सलर बनाये गये और माली तथा अन्य शास सम्बन्धी मामले एक सीनेट को सौंप दिये गये। इस काल में विश्व विद्यालयों क्षेत्र में अच्छी उन्नति हुई। फिर भी शिक्षा क्षेत्र में अब भी कई कमियाँ थी। कलात्मक शिक्षा का उचित प्रबन्ध न था। मेडिकल कालिजों का अभाव महसूस हो रहा था। जो थे वह नाकाफी थे।

१८८२—१६०१

१८८२ में लार्ड रिपन ने शिक्षा की ओर अधिक ध्यान दिया। उसने एक कमीशन की नियुक्ति की और उसका सभापति सर० हन्टर को बनाया। इस कमीशन का यह उद्देश्य था कि यह देखे कि वुड योजना पर कहां तक अमल किया गया है। और शेष बातों पर कहां तक और किस प्रकार अमल किया जा सकता है। तथा प्राथमिक शिक्षा को किस प्रकार उन्नत बनाया जाय। इस कमीशन ने यह सुझाव दिया कि देशी भाषाओं को उन्नत किया जाय और शिक्षा प्रसार के लिये व्यक्तिगत प्रयत्नों पर निर्भर रहा जाये।

इस छोटे से समय में उच्च शिक्षा का अच्छा प्रसार हुआ। अनेकों स्नातक बन गये और सरकारी नौकरियों की तलाश करने लगे जो अच्छे पद प्राप्त नहीं कर पाते थे। असन्तुष्ट हो कर विद्रोही तत्वों का काम करते थे। उच्च शिक्षा तेजी से फैल रही थी। इसी युग में S. L. C. परीक्षा की व्यवस्था की गई और कुछ स्कूलों में हस्त कला की शिक्षा दी जाने लगी। १८८२ के बाद म्यूनिसिपैलिटी तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों की स्थापना कर दी गई और प्राथमिक शिक्षा का संचालन इन को

समाज में उचित स्थान प्राप्त कर सकें ७—प्रथम डिग्री कोर्स ३ वर्ष का रखना ८—बह शिक्षा केवल प्राथमिक तथा कालिजों में ही रहनी चाहिये माध्यमिक स्कूलों में नहीं ९—शिक्षा का स्तर ऊंचा उठाया जाय १०—मौजूदा परीक्षा प्रणाली स्थान पर 'objective test' चालू किये जांय। अभी तक इन सुझावों के पूर्ण रूप से अमल नहीं किया गया है।

१९१९ के बाद माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं की बड़ी वृद्धि हुई और शिक्षा अधिक प्रसार हुआ परन्तु उसका स्तर बेहद निम्न श्रेणी का रह गया। इस स्कूलों में कढ़ाई, बुनाई, जिल्द साजी, बढ़ई इत्यादि कार्य आरम्भ हुये परन्तु इनकी भावना विशेष रूप से पुरानी ही रही और स्वास्थ तथा व्यावहारिक ज्ञान और अब भी अधिक ध्यान नहीं दिया गया। इस दशा में अभी बहुत कार्य रह गया है।

१९४४ में सरकार ने एक समिति नियुक्त की। सर जान सार्जेण्ट को इस समिति का अध्यक्ष बनाया गया। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट बड़े ही विस्तार के प्रस्तुत की और प्रत्येक प्रकार की शिक्षा की ओर ध्यान आकर्षित कराया। प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्व विद्यालय तक की शिक्षा में सुधार सुझाये गये। ...क शिक्षा, औद्योगिक शिक्षा, कलात्मक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, गूंगे, बहरे तथा अन्धों शिक्षा पर बल दिया गया है। सरकार ने इस नवीन योजना को स्वीकृति दे दी परन्तु अर्थ के अभाव के कारण उस पर अमल नहीं किया जा सकता है।

प्राथमिक शिक्षा—इस शिक्षा में बड़ी वृद्धि हुई है और हो रही है। ग्राम ग्राम में प्राथमिक पाठशालायें खोली जा रही हैं। गांधी जी की बेसिक शिक्षा को पाठशालाओं में उचित स्थान दिया जा रहा है। जगह जगह निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध हो रहा है। इन पाठशालाओं में प्रशिक्षित अध्यापक भेजे जा रहे हैं। प्रान्तीय सरकार ने इन पाठशालाओं के निरीक्षण का उचित प्रबन्ध किया है और दिनोदिन प्राथमिक शिक्षा का प्रसार वृद्धि कर रहा है।

औद्योगिक शिक्षा—इस क्षेत्र में अधिक कार्य नहीं हो पाया। भारत में जो ...ये संस्थायें इस प्रकार की स्थापित की गईं वह इतनी कम हैं कि नगण्य के बराबर ...। आवश्यकता को अनुभव करके सरकार ने १९३६ में इंगलैण्ड से दो विशेषज्ञों ...ो बुलाकर एक समिति की नियुक्ति की जिसका अध्यक्ष एबट को बनाया गया। ...न्होंने कीमती प्रस्ताव प्रस्तुत किये। अब भारतीय सरकार विशेष रूप से इस दिशा में कार्य कर रही है। नई नई संस्थायें स्थापित की जा रही हैं। विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां देकर विदेशों में भेजा जा रहा है ताकि वह वहां से लौट कर देश में औद्योगिक शिक्षा संस्थायें स्थापित कर देश के निर्माण में सहायता पहुंचा सकें।

करने के विचार से अन्य विश्व विद्यालयों ने अपनी कमैटियां बनाईं और रिपोर्टों पर शिक्षण विश्व विद्यालय स्थापित किये गये तथा इन्टर और इ परीक्षाओं के लिये बोर्डों का निर्माण किया गया ।

१९१९ में जो नये सुधार किये गये उनके अनुसार शिक्षा विभाग प्र दे दिया गया और अब उसका सन्चालन एक मन्त्री द्वारा होने लगा। इसी अनेकों राजनैतिक कारणों से विश्व विद्यालयों की संख्या तेजी से बढ़ी। १९३ यह संख्या १४ हो गई। अलीगढ़ विश्व विद्यालय साम्प्रदायिकता के कारण गई। बनारस विश्व विद्यालय के पीछे धार्मिकता काम कर रही थी। पटना, अ आंध्र विश्व विद्यालय भी इसी काल में स्थापित किया गया। टैगोर ने शान्ति में विश्व भारती की स्थापना कर डाली। इस प्रकार अल्प काल में उच्च शि अभूत प्रगति की गई। यह राजनैतिक चेतना के महान लक्षण थे।

माध्यमिक तथा प्राथमिक शिक्षा में भी वृद्धि हुई और स्थानीय संस्था प्राथमिक शिक्षा की उन्नति करने तथा निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करने के दिये गये।

१९२७ में भारत में शिक्षा की प्रगति की जाँच करने के लिये In Statutory Commission बनाया गया। इस कमीशन ने हर्टाग (Hert के सभापतित्व में एक कमैटी बनाई, परन्तु उसकी रिपोर्ट के अनुसार कार्य न हो

१९३५—१९५२

इस युग में भी अनेकों नवीन विश्व विद्यालयों की स्थापना हुई जैसे काश्मीर, गुजरात, राजस्थान, उत्कल, गोहाटी, पूना इत्यादि। अनेकों युवक शिक्षा प्राप्त कर इन विश्व विद्यालयों से निकलने लगे। परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से यह नवयुवक देश की आवश्यकताओं के अनुसार न सिद्ध हुये। ये हाथ के को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इस कमी के अतिरिक्त कुछ विश्व विद्यालयों छोड़ कर कहीं भी अन्वेषण तथा विज्ञान की वह उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त न सकी जिसकी भारत को आवश्यकता थी। इसलिये आज़ादी प्राप्त होने के पश्चात् भारतीय सरकार ने १९४७ में सर राधा कृष्णन के सभापतित्व में एक यूनिवर्सिटी कमीशन स्थापित किया। इस कमीशन ने निम्नलिखित सुझाव दिये।

१–शिक्षा में भारतीय भावना को ही भरा जाय २–विश्व विद्यालयों में विद्यार्थी लिये जांय जो उच्च स्तर के सिद्ध हों देश के लिये औद्योगिक शिक्षा प्रबन्ध किया जाय ३–ग्राम विश्व विद्यालयों की स्थापना की जाय ... ग्राम सुधार हो सकें ४–विद्यार्थियों और अध्यापकों में अधिक सम्पर्क करने Tetorial Classes बनाई जांय ५–हिन्दी का अध्ययन अनिवार्य किया ... ६–अध्यापकों की वेतन वृद्धि की जाय ... अच्छी प्रकार जीवन व्यतीत कर ...

रना चाहा और गुरुकुलों की स्थापना आरम्भ की। इसके अतिरिक्त देश प्रेमियों अन्य स्वतन्त्र संस्थायें भी स्थापित की जिनमें अति अधिक प्रसिद्ध ये हैं। टैगोर शान्तिनिकेतन, वृन्दावन का प्रेम महाविद्यालय, गुजरात में दक्षिण मूर्ति ने अपने नवन्य। योग किये, डाल्टन प्लान, मौण्टेसरी प्लान पर शिक्षा चलाई गई।

अन्त में गांधी जी ने अपनी वर्धा शिक्षा योजना प्रस्तुत की। यह देश की आवश्यकताओं के अनुसार बनाई गई थी। इस में शिक्षा किसी हस्त कला के द्वारा दी जाती है। यह अनेकों प्राथमिक पाठशालाओं में चालू की गई है।

इस समस्त अध्ययन से यह प्रगट हो जाता है कि अंग्रेजी शासन काल में शिक्षा की वृद्धि उस तेजी से नहीं हुई जिस से देश में अधिक शिक्षित लोग होते परन्तु फिर भी इस शिक्षा में अच्छा कार्य हुआ। इस शिक्षा ने देश में एक नवीन चेतना को जन्म दिया जो पुनर्जागरण का कारण बनी। देश में अब तक की संकीर्णता का अन्त हो गया और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक नवीन स्फूर्ति का संचार तथा विकास हुआ। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में एक नवीन आन्दोलनकारी जागृति उत्पन्न हुई। पाश्चात्य शिक्षा ने भारत को आधुनिकता की ओर बढ़ने में बड़ी सहायता पहुंचाई। इस शिक्षा द्वारा योरप के विचारों भारत में प्रसारित हो राष्ट्रीयता की भावना को सजग कर एक राष्ट्रीय आन्दोलन खड़ा किया जिस ने गांधी जी के नेतृत्व में विदेशी सत्ता का अन्त कर दासता की बेड़ियों को तोड़ दिया।

इस राष्ट्रीय आन्दोलन के नेतागण अधिकतर वही लोग थे जिन्होंने योरोपीय विचारों का अध्ययन कर अपने विचारों का निर्माण किया था। अंग्रेजी युग की शिक्षा ने भारत को जहां कुछ हानियां पहुँचाई हैं वहां उसने अपनी अलौकिक देन भी प्रदान की है।

1959

Q Latter half of the 19th centuary witnessed religeous and social reforming movements which radically changed the life of Hindus'. Comment on this statement.

प्रश्न—'उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध ने धार्मिक और सामाजिक सुधार वादी आन्दोलनों को देखा है जिन्होंने हिन्दुओं के जीवन को पूर्णतया बदल दिया' इस कथन का विवेचन करो?

उत्तर—१८ वीं शताब्दी के अन्त की ओर आते आते अंग्रेजी सत्ता ने भारत में अपने पैर दृढ़ता से जमा लिये थे और धार्मिक प्रचारकों ने उत्साह पूर्ण प्रयत्नों द्वारा अंग्रेजी शिक्षा और ईसाई धर्म प्रचार आरम्भ कर दिया था योरोपीय

प्रौढ़ शिक्षा—प्रौढ़ शिक्षा की ओर भारतीय तथा राज्यकीय सरकार प्रयत्न कर रही है। राजनैतिक, सामाजिक तथा बौद्धिक दृष्टिकोणों से प्रौ की बड़ी ही आवश्यकता अनुभव की जा रही है। प्रजातन्त्र को सफल लिये देश में सब को शिक्षित होना बड़ा ही आवश्यक है। ग्रामों में ऐसे स स्थापना की गई। जहां किसानों को रात के समय शिक्षा देने का प्रबन्ध कि अब भी इस दिशा में कार्य किया जा रहा है।

स्त्री शिक्षा—मुस्लिम युग में परदे के कारण स्त्री शिक्षा प्रायः मृत हो गई। इस ओर समाज ने ध्यान देना ही बन्द कर दिया। स्त्री समाज गया और स्त्रियों का नैतिक पतन होने लगा। परन्तु जब भारत में पाश्चात्य के कारण पुनर्जागरण हुआ तो स्त्री शिक्षा की ओर भी ध्यान गया और इस में भी कार्य आरम्भ हुआ। सर्व प्रथम ईश्वरचन्द्र विद्यासागर तथा सरकार के सदस्य श्री वाटर बेथुन के प्रयत्नों से १८४९ में लड़कियों के लिये एक स्कूल किया गया। हालांकि १८५४ की वुड योजना में स्त्री शिक्षा की सिफारिश थी परन्तु फिर भी सरकार इस ओर से उदासीन ही बनी रही। १८७० रकम कन्या पाठशालाओं के लिये दी गई। फिर लार्ड रिपन के समय में इस में कार्य हुआ और सरकार की ओर से और अधिक सहायता प्रदान की जाने और नवीन स्कूल भी खोले गये।

सरकारी प्रयासों के अभाव में भी सुधारवादी संस्थाओं ने स्त्री शिक्षा कार्य किया। ब्रह्म समाज के केशव चन्द्र सैन, शशिपद बनर्जी, श्रीमति बोस ने महिला शिक्षा के लिये उत्साह पूर्ण काम किया। उन्होंने 'महिला', 'भारत पत्रों द्वारा स्त्री शिक्षा का प्रचार किया। आर्य समाज ने अनेकों कन्या गुरु विद्यालयों, सेवा सदन, महिला विद्यापीठ की स्थापना की। दक्षिण शिक्षा स भी स्त्री शिक्षा के प्रचार और प्रसार में बड़ा योग दिया। भण्डारकर के प्रया १९१६ में महिला विश्व विद्यालय की नींव डाली गई। इस प्रकार भिन्न संस्थाओं द्वारा स्त्री शिक्षा के लिये प्रयास किये जाते रहे हैं। इन प्रयासों का प हुआ है कि नगरों में महिलाओं की शिक्षा वृद्धि हुई है। परन्तु अभी तक ग्रा लड़कियों की शिक्षा का कोई उचित प्रबन्ध नहीं हो पाया है।

अंग्रेजी शासन काल में विद्या के क्षेत्र में जो भी वृद्धि हुई उस पर नि छाप रही। आरम्भ में इस नवीन शिक्षा ने भारतीय नवयुवकों को विदेशी दिया। वह भारतीयता से दूर हटते चले गये और प्रत्येक विदेशी वस्तु से प्रेम लगे। अंग्रेजी साम्राज्य को दृढ़ करने के लि बाबूओं की एक सेना तैयार होने इस शिक्षा ने देश काल की आवश्यकताओं की ओर से आंखें बन्द करलीं। भावना से प्रेरित होकर आर्य समाज ने प्रथम बार वैदिक शासन प्रणाली को अ

इस प्रकार हिन्दु धर्म और समाज दोनों में ही सुधारवादी आन्दोलनों का प्रादुर्भाव हुआ। इसके भिन्न भिन्न कारण थे परन्तु सबसे प्रभावशाली कारण उस समय का पुनर्जागरण था। इस नवीन विचार धारा ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया। धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों पर नवाभ्युत्थान की छाया पड़ी। जैसे योरप में नवाभ्युत्थान के पश्चात् सुधारों की एक सशक्त धारा ने प्रवाहित होकर योरप के समस्त जीवन को झकझोर कर उथल पुथल कर दिया था और जीवन के दृष्टिकोणों को ही परिवर्तित कर दिया था। इसी प्रकार भारत में भी पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क के कारण प्रथम तो नवाभ्युत्थान उत्पन्न हुआ और इसके पश्चात् सुधारवादी आन्दोलनों की एक बाढ़ सी आई। जिसने जीवन के दृष्टिकोणों को बदला। सामाजिक तथा धार्मिक कुरीतियों का दमन किया। लोगों के मस्तिष्क से कूपमण्डूकता और संकुचितता निकाली और उन के स्थान पर विशालता और स्वतन्त्रता की छाप लगाई। लोगों का ध्यान उनके अतीत की ओर कराया और उनको बताया कि उनका अपना धर्म, उनकी अपनी संस्कृति कितनी महान हैं, उनका प्राचीन इतिहास कितना गौरवपूर्ण रहा है। इन विचारों से प्रभावित होकर भारतीय जीवन में एक आधुनिकता आई और वह प्रगति की ओर मुड़ा। भारतीय नवाभ्युत्थान और सुधारवादी आन्दोलनों का यही महान कार्य था जिसने भारतीय इतिहास की रूप रेखा को ही परिवर्तित कर दिया।

'राजा राममोहनराय और उनके सुधारवादी आन्दोलन'

राजा राम मोहन राय प्रथम भारतवासी थे जिन्होंने भारत में सुधारवादी आन्दोलनों का सूत्रपात किया। वह आधुनिक भारत का अग्रदूत और पिता सिद्ध हुआ। उस महान व्यक्ति का कार्य क्षेत्र कितना विशाल और विस्तृत था यह देखकर विस्मय होता है।

वे राधा नगर के एक ब्राह्मण जमींदार रामकान्त राय के पुत्र थे। उनका जन्म १७७२ में हुआ था उन्होंने संस्कृत, बंगला, अरबी तथा फारसी और अंग्रेजी भाषाओं का अध्ययन किया और रंगपुर की कलक्टरी में एक साधारण क्लर्क हो गये और फिर धीरे धीरे जिले की दीवानगिरी उनको मिल गई। इसी बीच में उन्होंने लैटिन तथा ग्रीक का अध्ययन किया और इसाई धर्म की पुस्तकों का गहन अध्ययन किया। उन्होंने हिन्दु धर्म के ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य धर्मों के ग्रंथों का भी अच्छा अध्ययन किया था। वह लोकहित की भावना से इतने ओत प्रोत हो चुके थे कि जब उनको यह अनुभव हुआ कि सरकारी काम उनके जन सेवा के कार्यों में बाधक होता है तो उन्होंने सरकारी पद त्याग दिया और १८१४ में स्थाई ... में रहकर लोक हित के कार्यों में जुट गये।

संस्कृति पूर्ण वेग के साथ भारतीयों को आकर्षित करने लगी थी। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यह वह समय था जब समाज निम्नतम स्तर पर पहुँच चुका था। नैतिकता भी शिथिल पड़ चुकी थी सृजनात्मक शक्तियों का ह्रास हो चुका था। प्रगतिशील तथा व्यापक वातावरण का अभाव हो गया था। लोग अपने अतीत की महानताओं को भूल रहे थे और उन्होंने उन महानताओं से प्रेरणा लेनी बन्द करदी थी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उदासीनता व्यापक रूप से फैल रही थी। किसी दिशा में भी उत्साह और प्रगति दिखाई न पड़ती थी। समाज का एक विशाल वर्ग ऐसा था जो रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, व्यर्थ कर्मकाण्डों तथा कुरीतियों में फंसा रहना ही श्रेयस्कर समझता था। कूप मण्डूकता को ही लोग धर्म समझ बैठे थे। परिवर्तन के यह कट्टर विरोधी थे इन कट्टर पन्थियों का गिरोह प्रगति को जकड़े हुए था।

इसी समय ब्रिटिश सत्ता की स्थापना, ईसाई धर्म प्रचारकों के कार्य और पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क के कारण देश में एक नवीन विचार धारा के लोग उत्पन्न हो रहे थे। यह वह लोग थे जो पाश्चात्य सभ्यता में ही सब गुणों का भण्डार देखते थे। उनको भारतीय सभ्यता की ओर से पूर्ण निराशा हो चुकी थी वह समझते थे कि हिन्दू धर्म अर्थहीन होचुका है। उसमें सुधारों की क्षमता भी शेष न रह गई है उसकी सृजनात्मक शक्तियां नष्ट हो चुकी हैं। यह वर्ग और भी भारतीय वस्तुओं और भारतीय दृष्टिकोणों से घृणा करने लगा था। अनेक प्रसिद्ध बङ्गाली ईसाई धर्म की ओर झुकने लगे थे। कृष्णमोहन बैनर्जी तथा लाल बिहारी दे ऐसे ही हिन्दू थे जिन्होंने ईसाई धर्म ग्रहण कर विदेशी संस्कृति को अपना लिया था।

इन दो विरोधी विचार धाराओं ने धर्म और समाज दोनों का ही अहित किया और विनाशकारी प्रवृत्तियों को बढ़ावा दिया। हमारा जीवन अन्धकार मय बन गया। ऐसे समय में हिन्दू धर्म तथा समाज को बचाने के लिये तीसरी स्वस्थ और प्रगतिशाली विचार धारा का उदय हुआ। इसने भारतीयता के दृष्टिकोण को ऊपर उभारा और ऐसे लोग उत्पन्न हुए जिन्होंने भारत की प्राचीन महानता से प्रेरणा लेनी आरम्भ की। इन्होंने वर्तमान कुरीतियों का दमन कर सुधारों का युग आरम्भ कर दिया। इनमें राजाराम मोहनराय का नाम प्रथम श्रेणी में सबसे ऊपर आता है वह भारतीयता की महानता प्रदर्शित करने में सबसे आगे थे वे विशाल दृष्टिकोण के स्वामी थे। उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति के अच्छे दृष्टिकोणों को अपनाने में भी अधिक संकोच नहीं किया। उनकी महान तथा प्रमुख देन थी कि भारतीय समाज सदा ही जीवित रहेगा और इन्होंने जिस विचार धारा को उत्पन्न किया उसका प्रवाह चलता ही रहा।

कानूनी क्षेत्र भी उनकी दृष्टि से बचा हुआ न था। उन्होंने दीवानी तथा फौजदारी के कानूनों का संग्रह करने का समर्थन किया। ज्यूरी प्रथा के प्रयोग में लाने का उद्योग किया। जजों तथा मैजिस्ट्रेटों के पदों को पृथक करने पर बल दिया। न्यायालयों में फारसी के स्थान पर अंग्रेजी भाषा को स्थान देने पर जोर दिया। इस क्षेत्र में भी वह बड़े ही दूरदर्शी सुधारक सिद्ध हुए। उन्होंने मुद्रणालयों पर लगे प्रतिबन्धों का विरोध किया और इस विषय में आवेदन पत्र भी सरकार में प्रस्तुत किये। इस प्रकार उन्होंने विचारों की स्वतन्त्रता को समाज प्रगति के लिये अनिवार्य बताया।

वह पाश्चात्य शिक्षा के महान समर्थक थे। उनके प्रयत्नों से कलकत्ते में कई शिक्षा संस्थायें स्थापित की गई। 'हिन्दू कालिज', वेदान्त कालिज उनके प्रयत्नों के ही फल थे। उन्होंने योरोपीय विज्ञान के अध्ययन की ओर ध्यान दिया और लोगों में पाश्चात्य संस्कृति के गुणों का प्रचार किया। उन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में भी अद्भुत कार्य किया। उन्होंने बङ्गला भाषा का सर्व प्रथम साप्ताहिक पत्र 'संवाद कौमुदी' १८१६ में निकालना प्रारम्भ किया। इसके पश्चात फारसी का 'मिरातुल अखबार' भी निकालने लगे। इस प्रकार उन्होंने साहित्य की सेवा भी की। राजनैतिक क्षेत्र में उनका अपना एक विशेष दृष्टिकोण था वह सरकार के साथ योग की नीति बरतना चाहते थे। और सरकार की सहानुभूति को प्राप्त कर राजनैतिक सुधार चाहते थे। वह वैधानिक आन्दोलन में विश्वास रखते थे। इस प्रकार वह राजनैतिक क्षेत्र में भी अग्रगण्य प्रवृत्तक थे। वह राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के मूल्य को भली भांति समझते थे और इसकी प्राप्ति के लिये उनमें बड़ा उत्साह था। उनके सम्पर्क में आने वाले एक पादरी ने इस प्रकार लिखा है "स्वतन्त्रता की लगन उनकी अन्तरात्मा की सब से जोरदार लगन थी और वह प्रबल भावना उनके धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक सभी कार्यों में फूट फूटकर टपकी पड़ती थी" राजा राम मोहन राय एक विलक्षण बुद्धि के व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी दूरदर्शिता से वह कार्य किये जो आगे चलकर सम्मान का कारण बने उन्होंने प्रथम बार सामाजिक प्रतिबन्धनों को तोड़कर समुद्र यात्रा की और इङ्गलैंड गये वहां पर अपने भाषणों तथा लेखों द्वारा भारतीय दृष्टिकोण अंग्रेजों के सम्मुख प्रस्तुत किया। पाश्चात्य संस्कृति से अधिक जानकारी प्राप्त की और भारत के प्रति फैली हुई गलत बातों का खण्डन किया इस प्रकार पश्चिम में भारत का मान बढ़ाया।

राजा राम मोहन राय का महत्व बताते हुए प्रोफेसर जकरिया ने अपनी पुस्तक Renascent India में लिखा है—"राजा राम मोहनराय और उनका वह ब्रह्मसमाज ही हिन्दु धर्म, समाज या राजनीति के क्षेत्र में समुद्भूवित उन सभी सुधार मूलक आन्दोलनों की मुख धाराओं के मूलश्रोत के रूप में हमें

वह प्रथम भारतीय थे जिन्होंने यह अनुभव किया कि देश की निराशाप्र स्थिति का अन्त सुधारों द्वारा ही किया जा सकता है। इस विचार से प्रेरित होकर उन्होंने १८१४ में 'आत्मीय सभा' नामक संस्था की स्थापना की। १८१६ में 'यूनिटेरियन कमैटी' तथा १८२२ में ब्रह्मसमाज की स्थापना कर डाली। ब्रह्मसमाज के सिद्धान्त बड़े ही उच्च कोटि के थे। ईश्वर एक है सब व्यक्ति आपस में भाई भाई हैं और समान हैं। इस समाज ने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। मूर्ति पूजा का खण्डन किया यज्ञ तथा बलि प्रथा को विनाशकारी बताया। इसने सब धर्मों के प्रति श्रद्धा का आदेश दिया सब धर्मों के सद्गुणों को अपनाने की प्रेरणा दी। जल्दी ही ब्रह्मसमाज की लोकप्रियता बढ़ गई और इसके सिद्धान्तों का प्रभाव बढ़ गया। राजाराम मोहनराय की मृत्यु के पश्चात् ब्रह्मसमाज की बागडोर केशवचन्द्र सैन तथा देवेन्द्रनाथ टैगोर के हाथ में आई इन्होंने समाज के कार्य को बड़े प्रयास से जारी रक्खा परन्तु आगे चलकर सिद्धान्तिक मत भेदों के कारण ब्रह्मसमाज दो शाखाओं में बंट गया। 'आदि ब्रह्मसमाज' जिसको देवेन्द्रनाथ टैगोर ने जारी रक्खा तथा साधारण ब्रह्मसमाज' जिसको केशव चन्द्रसेन ने चलाया। केशव चन्द्रसेन ने अपने विचारों को फैलाने के आशय से भारत भ्रमण किया जिसके फल स्वरूप बम्बई में 'प्रार्थना समाज' तथा मद्रास में वेदसमाज की स्थापना की गई। इस प्रकार राम मोहन राय का बोया हुआ बीज बढ़कर फलने फूलने लगा और सामाजिक सुधारों का युग आरम्भ हो गया। भारत के भिन्न भिन्न भागों में सुधारों की सशक्त लहर प्रवाहित होने लगी।

राममोहन राय का कार्य क्षेत्र ब्रह्मसमाज तक ही सीमित न था उनका कार्य क्षेत्र तो बड़ा ही विशाल और विस्तृत था। राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक आर्थिक, साहित्यिक ऐसा कोई भी क्षेत्र न था जिसमें इस महान व्यक्ति की छाप न लगी हो। उन्होंने जाति प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा। सती प्रथा को विनाशकारी बताया और निरन्तर प्रयासों से ही सरकार को बाध्य कर दिया कि वह ऐसा कानून बनाये जिसमें सती प्रथा का निषेध हो। फलस्वरूप विलियम बैन्टिङ्क ने १८२६ में कानून द्वारा सती प्रथा गैर कानूनी करार दे दी गई। उन्होंने विधवा विवाह का भी समर्थन किया। स्त्री शिक्षा की ओर भी उनका ध्यान गया अन्तर्जातीय विवाहों पर भी उन्होंने अपने विचार प्रगट किये। उन्होंने हिन्दु कानून में परिवर्तन कराने के लिये भी प्रयत्न किये। कृषकों की दशा उन्नत बनाने के लिये भूमि कर में कमी कराने के सुझाव रक्खे। दमनकारी भूमि कानूनों के विरुद्ध आवाज उठाई और आइराट सलैक्ट कमैटी को स्मृति पत्र भेजा। उन्होंने सरकार से अनुरोध किया कि वह भारतीयों को शासन तथा सेना में अधिक से अधिक तथा ऊंचे से ऊंचे पदों पर रक्खें।

और इसके विचारों को प्रचारित करने के उद्देश्य से एक 'सुबोध पत्रिका' निकाली गई। इस संस्था के सदस्यों का अधिकतर ध्यान सामाजिक समानता उत्पन्न करने की ओर लगा रहा। इन्होंने अनाथालय, विधवाश्रम, रात्रि-पाठशालायें जैसी उपयोगी संस्थायें स्थापित कीं। अन्तर जाति-विवाह का प्रचार किया। जाति भेद भाव को दूर करने के प्रयत्न किये। अछूतों की दीन दशा को सुधारने के विविध प्रयत्न किये।

यह संस्था न तो ईसाई धर्म का समर्थन ही करती थी और न हिन्दु धर्म से पृथक होकर कोई अलग धर्म चलाना चाहती थी। यह कोरी सुधारवादी संस्था थी इसने महाराष्ट्र के सन्तों के सिद्धान्तों से प्रेरणा ली थी। इसके सदस्य किसी भी धर्म के अनुयायी हो सकते थे। अन्त तक उनका संगठन दृढ़ रूप से कायम रहा। परन्तु अधिक समय तक न चलकर इसका स्थान दूसरी संस्थाओं ने ले लिया। इस संस्था को प्रभावशाली बनाने में अधिक हाथ महादेव गोविन्द रानाडे का था।

उनका जन्म १८४२ में नासिक के एक ग्राम में हुआ था। एम. ए., एल एल. बी. की परीक्षा पास कर वह एलिफिन्सटन कालिज में अध्यापक हो गये और फिर बम्बई सरकार के Oriental translator बन गये और उन्नति करते करते बम्बई के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस बना दिये गये। यह बड़ी ही विलक्षण बुद्धि के विद्वान थे. उनका सम्बन्ध जीवन भर अनेकों सुधारवादी संस्थाओं से निरन्तर बना रहा वह देश प्रेम से ओत प्रोत थे। १८७१ में उन्होंने पूना में एक 'सार्वजनिक सभा' स्थापित की और उसका एक पत्र भी निकाला। वर्षों तक उनका सम्बन्ध बम्बई विश्वविद्यालय से रहा वह देश में समाज सुधार के साथ साथ औद्योगिकरण का समर्थन भी करते थे। उन्होंने साहित्यिक, राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में उत्साह पूर्ण कार्य किया।

उनके नेतृत्व में १८८४ में 'डकन एजुकेशन सोसायटी' कायम की गई। इसके सदस्यों ने ७५ रु० मासिक अल्प वेतन स्वीकार कर देश के युवकों को शिक्षा देने का बीड़ा उठाया। इस संस्था ने एक छोटे से परन्तु महत्वशाली स्कूल की नींव डाली जो आगे चलकर फर्ग्युसन कालिज के रूप में परिणित हो गया। इस सोसायटी के सदस्य गोखले, तिलक जैसे महान पुरुष थे। जिन्होंने आगे चलकर बड़े ही महान कार्य किये।

१९०५ में गोखले ने 'सोसायटी आफ सरवैन्ट्स आफ इण्डिया' नामक प्रसिद्ध संस्था की स्थापना कर डाली। इस संस्था का उद्देश्य समाज सुधार और देश सेवा के लिये नवयुवकों को तैयार करना था। इसके सदस्यों ने विविध क्षेत्रों में सुन्दर कार्य करके सोसायटी के उद्देश्यों की पूर्ति की। नारायण मल्हार जोशी

दिखाई देते हैं जिन्होंने पिछले सौ वर्षों में भारत को हिलाया और जगाया है औ
जिनके कारण इस देश के वर्तमान युग में ऐसा अद्भुत पुनरुत्थान हो पाया है
उनकी महानता दर्शाते हुए डा॰ टैगोर ने इस प्रकार लिखा है "राम मोहन रा
ही को भारतवर्ष के आधुनिक युग के उद्घाटन करने का अद्वितीय सम्मान प्रा
है" उनके कार्य महान थे। उनके विचार महान थे राष्ट्र प्रेम और समाज सेव
उनके जीवन के मूल उद्देश्य थे। उनका व्यक्तित्व सार्वभौमिक था। उन्होंने गिरत
हुई भारतीयता को ऊपर उठाया। भिन्न भिन्न प्रकार के आन्दोलनों का सूत्रपा
करके लोगों में नवीन शक्ति का सञ्चार किया धार्मिक तथा सामाजिक निराश
और उदासीनता का अन्त किया उन्होंने उस बढ़ते हुए प्रवाह को रोका जिसके
कारण अनेकों हिन्दु ईसाई बन रहे थे या बनने की सोच रहे थे। उन्होंने हिन्दु
धर्म की उन कुरीतियों पर कुठाराघात किया जो हिन्दु धर्म की दुर्बलता बन का
स्वयं हिन्दु धर्म की शत्रु सिद्ध हो रही थी। उन्होंने हिन्दु धर्म तथा हिन्दु समाज
की रक्षा की और उन सशक्त विचार धाराओं को उत्पन्न किया जिन के बल पर
हिन्दु समाज का आधुनिक यत्न हुआ और फिर यह आत्म गौरव के साथ सम्मान
का जीवन व्यतीत करने लगा।

राजा राम मोहन राय की इतनी अधिक सेवायें हैं कि उनका उल्लेख
करना साधारण काम नहीं, हाँ इतना कहा जा सकता है कि १६ वीं शताब्दी में
जो भी आन्दोलन चले उनका सूत्रपात उनके द्वारा ही किया जा चुका था। वह
सच्चे मायनों में देश के आधुनिक युग के पिता थे। वे ऐसी महान विभूति थे कि
जिन पर कोई भी देश या समाज जितना भी गर्व करे कम है भारत की महानता
इस एक व्यक्ति द्वारा ही पूर्ण रूपेण प्रदर्शित हो जाती है।

प्रार्थना समाज

पाश्चात्य विचारों से प्रभावित होकर महाराष्ट्र में 'प्रार्थना सभा' नामक
संस्था की स्थापना की गई परन्तु वह थोड़े समय पश्चात ही समाप्त हो गई।
इसके पश्चात बम्बई में १८६७ में 'प्रार्थना समाज' नामक संस्था की नींव डाली
गई। यह एक आस्तिक संस्था थी। इसके सिद्धान्त आधुनिक विचार धाराओं से
प्रभावित होकर निर्धारित किये गये थे। यह संस्था केशवचन्द्रसेन के प्रभाव का
प्रत्यक्ष फल था। इसके मुख्य उद्देश्य इस प्रकार थे—१-विवेक पूर्ण उपासना
करना, २—जाति प्रथा का विरोध करना, ३—बालविवाह का बहिष्कार करना,
४—विधवा विवाह का समर्थन करना, ५—स्त्री शिक्षा का प्रचार तथा प्रसार
६—अन्य सामाजिक कुरीतियों का विनाश कर समाज का सुधार करना।

इस संस्था ने समाज सेवा का बेड़ा उठाया और इसको
अच्छा प्रोत्साहन मिला। इसके कार्यकर्ताओं के लिये रात्रि

ने 'सोशल सर्विस लीग' तथा 'आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस' के
श्रमिकों की हीन दशा को सुधारने के प्रयत्न किये । इसी प्रकार दूसरे
हृदयनाथ कुंजरू ने इलाहाबाद में 'सेवा समिति' की नींव डाली । श्रीराम ब
द्वारा 'सेवा समिति' से 'स्काउट्स एसोसियेशन' का सूत्रपात हुआ । ठक्कर
टक्कर द्वारा भीलों की दशा सुधारने का आन्दोलन चलाया गया ।

इस प्रकार इस सोसायटी ने बड़ा ही उपयोगी कार्य किया और
सुधार में अपना मूल्यवान योग प्रदान किया ।

यह सुधारवादी कार्य भारत में पुनर्जागरण के प्रत्यक्ष परिणाम थे । पाश
सभ्यता के प्रभाव से जो नवीन विचार फैले उनके प्रति भारतीय प्रतिक्रि
सुधारवादी आन्दोलनों का रूप धारण कर लिया । इस प्रकार विविध क्षे
पुनर्जागरण अपने प्रभाव डालता रहा ।

आर्य समाज और दयानन्द सरस्वती

दयानन्द सरस्वती गुजरात की बड़ी ही विलक्षण देन थी । यह वि
आश्चर्य जनक प्रतिभा और अलौकिक बुद्धि का प्रदर्शन करती हुई आधुनिक
के निर्माण में वह सहयोग देती रही जिसके द्वारा भारत में फिर से सजीवता
स्फूर्ति आई और उसका गौरव बढ़ा । जिसके प्रयत्नों द्वारा उदासीन हिन्दु धर्म
से पुनर्जीवन प्राप्त कर सका ।

आधुनिक भारत के निर्माण करने वालों में दयानन्द सरस्वती का
स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाता है । उसने धार्मिक क्षेत्र में ही क्रान्ति उत्पन्न नहीं
अपितु सामाजिक क्षेत्र में भी दूरगामी प्रभाव उत्पन्न किये । १८७७ में आ
आर्य समाज की स्थापना की । इस धर्म की स्थापना कर दयानन्द ने प्राचीन
अर्वाचीन युगों में एक सम्बन्ध स्थापित किया ।

आर्य समाज ने वेदों की प्रमाणिकता को आधार बनाया । इस ने एक ई
की उपासना करने का आदेश दिया । वेदों का अध्ययन सबके लिये समान रूप
खोल दिया । जाति भेद भाव पर आघात किया । मूर्ति पूजा व्यर्थ बता कर
की । छुआछूत को समाज के हेतु विनाशकारी बताया । अवतार वाद के सिद्धा
का विरोध किया । बाल विवाह, पर्दा प्रथा बुरे बताये, स्त्री शिक्षा का प्रचार कि
आर्य समाज ने 'शुद्धि आन्दोलन' चलाया जिसका उद्देश्य उन हिन्दुओं को जो
समय मुसलमान या ईसाई बन गये थे । वापिस हिन्दू धर्म में लाना था । वा अ
धर्म वालों को हिन्दू बनाना था । इस आन्दोलन ने देश भर में बड़ा
उत्पन्न की और हिन्दू धर्म में नवीन स्फूर्ति का संचार किया ।

दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की हिन्दी में रचना की ।
सिद्धान्तों को वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध करने का प्रयत्न -

(रा) की उपासना करते हैं। इस संस्था के अनुयायी भ्रातृभाव का प्रचार करते हैं। र्मों को समान मानते हैं। भक्ति मार्ग के सन्तों के सिद्धान्त इनको प्रति हैं। इस संस्था ने जाति प्रथा को नष्ट किया, औद्योगिक करण की स्थापना शिक्षा का प्रचार किया। इसलिये इस संस्था ने राष्ट्र निर्माण के कार्य में गहत्व पूर्ण योग प्रदान किया है। यह संस्था आज भी प्रगतिशील बनी हुई है अपना कार्य सफलता पूर्वक चला रही है।

परिणाम

इन आन्दोलनों ने भारत के आधुनिक करण का महत्व पूर्ण कार्य किया। न की अनेकों कुरीतियाँ नष्ट हो गईं। सती प्रथा, शिशु हत्या जैसी अमानुषिक रोक दिये गये। बाल विवाह, बहु विवाह का रिवाज जाता रहा। विधवा ह का रिवाज प्रचलित हो गया। छूत छात के बन्धन ढीले पड़ गये। जाति की कठोरता कम हो गई। दास प्रथा का सदा के लिये अन्त कर दिया गया। आन्दोलनों ने राष्ट्रीयता की भावना को उत्पन्न किया और फिर उसको पित किया। धार्मिक क्षेत्र में एक नवीन जीवन संचार हुआ। भारतीयों ने धर्म के प्रति जो उदासीनता दिखाई थी उसका अन्त हो गया। अब तक आत्म गौरव की भावना का अभाव प्रतीत हो रहा था वह अभाव जाता रहा। नन्द तथा विवेकानन्द के महान प्रयत्नों से फिर से धार्मिक जगृति हुई और धर्म की प्राचीन महानता एक बार फिर विश्व के सामने प्रस्तुत की गई। कानन्द के वेदान्तिक भाषणों ने पाश्चात्य संसार को मूक कर दिया। दयानन्द प्रमाणों के सम्मुख ईसाई पादरी बगलें झांकने लगे और ईसाईयत का हुआ वेग एक दम रुक गया। इन आन्दोलनों ने यदि एक ओर सामाजिक र किये तो दूसरी ओर राष्ट्रीयता का प्रादुर्भाव हुआ और भारत का पूर्ण रूपेण निक करण हो गया।

इन १६ वीं सदी में हुए आन्दोलनों के महान प्रभावशाली परिणाम जिक क्षेत्र में ही विशेष रूप से हुए। अनेकों कुरीतियां जिन से समाज जर जर हो रहा था नष्ट कर दी गईं और विकारों के दूर होने से स्वस्थ समाज की पना हुई। सामाजिक विकार इतनी गहराई तक पहुँच चुके थे कि इन को नष्ट करने के लिये सबल आन्दोलनों की आवश्यकता पड़ी। इन सामाजिक त्रों में मुख्य सुधार इस प्रकार हुए—

१-सती प्रथा:—इस अमानुषिक प्रथा के अन्त करने का आन्दोलन राजा मोहन राय ने उठाया। उन्होंने घूम घूम कर इस प्रथा के विनाश का प्रचार या और जन मत को अपनी ओर मिलाया। इनके सबल प्रयत्नों के योग से विलियम बैंटिङ्क ने १८२९ में सती प्रथा गैर कानूनी घोषित कर दी।

विवेकानन्द की शिक्षाओं ने हिन्दुओं की भावनाओं को शक्ति प्रदा
और भारतवासियों को नवयुग की प्रेरणा प्रदान की। विवेकानन्द ने अपने गुरु
मृत्यु के पश्चात उनके नाम पर 'राम कृष्ण मिशन' नामक संस्था की स्थापना
इस संस्था का उद्देश्य धार्मिक तथा सामाजिक सुधार करना था। इस संस्था
अनेकों शाखायें भारत तथा अमरीका में स्थापित की गईं थी आज भी यह
समाज सेवा के कार्य में लगी हुई है। अस्पताल खोलना, आश्रम चलाना, अनाथ
स्थापित करना, विद्यालय तथा वाचनालय चलाना इत्यादि भिन्न भिन्न कार्य
यह संस्था समाज सेवा में लगी हुई है।

इस नवीन आन्दोलन ने नवीन परिस्थितियों के अनुकूल हिन्दू धर्म
परिवर्तन करने के सफल प्रयास किये और आधुनिक भारत निर्माण में महान
प्रदान किया। विवेकानन्द उन महान विभूतियों में अग्रगण्य हुआ जिन्होंने
जिन्होंने नवीन भारत की स्थापना में अपना कीमती योग प्रदान किया है।

'थियोसोफीकल सोसायटी'

१८७५ में अमरीका के न्यूयार्क नगर में एक रूसी महिला मैडम ब्लैवेट्स्की
और कर्नल आलकाट द्वारा थियोसोफीकल सोसायटी की स्थापना की गई।
१८८२ में इस संस्था का केन्द्र मद्रास को बना दिया गया और वहां से इस
कार्य चलाया जाने लगा। इसके सिद्धान्त सब धर्मों की मूलभूत एकता, विश्व
बन्धुत्व की भावना तथा आध्यात्मिक जीवन की महत्ता है। यह संस्था धार्मि
सहिष्णुता का प्रचार करती है। इस संस्था में उस समय एक नवीन शक्ति आ
जबकि इस की सभापति ऐनी बेसेंट बनाई गईं। इस संस्था के प्रचार ने हिं
धर्म की महानता पर प्रकाश डाला। इस संस्था ने समाज सुधार का भी बहु
कार्य किया। अछूतों के लिये सर्व प्रथम इसी संस्था ने पाठशालायें स्थापित कीं
इस का स्थापित किया हुआ सेंट्रल हिंदू कालिज बनारस विश्व-विद्यालय
परिवर्तित कर दिया गया। इसने इस बात का भी प्रयास किया कि उच्च शिक्षा के सा
हिन्दू धर्म की शिक्षा को भी मिला दिया जाये। हिन्दू धर्म के प्राचीन सिद्धान्त
र इस संस्था ने अधिक बल दिया। हिन्दू धर्म में इस संस्था के प्रयत्नों
अधिक स्फूर्ती उत्पन्न हुई।

राधा स्वामी सत्संग

१८६१ में शिवदयाल जी ने राधा स्वामी सतसङ्ग की नींव डाली। इनके
छठे गुरु के समय इस संस्था को बड़ी उन्नति हुई और आगरे के पास दयाल बाग
एक समुन्नत उपनिवेश कायम हो गया। इस मत के लोग अपने गुरु को ईश्वर
का अवतार मानते हैं और इन में जाति भेद भाव नहीं होता। सब समान रूप से

मुसलमानों के काल में स्त्री शिक्षा का अभाव हो गया और अंग्रेजों के स्त्री समाज शिक्षा से बिलकुल प्रथक कर दिया गया परन्तु जैसे २ सुधार ...ओं की वृद्धि हुई स्त्री शिक्षा का भी प्रचार बढ़ा। ईसाई धर्म प्रचारकों ने ... और अपना कार्य आरम्भ किया। १८४६ में कलकत्ते में हिन्दू कन्याओं के ... स्कूल की स्थापना की गई और १८५० तक इस प्रकार की कन्या पाठ-शालाओं की संख्या सौ के आस पास पहुंच गई थी। लार्ड डलहौजी ने इन ...ओं को धन से सहायता की और इस प्रकार स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन ... अन्य सुधारवादी संस्थाओं ने इस ओर ध्यान दिया। ब्रह्म समाज, आर्य ..., थियोसोफीकल सोसायटी, सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया लीग इत्यादि संस्थाओं ... शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दे कर कन्या पाठशालायें स्थापित कराईं। ... में 'Indian Women's Association' १६०८ में 'सेवा सदन सोसायटी' ... में श्रीमती रानाडे द्वारा स्थापित 'पूना सेवा सदन' १६१४ में 'Women's ...ical Service.' नामक संस्थाओं ने स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में प्रगतिशील कार्य ... १६१६ में दिल्ली में लेडी हार्डिन्ज मेडिकल कालिज द्वारा स्त्रियों को ... बी० एस० तक की शिक्षा दी जाने लगी। भारतीय रेड क्रॉस सोसायटी ...स्त्रियों की शिक्षा का कार्य चलाती है। अब तो कन्याओं के लिए अनेकों ... तथा स्कूल और कालिज खोले जा चुके हैं और आवश्यकतानुसार इन ... संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। अब तो सरकारी पद भी स्त्रियों के लिये ... दिये गये हैं। भारतीय सरकार में अनेकों पदों पर महिलायें काम कर रही हैं। ... वर्तमान विधान में स्त्रियों को सम्पत्ति के अधिकार दे दिये गये हैं और टैक्स ... पर सब प्रकार के भेदों का अन्त कर दिया गया है। अब स्त्रियाँ समान ... पुरुषों के साथ शिक्षा प्राप्त कर प्रगति की ओर बढ़ रही हैं।

६—महिला मताधिकार:—शिक्षा की वृद्धि के कारण महिला मताधिकार ... की गई। १६१७ के पश्चात इस दशा में अच्छी उन्नति हुई और अब ... विधान में सब स्त्रियों को मताधिकार दे दिया गया है।

...पर्दा का अन्त:—शिक्षा के प्रचार से शिक्षित महिलाओं के समाज में ... प्रथा नष्ट हो गई और अशिक्षित समाज में कुछ ढिलाई आ गई है। इस बुरी ... ने हमारे महिला समाज का बड़ा अहित किया है और राष्ट्र के एक उपयोगी ... को पर्दे के पीछे रखकर राष्ट्र की उन्नति में भी बाधा आई है। स्त्रियों का ... तिरस्कार होता रहा है परन्तु अब धीरे २ इस बुरी प्रथा का रिवाज कम ... हो रहा है।

...दास प्रथा:—इस अमानुषिक प्रथा ने सहस्रों सदियों तक मनुष्य को ... किया, और निस्सहाय व्यक्तियों के जीवन से खिलवाड़ की है। भारत में

२–शिशु हत्याः—गङ्गा में फेंक कर शिशुओं की हत्या कर दी ज
या कन्याओं को उचित भोजन न देकर मार दिया जाता था। इस प्रकार क
को १७१५ में और फिर १८०२ में गैरकानूनी करार दे दिया।

३–बहु विवाह और बाल विवाहः—बहु विवाह के विरुद्ध आ
छेड़ने वाले प्रथम सुधारक राम मोहन राय ही थे। और उनके पश्चात अन्य
कर्ताओं ने इस आन्दोलन को जारी रक्खा। अन्त में केशवचन्द्र सेन के प्र
१८७२ में नेटिव मैरिज एक्ट पास हुआ और बहु विवाह दण्डनीय अपराध
दे दिया गया। बाल विवाह का उन्मूलन किया गया। विधवा विवाह या
जातीय विवाह की स्वीकृति दी जाने लगी। बाल विवाह को रोकने के लि
समाज ने शक्तिशाली प्रयास किये। १८८४ में मलाबारी नामक पारसी ने
विवाह के विरुद्ध अधिक प्रभावशाली कार्य किया और फल यह हुआ कि
की आयु दस से बारह वर्ष कर दी गई। फिर १६०१ में बड़ौदा राज्य
कानून बनाया और उस के अनुसार वर की आयु १६ वर्ष तथा कन्या की
१२ वर्ष कर दी गई। फिर १६३० में भारत की व्यवस्थापिका सभा तथा
सभा ने शारदा एक्ट पास किया। लड़के अथवा लड़की की विवाह की आयु
१२ वर्ष व १४ वर्ष कर दी गई और इस का उल्लङ्घन करने वाले को दण्
भागी घोषित किया। इस प्रकार बाल विवाह के विरुद्ध निरन्तर प्रयास
पड़े। अब तो शिक्षा के प्रचार ने इस प्रथा को प्रायः नष्ट ही कर दिया है और
बाल विवाह का अन्त हो चुका है।

४–विधवा विवाह आन्दोलनः—ईश्वर चन्द्र विद्यासागर ने वि
विवाह को जायज करार दिये जाने के लिये बड़े प्रयत्न किये। उन्होंने आ
सरकार को निवेदन पत्र भी भेजा और इन प्रयत्नों के फलस्वरूप १८५६ में
कानून द्वारा विधवा विवाह कानूनी मान लिया गया और ऐसे विवाह को जा
वैध करार दी गई। अब इस प्रकार के विवाह को निष्कलंक बतलाया
और ब्रह्म समाज तथा आर्य समाज जैसी संस्थाओं ने इस प्रकार के विवाह
लोक प्रिय करने के सफल प्रयास किये। शिक्षित वर्ग ने ऐसे विवाह कराने आ
कर दिये। विधवा आश्रम स्थापित किये जाने लगे और प्रत्येक प्रकार से विध
के जीवन को सुखमय बनाने के प्रयत्न किये जाने लगे। अनेकों संस्थाएँ ऐ
स्थापित की गई जो विधवाओं के विवाह का प्रबन्ध करती थीं। जैसे पंजाब
'पवित्र संस्था', लखनऊ की 'हिन्दू विधवा सुधार लीग', बम्बई की विधवा वि
संस्था इत्यादि।

५–स्त्री शिक्षाः—प्राचीन भारत अपनी स्त्रियों की शिक्षा के महत्व
भली भाँति समझता था और उस समय शिक्षा का कन्याओं में बड़ा प्रचार

[अ]पराध घोषित कर दिया गया है और शताब्दियों के अन्याय पर स्थाई [रू]प [आ]वरण डाल दिया गया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि १६ वीं शताब्दी के आन्दोल[न]ों ने दूर गामी प्रभाव डाले और हिन्दू समाज की काया पलट कर दी। [उ]न्होंने को स्वस्थ बनाया। भारत का आधुनिकरण कर राष्ट्रीयता की [भ]ावनाओं को उत्पन्न कर उन का पूर्ण रूप से विकास किया और देश में [प]राधीनता का अन्त किया। इन आन्दोलनों की एक विशेषता थी वह य[ह कि स]ब सुधारवादी आन्दोलन थे। सब का उद्देश्य हिन्दू धर्म तथा समाज को [उ]ठाना था। सभी ने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। बहुदेववाद का ख[ण्डन क]र एक ही ईश्वर की उपासना पर बल दिया। रूढ़िवादिता पर सभी ने [प्रब]ल रूप से आघात किये। सब ने देश प्रेम, समानता, शिक्षा का प्रचार किया। स्त्री [शिक्षा] के प्रचार तथा प्रसार पर सब ने जोर दिया। सब धर्मों की मूलभूत एकत[ा का] सिद्धान्त प्रसारित किया। सभी ने भारत के प्राचीन गौरव और महानता से [...] [प्रा]प्त की। इस प्रकार स्पष्ट रूप से सिद्ध हो जाता है कि भिन्न २ आन्द[ोलनों] में एक ही प्रकार की भावना काम कर रही थी। और वह थी धर्म तथा [समाज] [स]ुधार तथा राष्ट्र को उन्नत करने की भावना तथा राष्ट्र के आधुनिकरण [क]ी लगन।

इन सब आन्दोलनों ने अपने उद्देश्यों में महान सफलता प्राप्त की [और] आज भी इनमें से अनेक समाज सेवा का कार्य निरन्तर रूप से कर रहे हैं।

मुसलमानों के आन्दोलन

१६वीं सदी में पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क, पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार [तथा] प्रसार ने भारत के निवासियों पर गहरे प्रभाव डाले। जल्दी ही हिन्दुओं में ज[ागृति] हुई और उन्होंने अपने सुधारवादी आन्दोलनों की स्थापना कर डाली। इस [...] जागरण ने मुसलमानों में भी आन्दोलनकारी भावना का प्रादुर्भाव किया। मुसलमानों में भी प्रगतिशील तथा प्रतिगामी विचार धाराओं का उदय हुआ। [...] भिन्न २ रूप धारण किये। इन आन्दोलनों का संचालन शाह अब्दुल अ[जीज], सैयद अहमद बरेलवी, शेख करामात अली इत्यादि ने किया।

शाह अब्दुल अजीज ने अपने आचार विचार पूर्ण रूप से कुरान के अ[नुसार] करने का उपदेश दिया। सैयद अहमद बरेलवी ने [...] कुरीतियों के दूर करने के प्रयत्न किये। उन्होंने धर्म को [...] दिया। ये सन्त पूजा के विरोधी थे। इन्होंने मुसलमानों को धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विकारों को छोड़ फिर से [...]

प्रथम बार इस के बहिष्कार की आवाज उठी। १८११ में अंग्रेजी कम्पनी ने भारत में दासों का आयात रोक दिया। १८३३ के आज्ञा पत्र द्वारा इस प्रथा भारत से अन्त कर दिया और १८४३ में दास रखना गैर कानूनी करार दे दण्डनीय अपराध बना दिया गया। इस प्रकार इस पतित प्रथा का अन्त दिया गया।

८-जाति प्रथा ने हिन्दू समाज को कुछ लाभ अवश्य पहुंचाये हैं पर अपेक्षाकृत हानियाँ कहीं अधिक पहुँचाई हैं। समाज का वर्गीकरण कर उस वैमनस्य तथा द्वेष की भावनाओं की वृद्धि की है। हिन्दू धर्म की प्राचीन विशाल और सहिष्णुता का अन्त कर संकुचित विचारों को पनपाया है और निम्न व को मानवीय अधिकारों से भी वञ्चित रक्खा है। परन्तु निरन्तर इस प्रथा का विरो जारी रहा है। पाश्चात्य शिक्षा, पाश्चात्य विचारों और सुधार आन्दोलनों मिलकर इस प्रथा की कठोरता तथा अपरिवर्तनशीलता को भारी आघात पहुंचाये और इस के प्रतिबन्धनों को दुर्बल किया है।

खान पान के बन्धनं, समुद्र यात्रा का निषेध का अन्त कर दिया गया राजा राम मोहन राय प्रथम भारतीय थे जो समुद्र यात्रा के निषेध को भङ्ग क इङ्गलैण्ड गये थे। धीरे २ रेल मोटरों के आविष्कारों तथा शिक्षा के प्रचार ने जाति भेद भाव को बड़ी सीमा तक कम किया है और अब तो जाति बहिष्कार दण्डनीय अपराध बना दिया गया है।

९-दलित वर्गः—हिंदू समाज का महत्त्वपूर्ण अङ्ग होते हुए भी अछूतों के प्रति बड़ा ही अन्याय किया गया। उनके साथ पशुओं जैसा व्यवहार किया गया। दक्षिणी भारत में तो उन का छाया मात्र से अपवित्रता आने लगी थी। साधारण सुविधाओं से भी इस वर्ग को वञ्चित रक्खा गया। परन्तु नवीन विचारों ने इस दशा में प्रभाव डाला। अनेकों सुधारकों ने इस दशा के अन्त करने के प्रयास किये। आर्या समाज, थियोसोफिकल सोसायटी. राम कृष्ण मिशन इत्यादि ने इस दलित वर्ग की दशा सुधारने का महान कार्य किया। गाँधी जी ने हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। हरिजन पत्र निकाला और अछूतों की दशा सुधारी। गोखले ने भी इस क्षेत्र में महान कार्य किया। उनकी शिक्षा का प्रबन्ध कराया, उनको नौकरियाँ दिलवाईं, अन्य प्रकार की सहायता प्रदान की। इस प्रकार दलित वर्ग का उद्धार होने में अपना योग प्रदान किया। फिर हरिजनों ने भी अपने अधिकारों की माँग के लिये अपने प्रयास करने के लिये आन्दोलन किये। इन सब प्रयत्नों का यह फल हुआ कि धीरे २ इस वर्ग की दशा सुधरने लगी और इन को भी अनेकों सुविधायें मिलीं। नौकरियों में इन को उचित स्थान मिलने लगे। छूआ छूत को कानूनी करार दे दिया गया। अब नए विधान में तो छूआ छूत को दण्डनीय

अपराध घोषित कर दिया गया है और शताब्दियों के अन्याय पर स्थाई रूप से आवरण डाल दिया गया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि १९ वीं शताब्दी के आन्दोलनों ने बड़े ही दूर गामी प्रभाव डाले और हिन्दू समाज की काया पलट कर दी। हिन्दू धर्म को स्वस्थ बनाया। भारत का आधुनिकरण कर राष्ट्रीयता की सशक्त भावनाओं को उत्पन्न कर उन का पूर्ण रूप से विकास किया और देश में फैली उदासीनता का अन्त किया। इन आन्दोलनों की एक विशेषता थी वह यह कि सब सुधारवादी आन्दोलन थे। सब का उद्देश्य हिन्दू धर्म तथा समाज को स्वस्थ बनाना था। सभी ने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। बहुदेववाद का खण्डन कर एक ही ईश्वर की उपासना पर बल दिया। रूढ़िवादिता पर सभी ने समान रूप से आघात किये। सब ने देश प्रेम, समानता, शिक्षा का प्रचार किया। स्त्री शिक्षा के प्रचार तथा प्रसार पर सब ने जोर दिया। सब धर्मों की मूलभूत एकता का सिद्धान्त प्रसारित किया। सभी ने भारत के प्राचीन गौरव और महानता से प्रेरणा प्राप्त की। इस प्रकार स्पष्ट रूप से सिद्ध हो जाता है कि भिन्न २ आन्दोलनों में एक ही प्रकार की भावना काम कर रही थी। और वह थी धर्म तथा समाज सुधार तथा राष्ट्र को उन्नत करने की भावना तथा राष्ट्र के आधुनिकरण करने की लगन।

इन सब आन्दोलनों ने अपने उद्देश्यों में महान सफलता प्राप्त की और आज भी इनमें से अनेक समाज सेवा का कार्य निरन्तर रूप से कर रहे हैं।

मुसलमानों के आन्दोलन

१९वीं सदी में पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क, पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार और प्रसार ने भारत के निवासियों पर गहरे प्रभाव डाले। जल्दी ही हिन्दुओं में जागृति हुई और उन्होंने अपने सुधारवादी आन्दोलनों की स्थापना कर डाली। इस नवीन जागरण ने मुसलमानों में भी आन्दोलनकारी भावना का प्रादुर्भाव किया और मुसलमानों में भी प्रगतिशील तथा प्रतिगामी विचार धाराओं का उदय हुआ। उसने भिन्न २ रूप धारण किये। इन आन्दोलनों का संचालन शाह अब्दुल अज़ीज़, सैयद अहमद बरेलवी, शेख करामात अली इत्यादि ने किया।

शाह अब्दुल अज़ीज़ ने अपने आचार विचार पूर्ण रूप से कुरान के अनुसार करने का उपदेश दिया। सैयद अहमद बरेलवी ने मुसलमानों में सामाजिक कुरीतियों के दूर करने के प्रयत्न किये। उन्होंने धर्म को उदार करने का आदेश दिया। ये सन्त पूजा के विरोधी थे। इन्होंने मुसलमानों को ललकारा और कहा कि धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विकारों को छोड़ फिर से इस्लाम का प्रचार

प्रथम बार इस के बहिष्कार की आवाज उठी। १८११ में अंग्रेजी कम्पनी ने भारत में दासों का आयात रोक दिया। १८३३ के आज्ञा पत्र द्वारा इस प्रथा भारत से अन्त कर दिया और १८४३ में दास रखना गैर कानूनी करार दे दण्डनीय अपराध बना दिया गया। इस प्रकार इस पतित प्रथा का अन्त दिया गया।

८-जाति प्रथा ने हिन्दू समाज को कुछ लाभ अवश्य पहुंचाये हैं परन्तु अपेक्षाकृत हानियाँ कहीं अधिक पहुँचाई हैं। समाज का वर्गीकरण कर उसमें वैमनस्य तथा द्वेष की भावनाओं की वृद्धि की है। हिन्दू धर्म की प्राचीन विशालता और सहिष्णुता का अन्त कर संकुचित विचारों को पनपाया है और निम्न वर्ग को मानवीय अधिकारों से भी वञ्चित रक्खा है। परन्तु निरन्तर इस प्रथा का विरोध जारी रहा है। पाश्चात्य शिक्षा, पाश्चात्य विचारों और सुधार आन्दोलनों ने मिलकर इस प्रथा की कठोरता तथा अपरिवर्तनशीलता को भारी आघात पहुँचाये हैं और इस के प्रतिबन्धनों को दुर्बल किया है।

खान पान के बन्धन, समुद्र यात्रा का निषेध का अन्त कर दिया गया है। राजा राम मोहन राय प्रथम भारतीय थे जो समुद्र यात्रा के निषेध को भङ्ग कर इङ्गलैण्ड गये थे। धीरे २ रेल मोटरों के आविष्कारों तथा शिक्षा के प्रचार ने जाति भेद भाव को बड़ी सीमा तक कम किया है और अब तो जाति बहिष्कार दण्डनीय अपराध बना दिया गया है।

९-दलित वर्ग:—हिंदू समाज का महत्वपूर्ण अङ्ग होते हुए भी अछूतों के प्रति बड़ा ही अन्याय किया गया। उनके साथ पशुओं जैसा व्यवहार किया गया। दक्षिणी भारत में तो उन का छाया मात्र से अपवित्रता आने लगी थी। साधारण सुविधाओं से भी इस वर्ग को वञ्चित रक्खा गया। परन्तु नवीन विचारों ने इस दशा में प्रभाव डाला। अनेकों सुधारकों ने इस दशा के अन्त करने के प्रयास किये। आर्या समाज, थियोसोफिकल सोसायटी, राम कृष्ण मिशन इत्यादि ने इस दलित वर्ग की दशा सुधारने का महान कार्य किया। गाँधी जी ने हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। हरिजन पत्र निकाला और अछूतों की दशा सुधारी। गोखले ने भी इस क्षेत्र में महान कार्य किया। उनकी शिक्षा का प्रबन्ध कराया, उनको नौकरियाँ दिलवाई, अन्य प्रकार की सहायता प्रदान की। इस प्रकार दलित वर्ग का उद्धार होने में अपना योग प्रदान किया। फिर हरिजनों ने भी अपने अधिकारों की माँग के लिये अपने प्रयास करने के लिये आन्दोलन किये। इन सब प्रयत्नों का यह फल हुआ कि धीरे २ इस वर्ग की दशा सुधरने लगी और इन को भी सभी सुविधायें मिलीं। नौकरियों में इन को उचित स्थान मिलने लगे। छूआ छूत को गैर कानूनी करार दे दिया गया। अब नए विधान में तो छूआ छूत को दण्डनीय

अपराध घोषित कर दिया गया है और शताब्दियों के अन्याय पर स्थाई रूप से पदारद डाल दिया गया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि १९ वीं शताब्दी के आन्दोलनों ने बड़े ही दूर गामी प्रभाव डाले और हिन्दू समाज की काया पलट कर दी। हिन्दू धर्म को स्वस्थ बनाया। भारत का आधुनिकरण कर राष्ट्रीयता की सशक्त भावनाओं को उत्पन्न कर उन का पूर्ण रूप से विकास किया और देश में फैली उदासीनता का अन्त किया। इन आन्दोलनों की एक विशेषता थी वह यह कि सब सुधारवादी आन्दोलन थे। सब का उद्देश्य हिन्दू धर्म तथा समाज को स्वस्थ बनाना था। सभी ने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। बहुदेववाद का खण्डन कर एक ही ईश्वर की उपासना पर बल दिया। रूढ़िवादिता पर सभी ने समान रूप से आघात किये। सब ने देश प्रेम, समानता, शिक्षा का प्रचार किया। स्त्री शिक्षा के प्रचार तथा प्रसार पर सब ने जोर दिया। सब धर्मों की मूलभूत एकता का सिद्धान्त प्रसारित किया। सभी ने भारत के प्राचीन गौरव और महानता से प्रेरणा प्राप्त की। इस प्रकार स्पष्ट रूप से सिद्ध हो जाता है कि भिन्न २ आन्दोलनों में एक ही प्रकार की भावना काम कर रही थी। और वह थी धर्म तथा समाज सुधार तथा राष्ट्र को उन्नत करने की भावना तथा राष्ट्र के आधुनिकरण करने की लगन।

इन सब आन्दोलनों ने अपने उद्देश्यों में महान सफलता प्राप्त की और आज भी इनमें से अनेक समाज सेवा का कार्य निरन्तर रूप से कर रहे हैं।

मुसलमानों के आन्दोलन

१९वीं सदी में पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क, पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार और प्रसार ने भारत के निवासियों पर गहरे प्रभाव डाले। जल्दी ही हिन्दुओं में जागृति हुई और उन्होंने अपने सुधारवादी आन्दोलनों की स्थापना कर डाली। इस नवीन जागरण ने मुसलमानों में भी आन्दोलनकारी भावना का प्रादुर्भाव किया और मुसलमानों में भी प्रगतिशील तथा प्रतिगामी विचार धाराओं का उदय हुआ। उसने भिन्न २ रूप धारण किये। इन आन्दोलनों का संचालन शाह अब्दुल अजीज, सैयद अहमद बरेलवी, शेख करामात अली इत्यादि ने किया।

शाह अब्दुल अजीज ने अपने आचार विचार पूर्ण रूप से कुरान के अनुसार करने का उपदेश दिया। सैयद अहमद बरेलवी ने मुसलमानों में सामाजिक कुरीतियों के दूर करने के प्रयत्न किये। उन्होंने धर्म को उदार करने का आदेश दिया। ये सन्त पूजा के विरोधी थे। इन्होंने मुसलमानों को ललकारा और कहा कि धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विकारों को छोड़ फिर से इस्लाम का प्रचार

करें और विधर्मियों को सत्य मार्ग पर लायें। इस ने भारत में एक व
इस्लामी सत्ता स्थापित करने का प्रयास किया। इस ने पाश्चात्य शिक्षा तथा
का बहिष्कार किया। यह आन्दोलन प्रतिगामी आन्दोलन सिद्ध हुआ।

इस के विरुद्ध शेख करामत अली ने पाश्चात्य शिक्षा तथा सभ्यता के
का प्रयास किया।

१६वीं सदी के अन्तिम वर्षों में अहमदिया आन्दोलन का प्रादुर्भाव
इसके आरम्भ करने वाले कादियान के निवासी मिर्ज़ा गुलाम अहमद थे।
अपने आप को ईश्वर का भेजा हुआ पैगम्बर बताया। उन्होंने पाश्चात्य सभ्य
विरोध किया। उनका कहना था कि कुरान पर नैतिक तथा आध्यात्मिक
अमल किया जाय क्योंकि उस पर पूर्ण रूपेण अमल करना असम्भव है। इन्होंने
विवाह, पर्दा प्रथा, तलाक जैसे रिवाजों को उचित बताया। सन्त पूजा को
आन्दोलन ने विरोध किया। इसने प्राचीन परम्पराओं का समर्थन किया।
चलकर इस की एक शाखा ने मिर्ज़ा अहमद को पैगम्बर न मानकर केवल
सुधारक ही माना।

इन आन्दोलनों से अधिक प्रभावशाली आन्दोलन सर सैयद अहमद
चलाया गया। यह आन्दोलन प्रगतिशील और समय के ठीक अनुकूल ही था।
आन्दोलन ने मुसलमानों में नव जीवन संचार किया। सर सैयद अहमद ने आधु
विज्ञान तथा पाश्चात्य विचारों का स्वागत किया। उन्होंने मुसलमानों में अं
शिक्षा का प्रचार किया। उन्होंने मुस्लिम समाज में फैली कुरीतियों को दूर क
के प्रयत्न किये। वे पर्दा विरोधी थे और इस्लाम में प्रचलित पीरी, मुरीदी की प्र
को दूर करना चाहते थे। उनका उद्देश्य प्राचीन धार्मिक सरलता और शुद्ध
लाना था। वह धर्म सुधारक भी थे और समाज सुधारक भी। उन्होंने समय
रुख पहिचाना और मुसलमानों को अंग्रेज़ी सत्ता के साथ सहयोग करने की प्रेर
दी। इस सहयोग द्वारा ही मुसलमानों का उत्थान सम्भव था ऐसी उनकी
धारणा थी। वह शिक्षा प्रेमी थे। उन्हीं ने अलीगढ़ में 'Mohammedan Angl
Oriental College' की स्थापना की जो मुस्लिम विश्व-विद्यालय के रूप में
बदल गया। इस विश्व-विद्यालय ने अनेकों मुसलमान नवयुवकों को स्नातक बना
कर निकाला और मुसलमानों में पाश्चात्य शिक्षा के प्रति श्रद्धा उत्पन्न की।
सर सैयद ने कुरान की एक टीका की रचना की। उन्हों ने 'तहज़ीबुल अख़लाक़'
नामक एक पत्रिका द्वारा अपने विचारों का प्रचार किया। उनको अपने कामों में
अलताफ हुसैन हाली, शिब्ली तथा नज़ीर अहमद से बड़ी सहायता मिली।

उसी समय मौलवी चिराग़ अली ने भी अच्छा कार्य किया। उन्हों ने
मुसलमानों को नवीन विचार अपनाने को कहा। बहुविव का विरोध किया।

सामाजिक कुरीतियों को नष्ट करने का प्रयास किया। चरित्र निर्माण की ओर मुसलमानों का ध्यान दिलाया। वह विद्या प्रेमी और समाज सुधारक थे। मुसलमानों की दीन दशा को सम्भालना चाहते थे। प्राचीन पन के विरोध में मुसलमानों का शिक्षित वर्ग खड़ा हो गया। इकबाल तथा अकबर जैसे कवियों और विद्वानों ने बाल विवाह, बहु विवाह, पर्दा प्रथा के विरोध में आवाज उठाई और कुछ प्रगति हुई परन्तु वह इतनी कम थी कि निरन्तर प्रयासों के बावजूद मुसलमानों में नव जागरण की धारा अधिक प्रभाव न डाल सकी और मुस्लिम समाज मन्द गति से ही आगे बढ़ा।

अन्य धर्म

सिक्ख धर्म भी पुनर्जागरण की धारा से प्रभावित हुआ। शिक्षा प्रचार के हेतु उन्होंने अमृतसर में 'खालसा कालिज' की स्थापना की तथा 'प्रधान खालसा दीवान' नामक संस्था की नींव डाली। इस संस्था का उद्देश्य सिक्खों की सामाजिक तथा धार्मिक दशा को सुधारना तथा सिक्खों में अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार करना था।

पारसी धर्मावलम्बियों में भी सुधारवादी प्रवृत्ति का उदय हुआ। दादा-भाई नौरोजी के महान प्रयत्नों से 'रहनुमाई मज्दयासना' नामक संस्था की स्थापना हुई। इस के द्वारा सामाजिक सुधारों के लिये कार्य किया गया। कई प्रमुख पारसियों ने देश की राजनीति में भाग लेकर देश सेवा में हाथ बंटाया। और राष्ट्रीय आन्दोलन को सशक्त बनाने के प्रयत्नों में पूर्ण सहयोग दिया। दादा भाई नौरोजी, सर फिरोज शाह महता, सर दीन शाहदुल जी के नाम हमारे इतिहास में चिरस्थिर रहेंगे।

ईसाइयों में भी समाज सुधार के अनेकों कार्य किये गये। शिक्षा के लिये इन्होंने अपने अनेकों स्कूल तथा विद्यालय खोले। इन्होंने अनाथालयों तथा अस्पतालों का स्थापना की। ईसाई धर्म प्रचारकों ने भारतीय ईसाइयों की दशा सुधारने के लिये अनेकों प्रयास किये।

इस प्रकार हम देखते हैं कि १६ वीं शताब्दी में विविध कारणों से भारत में आन्दोलनों की एक बाढ़ सी आगई। धर्म तथा समाज सुधार की लहर ने देश में एक महान क्रांति का प्रादुर्भाव किया। राजा राम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, राम कृष्ण परम हंस, विवेकानन्द जैसी महान विभूतियों ने भारत का आधुनिकरण कर डाला। भारतीय नव जागरण ने भारत की निद्रा को नष्ट कर दिया और उसको उन्नति के मार्ग की ओर बढ़ा दिया। इन नवीन शक्तिशाली आन्दोलनों से भारत में एक ऐसी धारा का प्रवाह हुआ कि रूढ़िवादिता, अन्ध विश्वास, संकीर्णता तथा शिथिलता इस प्रवाह में विलिप्त हो गई और नव भारत

निर्माण हुआ। इन आन्दोलनों ने राष्ट्रीयता को उत्पन्न किया जिसने शक्ति प्रा
कर विदेशी सत्ता के पैर उखाड़ दिये और भारत को दासता से निकाल स्व
जातियों की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया। स्वस्थ धर्म, स्वस्थ समाज त
स्वतंत्र देश ही इन आन्दोलनों की महान देन थी।

Q.:—Give a critical account of the progress which the litera ture of various languages made in the Modern India. Suppor your answer with examples

प्रश्नः—उस उन्नति का विवेचनात्मक उल्लेख करो जो आधुनिक भारत की विविध भाषाओं के साहित्य ने की। उदाहरणों द्वारा अपने उत्तर की पुष्टी करो।

उत्तरः—भारतीय नव जागरण की प्रगतिशील धारा ने धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्रों की तरह साहित्यिक क्षेत्र को भी पूर्ण रूप से प्रभावित किया। इस क्षेत्र में भी अलौकिक प्रगति दिखाई दी। इस साहित्यिक प्रगति के अनेकों कारण थे।

नवीन सुधारवादी आन्दोलनों ने जीवन में उत्साह भरा और लेखकों तथा कवियों को नवीन प्रेरणा मिली। पाश्चात्य साहित्य के सम्पर्क से भारतीय भाषाओं में नवीन विचारों का समावेश होने लगा। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार और प्रसार ने भारतीय साहित्य में नये शब्दों तथा विचारों के विकसित होने के सुअवसर प्रदान किये। १६ वीं शताब्दी में अंग्रेजी सत्ता की स्थापना से देश में शांति का वातावरण उत्पन्न हुआ और लम्बे संघर्ष के बाद साहित्यिकों को अपना कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। पश्चिमी विद्वानों के निरन्तर प्रयास ने भारत के प्राचीन इतिहास की खोज की। वैदिक तथा बौद्ध कालीन ग्रंथों का पता लगाया उनके संस्कृत से पश्चिमी भाषाओं में अनुवाद किये और तब यह ज्ञान भण्डार फिर से भारतीयों को प्राप्त हुआ। इस प्रकार अपने अतीत के गौरव का ज्ञान प्राप्त कर भारत के लेखकों तथा कवियों में इस प्राचीन महानता की अभिव्यक्ति करने की प्रबल इच्छा जाग उठी और इनकी विचार धाराओं के प्रवाह में एक दम प्रगति प्राप्त हो गई। पत्र पत्रिकाओं का प्रसार हुआ तथा उन की संख्या बढ़ी। और ग्रन्थ जन साधारण के हाथ में सुगमता पूर्वक पहुँचे। इनके द्वारा साहित्य की उन्नति हुई। ईसाई धर्म प्रचारकों ने अपने धर्म प्रचार के लिये देशी भाषाओं का सहारा लिया और उनको उन्नत बनाया। हिंदी, बङ्गला तथा अन्य प्रचलित भाषाओं का अध्ययन किया और इन में अपने ग्रन्थों की रचना की। शब्द कोष

गये। इस प्रकार इनके द्वारा देशी भाषाओं के साहित्य को प्रोत्साहन मिला। आगे चलकर स्वतन्त्रता के व्यापक संग्राम ने भाषाओं के साहित्य को नवीन प्रेरणा प्रदान की और उच्च कोटि का साहित्य उत्पन्न हुआ।

इस समय के साहित्य की अपनी विलक्षण विशेषतायें हैं। प्रथम तो जिन लोगों ने अंग्रेजी विचारों में शिक्षा प्राप्त की उन्होंने अंग्रेजी ग्रंथों के अनुवाद भारतीय भाषाओं में किये। उन्होंने अपनी विचारधारा तथा शैली भी पाश्चात्य ढंग की रक्खी। इन अनुवादों से ही हमारी गद्यशैली को शक्ति मिली। कुछ समय पश्चात् हमारे साहित्य में नवीनता आई और उसमें भारतीयता का अंश अधिक स्पष्ट होने लगा परन्तु पाश्चात्यता की छाप अब भी उस पर लगी रही। एकांकी नाटक, छायावाद, रहस्यवाद तथा सौनेट इसके उदाहरण हैं। अभी तक शैली के अतिरिक्त विषय भी पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित होते रहे। नाटक, उपन्यास, कविता सब में योरोपीय प्रभाव पड़ता रहा।

परन्तु अब राष्ट्रीय विचार धारा प्रवाहित हुई। देश प्रेम और देश भक्ति की भावना जागृत हुई तो देशी भाषाओं के साहित्य को नवीन प्रेरणा मिली और स्वतन्त्र विचार धारा की उत्पत्ति हुई। भाषाओं के कोष भण्डार सम्पन्न हुए। उनके साहित्य में अधिक सरसता, मधुरता और आधुनिकता झलकने लगी। अब विविध विचारों को व्यक्त करने की क्षमता तथा शक्ति देशी भाषाओं में उत्पन्न हुई।

इस प्रकार अंग्रेजी शिक्षा के अधिक प्रचार, पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क, पाश्चात्य विद्वानों द्वारा भारतीय संस्कृत ग्रन्थों की खोज तथा उनका अनुवाद, पुनर्जागरण की सशक्त धारा इत्यादि सभी ने मिलकर देशी भाषाओं के साहित्य को पुनरुत्पन्न बनाया और उसमें नवीन चेतना उत्पन्न की तथा उसके कोष भंडार को भरा और इसके लिये नवीनतम विचारों की बाहुल्यता प्रदान की। सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक प्रगति ने लेखकों, कवियों तथा विद्वानों को उनके लिये नवीन सामग्री जुटाई। इस प्रकार साहित्य में निरालापन तथा व्यापकता आई और वह विस्तृत रूप से उन्नति करने लगा।

हिन्दी—हिन्दी का इतिहास काफी प्राचीन है परन्तु इसकी साहित्यिक उन्नति १४ वीं सदी से ही आरम्भ हुई। आधुनिक युग में हिन्दी गद्य का विकास तथा विस्तार हुआ नवीन विचारों का सूत्रपात हुआ और पाश्चात्य साहित्य की विचार धाराओं ने हिन्दी को प्रभावित किया। इसके विषयों की विविधता में वृद्धि हुई और राष्ट्रीयता के विचारों को इसमें स्थान प्राप्त हुआ।

१८ वीं सदी के अन्तिम वर्षों में 'सुखसागर' तथा 'रानी केतकी कहानी' नामक ग्रन्थों की रचना की गई और उनसे हिन्दी गद्य का विकास हुआ। १९ वीं शताब्दी के आरम्भ में लल्लूलाल जी ने 'प्रेमसागर' तथा

पनोमी' की रचना की। १८१८ में हिन्दी में बाइबिल का अनुवाद किया गया १८३७ में दिल्ली में मुद्रणालय की स्थापना से हिन्दी के ग्रंथ शीघ्र गति से तैय होने लगे। ईसाईयों ने शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकों की हिन्दी में रचना की ईसाई द्वारा हिन्दी गद्य का अधिकाधिक प्रसार हुआ। १८२० में जुगलकिशोर 'उदन्त मार्तण्ड', १८३० में राममोहन राय ने 'बंगदूत' तथा १८४३ में रा शिवप्रसाद ने 'बनारस अखबार' निकालने आरम्भ किये और इस प्रकार धीरे धं हिन्दी गद्य का प्रयोग बढ़ता गया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी साहित्य की बड़ी सेवा की उसने स्वय हिन्दी का प्रयोग किया। भाषा में ओज, मधुरता तथा सरसता उत्पन्न की इनर अधिक सेवाओं के कारण इनको वर्तमान हिन्दी गद्य का प्रवर्तक कहा जाता है इनके प्रसिद्ध नाटक 'अन्धेर नगरी' 'चन्द्रावली' तथा 'भारत दुर्दशा' हैं इन्होंने 'मुद्राराक्षस' नामक नाटक का हिन्दी में अनुवाद किया। बृजभाषा में कवितायें कीं 'काश्मीर कुसुम' तथा 'बादशाह दर्पण' नामक ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचन की। इस प्रकार इस विद्वान ने हिन्दी साहित्य को सुसम्पन्न बनाया। इन्होंने कई अलौकिक तथा होनहार लेखकों का पथ प्रदर्शन किया। प्रताप नारायण मिश्र, बाबू तोताराम, बालकृष्ण भट्ट, गदाधर सिंह उपाध्याय, ठाकुर जगमोहन सिंह इत्यादि ने भारतेन्दु का अनुकरण किया और हिन्दी साहित्य को सम्पन्न बनाया प्रताप नारायण ने 'गोसंकट नाटक' 'हठी हम्मीर' तथा 'संगीत शाकुन्तल' की रचना की। बालकृष्ण भट्ट ने आलोचनात्मक रचनायें कीं।

इस समय के पश्चात हिन्दी का द्वितीय युग आरम्भ हुआ। १८६६ से आरम्भ होकर १८६४ तक का समय हिन्दी साहित्य का एक विशेष काल था। इस काल में बंगला भाषा के अनेकों ग्रंथों का अनुवाद हिन्दी में किया गया। भाषा की स्वच्छता तथा शुद्धता पर अधिक ध्यान दिया गया। इस युग के प्रवर्त्तक होने का सम्मान महावीर प्रसाद द्विवेदी को दिया गया है। उन्होंने आलोचना का मार्ग हिन्दी साहित्य में खोल दिया मिश्र बन्धुओं तथा पद्मसिंह शर्मा ने कई आलोचनात्मक ग्रंथों की रचना की। इस काल में अधिकतर बंगला नाटकों, उपन्यासों तथा अंग्रेजी और संस्कृत के नाटकों का अनुवाद किया गया। देवकी नन्दन खत्री तथा किशोरीलाल गोस्वामी ने मौलिक उपन्यास भी लिखे। इस प्रकार हिन्दी साहित्य धीरे धीरे प्रगति की ओर बढ़ता गया। १८६४ में राम नारायण मिश्र, बाबू श्याम सुन्दर दास तथा ठाकुर शिवकुमार सिंह के प्रयत्नों से काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की गई। इसके पश्चात हिन्दी में नाटक, उपन्यास, इतिहास, पत्र, पत्रिकायें अधिकता से निकाली गईं और इस हिन्दी साहित्य अधिक समृद्धशाली हुआ।

बीसवीं सदी के साथ साथ हिन्दी साहित्य में भी एक नवीन युग प्रारम्भ होता है। इससे पूर्व के युग में मौलिक ग्रंथों की रचना अधिक न हो पाई थी। अधिकतर ग्रंथ अन्य भाषाओं के अनुवाद ही थे परन्तु बीसवीं सदी के आते आते हिन्दी साहित्य अधिक पुष्ट और प्रौढ़ हो गया। अब पाश्चात्य प्रभाव के साथ साथ मौलिकता की भावना भी हिन्दी ग्रन्थों में दृष्टिगोचर होने लगी और प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जैनेन्द्र कुमार, विशम्भर शर्मा कौशिक, सुदर्शन, चण्डी प्रसाद इत्यादि ने इस समय के साहित्य को समृद्ध बनाया। इन्होंने उच्च कोटि के नाटक तथा उपन्यासों की रचना की।

प्रेमचन्द उपन्यास सम्राट कहे जाते हैं। उनके उपन्यासों में भारतीय जीवन की वह रूप रेखा प्रदर्शित की गई है जो वास्तविक जीवन में विद्यमान है। इनकी रचनाओं में जिन व्यक्तियों को चुना गया है वह स्वाभाविकता के सजीव उदाहरण हैं व्यक्तियों की भावनाओं का जिस सुन्दरता से प्रेमचन्द ने प्रदर्शन किया है वह अपना स्वयं ही उदाहरण है। उनके उपन्यास हिन्दी साहित्य के अद्वितीय रत्न हैं और कोई भी भाषा तथा देश प्रेमचन्द जैसे उपन्यासकार को पाकर जितना भी गर्व करे कम है। 'गोदान' 'गबन' 'सेवा सदन' इत्यादि ऐसे उपन्यास हैं जिन पर मौलिकता की एक गहरी छाप है और आधुनिक विचार धारा जिसमें फूटी पड़ती है प्रेमचन्द की अपनी एक विचार धारा है जो इन उपन्यासों में प्रवाहित होती है वह सामाजिक वर्गीकरण को नष्ट करना चाहता है और समानता का प्रचारक है। इसने हिन्दी साहित्य को अपने उपन्यासों द्वारा अमूल्य देन प्रदान की है।

वृन्दावन लाल वर्मा ने 'झांसी की रानी' 'गढ़ कुण्डार' नामक ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की। जयशंकर प्रसाद ने नाटक के क्षेत्र में बड़ी ही ख्याति प्राप्त की। 'स्कन्द गुप्त' 'चन्द्रगुप्त' 'जनमेजय का नागयज्ञ' इत्यादि नाटक बड़ी ही मौलिक रचना हैं। हरिकृष्ण प्रेमी ने 'रक्षा बन्धन' नामक नाटक की रचना की।

अनेकों आलोचनात्मक रचनायें हुईं। रामचन्द्र शुक्ल, श्याम सुन्दरदास तथा लाला भगवान दीन इस क्षेत्र में अधिक प्रसिद्ध हैं। कुछ एकांकी नाटकों की भी रचना की गई।

कविता के क्षेत्र में हिन्दी साहित्य की अच्छी प्रगति हुई। व्रजभाषा में भारतेन्दु ने कविता का सूत्रपात कर दिया था। उनके साथ साथ पुरानी परिपाटी के कवि 'रत्नाकर' श्रीधर पाठक, लाला सीताराम, वियोगी हरि अधिक प्रसिद्ध हुए। बीसवीं सदी में खड़ी बोली में भी कविता हुई। आधुनिक युग की काव्य रचनायें हुईं अयोध्या सिंह ने 'प्रिय प्रवास' की रचना की। मैथिली शरण गुप्त ने 'साकेत' तथा 'यशोधरा' की रचना की। १९२० के पश्चात् हिन्दी साहित्य में रहस्यवाद तथा

पत्नोमी' की रचना की। १८१८ में हिन्दी में बाइबिल का अनुवाद किया गया १८३७ में दिल्ली में मुद्रणालय की स्थापना से हिन्दी के ग्रंथ शीघ्र गति से तैय होने लगे। ईसाईयों ने शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकों की हिन्दी में रचना की ईसाई द्वारा हिन्दी गद्य का अधिकाधिक प्रसार हुआ। १८२७ में जुगलकिशोर 'उदन्त मार्तण्ड', १८२० में राममोहन राय ने 'बंगदूत' तथा १८४३ में रा शिवप्रसाद ने 'बनारस अखबार' निकालने आरम्भ किये और इस प्रकार धीरे धी हिन्दी गद्य का प्रयोग बढ़ता गया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी साहित्य की बड़ी सेवा की उसने स्व हिन्दी का प्रयोग किया। भाषा में ओज, मधुरता तथा सरसता उत्पन्न की इनके अधिक सेवाओं के कारण इनको वर्तमान हिन्दी गद्य का प्रवर्तक कहा जाता है इनके प्रसिद्ध नाटक 'अन्धेर नगरी' 'चन्द्रावली' तथा 'भारत दुर्दशा' हैं इन्होंने 'मुद्राराक्षस' नामक नाटक का हिन्दी में अनुवाद किया। ब्रजभाषा में कवितायें की 'काश्मीर कुसुम' तथा 'बादशाह दर्पण' नामक ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना की। इस प्रकार इस विद्वान ने हिन्दी साहित्य को सुसम्पन्न बनाया। इन्होंने कई अलौकिक तथा होनहार लेखकों का पथ प्रदर्शन किया। प्रताप नारायण मिश्र, बाबू तोताराम, बालकृष्ण भट्ट, गदाधर सिंह उपाध्याय, ठाकुर जगमोहन सिंह इत्यादि ने भारतेन्दु का अनुकरण किया और हिन्दी साहित्य को सम्पन्न बनाया प्रताप नारायण ने 'गोसंकट नाटक' 'हठी हम्मीर' तथा 'संगीत शाकुन्तल' की रचना की। बालकृष्ण भट्ट ने आलोचनात्मक रचनायें कीं।

इस समय के पश्चात हिन्दी का द्वितीय युग आरम्भ हुआ। १८११ से आरम्भ होकर १८६४ तक का समय हिन्दी साहित्य का एक विशेष काल था। इस काल में बंगला भाषा के अनेकों ग्रंथों का अनुवाद हिन्दी में किया गया। भाषा की स्वच्छता तथा शुद्धता पर अधिक ध्यान दिया गया। इस युग के प्रवर्तक होने का सम्मान महावीर प्रसाद द्विवेदी को दिया गया है। उन्होंने आलोचना का मार्ग हिन्दी साहित्य में खोल दिया मिश्र बन्धुओं तथा पद्मसिंह शर्मा ने कई आलोचनात्मक ग्रंथों की रचना की। इस काल में अधिकतर बंगला नाटकों, उपन्यासों तथा अंग्रेजी और संस्कृत के नाटकों का अनुवाद किया गया। देवकी नन्दन खत्री तथा किशोरीलाल गोस्वामी ने मौलिक उपन्यास भी इस प्रकार हिन्दी साहित्य धीरे धीरे प्रगति की ओर बढ़ता गया।
नारायण मिश्र, बाबू श्याम सुन्दर दास तथा ठाकुर शिवकुमार सिंह
काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की गई। इसके
नाटक, उपन्यास, इतिहास, पत्र, पत्रिकायें अधिकता से
प्रकार हिन्दी साहित्य अधिक समृद्धशाली हुआ।

सूदन दत्त, दीनबन्धु मित्र, गिरीशचन्द्र, अमृतलाल बोस, द्विजेन्द्र लाल राय इत्यादि ने नाटक क्षेत्र में बड़ा ही यश गौरव प्राप्त किया। मधुसूदन ने तिलोत्तमा, शर्मिष्ठा की रचना की दीनबन्धु मित्र ने नीलदर्पण लिखा। बंगला में अनेकों नाटकों का अनुवाद हुआ। इसी सदी में आत्म कथायें तथा जीवन चरित्र लिखे गये राजा राम मोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महाराजा मणीन्द्रचन्द्र नन्दी, अक्षयकुमार बसु के सुन्दर बंगला में जीवन चरित्र लिखे गये। तथा डा० टैगोर ने अपनी आत्म कथा लिखी।

बंगला के काव्य क्षेत्र की भी अच्छी प्रगति हुई। मधुसूदन ने मेघनाथ वध नामक काव्य की रचना की उन्होंने मिलटन के आधार पर चतुर्दश पदी (Sonnet) तथा अतुकान्त अर्थात् (Blank verse) का बंगला में प्रचार किया। बंगला काव्य पर पश्चिम का बड़ा प्रभाव रहा। रवीन्द्र नाथ टैगोर ने भारत में नहीं विश्व भर में अपना नाम पैदा किया। साहित्य के लिये नोबुल पुरस्कार प्राप्त किया उन्होंने अपने काव्य द्वारा बंगला भाषा को स्वच्छ तथा प्रभावशील भाषा बनाया। उन्होंने साहित्य में विस्तृत विषयों पर लिखा और भाषा को सुसम्पन्न बनाया। इनके अतिरिक्त कामिनि राय, बिहारी लाल चक्रवर्ती, सत्येन्द्र नाथ दत्त, नवीन सेन रंगलाल आदि ने अपने अपने काव्यों की रचना की बंगला भाषा में दर्शन तथा विज्ञान के ऊपर भी रचनायें की गईं। इस प्रकार आधुनिक युग में बंगला भाषा के साहित्य की बड़ी प्रगति हुई।

मराठी—अर्वाचीन मराठी साहित्य तीन युगों में बांटा गया है। प्रथम युग १८१८ से १८७४ तक का है। दूसरा १८७४ से १९१४ तक रहा तथा तीसरा १९१४ के बाद से आरम्भ हुआ।

प्रथम युग

इस युग में उपन्यास, कोष, व्याकरण इत्यादि ग्रन्थों की रचना की गई। ईसाई पादरियों ने अपने धर्म प्रचार के हेतु मराठी भाषा के कोष बनाये तथा व्याकरण की रचना की इनसे प्रेरणा ले दादो तथा पाण्डुरंग ने मराठी भाषा से व्याकरण की रचना कर डाली। वे इसी कारण से मराठी भाषा के पाणिनि कहलाते हैं। उपन्यास, नाटक,नीति शास्त्र,समाज शास्त्र, प्राकृत तथा अंग्रेजी व्याकरण पर विविध ग्रन्थ लिखे गये। इस युग को एक महत्वपूर्ण विशेषता यह भी रही कि पाश्चात्य सभ्यता ने अपने प्रभाव डाले और इसका यह परिणाम हुआ कि अंग्रेजी पुस्तकों के अधिकता से अनुवाद किये गये। अंग्रेजी तथा संस्कृत के नाटकों मराठी में अनुवाद किया गया। इस युग में अंग्रेजी प्रभाव के कारण साहि त्य में नवीन विचार धाराओं का उत्कर्ष हुआ। इसी प्रभाव में कावर गो.

देशमुख ने 'शतपत्रों' में आर्य संस्कृति और प्राचीन धर्म ग्रन्थों के सम्मान की आलोचना की और अंग्रेजी साहित्य की बड़ी प्रशंसा की पाश्चात्य विचारों में मोड़ करने का मार्ग बताया। [illegible] के क्षेत्र में देश हित के साथ साथ पाश्चात्य विचार धाराओं की स्पष्ट रूप से प्र[illegible] होती है। इस युग में दो प्रकार की प्रवृत्तियां काम कर रही थीं। एक तो अंग्रे[illegible] भावना के गुणगान करती थी दूसरी भारतीयता को सर्व श्रेष्ठ मान कर उस परम्पराओं को विकसित करना चाहती थी। इन विरोधी भावनाओं के समन्वय लिये भी प्रयत्न किये गये थे और इस युग का साहित्य अधिकतर परिवर्तन से प्रभावित होता रहा।

द्वितीय युग के निर्माण करने वालों में सर्व श्रेष्ठ स्थान विष्णु शास्त्री चिपलूणकर का है। इन्होंने महाराष्ट्र की उस मानसिक दासता तथा निर्जीवता का अन्त किया जो इस समय महाराष्ट्र के साहित्य में व्यापक थी। इनके मासिक पत्र की अल्पमाला ने एक प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न की। भारतीय संस्कृति का फिर से बोल बाला किया। प्राचीन भावना को जाग्रत किया। इन्होंने मराठा निबन्ध साहित्य में प्रभूत प्रगति की। मराठा लोगों में आत्म गौरव की महान् भावना को जाग्रत किया। इसी समय राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित होकर 'मराठा', 'केसरी' सन्देश इत्यादि पत्र निकाले गये। इन्होंने मराठा साहित्य में पुनर्जागरण कर दिया। सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक भावनाओं की साहित्य में अभिव्यक्ति हुई। और तिलक के देश प्रेम तथा त्याग ने साहित्य में नव जीवन संचार किया। तिलक ने 'केसरी' में वह प्रभावशाली लेख लिखे कि पढ़ने वालों में भारतीयता उमड़ पड़ी। 'गीता रहस्य' ने धार्मिक क्षेत्र में धूम मचा दी। हरिभाऊ आपटे ने 'पहेसुरचा वाय' तथा 'पणलक्षान्त कोण घेत' नामक सामाजिक उपन्यासों की रचना की। देव बान्वे ने 'शारदा' का निर्माण किया बा० म० जोशी ने 'सुशीलेचादेव' तथा श्रीपाद कृष्ण ने 'सुदाम्या चे पोहे' नामक नाटक लिखे। पारसनीस व राजा राम ने एतिहासिक साहित्य में नाम पैदा किया। 'सन्देश' तथा 'काल' जैसे पत्रों में उच्च कोटि के निबन्ध तथा आलोचनायें लिखी गईं। हरिभाऊ आपटे को मराठी उपन्यास का पिता कहा गया है।

इसी युग में अनेकों ऐसी संस्थाओं का स्थापन हुआ। जिन्होंने समाज तथा साहित्य की सेवा का बीड़ा उठाया। केलकर ने इतिहास, नाटक, काव्य की रचना कर साहित्य की असीम सेवा की और साहित्य सम्राट कहलाये। श्रीपाद कोल्हटकर, कृष्णाजी खाडिलकर, कराणा खिलौरकर नामक इसी युग के प्रसिद्ध नाटककार हुये। इन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा मराठी साहित्य को समृद्ध तथा सम्पन्न बनाया।

केलकर ने कवि व नाटककार के नाते महान सफलता प्राप्त की, उनका 'महाराष्ट्र गीत' आज भी प्रख्यात है।

काव्य क्षेत्र में कई प्रतिभाशाली कवि हुये। इन में विनायक, बालकवि ठोमरे, तांबे इत्यादि के नाम अधिक उल्लेखनीय हैं। विनायक सावरकर की कविता देश प्रेम तथा आधुनिक विचारों से ओत प्रोत है। 'अठारह सौ सत्तावन का स्वतन्त्रा समर' नामक ग्रन्थ ने मराठी साहित्य में विशेष स्थान प्राप्त किया है।

अन्य प्रभावशाली लेखक जिन्होंने इस युग को शोभा को बढ़ाया है। गडकरी, नाथ माधव साने गुरुजी, माडखोलकर, देश पाण्डे, कुमुदिनि प्रभावलकर आपटे, डा० केतकर अधिक प्रसिद्ध हैं। काव्य क्षेत्र में गिरीश, यशवन्त और माधव तथा उपन्यास क्षेत्र में खाण्डेकर, माडखोलकर तथा फड़के, विशेष रूप से प्रशंसनीय हैं। इन विद्वानों ने मराठी साहित्य में आधुनिक परम्पराओं को स्थापित किया और साहित्य को समृद्धिशाली बनाया।

१९३४ से आगे मराठी साहित्य का तीसरा युग आरम्भ होता है। इस युग का मराठी साहित्य जिज्ञासु साहित्य है। विशाल और व्यापक दृष्टिकोण, पाश्चात्य प्रभाव, सूक्ष्म तत्वों का विश्लेषण इस युग के साहित्य की विशेषता है। इस युग में एकांकी नाटक, भावगीत, छोटी छोटी कहानियां नवीन वातावरण से प्रभावित होकर खूब फैली। गम्भीर विषयों का सुन्दर भाषा में विवेचन कर खाण्डेकर फड़के और माडखोलकर ने अपनी महान योग्यता का पूर्ण परिचय दिया। विनोबा भावे, गाडगिल, राम चन्द्र जोग, नरहरी फाटक, कवीश्वर, काका कालेलकर ने समालोचनात्मक ग्रन्थों की रचना की। मुक्ता दीक्षित, नागेश जोशी, शकुन्तला पराञ्जपे, टिपरासि इत्यादि विद्वानों ने नाटकों की रचना की।

इस प्रकार मराठी साहित्य के तीसरे युग में भी अनेकों महान विभूतियों ने इस साहित्य को अपनी विशेष रचनाओं से सम्पन्नता प्रदान की।

गुजराती—१८वीं शताब्दी में गुजराती साहित्य की कोई विशेष प्रगति न हो सकी। फिर भी सन्त तथा भक्तों ने प्राचीन परम्पराओं को जारी रक्खा। इस सदी में 'गर्भा साहित्य' का उत्कर्ष हुआ। वल्लभ तथा हरीदास ने इस साहित्य पर अनेक रचनायें कीं। भगत कवियों में धीरा भगत, नीरान्त भगत तथा भोज भी प्रसिद्ध हैं। धीरा भगत ने पदों की रचना की और पदों द्वारा ही अपने उपदेश दिये। भोज द्वारा लिखे गये पद आज भी लोकप्रिय हैं और श्रद्धा से गाये जाते हैं। १९वीं सदी के मध्य में गिरधर ने रामायण की गुजराती में रचना की और आगे चल कर दिवाली बाई, राधाबाई, कृष्णाबाई इत्यादि ने भक्ति परम्पराओं को बनाये रखने में बड़ा योग दिया। दयाराम इस सदी का महान कवि माना गया है। उसकी हिन्दी के सूर, फारसी के हाफिज तथा अंग्रेजी के बायरन से तुलना की जाती है।

गुजराती साहित्य की प्राचीन शैली के यह अन्तिम कवि माने गये हैं। इन्‍ लगभग दो सौ ग्रन्थों की रचना की तथा सहस्त्रों पद लिखे। इसी समय गुजर साहित्य में वीर रस की कवितायें भी खूब लिखी गईं।

गुजराती गद्य का विकास विशेष रूप से अंग्रेजी सत्ता स्थापित हो जाने साथ साथ ही आरम्भ होता है। १८४८ में गुजरात में 'गुजरात वर्नाक्यूलर सोसायः की स्थापना हुई। इस संस्था ने गुजराती में ग्रन्थों की रचना के प्रयास किये आधुनिक गुजराती साहित्य का सूत्रपात करने के श्रेय दलपत राय तथा नर्मदा शं को दिया जाता है। दलपत राय की कवितायें बड़ी ही सरस और प्रभावशील भा में लिखी गईं हैं। उनमें प्राकृतिक सौन्दर्य की अधिकता है। पारसी लेखकों ने भं गुजराती साहित्य को समृद्ध बनाने में प्रभावशाली कार्य किया।

गुजराती गद्य में बाइबिल का अनुवाद किया गया। आधुनिक गद्य को उन्न करने में नर्मदा शंकर का महत्व पूर्ण हाथ रहा। उन्होंने 'राज्यरंग' नामक ग्रन्थ क रचना की और इतिहासिक साहित्य को अपनी देन प्रदान की। नवलराम दूसरे प्रसिद्ध गद्य लेखक हुये। रणछोड़भाई उदय राम ने नाटक को उच्च श्रेणी पर पहुंचाया, नन्दशंकर तुलजा शंकर ने उपन्यास लिख कर साहित्य की सेवा की। उनका 'करणघलो' उपन्यास अधिक प्रसिद्ध है। गोवर्धन राम का 'सरस्वती चन्द्र' नामक उपन्यास भी अच्छी गणना का उपन्यास है। आधुनिक लेखकों में, के० एम० मुन्शी धूमकेतु, चुन्नी लाल, महादेव देसाई, बलवन्त राम आचार्य इत्यादि अधिक प्रसिद्ध हैं। के० एम० मुन्शी ने जीवन चरित्र, नाटक, उपन्यास गल्प इत्यादि में सुन्दर कार्य किया है। इनके प्रसिद्ध उपन्यास, 'कौटिल्य' 'जय सोमनाथ' 'पृथ्वी वल्लभ' तथा 'भगवान परशुराम, हैं शैली के दृष्टिकोण से इनकी तुलना कारलाइल से की जाती है। इस प्रकार गुजराती साहित्य की महान उन्नति की गई और धीरे धीरे इसका साहित्यिक स्तर ऊंचा होता चला गया।

तामिल—इस भाषा का साहित्य प्राचीन है। परन्तु आधुनिक गद्य का विकास अंग्रेजी के साथ साथ आरम्भ होता है। वीर्य मुनि तथा अरमुग नावलर ने आधुनिक गद्य का सूत्रपात किया। ईसाई धर्म प्रचारकों ने १८३१ में 'तामिल पत्रिका' का प्रकाशन आरम्भ किया और इसमें सुन्दर लेख निकलने लगे। गद्य के प्रसिद्ध लेखक माधव है। राजम अय्यर श्रीनिवास शास्त्री, केशवराम मुदली, राजगोपालाचार्य इत्यादि अधिक प्रसिद्ध हैं। सूर्य नारायण शास्त्री, सरवन पिल्लई, माधवैह, राजम अय्यर ने सुन्दर उपन्यासों की रचना की। 'कमलाम्बा' नामक कृति राजम अय्यर के नाम को प्रसिद्ध किये हुये हैं। माधवैह ने 'पद्मावती' की रचना की और अरवन पिल्लई ने 'मोहनांगी' नामक ग्रन्थ लिखा। सुन्दर पिल्लई का स्थान नाटककारों की श्रेणी में उच्च स्थान प्राप्त करता है। भारती ने रहस्यवाद में अपना नाम पैदा

दिया। सूर्य नारायण शास्त्री ने तामिल भाषा में अच्छा कार्य किया और इसे सुसम्पन्न बनाया।

तेलगु—इस भाषा पर भी पाश्चात्य विचारों का प्रभाव पड़ा। १८२४ में एक अंग्रेज सी० पी० ब्राउन ने प्राचीन तेलगु ग्रन्थों का संकलन कर साहित्य की बड़ी सेवा की। अन्य प्रसिद्ध लेखक चिन्नयसूरी हुआ जिसने 'नीति चन्द्रिका' की रचना कर ख्याति प्राप्त की। इस भाषा के विद्वानों ने अंग्रेज़ी, संस्कृत तथा भारत की अन्य भाषाओं के ग्रन्थों के तेलगु में अनेकों अनुवाद किये। आधुनिक विद्वान लेखक वीरेशलिंगम ने विस्तृत क्षेत्रों में रचनायें कीं। नाटक, उपन्यास, गल्प तथा विज्ञान सम्बन्धित कृतियां रचीं। लक्ष्मी नरसिंहम, सुब्बारायड तथा कबुलु के नाम भी नाटक के क्षेत्र में प्रसिद्ध हैं। आजकल भी इस साहित्य की प्रगति के लिये अच्छा कार्य किया जा रहा है।

इनके अतिरिक्त भारत की अन्य भाषाओं ने भी आधुनिक युग में अच्छी प्रगति की। सिन्धी, पंजाबी, मलयालम, आसामी भाषाओं की भी उन्नति हुई। बंगाली पुनर्जागरण ने उड़िया साहित्य को आधुनिक विचार धाराओं से ओत प्रोत कर दिया। आसामी भाषा को चन्द्र कुमार तथा हेमचन्द्र गोस्वामी ने सम्पन्न बनाया।

इस प्रकार आधुनिक युग में भारत की भिन्न भिन्न भाषाओं में प्रभूत प्रगति हुई और पुनर्जागरण की प्रबल धाराओं ने इन विविध भाषाओं के साहित्य पर गहरी छाप लगाई। साहित्यिक क्षेत्र में भारत की प्राचीन महानतायें तथा गौरव का पुनर्जागरण हुआ और एक विलक्षण ढंग से पाश्चात्य विचारों का तथा भारतीय परम्पराओं का समन्वय हुआ यही आधुनिक युग की विशेषता रही।

Q. Give an account of the development Indian arts during the modern age.

प्रश्नः—आधुनिक युग में भारत की ललित कलाओं में जो प्रगति हुई उस का वर्णन करो।

उत्तरः—मुगल युग ललित कलाओं का स्वर्ण युग सिद्ध हुआ। वास्तु-कला, चित्र कला, सङ्गीत कला, नृत्य कला सभी क्षेत्रों में प्रभूत प्रगति हुई। सब कलाओं को मुगल सम्राटों का उदार संरक्षण प्राप्त हुआ। कला और कलाकार दोनों ने मुगल साम्राज्य के गौरव को बढ़ाया परन्तु मुगलों की अवनती के साथ ललित कलाओं की भी अवनति हो गई। और १८वीं सदी में तो कलाओं पूर्ण ह्रास हो गया। सृजनात्मक प्रतिभा तथा दृष्टि कोण की विशालता व्यापकता का अन्त हो गया। कलाकार होना मानों भूखा मरना था। ऐसी

में कला मृत रूप हो गई। इस पतन के अनेकों कारण थे। राज्याश्रय का अ कलाओं का शत्रु सिद्ध हुआ। मुग़लों के पश्चात अंग्रेजी सरकार ने कला की से आँखें मूंद लीं और विवश होकर कलाकार देशी राज्यों में चले गये। पाश्चा प्रभाव के कारण राजाओं, नवाबों तथा जन साधारण ने विदेशी वस्तुओं आकर्षित होना आरम्भ कर दिया और विदेशी कला कृतियों को पसन्द करने लगे प्रदर्शनियों में भारतीय वस्तुओं का स्थान विदेशी वस्तुओं ने ले लिया और भा के पाठ्य क्रम से भारतीय कलाओं के अध्ययन को पृथक कर दिया गया। आर्थि स्थिति ने कलाकार को अन्य धन्धा अपनाने के लिये विवश कर दिया। इ विविध कारणों से भारतीय ललित कलाओं को भारी आघात पहुँचाया और इन ह्रास होता चला गया।

परन्तु भारत में पुनर्जागरण ने अन्य क्षेत्रों की तरह ललित कलाओं क भी पुनर्जीवन प्रदान किया। उनमें प्रगति हुई और उनका ह्रास रुक गया कलाकारों एक बार फिर कला को जागृत कर दिया। उन महान व्यक्तियों जिन्होंने भारतीय कला को नव जीवन प्रदान किया और उसके महत्व को भारत तथा विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किया। फर्ग्युसन, हेवेल, पर्सी ब्राउन, सिस्टर निवेदिता, अवनीन्द्रनाथ टैगोर अधिक प्रसिद्ध हैं। इन महान विभूतियों ने प्राचीन कलाओं की प्रतिभा, सम्पन्नता तथा महानता पर प्रकाश डाला।

हैवेल ने भारत की ललित कलाओं का गहन अध्ययन किया, उसके महत्वपूर्ण तत्वों को खोजा और उसकी विशेषताओं को समझा और अपने मौलिक ग्रन्थ लिखकर इन कलाओं की महत्ता भारतीयों के सम्मुख प्रस्तुत की।

पर्सी ब्राउन ने वास्तु कला का अध्ययन किया। भारतीय भवन निर्माण कला के महत्वपूर्ण तत्वों को खोजा और तब इन की विशेषतायें विश्व के सामने रक्खीं।

डा० कुमार स्वामी ने प्रथम तो इङ्गलैण्ड में शिक्षा प्राप्त की फिर अमरीका में बोस्टन के अजायबघर के क्यूरेटर रहे, वहाँ रह कर इन्होंने भारतीय कला की ओर भारत का ही नहीं विश्व भर के कलाकारों का ध्यान आकृषित किया। उन्होंने भारतीय कलाओं की विलक्षणता का पूर्ण रूप से दिग्दर्शन किया।

अवनीन्द्रनाथ ने प्रथम तो योरोपियन शिक्षकों से शिक्षा ली परन्तु बाद में एक भारतीय कलाकार से शिक्षा ली और वह भारतीय कलाओं की ओर झुके। हैवेल ने उनकी अभिरुचि और भी तीव्र गति से भारतीय कला की ओर खींची। डा० टैगोर ने भी इस कलाकार को भारतीय कला को जागृत करने की प्रेरणा प्रदान की। इन प्रयत्नों का यह फल हुआ कि अवनीन्द्र नाथ ने एक नवीन चित्रण शैली का विकास किया और भारतीय कला के गौरव को बढ़ाया।

स्थापत्य कला:— जैसा ऊपर कहा गया है मुगलों के पतन के साथ २ उनकी भवन निर्माण कला का भी अन्त हो गया। जब योरुप के लोग भारत में आये तो उन्होंने अपने ही ढङ्ग से इमारतें बनवाईं। गिरजाघर तथा महल योरोपीय ढङ्ग पर ही बने। अंग्रेजों ने जब बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ते में राजधानी स्थापित करके सरकारी भवन बनवाये तो उनमें इङ्गलैण्ड के ढङ्ग के भवनों का ही अनुकरण किया गया। अंग्रेजों की देखा देखी भारत के राजाओं, नवाबों, सामन्तों तथा धनी लोगों ने भी अपने भवन उसी प्रकार के बनवाये। इस प्रकार योरोपीय भवन निर्माण कला का रिवाज बढ़ा। भारतीय स्थापत्य कला की ओर ध्यान न देने से यह विलुप्त होती गई।

बीसवीं सदी में भारतीय स्थापत्य कला के प्रशंसक पैदा हुए। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम ढङ्ग की इमारतें बनवाने के विचार का प्रचार किया परन्तु दूसरे मत के लोग पाश्चात्य ढङ्ग की शैलियों को ही अपनाना चाहते थे। दूसरे मत को प्रोत्साहन मिला और जब नई दिल्ली का निर्माण किया गया तो उसके भवन योरोपीय ढङ्ग के बनवाये गये। अंग्रेजी इञ्जीनियरों ने भारतीय शैलियों का प्रयोग नहीं किया। इन इमारतों में मौलिकता का अभाव है और डा० जेम्स फर्गुसन ने कड़े शब्दों में इन भवनों की शैली की आलोचना की है।

आजकल सीमेंट द्वारा जिन सस्ते भवनों का निर्माण किया जारहा है उनमें न तो प्राचीन भवनों जैसी दृढ़ता ही है और न कला लालित्य। इनमें सादगी ही दृष्टि गोचर होती है। इस प्रकार अंग्रेजी राज्य काल में भारतीय स्थापत्य कला की परम्परायें नष्ट हो गईं।

यह सब होते हुए भी कहीं २ राजाओं, धनी लोगों और नवाबों ने प्राचीन काल के भवनों के प्रकार के भवन बनवाये हैं। उदयपुर, जयपुर इत्यादि नगरों में सुन्दर तथा सुदृढ़ भवन निर्माण किये गये हैं और उनमें कला लालित्य स्पष्ट रूप से झलकता है। बनारस, हरिद्वार तथा मथुरा के अनेकों नवीन मन्दिर भारतीय वास्तुकला के प्रभाव को प्रगट करते हैं।

चित्र कला:—मुगल कालीन चित्र कला के साथ २ राजस्थानी शैली का भी उत्कर्ष हुआ था। यदि मुगल कला में विलासिता का चित्रण था तो राजस्थानी में धार्मिकता तथा आध्यात्मिकता अधिक प्रधान थी। मुगलों के पश्चात मुगल शैली के कलाकार लखनऊ तथा पटना चले गये और राजस्थानी कलाकार पंजाब की पहाड़ी रियासतों में आ बसे। वहाँ पर रहकर उन्होंने 'पहाड़ी शैली' को जन्म दिया। इस नवीन शैली में स्वाभाविकता प्रधान थी। इसके विषय भी विविध थे साधारण कृषक के चित्रण से लेकर पौराणिक गाथाओं का चित्रण किया गया इस शैली में प्राकृतिक सौंदर्य का भी अच्छा प्रदर्शन किया गया। पहाड़ी चित्रकार

में मोलाराम, माणुक और चैनु अधिक प्रसिद्ध हुए। उनकी कला कृतियाँ अलौकिक सिद्ध हुईं। राजा रणजीत सिंह के दरबार का प्रसिद्ध कलाकार कपूर पहाड़ी शैली का ही चित्रकार था। सिक्खों के पतन होने से कला का आश्रय जा रहा और भूकम्प आने से काङ्गड़े के अनेकों कलाकार नष्ट हो गये।

मुगल शैली तथा राजस्थानी शैली के कलाकार इधर उधर फैल गये। मुगल शैली के कलाकार जो चित्र बनाते थे उनमें सजीवता का अभाव रहता था। आगे चलकर इन्होंने पाश्चात्य प्रभाव को अपनाया। पटना में जो मुगल कलाकार थे उन्होंने पाश्चात्य प्रभाव के कारण एक नवीन शैली को उत्पन्न किया जो 'पटना शैली' के नाम से प्रसिद्ध हुई। इसमें भावना के साथ साथ कठोरता का भी तत्व विद्यमान हुआ।

१८ वीं सदी में मुसलमान कलाकारों ने हैदराबाद को अपना केन्द्र बनाया और हिन्दू कलाकारों ने तन्जौर तथा मैसूर में अपनी कला कृतियाँ निर्मित करना आरम्भ की। मैसूर में राजा कृष्णराज के समय में कला को अच्छा प्रोत्साहन मिला और कलाकारों ने सुन्दर कृतियों की रचना की। इसी प्रकार तन्जौर की राज सभा के आश्रय देने के कारण कला ने यहां भी अच्छी उन्नति की परन्तु धीरे २ इन स्थानों में भी कला का प्रभाव घटता ही चला गया और कला का पतन हो गया।

१९वीं सदी के अन्तिम अर्द्ध भाग में कलाओं की ओर फिर ध्यान दिया गया। कलाओं को प्रोत्साहन देने वाली अनेकों संस्थाओं की स्थापना की जाने लगी। बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ते में कला शालाओं का निर्माण किया गया। शिक्षा में भी कला को स्थान मिलने लगा। पाश्चात्य ढङ्ग पर चित्रकला की शिक्षा दी जाने लगी। इस प्रकार पाश्चात्य कला ने भारतीय कला को प्रभावित किया। केरल चित्रकार रवि वर्मा ने पाश्चात्य शैली को अपनाया और उसने अपने चित्रों में भारतीय भावनाओं को पाश्चात्य शैली में प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया परन्तु उसको इस कार्य में अधिक सफलता प्राप्त न हुई और उसके चित्र ऊंचे स्तर के न बन सके अपितु उनमें देदङ्गापन भी आगया। रवि वर्मा दोनों को अपने चित्रों में अच्छी प्रकार न निभा सके।

२०वीं सदी में चित्र कला में फिर उन्नति हुई और सच्चे कलाकारों की संख्या में वृद्धि होने लगी। कला के क्षेत्र में नव जीवन की प्रबल धारा बह निकली। पुनर्जागरण के कारण फिर से भारतीयता ने कला पर अपना गहन प्रभाव डाला और पाश्चात्य शैलियों को अपनाते हुए भी कला में भारतीयता का अस्तित्व रहा।

हैवेल तथा अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक आन्दोलन खड़ा किया और काल के क्षेत्र में अजन्ता तथा मध्यकालीन कला सिद्धान्तों के आधार अपनाने के लिये प्रेरणा दी। अवनीन्द्रनाथ ने एक नवीन कला शैली उत्पन्न की। इस शैली में पूर्वी तथा पश्चिमी तत्वों का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया गया। आगे चलकर यह नवीन शैली 'बङ्गाल शैली' कहलाई। अब चित्र बनाने में अजन्ता के चित्रों से प्रेरणा ली और कला में मौलिकता का प्रादुर्भाव हुआ, कला का स्तर फिर ऊंचा उठा।

अवनीन्द्रनाथ के कई प्रसिद्ध शिष्यों ने चित्र कला को अद्भुत प्रगति प्रदान की इनमें सबसे अधिक प्रतिभाशाली कृतियां नन्दलाल बोस की हैं जिनमें कल्पना शक्ति ने अनोखी विलक्षणता का प्रमाण दिया है। भावना तथा सजीवता से चित्र ओत प्रोत हो गये हैं। नन्दलाल बोस के अतिरिक्त असीत हलधर, सुरेन्द्र गङ्गोली तथा जैमिनी राय भी प्रगतिशील कलाकार हैं। उन्होंने चित्रकला को काफी ऊंचा उठाया है और इसको व्यापकता प्रदान की है। असीत कुमार हलधर के प्रयासों से लखनऊ में चित्रकला का केन्द्र स्थापित हो गया है जो निरन्तर रूप से कला का कार्य कर रहा है।

कला के बङ्गाल आन्दोलन ने अपने प्रभाव गुजरात में भी डाले। वहाँ भी चित्रकला की प्रगति हुई। अहमदाबाद में कला का एक केन्द्र स्थापित किया गया। रवि शङ्कर रावल ने इसका कार्य चलाया। इस केन्द्र ने कनु देसाई जैसे कलाकार को उत्पन्न किया। 'स्वाभाविक शैली' में अन्य कई प्रसिद्ध कलाकार हुए, इनमें हल्दनकर, आबालाल, धाखो, जे० पी० गङ्गोली तथा अतुल बोस विशेष प्रसिद्ध हैं। देवी प्रसाद राय चौधरी तथा रहमान चगताई भी उच्च कोटि के कलाकार हैं।

आधुनिक काल की एक विलक्षण चित्रकार अमृता शेरगिल हुई। इनने पेरिस तथा लन्दन में प्रसिद्धि प्राप्त की फिर भारत वापस आईं, और भारतीय कला में अद्भुत कार्य किया। इनके चित्र सरल तथा कोमल होते थे। अजन्ता के चित्रों की मौलिकता इस कलाकार के चित्रों में विशेष रूप से झलकती है। इनने भारतीय चित्रकला की परम्पराओं को सफल रूप से कायम रखा है। १९४१ में अमृता शेरगिल की मृत्यु से चित्रकला को भारी हानि पहुँचाई।

बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, जयपुर, लखनऊ तथा इन्दौर में [illegible] स्थापित हैं और इनके द्वारा कला का अच्छा कार्य हो रहा है। बम्बई के [illegible] [illegible] हेब्बर, चावड़ा रजा, [illegible] इत्यादि हैं। कलकत्ते के [illegible], [illegible] सेन अति अधिक प्रसिद्ध हैं।

में भारत नाट्यम, कथा कली, मनीपुरी तथा कथ्थक का खूब प्रचार हुआ है। भा
नाट्यम के नृत्यकार रुकमणि देवी, श्री रामगोपाल अधिक प्रसिद्ध हैं। इन्हों
इस नृत्य को खूब प्रचारित किया है। कथा कली कठिन नृत्य है। अधिकतर पु
ही इसको नाचते हैं परन्तु लासिया और मोहनी ने इस नृत्य पर वह काबू पाया
कि उनका यह नृत्य बड़ा ही आकर्षक और रुचिकर है। उन्होंने इस नृत्य
कमाल कर दिखाया है। कथाकली नृत्य की प्रवीण नृतकि मिमकी ने इस नृ
का प्रदर्शन कर अमरीका तथा योरुप में भारतीय नृत्य की धाक जमाई और भार
के गौरव का दिग्दर्शन किया। मनीपुरी नृत्य का प्रचार श्री रामगोपाल द्वा
हुआ है।

नृत्य कला का उच्च कोटि का कलाकार उदय शङ्कर है। इसने भारती
नृत्य को नवीनता प्रदान की है। लोक नृत्यों को फिर से पुनर्जीवित किया जार
है। भील नृत्य, संथालय नृत्य नागा नृत्य, के साथ साथ लोक गीतों का प्रचार भ
हो रहा है। इन नृत्यों में जन जीवन का प्रदर्शन दिखाई पड़ता है। नृत्य कला क
शिक्षा का प्रचार करने के लिये अनेकों संस्थायें कार्य कर रही हैं। इनमें अधि
प्रसिद्ध 'केरल कला मन्दिर' कला क्षेत्र, कुमारी नृत्य संघ तथा शांतिनिकेतन हैं।
यह नृत्य की प्रभूत प्रगति के अच्छे साधन सिद्ध हो रही हैं।

नाट्य कला और रङ्ग मंच:—आधुनिक युग में नाट्य कला की भी
उन्नति हुई। आरम्भ में नाट्य कला 'रास मण्डलियों' द्वारा प्रदर्शित की जाती थी
फिर थियेटर ने इसका स्थान लेलिया और पारसियों द्वारा कम्पनियाँ बना कर
पाश्चात्य ढंग पर नाटक किये जाने लगे। आरम्भ में ये भद्दे थे परन्तु धीरे धीरे
इनमें सुधार हुए और नाट्य कला तथा रंगमंच दोनों में सुन्दरता आई। नवीन ढंग
के 'नाटक मण्डल' तथा नाट्य गृहों की स्थापना हुई।

अब फिल्म उद्योग ने संगीत तथा नृत्य को प्रोत्साहन दिया है परन्तु इस
उद्योग के चलाने वालों में मुनाफा कमाने की अधिक रुचि रही है, इसलिये इसके
द्वारा समाज का हित होने के बजाय उसमें दूषित वृत्तियों का जन्म हुआ है।
राष्ट्रीयता के स्थान पर इनके अधिक विषय निम्न स्तर के प्रेम पर ही आश्रित रहे हैं।
परन्तु देश की स्वतन्त्रता के साथ २ फिल्म उद्योगों की भावना का परिवर्तन होना
अवश्यम्भावी है। अब संगीत, नृत्य तथा नाट्य कला में दूरगामी परिवर्तन होने
अनिवार्य हैं।

इस प्रकार अध्ययन करने से स्पष्ट हुआ कि अन्य क्षेत्रों की भाँति ललित
कलाओं में भी मुगल काल की अवनति के साथ साथ ह्रास और अधः पतन आया।
इनकी प्राचीन उच्च मनोहरता तथा कोमलता प्रायः नष्ट हो गई थी और कलाकार
की मिट्टी पिट गई थी, उसमें मौलिकता तथा सृजनात्मक भावना का अन्त हो

गया था, परन्तु भारत में आधुनिकता की सशक्त धारा ने कलाओं के क्षेत्र में भी क्रांति उत्पन्न की और धीरे धीरे कलाओं को पुनर्जीवन मिला। उनमें फिर से मौलिकता आई और वृद्धि उत्पन्न हुई। भारतीय नव जागरण ने कलाओं में भी नव जीवन का संचार कर दिया और अब इनमें प्रभूत प्रगति हो रही है।

Q.:—Give an account of the economic life of India during the modern age.

प्रश्नः—आधुनिक युग में भारत के आर्थिक जीवन का वर्णन करो।

उत्तरः—१८वीं सदी में भारत की राजनैतिक स्थिति में अस्थिरता विद्यमान थी। देश में स्वतन्त्र राज्यों की बाढ़ सी आगई थी। अंग्रेजी साम्राज्य धीरे धीरे फैल रहा था। देश में संघर्ष का बोल बाला था। चारों ओर पतन की काली घटायें छाई हुई थीं। ऐसी दशा में देश का आर्थिक जीवन भी पतन की ओर खिसका जा रहा था। देश में भुखमरी का ताण्डव नृत्य हो रहा था। उद्योग धन्धे शिथिल हो चुके थे और दिन के युद्धों के कारण कृषि अवनत हो गई थी। कृषक सुरक्षा का अभाव अनुभव करने लगे थे। यातायात के साधन नष्ट भ्रष्ट हो रहे थे। राजनैतिक संघर्षों के कारण किसी का इस ओर ध्यान ही न था। इसी सदी के अन्त तक आते आते देश का आर्थिक ढांचा प्रायः नीचे गिर चुका था और प्राचीन वैभव की सम्पन्नता एक स्वप्न बन चुकी थी।

इस प्रकार के आर्थिक पतन में योरोपीय शक्तियों ने महान भाग लिया। अंग्रेजों की आर्थिक नीति ने देश के उद्योगों का पूर्ण विनाश कर दिया। आरम्भ में इनकी नीति पूर्ण रूप से लूट खसोट की नीति बनी रही। भारतीय शोषण के चक्कर ने इनका ध्यान देश की उन्नति की ओर जाने ही न दिया।

इस आर्थिक पतन के और भी अनेकों कारण थे। प्रथम तो अंग्रेजी कम्पनी के अधिकारी कम्पनी के काम के अतिरिक्त अपनी जेब भरने में लगे हुए थे। वे कोई भी ऐसा अवसर न छोड़ते थे कि किसी भी प्रकार के वस्तु से अपना पेट भर सकें। इस प्रकार देश का धन अविराम गति से इंगलैंड खिंचा जा रहा था। उपहार, नीलाम तथा पेंशन इत्यादि से करोड़ों रुपया ऐंठा जाता था। कंपनी के एकाधिकार के कारण भारतीय व्यापार की वृद्धि रुक गई थी। देश की दरिद्रता बढ़ती चली गई।

पार्लियामेण्ट ने ऐसे कानून लागू किये जिनसे भारत के कुछ उद्योग नष्ट हो गये और भारतीय वस्तुओं का स्थान इंगलैण्ड के वस्त्रों ने ले लिया। इंगलैण्ड

में मशीनों का अधिकाधिक प्रयोग होने लगा और वस्त्र इत्यादि को अधिक मात्रा उत्पादन किया जाने लगा अब भारत में इस फालतू माल की खपत होने ल और भारत का अपना वस्त्र उद्योग जो अब तक भारत के अतिरिक्त विश्व के अ देशों की आवश्यकताओं की भी पूर्ति किया करता था शिथिल होकर वि सा हो गया।

देश के बाहरी तथा आन्तरिक दोनों प्रकार के व्यापार विदेशियों के हाथ चले गये और व्यापार द्वारा कमाया हुआ धन विदेशों में ही निरन्तर रूप से जा लगा। भारत में पूंजी का अभाव हो गया। भारत की विदेशी सरकार ने इ आर्थिक अवनति को रोकने के बजाय उलटा उसको आगे बढ़ाया उसने केवल उदासीनता की नीति ही नहीं अपनाई अपितु भारत की आर्थिक उन्नति बाधायें भी खड़ी कीं।

इन भिन्न भिन्न कारणों का यह फल हुआ कि भारत ने विश्व व्यापार में जो उच्च स्थान प्राप्त कर लिया था वह खो दिया और अब वह विदेशों के लिये कच्चे माल का देश रह गया और इङ्गलैण्ड के पक्के माल की विस्तृत मण्डी का काम देने लगा। भारत की कृषि की भी उपेक्षा की गई कृषक लगान देने, कच्चा माल पैदा करने के एक साधन मात्र रह गया उसके निम्न जीवन को उन्नत बनाने की ओर विदेशी सरकार का ध्यान ही न गया।

१६ वीं सदी के आरम्भ काल में भारत में आर्थिक स्थिति पूर्ण रूप से अवनत हो चुकी थी परन्तु जब देश में पुनर्जागरण हुआ सब क्षेत्रों में प्रगति हुई तो आर्थिक क्षेत्र में भी एक नवीन स्फूर्ति दृष्टिगोचर होने लगी। १६ वीं सदी का पूर्वार्द्ध में आर्थिक क्षेत्र में कोई प्रगति न हो पाई परन्तु १८५८ के पश्चात् भिन्न भिन्न कारणों से भारतीय वाणिज्य तथा उद्योगों में उन्नति होने लगी। १८६९ में स्वेज नहर का मार्ग खुल गया अब योरुप से भारत का सम्पर्क अधिक सुगम हो गया इसका फल यह हुआ कि इन योरोपीय देशों के साथ भारत का व्यापार अधिकाधिक प्रगति करने लगा इसकी मात्रा भी अधिक होती चली गई। विदेशों में कच्चे माल की अधिक मांग होने के कारण भारत में कपास, जूट, तिलहन तथा चाय का अधिक उत्पादन होने लगा और अंग्रेजी शासन द्वारा स्थापित शान्ति के कारण लोग अपनी आर्थिक व्यवस्था सुधारने का प्रयास करने लगे। यातायात के साधनों में सुधार होने के कारण देश के आर्थिक व्यापार में भी वृद्धि हुई।

पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क के कारण भारतीय लोगों में फैशनपरस्ती की वृद्धि हुई और लोगों में विलास विभव की वस्तुओं की मांग बढ़ी। यह सब वस्तुएं योरुप के देशों से विशेष कर इङ्गलैण्ड से अधिकाधिक मात्रा में आने लगीं और

भारत की कुटीर, उद्योग धन्धों द्वारा तैयार की हुई वस्तुओं की मांग घटने लगी। भारतीय बाजार विदेशी वस्तुओं से भर गये। इनमें रेशमी तथा सूती वस्त्र, फर्नीचर, लोहे की वस्तुएं, घड़ियां, चीनी व कांच की वस्तुएं, कागज, खिलौने, सुगन्ध तेल, साबुन, साईकिलें; मोटर; दियासलाई; टार्च इत्यादि सम्मिलित थीं। इन वस्तुओं के बदले में भारत की अधिकतर सम्पत्ति विदेशों में निरन्तर रूप से जाती रही।

इस सदी के अन्तिम वर्षों में जब भारतीय पुनर्जागरण हुआ तो यहां के शिक्षित तथा देश प्रेमी लोगों में अपनी आर्थिक दशा को सुधारने की अभिरुचि उत्पन्न हुई और अपने उद्योगों को सम्पन्न बनाने की सशक्त लालसा जाग उठी। इस नवीन विचार धारा का यह फल हुआ कि यहां के उद्योगपतियों ने योरोपियन लोगों के साथ मिलकर वैज्ञानिक ढंग के धन्धे स्थापित करने आरम्भ कर दिये। भारतीय पूंजी की कमी रहने के कारण विदेशी पूंजी काम में लाई गई। इस प्रकार उद्योग धन्धों का आधुनिकरण आरम्भ हुआ और भारत ने औद्योगीकरण के पथ पर पग बढ़ाना आरम्भ किया।

१८५४ में बम्बई में कपड़े का पहला मिल खोला गया। फिर १८७७ में कानपुर, शोलापुर तथा अहमदाबाद में भी कपड़े के मिल चालू कर दिये गये। फिर स्वदेशी के आन्दोलन ने कपड़े के भारतीय उद्योग को बड़ा प्रोत्साहन दिया और अनेकों भारतवासियों ने स्वदेशी वस्तुओं का आदर करना आरम्भ कर दिया इसका यह हुआ कि कपड़े के अनेकों मिल भिन्न भिन्न नगरों में स्थापित कर दिये गये परन्तु सरकार की उदासीनता की नीति इङ्गलैंड के सस्ते और अच्छे वस्त्रों की प्रतिस्पर्धा के कारण वस्त्र उद्योग उतना प्रगति शील न बन सका जितना इन बाधाओं के अभाव में बन सकता था।

१९ वीं सदी के पश्चात भारतीय व्यापारिक क्षेत्र में इङ्गलैण्ड के अतिरिक्त जर्मनी जापान तथा अमरीका और आ गये और इङ्गलैण्ड का सर्वोपरि अधिकार जाता रहा परन्तु प्रथम विश्वयुद्ध ने व्यापारिक प्रगति को रोक दिया। युद्ध के पश्चात फिर विश्वभर में १९३२ का आर्थिक पतन आया और अन्य देशों की तरह भारतीय व्यापार पर भी इसके कुप्रभाव पड़े। आगे चलकर द्वितीय विश्व युद्ध से भारत के व्यापार में फिर प्रगति आई और इसका विदेशी व्यापार अधिक उन्नत हो गया।

२० वीं सदी में अनेकों कारणों से अंग्रेजी सरकार को भी अपनी आर्थिक नीति बदलनी पड़ी। देश में राजनैतिक आन्दोलनों की मांग ने अंग्रेजी को उसकी उदासीनता तथा अकर्मण्यता का अन्त कर दिया और १९०५ में उद्योग

व व्यापार को उन्नत बनाने के लिये एक सरकारी विभाग खोला गया। 'Imperial Department of Commerce and Industries' था विभाग का कार्य भारत के उद्योगों तथा व्यापार की दशा की खोज करना तथ में प्रगति के साधन जुटाना था। फिर १९०४ में विश्वयुद्ध आरम्भ हो गया युद्ध काल की आवश्यकताओं ने अंग्रेजी सरकार को ये विदित कर दिया कि का औद्योगीकरण न करना उसकी अपनी ही मूर्खता है और दूसरी ओर राज दबाव ने भी सरकार को अपनी नीति परिवर्तित करने की प्रेरणा दी। फल हुआ कि १९१७ में सरकार ने म्यूनिशन बोर्ड की स्थापना की। इसका कार्य सामग्री के निर्माण तथा क्रय-विक्रय पर नियन्त्रण करना था परन्तु साथ देश की उद्योगिक व व्यापारिक दशा का ज्ञान प्राप्त करना भी था। १९१ एक Industrial Commission को इसलिये बनाया गया कि वह भा पूंजी को औद्योगीकरण में लगाने के साधन जुटाये और देश में औद्योगिक करने की योजना प्रस्तुत करे। इस कमीशन ने अपने जो सुझाव पैदा किये उ सरकार ने मानकर पूरा करने का प्रयास आरम्भ किया।

प्रान्तों की सरकारों ने भी इस दिशा में पैर उठाये और केन्द्रीय सर की नीति का अनुकरण किया। १९२१ में फिस्कल कमीशन तथा १९२३ में टै बोर्ड की स्थापना हुई। टैरिफ बोर्ड के सुझाव पर ही भारत के लोहे, क दियासलाई तथा शक्कर इत्यादि उद्योगों को संरक्षण प्रदान किया गया।

१९३२ में Indian tariff ammendment act पास किया गया जि अनुसार भारत में इङ्गलैण्ड या अन्य उपनिवेशों से आने वाली वस्तुओं को वि सुविधा प्रदान की गई। इस कार्य ने भारतीय वस्तुओं के निर्माण तथा व्या को नुकसान पहुँचाया परन्तु देश में व्यापारिक उन्नति होती ही रही। विदेशों समझौतों द्वारा भारत के व्यापार में अधिक प्रगति हुई और विदेशों में भारत व्यापार की देखभाल के लिये 'ट्रेड कमिश्नरों' की नियुक्ति होने लगी। इस प्र मन्द गति से औद्योगीकरण की ओर भारत बढ़ता गया।

यदि एक ओर सरकार बिना किसी विशेष उत्साह के भारत के उद्योग त व्यापार को उन्नत बनाने का प्रयास कर रही थी तो दूसरी ओर गैर सरक संस्थाओं द्वारा भी इस दिशा में कार्य हो रहा था। 'इण्डियन चैम्बर्स आफ कॉमर ने भारतीय उद्योग धन्धों के विकास का प्रयास किया।

१९३७ में प्रान्तों की कांग्रेसी सरकारों ने उद्योगों की दशा उन्नत कर की योजनायें बनाईं परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध ने इन सब कार्य को रोक दिया परन्तु इस युद्ध काल में भारत में अनेकों प्रकार की युद्ध सामग्री तैयार करने के अनेक

कारखाने खोल दिये गये। मुरादनगर के पास बम बनाने की एक विशाल फैक्टरी खोली गई। युद्ध के अन्त होने पर सरकार ने एक प्रभावशाली घोषणा की जिसमें यह बताया गया कि लोहे तथा फौलाद के कारखानों, कोयले की खानों, एन्जिन तथा जहाज बनाने के कारखानों, रासायनिक वस्तुओं के उद्योग पर सरकारी नियन्त्रण रहेगा। इसी बीच में भारत स्वतन्त्र हो गया और भारत के उद्योग पर से विदेशी सत्ता का अन्त हो गया। भारत को अपनी सरकार ने देश के उद्योग को उन्नत करने के दृष्टिकोण से राष्ट्रीयकरण की नीति अपनाने की घोषणा की। बड़े उद्योगों को प्रोत्साहन दिया और नये नये कारखाने स्थापित किये। सिन्दरी में कृत्रिम खादों के तैयार करने का विशाल कारखाना खोला गया। चित्तरञ्जनपुर में रेलवे एन्जिनों का निर्माण किया जाने लगा। बम्बई में पैनसिलीन जैसी उपयोगी वस्तु का बनाना आरम्भ किया गया। इस प्रकार देश में भिन्न भिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुएं तैयार होने लगीं। सीमेन्ट, कागज, रबर, रेशम, शक्कर, फौलाद इत्यादि का निर्माण होने लगा। खानों के खोदने का उद्योग भी प्रगति करने लगा। इस नवीन नीति का यह फल हुआ कि देश के कच्चे माल की खपत अधिकतर देश में ही होने लगी और अब यह कच्चे माल पैदा करने की मण्डी ही न रह गई। देश के आयात और निर्यात की नीति तथा दशा में भारी परिवर्तन आ गया।

विदेशों से आने वाली वस्तुओं पर नियन्त्रण कर दिया गया है और भारत सरकार की यह स्पष्ट नीति है कि विदेशों से कम से कम माल मंगाया जाये और विदेशों में अधिक से अधिक माल भेजा जाये ताकि देश का अधिकतर धन देश में रह कर देश क रचनात्मक कार्यों के लिये पर्याप्त हो सके और देश की राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो सके और देश से दरिद्रता का अन्त हो जाये। देश की पांचसाला योजना के अनुसार बिजली उत्पादन के अनेकों कार्यों पर काम किया जा रहा है। इस नवीन बिजली के प्राप्त होने पर भारत का औद्योगिकरण महान प्रगति से आगे बढ़ सकेगा और भारत भी अपनी आर्थिक समस्याओं का हल ढूंढ सकेगा।

श्रमिकों की समस्यायें

औद्योगिकरण में श्रमिक समस्यायें अनिवार्य रूप से जुड़ी रहती हैं। नवीन कारखानों में कार्य करने वाले श्रमिकों की अपनी अलग समस्यायें होती हैं। अधिक कार्य, कम वेतन, अशिक्षा, छोटे घर तथा अस्वस्थ वातावरण यह तमाम ऐसी कठिनाई हैं कि श्रमिक समस्या उत्पन्न हुये बिना नहीं रह सकता। श्रमिकों को एक सी समस्यायें उनको सुगमता से एक सूत्र में बांध देती हैं। एक ओर उद्योगपति को अधिक से अधिक लाभ की लालसा रहती है और वह श्रमिकों को कम से कम वेतन देकर अधिक से अधिक उत्पादन कराना चाहता है। वह न तो उनको चिकित्सा

के साधन जुटाता है, न उनके स्वास्थ्य का ध्यान करता है, न उनके बच्चों की शिक्षा का प्रबन्ध करता है, और न उनको रहने योग्य मकानों की व्यवस्था ही करता है। दूसरी ओर कल कारखानों में एक साथ कार्य करने के कारण श्रमिक आपस में अपनी कठिनाइयों के विचारों का आदान प्रदान करते हैं और धीरे धीरे एक प्रकार की ऐसी मनोवृत्ति उत्पन्न कर लेते हैं जिसका उद्देश्य कारखानों के मालिकों का विरोध होता है। इस प्रकार श्रमिक संघों का उदय और विकास होने लगता है।

ठीक ऐसा ही भारत के औद्योगिक क्षेत्र में हुआ और औद्योगिकरण के साथ साथ श्रमिकों की समस्यायें पैदा हुईं। उनके निवारण के लिये श्रमिकों में जागृति आई और उन्होंने अपने संघ निर्मित करना आरम्भ कर दिये। आरम्भ में यह संघ छोटे और स्थानीय होते रहे। फिर उनकी वृद्धि और व्यापकता में अधिकता आई और देश व्यापी संघों का निर्माण हुआ। प्रथम बार १८९० में बम्बई में मिल मजदूर सभा। १८९७ में रेल कर्मचारी समाज की स्थापना की गई। इस प्रकार छोटे छोटे संघ बनते रहे। परन्तु प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात श्रमिकों ने अपने देश व्यापी संघों का निर्माण करना आरम्भ कर दिया। १९१८ में बी० पी० वाडिया द्वारा 'मद्रास लेबर यूनियन' की स्थापना की गई। १९२० में नारायण मल्हार जोशी ने 'अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस' की नींव डाली। फिर 'अखिल भारतीय रेलवे मैन्स फैडरेशन' की स्थापना की गई। इन विविध संघों द्वारा श्रमिकों की मांगों की पूर्ति के लिये हड़तालों तथा अन्य प्रदर्शनों द्वारा संघर्ष चलाये जाने लगे और औद्योगिक क्षेत्र में एक नवीन संघर्ष रूपी वातावरण उत्पन्न हो गया। १९२६ में एक एक्ट पास किया गया जिसके द्वारा मजदूरों को अपने संघ बनाने की स्वीकृति दे दी गई और उनको यह अधिकार प्राप्त हो गया कि कानून का पालन करते हुये अपने विरोध का प्रदर्शन कर सकें। समय के साथ साथ इन संघों में आपसी मतभेद उत्पन्न होने लगे और कम्युनिस्टों ने इन संघों में भीषण मनोवृत्ति भरने के प्रयत्न आरम्भ किये। इसका यह परिणाम हुआ कि 'ट्रेड यूनियन कांग्रेस' के नरम दली सदस्यों ने पृथक होकर 'ट्रेड यूनियन फैडरेशन' नामक संस्था स्थापित करली। पुनः [illegible] १९३१ में ट्रेड यूनियन की उग्र विचारों वाली एक भिन्न संस्था और बनी इसका नाम 'इण्डियन रैड ट्रेड यूनियन कांग्रेस' रक्खा गया। इस प्रकार मजदूरों की एक प्रभावशाली संस्था में मत भेदों के कारण तीन भाग हो गये। परन्तु १९४० में यह भेदभाव दूर कर के फिर से ट्रेड यूनियन कांग्रेस तथा ट्रेड यूनियन फैडरेशन एक जगह मिला दिये गये। द्वितीय विश्व युद्ध के प्रति तटस्थ रहने की नीति के विषय में फिर मत भेद उत्पन्न हुआ और युद्ध प्रयत्न में सहायता करने के पक्षपातियों ने एम० एन० राय तथा [illegible] मेहता के नेतृत्व में एक पृथक संघ की स्थापना कर डाली। यह 'इण्डियन फैडरेशन आफ लेबर' नाम से प्रसिद्ध हुआ। १९४० में

'इन्डियन ट्रेड यूनियन कांग्रेस' में फिर मत भेद के कारण एक नवीन संस्था स्थापित की गई। यह 'इन्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस' के नाम से चालू की गई। इसमें कम्यूनिस्टों का प्रभाव न रहा और इस को राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं से प्रेरणा प्राप्त हुई। इस संस्था को अन्तर्राष्ट्रीय लेबर आफिस ने भी भारतीय श्रमिकों की प्रतिनिधि संस्था के रूप में मान लिया है। १९४८ में समाज वादियों द्वारा 'हिन्द मजदूर सभा' का निर्माण किया गया है।

यह सब संस्थायें श्रमिकों की दशा सुधारने के हेतु कार्य करती हैं और बड़ी सीमा तक इनको सफलता भी प्राप्त हुई है। भारतीय आर्थिक जीवन में इन मजदूर संघों का बड़ा ही महत्व पूर्ण स्थान है और इनकी महत्ता अधिकाधिक बढ़ती जा रही है।

इन संघों के दबाव के कारण सरकार ने अनेकों नियम बना कर मजदूरों की दशा सुधारने के प्रयास किये हैं और मिल मालिकों ने भी मजदूरों को सुविधायें दी हैं। १९११ में फेक्टरी एक्ट बनाया गया। जिस के अनुसार स्त्रियों के काम करने के घन्टे ११ कर दिये गये तथा बच्चों के ७ घन्टे कर दिये गये। बीच में आध घन्टे का अवकाश मिलने लगा। फिर १९२२ में एक दूसरा एक्ट बनाया गया। इसके अनुसार जवान पुरुष के काम करने के ११ घन्टे कर दिये गये। १२ वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखाने में काम करने से रोक दिया गया तथा बालकों के काम के घन्टे ६ कर दिये गये। सप्ताह में एक दिन की छुट्टी रहने लगी। इस प्रकार श्रमिकों को कुछ सुविधा प्राप्त हो गई। फिर १९२३ में वर्कमैन्स कम्पेनसेशन एक्ट पास किया गया। इसके अनुसार श्रमिक की मृत्यु हो जाने या उसके चोट लग जाने पर कुछ मावजा दिया जाने लगा। परन्तु अब तक मिली हुई सुविधायें बहुत ही कम थीं। इसलिये श्रमिक आन्दोलन बराबर जारी रहे और १९२९ में श्रमिकों की दशा सुधारने के हेतु एक रायल कमीशन की स्थापना की गई। इस कमीशन ने १९३१ में अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करदी और इस के अनेक सुझावों को सरकार ने व्यवहार में लाना स्वीकार कर लिया। १९३४ में इण्डियन फैक्टरीज एक्ट पास किया गया। इसके अनुसार श्रमिकों को कई सुविधायें प्रदान की गईं। एक सप्ताह में काम के ५४ घन्टे नियत कर दिये गये। बारह वर्ष तक के बच्चों को कारखानों के अन्दर काम करने से रोक दिया गया और उनके काम के ५ घन्टे कम दिये गये। स्त्रियों तथा बच्चों से दिन में ही काम लिया जा सकता था। अब सवैतनिक अवकाश का नियम भी बना दिया गया। कारखानों में स्वच्छ वायु तथा प्रकाश का भी प्रबन्ध कर दिया गया। १९३४ में ही 'ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट' के अनुसार यह व्यवस्था की गई कि श्रमिकों तथा कारखाने वालों का झगड़ा निपटाने के लिये स्वतन्त्र व्यक्तियों का एक समझौता बोर्ड बना दिया जावे।

१९३६ में दो एक्ट और पास किये गये। एक तो 'पेमेन्ट आफ वेजि एक्ट और दूसरा 'इन्डियन माइन्स एक्ट' प्रथम के अनुसार वेतन को नियमित क का प्रयत्न किया गया तथा दूसरे के अनुसार सप्ताह में ५४ घन्टे काम के लिये नि कर दिये गये। सप्ताह में एक दिन का अवकाश अनिवार्य कर दिया गय स्त्रियों तथा १३ वर्ष से कम आयु से कम के बच्चों को खानों में काम करने से दिया गया। १९४८ से एक एक्ट द्वारा खानों में काम करने वाले मजदूरों का प्रा डैन्ट फण्ड करने की व्यवस्था की गई। १९३७ में कांग्रेस सरकारों ने भिन्न भि स्थानों में श्रमिकों की दशा सुधारने के लिये कमेटियां बनाई गईं परन्तु इनमें कु कार्य न हो सका और कांग्रेस सरकारों को मन्त्री मण्डल छोड़ने पड़े।

१९४७ में इन्डस्ट्रियल डिस्प्यूट्स एक्ट पास किया गया जिसके अनुस ऐसे कारखाने वालों को जिन में सौ से अधिक मजदूर काम करते थे। झगड़े कारणों को दूर करने के लिये एक वर्क्स कमेटी बनाना अनिवार्य किया गया। इस प्रकार के झगड़ों को रोकने के लिये समझौता कराने वाले अधिकारियों नियुक्ति कर दी गई।

१९४२ में एक अन्य फैक्टरीज एक्ट पास किया गया जिसके अनुसा कारखाने में किसी व्यक्ति की नियुक्ति उस समय तक नहीं हो सकती थी जब त उसके स्वास्थ्य तथा सुरक्षा का पूरा २ प्रबन्ध न कर दिया जाय।

इस प्रकार भारत में उद्योग-धन्धों की प्रगति के साथ साथ श्रमिक समस्याओं का प्रादुर्भाव हुआ। श्रमिक आन्दोलन चले। श्रमिकों के संघ बनाये गये जिनके द्वारा मजदूरों की दशा को उन्नत करने के बराबर प्रयत्न किये गये और अनेकों नियम बना बनाकर मजदूरों को कुछ सुविधा अवश्य प्रदान की गई परन्तु यह सुविधायें अब भी अपर्याप्त ही हैं। आशा है कि राष्ट्रीय सरकार धीरे धीरे श्रमिकों की कठिनाइयों का पूर्ण रूप से निवारण कर देगी और आर्थिक जीवन अधिक सम्पन्न हो सकेगा।

बैंक व्यवस्था

वर्तमान आर्थिक जीवन में उद्योग धन्धों की प्रगति उस समय तक नहीं हो सकती जब तक पूंजी की समस्या हल न कर दी जाय। भारत में प्राचीन काल से ही पूंजी का नियन्त्रण भारतीय साहुकार वर्ग के हाथों में रहता था। महाजन सरवाड़ी, सेठ, सर्राफ ने ही इत्यादि लोगों को कर्ज देने का कार्य करते थे परन्तु उनके कर्जे की दर इतनी अधिक होती थी कि इनका दिया गया कर्ज ... ब्याज ही बढ़ता था। १८ वीं सदी तक भारत में बैंकों की कोई व्यवस्था न हो गई थी और अंग्रेजी कम्पनी तक इन साहुकारों से पूंजी का सम्बन्ध रखनी थी

परन्तु बैंक व्यवस्था होने के पश्चात भी इन साहूकारों का कार्य ग्रामों में आज तक भी चल रहा है हालांकि इसमें धीरे धीरे कमी होती जा रही है। १८ वीं सदी से बैंकों का बनना आरम्भ हो गया था।

आरम्भ में कलकत्ता तथा मद्रास में अंग्रेजी एजेन्सियों के बैंक स्थापित हुए। १८०६ में बैंक आफ बंगाल की स्थापना हुई। १८६० में बैंक आफ बोम्बे तथा १८४३ में बैंक आफ मद्रास की स्थापना की गई। १८७२ तक यह बैंक कम्पनी तथा अंग्रेजी व्यापारियों को कर्ज देने का कार्य करते रहे। आगे चल कर १९२१ में तीनों प्रेजीडेन्सी बैंकों को मिलाकर इम्पीरियल बैंक बना दिया गया।

देश में एक केन्द्रीय बैंकों की आवश्यकता बराबर अनुभव की जा रही थी। इसके लिये 'चेम्बरलेन कमीशन' तथा हिल्टन यंग कमीशनों ने विचार किया और एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना की व्यवस्था की सिफारिश की तब भारत में रिजर्व बैंक की स्थापना कर दी गई। देश के अन्य बैंकों पर इस केन्द्रीय बैंकों का नियंत्रण कर दिया गया १९४९ में इस बैंक का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है।

विदेशी व्यापार में सहायता पहुंचाने के हेतु विदेशी एक्सचेन्ज बैंकों का निर्माण हुआ। इनका कार्य विदेशी व्यापार में आयात निर्यात के लिये मुद्रा का विनिमय है। इन बैंकों की कमी के साथ साथ 'ज्वाइन्ट स्टाक' बैंकों की भी स्थापना की गई। धीरे धीरे बैंकों की वृद्धि होती चली गई। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात भी इन बैंकों की संख्या तथा व्यवस्था में उन्नति हुई है। व्यापार की वृद्धि के साथ साथ बैंकों के गठन में भी प्रगति हो रही है अब इनमें सरकारी नियन्त्रण की मात्रा भी अधिक हो गई है और इनके फेल होने के कम से कम अवसर आते हैं। कृषकों की आर्थिक दशा ठीक रखने के लिये कोआपरेटिव बैंकों की स्थापना की गई है। यह बैंक आजकल बम्बई, मद्रास तथा उत्तर प्रदेश में निरन्तर रूप से कार्य कर रहे हैं। बैंक व्यवस्था ने भारत के उद्योग धन्धों को बड़ी सहायता पहुँचाई है। यह देश के आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। इनकी व्यवस्था से देश में अधिक सूद पर कर्जा देने वाले साहूकारों को हानि अवश्य पहुँचाई है परन्तु इसके साथ ही साथ जनता को भारी संख्या को महान सुविधा प्रदान की गई है। बैंक व्यवस्था के कारण जनता का अधिकतर रुपया देश के बड़े बड़े उद्योग धन्धों के लिये प्राप्त हो सका है और व्यापार में भी बड़ी उन्नति हुई है।

कृषि

भारत कृषि प्रधान देश है कृषि की उन्नति अथवा अवनति पर ही देश उन्नति या अवनति अवलम्बित रहती है—रही है और सदा ही रहेगी। प्राचीन

में विविध उद्योग धन्धों के नष्ट भ्रष्ट होने के कारण खेती पर ही सारा न था परन्तु अंग्रेजी शासन की स्थापना ने भारत के आर्थिक सन्तुलन को नष्ट किया। उनकी नीति ने यहां के उद्योगों को नष्ट कर दिया और जीविका का एकमात्र साधन केवल कृषि ही रह गया। एक ओर बढ़ती हुई जनसंख्या, दूसरी ओर सरकार की विनाशक नीति और तीसरी ओर कृषि में पुराने ढंगों का प्रयोग इन सब ने मिलकर कृषि को असह्य बोझ से दबा दिया। कृषक दरिद्र से दरिद्र तर होता चला गया उसका कर्ज बराबर बढ़ता गया। जमींदारी प्रथा ने भी भारत की कृषि को हानि पहुँचाई। इस प्रकार कृषि की निरन्तर रूप से अवनति होती गई।

कृषि की उन्नति के लिये वैज्ञानिक ढंगों का प्रयोग आवश्यक हो गया था। उस पर से भार हटाने के लिये देश का औद्योगीकरण अनिवार्य हो गया परन्तु अंग्रेजी सरकार ने दोनों ही दिशाओं में अकर्मण्यता तथा उदासीनता दिखाई और कृषि की दशा बुरी बनी रही।

१८८० में प्रथम बार 'फैमीन कमीशन' की सिफारिशों के अनुसार प्रान्तीय सरकारों ने कृषि का अलग विभाग खोला। इन विभागों द्वारा कृषि को उन्नत करने के लिये कार्य होते रहे। १९०२ में पूसा में 'इन्सटीट्यूट आफ ऐग्रीकल्चर' की स्थापना हुई। जिसमें कृषि की उच्च शिक्षा की व्यवस्था की गई। १९०५ लार्ड कर्जन की महनत के कारण केन्द्रीय तथा प्रान्तीय कृषि विभागों को ठीक दशा में संगठित किया गया। १९०६ में इन्डियन ऐग्रीकल्चर सर्विस का निर्माण कर दिया गया। अब कृषि की वैज्ञानिक शिक्षा की व्यवस्था की जाने लगी। पूना में १९०८ में एक कृषि कालिज खोल दिया गया। इसके पश्चात इसी प्रकार के कालिज नागपुर, लायलपुर, कानपुर तथा अन्य नगरों में स्थापित किये गये और कृषि सम्बन्धी शिक्षा का अच्छा कार्य होने लगा।

१९१९ के सुधारों के अनुसार कृषि विभाग प्रान्तीय विभाग बना दिया गया परन्तु कृषि अनुसन्धान संस्थायें केन्द्रीय सरकार के कन्ट्रोल में बनी रहीं। १९२९ में लिनलिथगो कमीशन की सिफारिश के आधार पर 'इम्पीरियल कौन्सिल आफ ऐग्रीकलचरल रिसर्च' की स्थापना हुई जिसका कार्य कृषि अनुसन्धानों के कार्य को उन्नत करना तथा प्रान्तीय कृषि विभागों को सलाह देना था। १९३७ की कांग्रेस सरकारों ने कई ऐसे नियम बनाये ताकि कृषक की दशा सुधरे। उन पर जमींदार तथा महाजन अत्याचार न कर सकें। कर्जे से भी उनको बचाने के प्रयत्न किये गये इसके पश्चात भारत की दासता का अन्त हो गया और खेती को उन्नत बनाने के लिये विशेष रूप से कार्य होने लगा।

कृषकों को वैज्ञानिक ढङ्ग पर खेती करने के साधनों से परिचय कराया जा रहा है। बन्जर तथा बन भूमि को प्रयोग में लाया जा रहा है सिंचाई के लिये बांध बनवाये जा रहे हैं। कोआपरेटिव सोसाइटियों का निर्माण किया जा रहा है। जमींदारी प्रथा का उन्मूलन कर दिया गया है इस प्रकार कृषक को उसके शोषण करने वालों से छुटकारा दिया गया है और उसने चैन की सांस लेना प्रारम्भ की है परन्तु अब भी कृषि क्षेत्र में बहुत अधिक कार्य शेष है जिसको पूरा किये बिना कृषि की प्रगति अधूरी ही रहेगी।

सिंचाई और कृषि का गहरा सम्बन्ध है सिंचाई के बिना कृषि उन्नत हो ही नहीं सकती। अतः कृषि की दशा उन्नत करने के लिये सिंचाई के साधनों की ओर भी ध्यान दिया गया। जमुना से निकाली हुई पश्चिमी तथा पूर्वी नहर तथा गंगा से निकाली हुई नहरों को दोबारा मरम्मत तथा खुदाई कराई गई तथा दक्षिण भारत के बांधों का निर्माण कराया गया। १६०१ में कर्जन ने सिंचाई कमीशन नियुक्त किया और इसके सुझावों के अनुसार प्रान्तों में सिंचाई विभाग खोल दिये गये। अब इन विभागों के प्रयासों के कारण नई नहरें बनाई गईं। ट्यूब वैल, गहरे कुयें, बांध इत्यादि बनवाये गये। सिंचाई साधनों में सिन्ध का शक्कर बैरेज, पंजाब में सतलज योजना, मद्रास में कावेरी जल योजना, उत्तर प्रदेश में सारदा की नहर तथा दक्षिण भारत में भण्डारी बांध प्रसिद्ध साधन हैं।

भारत में राष्ट्रीय सरकार के कायम होने पर इस दिशा में बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य किया गया है। सिंचाई सुविधा बिजली उत्पादन के लिये बांध बनाये गये हैं तथा नहरें निकाली गई हैं नवीन योजनायें बना कर देश के विभिन्न भागों में यह कार्य निरन्तर रूप से चल रहा है।

पञ्जाब की भाखरा नांगल योजना, उत्तर प्रदेश की गण्डक नदी योजना, मध्य प्रदेश तथा बम्बई की नर्बदा-ताप्ती योजना, हैदराबाद तथ मद्रास की तुंगभद्रा योजना, बिहार की कोसी योजना तथा उड़ीसा का हीराकुण्ड बाँध और बिहार का दामोदर वैली बांध इत्यादि पर प्रगति के साथ कार्य किया जारहा है। इन योजनाओं के पूर्ण होने पर हमारा देश बड़ा ही समृद्ध हो जायेगा और हम कृषि से इतना उत्पन्न कर सकेंगे कि हम आत्म निर्भर हो जाँय। बिजली के अधिक उत्पादन से हमारे औद्योगीकरण को बड़ी सहायता प्राप्त हो जायगी। इस प्रकार देश का आर्थिक सन्तुलन स्थापित हो जायेगा।

दुर्भिक्ष की रोक थाम

प्राचीन काल में यातायात के साधनों के अभाव के कारण दुर्भिक्षों के देश का आर्थिक ढांचा छिन्न भिन्न हो जाया करता था। चारों ओर बिना

जाता था, परन्तु नवीन आधुनिक युग में आकर दुर्भिक्षों का सफलता पूर्व मुकाबला करने के लिये नये नये साधन अपनाये गये। १८८० में एक फेमि कमीशन बनाया गया जिसने इस प्रकार की सिफारिशें कीं कि किसानों को तका दी जाय, मालगुजारी में छूट दी जाय,मुफ्त आर्थिक सहायता दी जाय और दुर्भि से लड़ने के लिये एक 'फेमिन रिलीफ फण्ड' की स्थापना की गई। १९१९ के पश्चा प्रत्येक प्रांतीय सरकार प्रति वर्ष एक निर्धारित रकम इस फण्ड में जमा कर देती है। नये विधान के अनुसार अकाल का व्यय प्रान्तीय सरकार का विषय बना दिया गया है। इस प्रकार ऐसे साधन अपनाए गये हैं कि दुर्भिक्ष प्रथम तो होने ही न दिया जाय और यदि हो भी तो इसका इस प्रकार मुकाबला किया जाय कि देश की आर्थिक दशा पर अधिक प्रभाव न पड़ सके।

ग्राम और गृह उद्योग धन्धे

अंग्रेजों का भारत में शासन ग्रामों के लिये एक प्रकार का अभिशाप सिद्ध हुआ। गृह उद्योग तो प्रायः नष्ट हो गये और जीविका कमाने का मुख्य साधन कृषि ही रह गया। बढ़ती हुई जन संख्या का सारा भार कृषि पर आ पड़ा और देश का आर्थिक गठन हिल गया। कृषक की दशा हीन होने लगी। उसमें शिक्षा का अभाव हो गया। उसका स्वास्थ्य गिर गया और देश की रीढ़ की हड्डी दुर्बल और कमजोर हो गयी। अतः सर्व प्रथम राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी तथा उनके प्रचारक यन्त्र कांग्रेस ने इस ओर कदम उठाया। उनके प्रयास से अखिल भारतीय ग्राम उद्योग संस्था स्थापित की गई। इस के पश्चात सरकार ने भी ग्राम उद्धार की ओर ध्यान दिया। १९२१ में बम्बई के गवर्नर सर फ्रेडरिक ने ग्रामोद्धार की एक योजना बनाई जिसके अनुसार जिला कमैटियाँ बनाई गईं। वह जिलाधीशों के अधीन करदी गईं। १९३५ में ग्रामोद्धार के लिये दो करोड़ से अधिक रुपया खर्च किया गया परन्तु इसका पूर्ण प्रयोग न किया जासका। १९३७ में प्रांतों की कांग्रेस सरकारों ने ग्रामोद्धार की ओर विशेष ध्यान दिया। ग्रामों में छोटे छोटे उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन दिया। बीज गोदाम स्थापित किये गये। प्रौढ़ शिक्षा का प्रचार किया। इस प्रकार ग्रामों में नवीन जागृति की नींव पक्की की। १९४७ के पश्चात से स्वतन्त्र भारत की सरकार ने केन्द्रीय तथा प्रान्तीय स्तर पर ग्रामों की दशा उन्नत बनाने के लिये विशेष रूप से प्रयास करने आरम्भ कर दिये हैं। भारत ग्रामों का प्रदेश है। यदि ग्राम उन्नत होगा तो देश भी उन्नत होगा। यदि ग्रामवासी सुखी और समृद्ध होगा तो देश भी शक्तिशाली बन सकेगा अन्यथा नहीं। भारत को महान बनाने के लिये ग्राम को महान बनाना पड़ेगा। इसी में भारत की उन्नति छिपी है। भारत की आर्थिक स्थिति ग्राम की आर्थिक स्थिति पर निर्भर है। इस महान तथा विशाल और विस्तृत प्रदेश में आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ तथा

न्नुलित करना है तो कितना भी औद्योगिकरण कर दिया जाय, ग्रामों के गृह द्योगों की समुन्नत करने तथा कृषि की दशा को सुधारने की नीति अपनाये बिना ह हो ही नहीं सकेगा। हमारी राष्ट्रीय सरकार इस सत्य को जानती है और इसी लिये वह ग्रामोद्धार को महत्व देकर ग्रामों की आर्थिक दशा सुधारने में प्रयत्नशील है।

यातायात के साधन

किसी देश की आर्थिक प्रगति में उसके यातायात के साधन महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। यदि वह साधन अच्छे हैं तो आर्थिक ढाँचा भी अच्छा होगा अन्यथा दुर्बल और शिथिल। भारत जैसे विशाल तथा विस्तृत देश के लिये यह यह सत्य और भी महत्वपूर्ण रहा है।

मौर्य काल में सड़कों तथा जल मार्गों की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया गया था। इसी कारण से देश का आन्तरिक व्यापार प्रगति के शिखर पर पहुँच गया था। फिर शेरशाह ने भी जल मार्गों के महत्व को समझा और सुरक्षित जल-मार्गों की स्थापना की परन्तु कम्पनी के समय इन मार्गों की दशा बिगड़ गई और कम्पनी ने केवल फौजी महत्व के रास्तों की ओर ध्यान दिया। प्रथम बार विलियम बैंटिङ्ग ने इस प्रकार की योजना बनाई कि कलकत्ते को उत्तर प्रदेश के मुख्य नगरों से मिलाया जाये। इसी योजना के अनुसार लार्ड डलहौजी ने कुछ कार्य अवश्य शुरू किया। उसने एक नवीन विभाग 'पब्लिक वर्क्स' की नींव डाली। इसके अधीन नहरों, सड़कों तथा रेलों का निर्माण कार्य रक्खा गया। आगे चलकर यह विभाग तीन भिन्न २ विभागों में बाँट दिया गया। फिर मोटर यातायात को प्रगति देने के लिये रोड निर्माण की एक योजना बनाई गई और इस आशय से स्टेंडिङ्ग कमेटी आफ रोड्स बनाई गई और सड़कों के बनाने के हेतु 'रोड फण्ड' की स्थापना कर दी गई।

१९४३ में नागपुर में विविध प्रान्तों के चीफ इंजीनियरों की एक सभा हुई और सड़क निर्माण के लिये एक पाँच साला योजना बनाई गई जिसको १९४७ से कार्य रूप में परिणित किया गया और प्रान्तों में अनेकों सड़कों का निर्माण कराया गया। आज देश में कई लम्बी लम्बी सड़कें हैं जिनमें निम्नलिखित अति प्रसिद्ध हैं–
१-दिल्ली कलकत्ता सड़क। २-कलकत्ता मद्रास सड़क। ३-मद्रास बम्बई सड़क। ४-बम्बई दिल्ली सड़क।

इनके अतिरिक्त देश के अन्य भागों में भी सड़कों का निर्माण किया गया। मोटर यातायात को बड़ा प्रोत्साहन दिया जारहा है। मोटरों के यातायात का धीरे धीरे राष्ट्रीयकरण हो रहा है। अब ग्रामों तथा छोटे २ कस्बों को भी मोटरों द्वारा मिलाया जारहा है।

रेलवे यातायात ने दूर २ के स्थानों को अधिक निरट कर दिया है। व्यापार ो इतनी उन्नति प्रदान की है कि देश का व्यापार निरन्तर रूप से बढ़ रहा है और ा की आर्थिक दशा निरन्तर रूप से सुधर रही है।

डाक विभाग

यातायात के साधनों में डाक विभाग का भी अधिक महत्व है। उसकी वस्था ने भी देश की आर्थिक दशा के सुधारने में अच्छा योग प्रदान किया है। क की व्यवस्था तो पहले भी थी परन्तु अंग्रेजी शासन में इसको अधिक उन्नत ाया गया। डलहौजी ने एकसे पोस्ट कार्डों का प्रबन्ध कर दिया। उसने १८५४ में र व्यवस्था भी आरम्भ करदी। सर्व प्रथम कलकत्ते से आगरे तक टैलीग्राफ इन डाली गई। आरम्भ में डाक तथा तार विभाग प्रथक थे परन्तु १६१४ में ही जगह सम्मिलित कर दिये गये। स्वतन्त्र भारत सरकार ने छोटे २ ग्रामों भी डाक खाने खोल दिये हैं। अब हिंदी में भी तार भेजे जाते हैं।

टेलीफोन का भी अब दिन प्रतिदिन प्रयोग बढ़ता जारहा है, परन्तु धिक व्यय के कारण साधारण जनता इसका कम ही प्रयोग करती है। छोटे २ रों तथा ग्रामों में इसकी अभी तक व्यवस्था नहीं हो पाई है। भारतीय व्यवसाय लीफून ने बड़ी ही सुविधा प्रदान कर दी है। हमारी राष्ट्रीय सरकार की नीति फोन को अधिकाधिक उन्नत करने की है।

ध्वनि विस्तार तथा नागरिक उड्डयन अपेक्षाकृत भारत में देर से आरम्भ ा। १९२७ में 'इण्डियन ब्रौडकास्टिङ्ग कम्पनी' ने बम्बई तथा कलकत्ते से ध्वनि तार का कार्य आरम्भ किया, परन्तु १६३० में इस कम्पनी का दिवाला निकल ा। फलस्वरूप ध्वनि विस्तार का कार्य सरकार को अपने हाथों में लेना पड़ा ाल इण्डिया रेडियो सर्विस की स्थापना कर दी गई। १९३६ में दिल्ली यो स्टेशन कायम कर दिया गया। ध्वनि प्रसार के लिये भिन्न २ स्थानों पर यो स्टेशन खोल दिये गये हैं और भिन्न २ भाषाओं में विविध प्रकार के समाचार गाने इत्यादि इन स्टेशनों से प्रसारित किये जाते हैं।

प्रथम तो वायुयानों का प्रयोग केवल युद्ध कार्यों में किया गया था परन्तु ीय विश्व युद्ध के पश्चात वायुयानों का प्रयोग शांतिपूर्ण कार्यों के लिये भी किया लगा, और भारत में सिविल एविएशन विभाग की स्थापना कर दी गई। मनपुर में सिविल एविएशन ट्रेनिंग सैण्टर भी कायम कर दिया गया। १९४५ में ही एक सैण्टर इलाहाबाद में कायम कर दिया गया। अब वायुयानों का प्रयोग यों के लिये भी किया जाने लगा है। भारत के मुख्य नगरों को 'एयर सर्विस' जोड़ दिया गया है। भारत से विदेशों में यात्रियों को लेजाने के लिये १६४८

में एक कम्पनी की स्थापना की गई। इस कम्पनी के वायुयान मिश्र होते लन्दन तक जाते हैं। इस कम्पनी का नाम एयर इण्डिया इण्टरनेशनल लिमिटेड १६४६ में दूसरी कम्पनी भारत एअर वेज़ लिमिटेड की स्थापना की गई जिस वायुयान कलकत्ते से पूरब की ओर जाते हैं। इन कम्पनियों के अतिरिक्त अनेक विदेशी कम्पनी भी भारत में अपने वायुयान भेजती हैं। इस प्रकार भारत वायुयानों का प्रयोग दिनों दिन अधिक होता जारहा है। यात्रियों के अतिरिक्त इनका प्रयोग डाक तथा माल लाने लेजाने के लिये भी होने लगा है।

आशा है कि जल्दी ही वायुयान व्यापार में अधिक सहायक सिद्ध होंगे और व्यापार की काया पलट ही हो जायेगी।

जल मार्ग

संसार भर में प्राचीन समय में जब रेल तथा मोटर न थे नदियाँ यातायात के मुख्य साधन थीं। अधिकतर व्यापार इन ही के द्वारा होता था। भारत में भी यही हालत थी। सिंध नदी में समुद्र से कटक तक नावें चलती थीं। यमुना, गंगा, सतलज, ब्रह्मपुत्र इत्यादि अनेकों नदियाँ माल लाने लेजाने में सहायक थीं, परन्तु नवीन साधनों के उत्पन्न होने से जल मार्गों का महत्व घट गया है, फिर भी नदियाँ अबभी व्यापार तथा यात्रा के लिये काममें लाई जा रही हैं। नावों का स्थान स्टीमर ने ले लिया है। दक्षिणी भारत में अब भी जल मार्गों द्वारा काफी व्यापार किया जाता है। मद्रास प्रान्त में गोदावरी तथा कृष्णा की नहरें व्यापार के अच्छे साधन हैं। पश्चिमी बङ्गाल में आज भी नदियों द्वारा माल लेजाया जाता है। कलकत्ते से बहुत सा माल देश के अन्य भागों में लेजाया जाता है। इस प्रकार आज भी जल मार्ग अपनी उपयोगिता रखते हैं। भविष्य में भी यह उपयोगिता कम या अधिक बनी ही रहेगी। जल मार्गों का किसी भी देश की आर्थिक व्यवस्था में अपना भाग रहता है।

बन्दरगाह

विदेशी व्यापार में किसी भी देश के बाहरी व्यापार में महत्वपूर्ण स्थान रहता है। प्राचीन काल में भारत के विदेशी व्यापार के कारण उत्तरी तथा पूर्वी घाटों पर अनेकों बन्दरगाह थे। अंग्रेजी शासन काल में कई नवीन बन्दरगाहों की स्थापना की गई। इन बन्दरगाहों को रेलों द्वारा देश के मुख्य २ नगरों से मिला दिया गया है। मुख्य बन्दरगाह बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, कोचीन हैं। इनके अतिरिक्त पूर्वी तट पर कटक, गोपालपुर, मसुली पट्टम, नागा पट्टम, तूती कोरन इत्यादि अधिक प्रसिद्ध हैं। पश्चिमी तट पर पोरबन्दर, बाङ्गलौर, भावनगर, कालीकट अधिक प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त और भी कम प्रसिद्ध बन्दरगाह हैं।

त बन्दरगाहों ने सदा से भारत के विदेशी व्यापार में महत्वपूर्ण भाग लिया है और
ाज भी लेरहे हैं तथा भविष्य में भी लेते रहेंगे। भारत का समुद्र तट अधिक कटा-
ा न होने के कारण इस पर अच्छे सुरक्षित बन्दरगाहों का अभाव रहा है। कई
न्दरगाह तो कृत्रिम ढंग से बनाये गये हैं।

इस प्रकार का अध्ययन करने से प्रकट होता है कि प्राचीन काल में भारत
ार्थिक दृष्टि से समृद्ध था। यह सन्तुलित था परन्तु जब अंग्रेज सत्ता भारत में
ापित हुई तो देश की आर्थिक दशा शोचनीय हो रही थी। राजनैतिक हलचलों
कारण व्यापार और उद्योग धन्धे तथा कृषि सबको हानि पहुंच रही थी। भारत
ी अर्थ व्यवस्था निम्नतम स्तर पर पहुंच गई थी। अंग्रेजों का उद्देश्य भारत से
धिकाधिक धन लेजाने का था। आरम्भ में इसी उद्देश्य से अंग्रेजी कम्पनी की
र्नैतिक नीति निर्धारित होती रही। अपने माल की खपत करने के लिये यहाँ
उद्योगों को सहायता तो पहुँचाई ही नहीं उल्टी हानि ही पहुँचाने की नीति
पनाई। फल यह हुआ है कि यहां के उद्योग धन्धे प्रायः नष्ट हो गये, क्योंकि वह
ने विदेशी माल का मुकाबला नहीं कर सकते थे। कृषि के प्रति भी अंग्रेजों की
ी उदासीनता की नीति रही और कृषि भी अवनत हो गई, परन्तु भारत के
ट जागरण का प्रभाव आर्थिक क्षेत्रों में भी पड़ा और देश की आर्थिक स्थिति को
ारने के लिये लोगों में तीव्र लालसा उत्पन्न हुई। कृषि की उन्नति के लिये
ान्दोलन किये गये। फिर अंग्रेजी सरकार की नीति में भी परिवर्तन हुआ। तब
ृषि की उन्नति के लिये योजनायें बनीं। उद्योग धन्धों की दशा उन्नत करने के
ास किये जाने लगे। ग्रामोद्धार के कार्य अपनाये जाने लगे। भारत के यातायातकी
ोर ध्यान दिया गया, मोटरों तथा रेलों के प्रयोग होने लगे। डाक तार की व्यवस्था
ेक की गई। इनसे देश के व्यापार में बड़ी सहायता मिली। ग्राम तथा गृह उद्योगों
ो उन्नत करने में राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी का बड़ा ही हाथ रहा है। खद्दर भंडार
ापित कर उन्होंने देश के गरीबों की सहायता ही नहीं की अपितु देश की
ार्थिक दशा को भी समुन्नत किया। नवीन युग में गांधी प्रथम नेता था जिसने
ारत की आर्थिक व्यवस्था को ठीक २ समझा और इसको सुदृढ़ बनाने के लिये
ागों की ओर देखा। उसने कृषक तथा ग्राम शिल्पी की सन्तुष्टि में ही देश की
ान्तुष्टि देखी। कृषक तथा गृह शिल्पी को महान बनाने में ही उसने देश की
हानता का स्वर्ण स्वप्न देखा। वह दूर दर्शी नेता था। उस के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष
ार्यों ने देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने में अपना पूरा पूरा योग प्रदान किया
है। राष्ट्रीय सरकार के सत्तारूढ़ होने से हमारे देश की आर्थिक व्यवस्था धीरे धीरे
उन्नत होती आरही है। यद्यपि इस दशा में काफी कार्य हुआ है परन्तु अभी तो
हुत कुछ शेष है जो पूरा करना है। देश की दरिद्रता का भयानक भूत अभी तक

देश में रुका हुआ है. उसको यहां से भगाये बिना देश उन्नत नहीं हो सकता।

आर्थिक होना ही देश के उन्नत या अवनत होने का दर्पण होता है। भारत का आर्थिक ढाँचा बहुत कुछ सुधारा गया है और आशा है जल्दी ही हमारा आर्थिक भविष्य उज्ज्वल हो जायेगा।

Q. Discuss the influences of West on Indian culture.

प्रश्न—उन प्रभावों की विवेचना कीजिये जो पश्चिमी सभ्यता ने भारतीय सभ्यता पर डाले।

उत्तर—भारत में मध्य युग में पदार्पण करने के साथ साथ प्राचीन प्रशोक धाराओं ने एक नवीन रूप धारण कर लिया था। और हिन्दू संस्कृति की चेतन्यता जिसके आधार पर भारत ने विश्व भर का पथ प्रदर्शन किया था। धीरे विलीन होना आरम्भ हो गई थी। हिन्दू धर्म की प्राचीन व्यापकता, विशालता और सहिष्णुता धीरे धीरे अवनत होती जा रही थी। परन्तु मुगल शासन के अन्त तक भारत की प्राचीन परम्परायें विविध क्षेत्रों में अपने प्रभाव डालती रहीं और भारतीय संस्कृति अपनी विशेषताओं को बनाये रही। परन्तु मुगल शासन के अवनत होने के साथ साथ भारतीय सभ्यता भी अवनत हो गई। चारों ओर अध:पतन का वातावरण व्याप्त हो गया। १८वीं सदी के मध्य से आगे बढ़ते बढ़ते भारतीय संस्कृति की प्राचीन सशक्त धारायें शुष्क तथा नीरस होकर नष्ट भ्रष्ट हो गई। भारतीय साहित्य, ललित कलायें, दर्शन, गणित, शिक्षा संस्थायें इत्यादि सब समान रूप से अवनति के गहरे गढ़े में गिर गई थीं। समाज कुप्रथाओं तथा अन्ध विश्वासों से दब कर कराह रहा था। धर्म व्यर्थ तथा निरर्थक आडम्बरों से भर गया था। उसके उदार दृष्टिकोण का अन्त हो चुका था। उसमें अब वह प्राचीन भावना न रह गई थी जिसके बल पर उसने अनेकों विदेशी तत्वों को सुन्दर ढंग से अपने साथ विलीन कर लिया था। अब भारत की वृद्ध अवस्था हो गई थी। राजनैतिक क्षेत्र में भारत की दशा और भी खराब थी। देश छोटे छोटे संघर्षात्मक राज्यों में विभाजित था। कोई सुदृढ़ राजनैतिक सत्ता ऐसी न थी जो देश की बिखरी हुई शक्तियों को एक जगह केन्द्रित कर देती और देश का पथ प्रदर्शन करती। मराठा शक्ति देश भर में सबसे अधिक प्रभावशाली थी। परन्तु उसने संगठित रूप से और एक योजना को अपना कर कार्य न किया। इसलिये वह भी देश को स्थाई लाभ न पहुँचा सकी ऐसे समय में पाश्चात्य देशों की शक्तियों ने भारत के राजनैतिक मञ्च पर अपना नाटक आरम्भ किया। भारतीय सांस्कृतिक धारायें और

खंड हो चुकी थीं। पश्चिम से बहने वाली सशक्त धारा के प्रभाव से डगमगा कर गिरने लगी। अंग्रेजी सत्ता ने स्थापित होकर देश की व्यवस्था में अस्त-व्यस्तता उत्पन्न करदी। सारा समाज गड़बड़ा गया। चारों ओर का वातावरण शून्य हो गया।

अंग्रेजी जाति स्वभाव से प्रगतिशील सिद्ध हुई है। यह क्रान्तियों में विश्वास न करके विकास में विश्वास रखती है। परिवर्तन का उस समय स्वागत करती है। जब वह अनिवार्य हो जाता है इसके अतिरिक्त भारत में तो उसको अपना साम्राज्य बना कर उसको दृढ़ बनाना था। इस आशय से उसका मुख्य उद्देश्य ये होना ही था कि उन समस्त तत्वों को जो साम्राज्य को शक्तिशाली बनाने में अपना योग प्रदान करें। एकत्रित करके संगठित करे। इसलिये अंग्रेजों ने प्रतिक्रियावादी तत्वों को संगठित करना और उनको शक्तिशाली बनाना आरम्भ कर दिया। इन अनुदार तत्वों ने अंग्रेजी साम्राज्य को दृढ़ करने और स्थायी रूप देने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये। फल यह हुआ कि जिन व्यक्तियों तथा संस्थाओं ने भारत में परिवर्तन करना चाहा उनका अंग्रेजों तथा उनकी संगठित तथा उत्पन्न की हुई शक्तियों ने घोर विरोध किया और देश की प्रगति को भी भारी आघात पहुंचाया।

अंग्रेजों ने ऐसी नीति अपनाई कि हम भारत के रहने वाले अपने प्राचीन गौरव को ही भूल गये और हम अपने आत्म गौरव तथा आत्म सम्मान की भावना खो बैठे। फल यह हुआ कि हमारे विचार तथा कार्यों में एक विरोध सा उत्पन्न हो गया। हमारी सामाजिक तथा राष्ट्रीय प्रगति कुण्ठित हो गई। आर्थिक क्षेत्र में वैभवहीनता तथा दरिद्रता फैल गई और भुखमरी का नग्न नृत्य होने लगा। धार्मिक क्षेत्र में अन्धविश्वासों तथा निरर्थक कर्मकाण्डों का विस्तार हो गया। प्राचीन पवित्रता का ह्रास हो गया। नैतिकता, जिसकी प्रशन्सा करते करते प्राचीन काल में आने वाले विदेशी थकते ही न थे। अब एक विस्मृत कहानी बन गई। उस समय का पतन इतना अधिक था कि आज भी हमारा समाज भ्रष्टाचार, पक्षपात तथा चोर बाजार जैसे असामाजिक बुराइयों से भरा हुआ है। इतना ही नहीं हुआ अपितु अंग्रेजों ने कभी कभी उन प्रभावों को रोकना चाहा जो पाश्चात्य सम्पर्क के कारण भारत में उत्पन्न होने लगे थे। राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में जो नवीन विचार धारायें उत्पन्न होने लगी थीं। उनको प्रोत्साहित न किया गया।

फिर भी पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति ने हमारी संस्कृति पर गहरे प्रभाव डालने आरम्भ कर दिये। इन प्रभावों के कारण हमारी प्राचीन धारणायें, विश्वास, परम्परायें तथा प्रथायें हिल उठीं और हमारा प्राचीन ढांचा धराशाही होने लगा। हम भारतवासी अपना संतुलन खोने लगे। पाश्चात्य सभ्यता की चका चौंध ने हम को पथ भ्रष्ट सा कर दिया और हम अपने गौरव मय इतिहास को भूल कर अपनी

संस्कृति को छोड़ पश्चिम की ओर देखने लगे। हम ने विवेक शून्य हो कर सभ्यता की प्रत्येक वस्तु तथा विचार का अन्धा अनुकरण आरम्भ कर दिया। वेशभूषा हमारे ढंग योरप के लोगों जैसे होने लगे। बंगाल के कई प्रसिद्ध ईसाई हो गये और इस प्रकार अनेकों ने भारत की प्रत्येक वस्तु का बहिष्कार आरम्भ कर दिया। धीरे धीरे यह धारा प्रवाह वेग पूर्ण होता चला गया भारतीयता को भीषण हानि होने लगी।

परन्तु भाग्यवश भारतीय सभ्यता और समाज में ऐसे तत्व उत्पन्न जिन्होंने भारतीय नवाभ्युत्थान और पुनर्जागरण को उत्पन्न किया और पाश्चात्य का अन्धा अनुकरण करने की हानिकारक धारा को रोक दिया। परन्तु पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति ने भारतीय सभ्यता पर अपने गहरे प्रभाव डाले और ये अनेकों प्रकार से स्थाई सिद्ध हुये। इन प्रभावों को देखने के लिये हमको भाषाओं के साहित्य, समाज, धर्म, विज्ञान, ललित कलाओं, धार्मिक विचार, नैतिक विचार इत्यादि सभी को देखना पड़ता है। क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र में ही पाश्चात्य विचार धाराओं ने अपने प्रभाव छोड़े हैं।

शिक्षा

पश्चिमी सम्पर्क के कारण शिक्षा क्षेत्र पूर्ण रूप से परिवर्तित हो गया। धर्म प्रचारकों ने भारत में शिक्षा प्रसार में बड़ा योग दिया अनेकों स्थानों पर उन्होंने अपने शिक्षण केन्द्र स्थापित किये। फिर अंग्रेजी सरकार को अपनी आवश्यकता हेतु अंग्रेजी पढ़े लिखे मनुष्यों की जरूरत अनुभव होने लगी इस कारण से उन्होंने अंग्रेजी भाषा को फैलाना चाहा। अनेकों भारती भी अंग्रेजी शिक्षा की प्रगति चाहने लगे। फल यह हुआ कि लार्ड मैकाले के प्रयत्नों से शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी कर दिया गया। इसके बाद निरन्तर रूप से अंग्रेजी शिक्षा देने वाली संस्थाओं की वृद्धि होती गई। अंग्रेजी शिक्षा के फैलने से कई दूरगामी प्रभाव पड़े। समाज में शिक्षित और अशिक्षित का भेद भाव उत्पन्न हुआ और दोनों वर्गों में विशाल खाई बन गई। मध्यम वर्ग का प्रादुर्भाव हुआ और इस वर्ग ने आगे चल कर राजनैतिक आन्दोलनों में महत्वपूर्ण भाग लिया। इस वर्ग की अपनी विशेष प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हुईं और उनके हल करने की ओर ध्यान गया। इस प्रकार एक विशेष प्रकार का वातावरण देश में उत्पन्न हुआ।

देशी भाषाओं का साहित्य

देशी भाषाओं का साहित्य पाश्चात्य विचारों से खूब प्रभावित हुआ। इसके विषय, दृष्टिकोण, साहित्यिक विचार धारायें पाश्चात्य प्रभाव में रंगी गईं। उन्होंने पाश्चात्य विचार धारा से प्रेरणा लेनी आरम्भ कर दी। अंग्रेजी पढ़ने से भारत में धर्तेव अंग्रेजी साहित्य तक ही नहीं हुई अपितु इसके द्वारा योरप के अन्य देशों

विविध ग्रन्थों तक भी हुई। इन विविध ग्रन्थों के अध्ययन से पश्चिमी के नवीन नवीन प्रगतिशील विचार भारत में फैले। स्वतन्त्रता, राष्ट्रीयता, स इत्यादि के नवीन सिद्धान्तों ने भारतीय मस्तिष्क में महान क्रान्ति उत्पन्न क हमारे राजनैतिक आन्दोलनों में जिन नेताओं ने भाग लिया उनके विचार प विचारों पर ही आधारित थे। उन्होंने योरप के नेताओं का ढङ्ग अपनाने के किये अपने आन्दोलनों को पश्चिमी ढङ्गों से ही चलाया। इन विचार धारा हमारे साहित्यिक क्षेत्र पर प्रभाव डाले। योरोपीय ग्रन्थों तथा पुस्तकों से ल सामग्री हमारे साहित्य में आती गई। भारत का आधुनिक गद्य साहित्य साहित्यिक ग्रन्थों के अनुवाद से ही आरम्भ होता है। उनके अनुवाद के साथ वहाँ की गद्यशैली को अपने मूल ग्रन्थों के लिखने में भी काम में लाया गया प्रकार विचार तथा शैली दोनों का ही अनुकरण किया गया।

गद्य साहित्य के अतिरिक्त काव्य, नाटक, उपन्यास पर भी पाश्चात्य ने गहरे प्रभाव डाले। नाटक के क्षेत्र में पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रगट हो हमारे नाटककारों ने अपने विचार, शैली तथा विषय योरोपीय नाटकों के पर बनाये। सामाजिक तथा वैयक्तिक विषय योरोपीय नाटकों की विशेषता है ढङ्ग भारत के नाटककारों ने भी अपनाया। बर्नार्डशा, गाल्सवर्दी की शैल विचार भारत के अनेकों नाटकों में स्पष्ट रूप से प्रगट होती है। यहां पर नाटक तथा समस्या नाटक की रचना पाश्चात्य प्रभाव का ही प्रत्यक्ष फल हैं। के प्रसिद्ध नाटककारों की रचनाओं में पश्चिम की शैली तथा विचार धारा स्पष्ट से प्रगट होती है। लक्ष्मी नारायण मिश्र, अश्क, प्रेमी, कैलाशनाथ भ इत्यादि की रचनायें इस प्रभाव के सजीव उदाहरण हैं।

उपन्यास तथा छोटी कहानियों की रचना पर भी पश्चिम के साहि अपना विशेष प्रभाव डाला। आरम्भ में तो पश्चिमी उपन्यासों के अनुवाद कि परन्तु बाद में मौलिक उपन्यासों की रचना की गई। इन मौलिक उपन्य विषय, शैली तथा विचार धारा अधिकतर पश्चिमी प्रभाव में ही रंगी समालोचना का साहित्य भी पाश्चात्य प्रभाव से न बच सका। आलोचनात्मक इस प्रभाव को स्पष्ट रूप से प्रगट करते हैं। काव्य क्षेत्र पर भी पाश्चात्य खूब पड़ा है। Sonnet का अनुकरण करके 'चतुर्दश पदिश' लिखी गई। Verse का स्थान 'अतुकान्त कविता' ने लेलिया तथा Ode के स्थान पर गीत की रचना हुई। Lyrics के स्थान पर भी हिन्दी में कविता की जाने अतुकान्त कविताओं में अयोध्या सिंह उपाध्याय ने हिन्दी में ख्याति प्राप्त की। बंगला में मधुसूदन दत्त ने अच्छा नाम कमाया। अंग्रेजी विचारों तथा

अनुकरण छायावादी कवितायों में भलि भाँति किया गया। इस प्रकार पाश्चा काव्य ने भारतीय काव्य पर अपना अच्छा प्रभाव डाला।

प्रादेशिक भाषाओं की उन्नति में ईसाई धर्म प्रचारकों तथा पादरियों महान कार्य किया। इन लोगों ने प्रादेशिक भाषाओं द्वारा प्रचार करने के हेतु इ भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करने के प्रयत्न किये और इन भाषाओं के कोष त व्याकरण बनाई। इन विद्वानों ने इन भाषाओं के इतिहास भी लिखे। मुद्रणाल स्थापित किये। इन भाषाओं के प्रचार तथा प्रसार के लिये अनेकों संस्थायें स्थापि की गई। १८४८ में 'गुजरात वर्नाक्यूलर सोसायटी' की स्थापना हुई और मरा भाषा की उन्नति में पादरियों ने बड़ा योग प्रदान किया। इन प्रादेशिक भाषा के पत्र तथा पत्रिकायें निकाली गई। मुद्रणालय स्थापित किये गये।

१८१३ में 'बंगाल समाचार' नामक प्रथम पत्र निकाला गया। १८२२ 'बम्बई समाचार' नामक गुजराती समाचार पत्र प्रकाशित किया जाने लगा। १८४ में हिन्दी का सर्व प्रथम समाचार पत्र 'बनारस अखबार' के नाम से निकला। इ समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं ने जन साधारण को विश्व भर की प्रगतिशील घटनाओं से सम्बन्धित कर दिया और उन साहित्य के प्रति प्रेम की भावना जागृत करदी।

संस्कृत भाषा के क्षेत्र में पाश्चात्य विद्वानों ने सर्व श्रेष्ठ कार्य किया। चार्ल्स विल्किंस सर विलियम जोन्स, कोलब्रुक, विल्सन, विलियम्स, मैक्समूलर आदि विद्वानों ने संस्कृत भाषा का गहन अध्ययन किया। इन्होंने संस्कृत के अनेकों ग्रन्थों के अध्ययन किये फिर उनका अनुवाद किया और अनेकों ग्रन्थों का संकलन किया। विलियम जोन्स ने जब वह कलकत्ते की सुप्रीम कोर्ट का न्यायाधीश था। एक 'बंगाल एशियाटिक सोसायटी' की स्थापना की जिसका उद्देश्य पूर्वी ज्ञान की खोज करना था। इस पाश्चात्य विद्वानों के निरन्तर परिश्रम से भारत के अनेकों ग्रन्थ प्रकाश में आये और वह साहित्य जिसको भारत भूल गया था। फिर से उसके सम्मुख प्रस्तुत किया गया। इससे भारत के साहित्यिक क्षेत्र में एक अद्भुत क्रान्ति उत्पन्न हुई। इस प्रकार भारत की भावना में एक नवीन प्रगति हुई। इसका श्रेय पाश्चात्य विद्वानों को ही जाना चाहिये।

ललित कलायें

अपने ह्रास के कारण भारत अपनी प्राचीन ललित कलाओं के गौरव को भी भूल चुका था। वास्तु कला, चित्र कला, संगीत कला आदि का ज्ञान विस्मृत सा हो गया था। परन्तु मिस्टर निवेदिता, हैवेल, फर्ग्युसन तथा हिन्दू स्टुअर्ट जैसे महान विद्वानों के प्रयास से हम ने फिर अपने प्राचीन वैभव को जाना अपनी कलाओं की परम्पराओं को एक बार फिर पहचानने का सुअवसर पाया। कुमारस्वामी, मार्शल, पर्सी ब्राउन, स्मिथ, टाड इत्यादि विद्वानों ने हमारी प्राचीन वीर गाथाओं

पर प्रकाश डाला और हमारे प्राचीन गौरवमय अतीत की हमको याद दि
भारत की महानता को विश्व के सन्मुख प्रदर्शाया। इन पाश्चात्य विद्वानों ने
शिला लेखों की खोज की। उस पर लिखी हुई बातों का विश्लेषण किया
में खुदाई करके अनेकों ऐतिहासिक घटनाओं की खोज कर डाली। इस प्रकार
कलाओं के क्षेत्र में योरोपीय विद्वानों ने महत्व पूर्ण कार्य किये।

वैज्ञानिक प्रगति

मध्य युग में विज्ञान की प्रगति शून्य हो चुकी थी। अन्वेषण कार्य रू
था। और न इस क्षेत्र में लोगों की रुचि ही रह गई थी। परन्तु पश्चिम के
में आने के कारण भारत वासियों ने इस बात को देखा कि योरप की तीव्र
का मुख्य कारण उसका विज्ञान तथा अन्वेषण कार्य ही है। विज्ञान के आवि
द्वारा ही योरप की काया पलट की गई है। वैज्ञानिकों के प्रगतिशील दृष्टि
ही योरप के अन्धविश्वासों का अन्त किया है और धार्मिक बन्धनों तथा सा
कुरीतियों को नष्ट भ्रष्ट किया है।

इस महान प्रगति को देखकर भारत में विज्ञान के प्रति आकर्षण
हुआ और उनकी तीव्र लालसा इस बात की हुई कि वैज्ञानिक आविष्कारों
देश की काया पलट कर दी जाय। इस प्रकार पश्चिम के सम्पर्क के कारण
में विज्ञान की वृद्धि हुई। अन्वेषण तथा अनुसन्धान का महत्वपूर्ण कार्य
गया। भारत में एक बार फिर सत्य की खोज की जाने लगी। इसका फल य
कि भारतीय शिक्षण संस्थाओं तथा विश्व विद्यालयों में विज्ञान के शिक्षण क
किया गया। अनेकों प्रयोगशालायें स्थापित की गईं जिनमें महत्वपूर्ण प्रयो
जाने लगे। बङ्गलौर का 'इण्डियन इन्स्टीट्यूट आफ साइन्स' इसी प्रक
महत्वपूर्ण संस्था है।

शिक्षा के इस प्रकार प्रसारित होने का यह फल हुआ कि भारत में
विश्व विख्यात वैज्ञानिक उत्पन्न हुए जिनके कार्य ने विश्व विज्ञान में
अलौकिकता की विशेष छाप लगाई और विज्ञान को आगे बढ़ाया। इनमें स
एस० बोस, सर सी० बी० रमन, पी० सी० रोय आदि अधिक प्रसिद्ध हैं।
की प्रगति आज भी अविरल गति से आगे की ओर बढ़ रही है।

भारतीय राजनीति

पाश्चात्य सम्पर्क ने राजनैतिक क्षेत्र में बड़े ही दूरगामी प्रभाव
योरप की राजनीति में इस समय बड़े ही प्रबल तथा क्रान्तिकारी विचार
प्रवाहित हो रहे थे। राष्ट्रीयता समानता तथा स्वतन्त्रता के स्वस्थ सिद्धान्त
के जीवन का अंग बन चुके थे। ये विचार तथा सिद्धान्त भारत में भी आये

ारत इन विचारों को पाकर सजीव और चैतन्य होने लगा । यहाँ के लोगों में तन्त्रता प्राप्ति की लालसा अधिक तीव्र हो उठी । मैजनी, गैरीबाल्डी तथा ोलियन के कारनामे पढ़ पढ़कर भारत के नवयुवकों की नाड़ियाँ फड़कने लगीं त्साह ने उनको क्रान्तिकारी बना दिया । इस प्रकार पाश्चात्य विचारों, व्यक्तियों ा घटनाओं ने भारत पर प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष प्रभाव डालना आरम्भ किया और ो के राजनैतिक वातावरण में स्फूर्ति के बीज बोये ।

अंग्रेजी शासन ने देश में एकता, समानता तथा वर्गहीनता के उत्पन्न होने सहायता की और इसके अतिरिक्त यहाँ के ग्रंथों का अध्ययन करने से फ्रांस की न्ति का नारा 'आजादी' 'समानता' तथा 'भ्रातृता' भारतवासियों के कानों में जने लगा । इङ्गलैण्ड की रक्तिम तथा रक्तहीन क्रान्तियाँ और उनके सिद्धान्त रत वासों को उत्साहित करने लगे । देश में प्रजातन्त्र वादी विचारों का आधिक्य ता गया । इन नवीन विचारों ने देश प्रेमियों के दिलों को झकझोर दिया और में असन्तोष की एक प्रबल धारा का प्रवाह हुआ । देश के मध्यम वर्ग ने तन्त्रता की मांग करना आरम्भ कर दी और उनकी मांग धीरे धीरे शक्ति सञ्चय ती रही और अन्त में सफल होकर रही ।

हमारी राजनीति में साम्यवाद, समाजवाद के विचार प्रवेश कर गये उन्होंने न्तिकारी तत्वों को नवीन सिद्धान्त और विचार प्रदान किये और हमारे देश में आधुनिकता का भी प्रादुर्भाव हुआ । पाश्चात्य सम्पर्क ने भारतीय राजनीति प्रगतिशील बना दिया ।

'भारतीय समाज'

पाश्चात्य सभ्यता ने हमारे सामाजिक क्षेत्र में भी अपनी गहरी छाप लगाई ाज में विचारों की उथल पुथल के कारण दो तत्वों को उत्पन्न किया । प्रथम जो प्राचीनता से लिपट कर रहना चाहता था । प्रत्येक प्रकार की प्रगति को ना चाहता था । अतीत की दुहाई देता था समस्त सुधारवादी आन्दोलनों का ोध करता था । समाज की सड़न, कुरीतियों को दूर करने में ही उसको भय त होता था । यह अनुदार तथा रूढ़िवादी तत्व था परन्तु दूसरी ओर प्रगति त तत्व भी शक्ति ग्रहण करता जा रहा था और प्राचीन कुरीतियों का विनाश ा चाहता था । जाति प्रथा को खण्डन करता था । वर्गीकरण को अभिशाप ता था । बहु विवाह, दासी प्रथा पर्दा प्रथा इत्यादि कुरीतियों को नष्ट करना ता था । इस प्रकार के संघर्षों से समाज में प्रगति और प्रवाह की भावना जाग्रत । सामाजिक आन्दोलनों का प्रादुर्भाव हुआ और राजाराम मोहनराय जैसे पथ र्शकों ने भारत में एक नवीन प्रकार की वृत्ति उत्पन्न कर दी । सती प्रथा और

क़ानूनी करार दे दी गई। दास प्रथा का अन्त कर दिया गया। जाति प्रथा पर भारी आघात लगा है इसके बन्धन बहुत हद तक ढीले हो चुके हैं और होते जा रहे हैं। शिक्षित वर्ग तो पूर्ण रूप से इनकी अवहेलना करने लगा है। हमारे आचार विचार, खान-पान, वेश भूषा प्रत्येक पर पाश्चात्य सभ्यता ने प्रभाव डाला है। कोट और पतलून ने इस अधिकता से जड़ पकड़ी है कि अधिकतर लोग इनका प्रयोग करने लगे हैं। सामाजिक क्षेत्र में व्यक्तिवाद के सिद्धान्त ने अपना प्रभाव डाला और व्यक्ति अपने अस्तित्व को पूर्ण रूप से समझने लगा।

समाज में जाग्रति आने से स्त्रियों में भी जाग्रति आई। उन्होंने अनेक आन्दोलन चलाने के प्रयास करने आरम्भ किये। धार्मिक तथा सामाजिक बन्धनों के खिलाफ़ उन्होंने अपनी आवाज उठाई। शिक्षित महिलाओं ने पर्दे को तिलाञ्जलि दे दी। वह पुरुषों के समान अधिकार माँगने लगीं। उनको अनेकों सफलतायें प्राप्त हुई और उनकी दशा सुधारने के लिये अनेकों संस्थाओं का जन्म हुआ।

भारतीय धर्म

धार्मिक क्षेत्र में भी पश्चिम की संस्कृति ने अपने प्रभाव डाले। धार्मिक अन्धविश्वासों तथा रूढ़ियों का अन्त होने लगा और उनके स्थान पर तर्क तथा विवेक से काम लिया जाने लगा। बौद्धिवाद ने लोगों के दिलों में हलचल उत्पन्न कर दी। पुरानी श्रद्धा का अन्त होने लगा धार्मिक क्रियाओं तथा कर्मकाण्डों पर आघात होने लगे। पुरोहित वर्ग की धार्मिक ठेकेदारी हिल उठी और घराशायी होने लगी। भौतिक वाद का प्रचार हुआ धार्मिक तत्वों को अपनी तर्क कसौटी पर कसा जाने लगा और जो सिद्धान्त इस कसौटी पर पूरे न उतरे उनको पृथक कर दिया जाने लगा। भारतवासी हिन्दु धर्म के प्राचीन कर्म काण्डों तथा निरर्थक क्रिया विधियों से जन साधारण इतना ऊब गये थे कि वह उनसे छुटकारा पाना चाहते थे और पाश्चात्य दर्शन का स्वागत होने लगा था। इतना ही नहीं बल्कि अनेकों प्रमुख बंगाली हिन्दु धर्म को ढकोसलों का धर्म समझ कर इसको छोड़ ईसाई बनने लगे और इस प्रकार हिन्दु धर्म का अधःपतन बढ़ने लगा। परन्तु भारत की पुनर्जागरण की क्रान्ति ने इस विरोधी क्रिया को रोका और राजा राम मोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना कर डाली जिसका उद्देश जाति प्रथा का खण्डन, बहु विवाह का खण्डन इत्यादि धार्मिक सुधार थे। फिर दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज को चलाया। शुद्धि आन्दोलन को जन्म दिया। हिन्दु धर्म में शक्ति का संचार किया और पतन के बढ़ते हुए प्रभाव से हिन्दु धर्म की रक्षा की। विवेकानन्द जैसी महान विभूति ने वेदान्त को स्वस्थ रूप में देश तथा विदेश के सामने प्रस्तुत किया और इन महान विभूतियों के सतत तथा निरन्तर प्रयास

हिन्दु धर्म की रक्षा हुई और हमारे व्यर्थ तथा अन्धविश्वासों पर आधारित का धीरे धीरे अन्त होने लगा।

'भारत का आर्थिक जीवन'

पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क के कारण भारत की आर्थिक व्यव बड़े ही दूरगामी प्रभाव पड़े। मुगल युग के अन्त होने से भारत की र दशा निम्नतम स्तर पर पहुँच गई थी चारों ओर अशान्त वातावरण व्याप्त फैल रहा था। इस कारण से देश की आर्थिक दशा खराब हो गई थी। उद्य शिथिल पड़ रहे थे व्यापार का ह्रास हो गया था। कृषि भी अवनत दशा एक ओर तो आर्थिक साधनों की यह बुरी दशा थी दूसरी ओर जन वृद्धि होती जा रही थी इसलिये समस्या और भी विषम होती जा रही गरीबी का प्रचण्ड रूप भारत में चारों ओर असुरक्षा की भावना उत्पन्न था फिर अंग्रेजों ने ऐसी आर्थिक नीति अपनाई जिससे भारत के रहे सहे समाप्त होने लगे और समस्त जन संख्या का भार कृषि पर ही आ पड़ा। इतने बोझ को सहन न कर सकती थी इसलिये अनेकों विषम समस्याओं उठाना आरम्भ कर दिया। भारत का व्यापार विदेशियों के हाथों में चल और भारत की रही सही दौलत योरपीय देशों की ओर खिंचने लगी। धन्धों के अभाव में देश कृषि प्रधान रह गया और उसका उपयोग दो प्र होने लगा प्रथम तो वह पश्चिमी देशों के लिये कच्चा माल पैदा करे दूसरे पक्के माल की खपत करे, यानी भारत को एक शोषण केन्द्र बना लिया गया

परन्तु यह स्थिति अधिक दिनों तक नहीं चल सकती थी। देश में जागरण की सशक्त धारा फैलने के कारण यहां के आर्थिक जीवन में भी भावनाओं का उत्कर्ष हुआ। जापान व अमरीका में औद्योगीकरण हुआ और देखते वह योरोपीय देशों के साथ आ गये। इस परिवर्तन ने भारत के लो जगाने का कार्य किया। पाश्चात्य प्रभाव ने भारत के उद्योगपतियों को उ किया और धीरे धीरे नवीन प्रकार के उद्योग चलाये जाने लगे और बड़े उद्योगों द्वारा औद्योगीकरण की नींव रक्खी जाने लगी। नवीन व्यवसाय उ हुए, व्यापार में भी उन्नति हुई और देश में आर्थिक व्यवस्था का ढांचा परि होना आरम्भ हो गया। जीवन में भौतिकता के दृष्टिकोण में वृद्धि हुई भारतीयों का जीवन स्तर बदलने लगा। भारत वासियों को अपनी गरीबी का अनु होने लगा और उनको यह गरीबी खलने भी लगी। फल यह हुआ कि जहां और पाश्चात्य विचार धाराओं ने हमारी आर्थिक व्यवस्था में नवीनता उत्पन्न तो दूसरी ओर ऐसी समस्यायें भी उत्पन्न हुईं जिन्होंने देश के वातावरण

गरमी की वृद्धि की श्रमिक समस्यायें उत्पन्न हुई और उग्र रूप धारण करने ल

योरुप की नवीन नवीन आर्थिक घटनायें हमारे आर्थिक जीवन को प्रभा करने लगी। समाजवाद तथा साम्यवाद के सिद्धान्त हमारे आर्थिक ढाँचे को बद का प्रयास करने लगे। उसी समय रूस में साम्यवादियों द्वारा राज्य क्रांति के साथ आर्थिक क्रांति भी हुई। इस महत्वपूर्ण घटना ने भारत के ऊपर महान प्र डाले। चीन की दशा का भी भारत पर प्रभाव पड़ा। अब भारत में श्रमजी की दशा सुधारने के लिये हड़तालों का सहारा लिया जाने लगा और : आन्दोलन चलाने के हेतु अनेकों संस्थाओं की स्थापना की जाने लगी। १६२ पश्चात इस दिशा में प्रभूत प्रगति हुई। श्रमिकों तथा कृषकों की हलचलें प्रतिदिन बढ़ने लगीं। साम्यवादी पार्टी की स्थापना कर दी गई। मार्क्स एन्जील के क्रान्तिकारी विचार भारत के आर्थिक क्षेत्र में गम्भीर प्रभाव ड लगे। धार्मिकता का ढाँचा दुर्बल होने लगा और प्राचीन परम्परायें लड़खड़ा धराशाही होने लगी। शोषित वर्गों ने शोषण के विरुद्ध अपनी आवाज उ आरम्भ कर दी। जीवन का दृष्टिकोण ही बदल गया।

पाश्चात्य विचारों से प्रभावित होकर सामाजिक समानता तथा न्याय मांग तीव्र होने लगी। क्रान्तिकारी विचार दिन प्रतिदिन विस्तारित होने लगे दबे हुए वर्गों ने अधिक दबने से इन्कार कर दिया। शोषित वर्ग विदेशी आन्दोलनों से प्रेरणा प्राप्त करने लगे। इस प्रकार आर्थिक क्षेत्र में एक न परिवर्तन, नवीन विचार धारा प्रवाहित होने लगी और इस क्षेत्र में भी आधुनिक का प्रादुर्भाव हो गया।

पाश्चात्य प्रभाव की व्यापकता

पाश्चात्य संस्कृति ने केवल नगरों पर ही प्रभाव नहीं डाले अपितु ग्राम भी ये प्रभाव पहुँचे। विज्ञान के आविष्कारों ने दूरी तथा समय को पराजित कर और अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार ग्राम वासियों में भी हुआ। ग्रामों के युवक f प्राप्ति के लिये नगरों में आने लगे और यहाँ पर अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव ग्राम ले जाने लगे। फिर ग्रामों और नगरों में सम्पर्क अधिक हो गया। इतना ही इसाई प्रचारकों ने भी ग्रामों में पहुंच पहुँच कर ग्राम वासियों को प्रभावित कि फिर राजनैतिक आन्दोलनों के द्वारा पाश्चात्य सभ्यता के विचार ग्रामों त पहुँच गये।

इसलिये यह कहना उचित ही है कि पाश्चात्य सम्पर्क ने भारत .. तथा संस्कृति को गहराई तक प्रभावित किया है। भारतवासियों के जीवन स्त बदल दिया। प्राचीन परम्पराओं, विचार धाराओं तथा दृष्टिकोणों में महान परि किया। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा धार्मिक प्रभावों में आन्दोलन

वृत्ति उत्पन्न की। राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दिया तथा उसका विकास कि भारत में स्वतन्त्रता का प्रादुर्भाव किया। इन गहन प्रभाव के कारण भारत आधुनिकता आई। पुनर्जागरण आया और क्रान्तिकारी विचार धारायें आईं। यहां के प्रत्येक क्षेत्र में पाश्चात्य सभ्यता की गहरी छाप लगी हुई दृष्टिगोचर होती है।

'भारत की संस्कृति का पाश्चात्य सभ्यता पर प्रभाव'

अब तक इस बात का विवेचन किया गया है कि पाश्चात्य सभ्यता ने कि प्रकार भारतीय संस्कृति तथा जीवन के विविध पहलुओं को प्रभावित किया। परन्तु कुछ क्षेत्रों में भारत की प्राचीन संस्कृति ने भी पश्चिम को प्रभावित किया था।

भारत का अतीत गौरवमय था। इस पावन पवित्र भूमि पर अनेकों विद्वा आचार्यों, धार्मिक नेताओं, सम्राटों ने जन्म लिया था। अनेकों ज्ञान से परिपूर्ण ग्रं की रचना की गई थी। अनेक धर्मों का जन्म तथा विकास हुआ था। यहाँ संस्कृति सम्पन्न तथा समृद्ध थी। वह अपना कल्याण ही नहीं अपितु विश्व-कल्या भी चाहती थी। उसके आदर्श महान थे और उसका रूप विशाल था। प्राचीन का के बौद्ध प्रचारक प्रकाश का दीपक लिये हुए विदेशों में गये थे। हमारा प्राची ज्ञान योरुप भी पहुँचा था। भारत तथा योरोपीय प्रदेशों का सम्बन्ध व्यापार द्वारा बना हुआ था। रोम साम्राज्य से यहाँ के सम्राटों का राजदूतों द्वारा सं सम्बन्ध था। मध्य युग में आते आते अरब तथा इटली के व्यापारी भारत के अनेक विचार लेकर योरोपीय देशों में फैलाते थे। उनके अतिरिक्त अनेकों योरोपीय यात्री भारत में आये और यहाँ का भ्रमण किया और यहां से अनेकों विचार लेकर योरु वापिस पहुँचे और भारतीय विचार वहां पर प्रसारित किये। मध्य युग में सर टामस रो, बर्नियर, पीटर मण्डी, मण्डलस लो, मनुकी अधिक प्रसिद्ध हैं। उन के अतिरिक्त अनेकों ईसाई धर्म प्रचारक भी भारत में आये और यहां पर फैली अनेकों बातों से प्रभावित हुए। इस प्रकार भारत ने समय समय पर योरुप को प्रभावित किया है।

सर टामस रो ने भारत से लौट कर भारत की सम्पत्ति के वर्णन किये और ऐसा अनुमान है कि मिल्टन ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'Paradise lost' में सम्पत्ति का जो उल्लेख किया है वह भारत की ही सम्पत्ति थी। इसी प्रकार भारत के विषय में सुनते २ 'औरङ्गजेब' नामक नाटक की रचना की गई।

फ्रेंच यात्री बर्नियर फ्रांस जाते समय दाराशिकोह द्वारा अनुवाद किया हुआ उपनिषद ग्रंथ की पाण्डुलिपि अपने साथ ले गया था और वहाँ पर इस फारसी

लिखित ग्रंथ का अच्छा अध्ययन किया गया था। इसके अतिरिक्त अन्य फ्रेंच तथा जर्मन ईसाई विद्वानों ने भी संस्कृत का अध्ययन किया, अनेकों संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद किया और भारतीय धार्मिक सिद्धान्तों से बड़े ही प्रभावित हुए। भारतीय विचारों ने वाल्टेयर जैसे विद्वानों पर भी प्रभाव डाला।

फ्रांस का अति प्रसिद्ध विद्वान रोमां रोलां (Romain Rolland) भारतीय संस्कृति से कितना प्रभावित हुआ यह बात इस तरह स्पष्ट होती है कि उसने राम कृष्ण, स्वामी विवेकानन्द तथा गांधी जी के ऊपर प्रभावशाली ग्रन्थ लिख डाले। दूसरा विद्वान 'पाल रिचर्ड' है जिस पर अरविंद घोष के सिद्धान्तों ने गहन प्रभाव डाला है। सिलवेन लेवी (Sylvain levy) ने साहित्य कला का अध्ययन किया। प्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान लुई रेनों भी भारतीय संस्कृति से अधिक प्रभावित हुआ और उसने इस प्रभाव को माना भी।

जर्मनी विद्वानों पर भी भारत के प्राचीन संस्कृत के ग्रंथों ने प्रभाव डाले। केसरलिंग नामक विद्वान ने भारतीय दर्शन को इतना अपनाया कि उसकी श्रेष्ठता ने इस विद्वान के विचारों में एक सैद्धान्तिक क्रांति उत्पन्न कर दी। स्विटजरलैंड में एक संस्था स्थापित की गई जिस का उद्देश्य आध्यात्मिक ज्ञान की खोज करना था। उसमें भारत के धर्मों का अध्ययन भी एक विषय है। नार्वे का प्रसिद्ध विद्वान 'स्टेन कोनोव' भी भारतीय धर्म के विकास का अनुसंधान करने के लिये प्रसिद्ध है। पोलैण्ड के संस्कृत विद्वान 'स्टेनिस्ला' ने भारतीय संस्कृति के गहन अध्ययन में अपना जीवन ही लगा दिया। इन भिन्न २ विद्वानों के प्रयासों से विविध देशों में भारतीय साहित्य, कला तथा धर्म का अध्ययन करने के उद्देश्य से अनेकों संस्थाओं की स्थापना की गई।

१८वीं सदी के अंतिम वर्षों में योरुप के अनेकों विद्वानों ने मिलकर भारतीय संस्कृति का अध्ययन किया। सर चार्ल्स विल्किंस, विलियम जोन्स तथा कोल ब्रु क का कार्य बड़ा ही प्रशंसनीय है। उनके प्रयासों से भारतीय विचार पश्चिम में पहुँचे और फैले। १७८५ में चार्ल्स विल्किंस ने गीता का अंग्रेजी में अनुवाद किया। इसी वर्ष विलियम जोंस ने 'बङ्गाल एशियाटिक सोसायटी' की स्थापना की। इस संस्था के प्रयासों से संस्कृत के अनेकों महत्व पूर्ण ग्रंथों की रचना की गई कि पश्चिम में भारतीय संस्कृति का बड़ा ही आदर और सम्मान हुआ। विलियम जोंस ने 'मनु स्मृति' शकुन्तला नाटक का अनुवाद किया और अन्य कई ग्रंथों का सङ्कलन भी किया।

...जोन्स सर्व प्रथम विद्वान था जिस ने संस्कृत के महत्व को समझा और यह बताया कि संस्कृत सब भाषाओं में अधिक वैज्ञानिक भाषा है। यूनानी, लेटिन, तथा ईरान की जन्द के अनेकों शब्द संस्कृत के शब्दों से समानता रखते हैं और इन

सब भाषाओं का मूल आधार एक ही है। इस विद्वान ने महत्व शाली कार्य कि
जिस के फलस्वरूप अन्य खोजों के द्वारा यह पता लगाया गया कि इन विभि
भाषाओं के बोलने वाली जातियों में भी अनेकों बातों में प्रभूत एकता का आभा
होता है। इस प्रकार इतिहास के क्षेत्र में अच्छा कार्य हुआ। इसी विद्वान के का
से अभिलेखों के पढ़ने की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा।

कोल ब्रुक ने हिन्दू कानून, दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष का अच्छा अध्ययन
किया, अनेकों ग्रन्थों का अनुवाद किया तथा संकलन किया।

जर्मन विद्वानों ने भारतीय संस्कृति की खोज करने में सब से अधि
प्रशंसनीय कार्य किये। भारत के आध्यात्मिक विचारों ने जर्मन दर्शन पर अपन
गहरी छाप लगाई है। 'शोपेनहेर' को तो उपनिषद् ईश्वरीय ज्ञान सा प्रतीत हुए
उसको इन ग्रन्थों में चिर शांति का अनुभव हुआ था। 'काण्ट' के दार्शनिक सिद्धान्त
पर हिन्दू दर्शन का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। शिलर का 'मेरिया स्टुअर्ट' पर
मेघ दूत का प्रभाव पड़ा। गोटे (Goethe) ने अपने 'फोस्ट' की प्रस्तावना
शकुन्तला की प्रस्तावना के प्रकार से ही की है। इस विद्वान ने 'शकुन्तला' की बड़ी
भारी प्रशंसा की थी।

'मैक्समूलर' ने भारतीय धर्म तथा दर्शन का गहन अध्ययन किया। ३० वर्ष
के निरन्तर परिश्रम से उसने ऋग्वेद का अंग्रेजी में अनुवाद किया। इस के
अतिरिक्त उसने अन्य कई धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद तथा संकलन किया। उसने
हिन्दू संस्कृति की महानता को योरोपीय देशों के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया। यह
महान विद्वान हिंदू संस्कृति से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि इसने अपना समस्त
जीवन ही इस संस्कृति की खोज में लगा दिया।

अमेरिका के विद्वानों पर भी हिन्दू संस्कृति ने अपने प्रभाव डाले।
इमर्सन (Emerson) का नाम इस विषय में बड़ा ही प्रसिद्ध है। उन्होंने गीता
तथा उपनिषद् स्वयं पढ़े और अपने साथी लेखकों को पढ़ पढ़ कर सुनाये। उनके
लेखों में उपनिषद् के सिद्धान्तों की झलक स्पष्टतया दिखाई पड़ती है। उनके
निबन्ध जैसे 'The over soul' तथा 'Circles' इस प्रभाव के सजीव उदाहरण
हैं। कवि व्हाइटमैन की कविताओं में भारतीय आध्यात्मिक विद्या तथा उपनिषद् के
सिद्धान्तों की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। स्वामी विवेकानन्द ने अमरीका
को अपने भाषणों से बहुत अधिक प्रभावित किया था। आज हिन्दू वेदान्त तथा
दर्शन के प्रचार के लिये स्वामी जी के आश्रम वहां विद्यमान हैं। कृष्ण मूर्ति ने
अमरीका में अपने दर्शन तथा धर्म को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत कर अमरीका को
चकित कर दिया। आज भी अमरीका में ऐसी संस्थायें कार्य कर रही हैं
जिनका उद्देश्य हिन्दुओं की आध्यात्मिक विद्या को समझना तथा उसका अनुकरण

करना है। 'इण्डिया सोसायटी' आज भी भारतीय संस्कृति का प्रसार करने में संलग्न है।

भारतीय दर्शन तथा धर्म के प्रभाव अमरीका के कवियों तथा लेखकों के समान इंगलैंड के कवियों तथा दार्शनिकों पर भी खूब पड़े। शैली, वर्ड्सवर्थ, ब्राउनिंग तथा कारलाइल की कविताओं में वेदान्त की झलक स्पष्ट रूप से झलकती है। 'टेनीसन' की कवितायें भी इस प्रभाव से नहीं बच सकीं। एकबार जब इमरसन कारलाइल से मिले तो कारलाइल ने गीता की पुस्तक ही इमरसन को भेंट करने के लिये चुनी, जो इस बात का प्रमाण है कि गीता का कारलाइल के लिये क्या महत्व था। जिराल्ड हर्ड (Gerald Heard) तथा हक्सले नामक अंग्रेज विद्वानों ने 'वेदान्त स्कूल' की स्थापना की है। उन दोनों पर हिंदू दर्शन ने गहरा प्रभाव डाला है। आयरलैण्ड के प्रसिद्ध कवि रसैल तथा कीट्स की कविताओं पर हिन्दू दर्शन का गहरा प्रभाव पड़ा है। रसैल की कविता पर भारतीय रहस्यवाद की स्पष्ट रूप से छाप पड़ी है।

अनेकों अंग्रेज जो भारत में धर्म प्रचारक या शासक के रूप में आये उन्होंने भारतीय संस्कृति से प्रभावित होकर अनेकों ग्रन्थों की रचना कर डाली, जैसे टाड, स्मिथ, मालकम, डफ आदि ने ऐतिहासिक ग्रंथों की रचना की। आरनोल्ड तथा किपलिङ्ग ने कविता के रूप में अपना कार्य किया। भारत में रहने वाले अंग्रेजों पर यहां के दिन प्रतिदिन रिवाजों का भी कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा।

बीसवीं सदी में भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य देशों में फैलाने का श्रेय सब से अधिक डा० एनीबेसेण्ट को है। उसने अपना समस्त जीवन भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक उत्थान के लिये लगाया। उन्होंने अपने ग्रन्थों, भाषणों तथा यात्राओं द्वारा पश्चिम में भारत की गौरवमय संस्कृति का प्रसार किया। विवेकानन्द, टैगोर, अरविन्द तथा गाँधी के द्वारा भारतीय संस्कृति की महानतायें विश्व भर में फैली।

भारत की ललित कलाओं के प्रभाव भी पश्चिमी देशों पर पड़े। उदयशङ्कर, रामगोपाल जैसे महान कलाकारों ने पश्चिमी देशों में जाकर अपने नृत्य का प्रदर्शन किया और पश्चिम के लोगों को चकित कर दिया। नन्दलाल बोस जैसे चित्रकार की प्रतिभासम्पन्न कला ने पश्चिमी कलाकारों पर एक विशेष प्रभाव डाला।

इस प्रकार भारतीय सभ्यता तथा पश्चिम की सभ्यता में एक सुन्दर का समन्वय आरम्भ हुआ और वह आज भी हो रहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पाश्चात्य सभ्यता ने भारतीय सभ्यता के पहलुओं पर बड़े ही गहन प्रभाव डाले। धार्मिक अन्धविश्वासों तथा रूढ़ियों

नष्ट किया और उनके स्थान पर विवेक और अन्वेषण की भावनाओं को जगा सामाजिक क्षेत्रों में अनेकों सुधारवादी आन्दोलनों के प्रादुर्भाव ने सहायता पहुँ और जाति प्रथा जैसी कुरीतियों पर कुठाराघात किया। आर्थिक क्षेत्र में दूर परिवर्तन किये, श्रमिक समस्यायें उत्पन्न कीं और देश के श्रमिक तथा कृष जागृति उत्पन्न की। साम्यवादी तथा समाजवादी सिद्धान्त भारत को दि समानता, राष्ट्रीयता तथा स्वदेश प्रेम की भावनाओं को जगाया और विकसित कि देश को प्रजातन्त्रवाद की देन प्रदान की। समस्त भारत में पुनर्जागरण किया। फलस्वरूप आधुनिकरण की स्थापना की और भारतीय अकर्मण्यता तथा शिथि का पूर्ण रूप से अन्त कर दिया।

परन्तु भारतीय धर्म तथा दर्शन ने भी पाश्चात्य विद्वानों, कवियों, लेख दार्शनिकों तथा विचारकों पर अपने २ प्रभाव डाले और यह सिद्ध किया कि भा की संस्कृति में भी अमूल्य तत्वों तथा रत्नों की कमी नहीं है। यदि अन्य संस्कृ भारतीय संस्कृति को कुछ दे सकती हैं तो भारतीय संस्कृति भी उनको अप अमूल्य देन प्रदान कर सकती है।

-:※ समाप्तम् ※:-

शिक्षा प्रेस, मेरठ में मुद्रित।

नष्ट किया और उनके स्थान पर विवेक और अन्वेषण की भावनाओं को जगा
सामाजिक क्षेत्रों में अनेकों सुधारवादी आन्दोलनों के प्रादुर्भाव ने सहायता प
और जाति प्रथा जैसी कुरीतियों पर कुठाराघात किया। आर्थिक क्षेत्र में दूर
परिवर्तन किये, श्रमिक समस्यायें उत्पन्न कीं और देश के श्रमिक तथा कृ
जागृति उत्पन्न की। साम्यवादी तथा समाजवादी सिद्धान्त भारत को दि
समानता, राष्ट्रीयता तथा स्वदेश प्रेम की भावनाओं को जगाया और विकसित कि
देश को प्रजातन्त्रवाद की देन प्रदान की। समस्त भारत में पुनर्जागरण किया
फलस्वरूप आधुनिकरण की स्थापना की और भारतीय अकर्मण्यता तथा शिथि
का पूर्ण रूप से अन्त कर दिया।

परन्तु भारतीय धर्म तथा दर्शन ने भी पाश्चात्य विद्वानों, कवियों, ले
दार्शनिकों तथा विचारकों पर अपने २ प्रभाव डाले और यह सिद्ध किया कि भ
की संस्कृति में भी अमूल्य तत्वों तथा रत्नों की कमी नहीं है। यदि अन्य संस्कृ
भारतीय संस्कृति को कुछ दे सकती हैं तो भारतीय संस्कृति भी उनको अ
अमूल्य देन प्रदान कर सकती है।

-:# समाप्तम् #:-

शिक्षा प्रेस, मेरठ में मुद्रित।